GURUKUL INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY RESEARCH JOURNAL

Quarterly

Dec – 2015 | Issue – I | Volume – V

ISSN No. 2394-8426

International Impact Factor 2.254

Managing Editor

Dr. Prakash N. Somalkar
Principal, Gurukul Mahavidhyalaya, Nanda.
At. Nanda, Tah. Korpana, Dist. Chandrapur.
Pin – 442917
Mob. No.: +91 94 22 13 7816

Chief Editor

Mr. Mohan Hanumantrao Gitte
At. Dattapur, Post. Ghatnandur,
Tah. Ambajogai, Dist. Beed.
Pin – 431519
Mob. No.: +91 92 73 75 9904

Email ID's

info@gurukuljournal.com

Website

http://gurukuljournal.com/

Gurukul International Multidisciplinary Research Journal (GIMRJ)
with
International Impact Factor 2.254

ISSN No. 2394-8426
Dec – 2015
Issue – I, Volume – V
Online Journal

Index

Paper No.	Title	Author	Page No.
1	गडचिरोली जिल्हे कि पुनर्वसीत बंगाली शरणार्थीयों के लिंगोत्तर असंतुलन के अध्ययण	श्री. रंजीत दिलीप साना डॉ. एच. डी. लांजेवार	1-5
2	Seasons Sensitivity and Sustenance An Assessment of Seasonal Dimensions of Disasters in Bauphal Upazila (Patuakhali).	Tazrin Jahan Satu, Dr. Sheikh Tawhidul Islam (Bangladesh)	7-13
3	Metacognition Awareness Of Prospective Teachers	Venkatapati.Charan Kumar	14-21
4	Competency Based Employee Development	Dr. Purnima V. Meshram	22-26
5	एकविसाव्या शतकातील शैक्षणिक ग्रंथालयांची वाटचाल	श्रीमती. जयश्री माणिकराव गित्ते	27-31
6	A Study Of Work Engagement Among Primary School Teachers In Thane District	Dr. Sunil Karve	32-36
7	भारतीय अर्थव्यवस्थेच्या विकासासाठी विशेष आर्थिक क्षेत्राचे योगदान–एक समिक्षण	डॉ. प्रशांत म. पुराणिक	37-43
8	भारतातील लोखंड आणि पोलाद उद्योग	प्रा. डॉ. सुनिल नि. नरांजे, प्रा. अनिल देवराव कुंभलकर	44-48
9	A case study of elderly women residing in Aaradhna old age home of Delhi	Dr. Lalan Yadav	49-53
10	A study on impact of mid day meal scheme in government aided school of Nagpur city	Vandana Ramteke	54-59
11	Food Insecurity in India	Dr. Sunil G. Naranje	60-64
12	Review of Environmental concern in Sociological Theory	Mr.Prashant T. Nargude	65-67
13	सामाजिक आणि सांस्कृतिक ऐक्याचे प्रतिक म्हणजे अहेरीचा दसरा उत्सव	प्रा.डॉ. आनंद के. भोयर	68-71
14	Developing Leadership Skills: A Study	Dr. Pawan R. Naik	72-77
15	चंद्रपूरचा गोंड राजवंश	डॉ. गौतम ए. शंभरकर	78-86
16	Public Sector Enterprises In India And Status Of Executive Training And Development: An Overview	Prof. Sneh Lata	87-93
17	Alice Walker's The Color Purple: A Pure Feminist Novel	Ravindra D. Hajare	94-99
18	Comparative Study Of Longterm Solvency Position And Its Influince On Earnings Of The Company-- A Case Study Of Ashoke Leyland & Tatamotor	Amalesh Patra	100-112
19	The Role Of Libraries In Aquiring Excellence For The Students In Schools	Smt. Nagaratna S	113-116
20	महाराष्ट्रातील प्रादेशिक असमतोल : कारणे व उपाय	प्रा. डॉ. एच. एम. कामडी	117-120
21	The Role of ICT in Changing Paradigms in Distance Education	Ms.Rashmi Rekha Devi	121-129
22	NPA: challenge for Banking Industry (Analysis of Nonperforming assets (NPA) of Indian Banking)	Dr. Abhinn Baxi	130-142
23	खेल और व्यायाम मे अभिप्रेरणा	प्रा. डॉ. आर. डी. चावके	143-145

24	Role Of Industrial Policies In The Economic Development Of India	Dr. Jaydeo P. Deshmukh	146-154
25	नवनिर्माण की प्रेरक नारी	इन्द्र कुमार शर्मा डॉ. प्रभातकुमार दुबे	155-160
26	चंद्रपूर जिल्हयाचे वन व्यवस्थापन व वनसंवर्धन	डॉ. सपना आर वेगीनवार	161-164
27	A survey on Distribution and Conservation of Grus Antigone Antigone (sarus crane) and its habitats in Vidarbha Region of Maharashtra	Dr. D. R.Gabhane	165-169
28	संपन्न राष्ट्र निर्मितीत गृहअर्थशास्त्राचे योगदान	प्रा. सौ. श्वेता गुंडावार	170-172
29	Isolation and Characterization of Bacteriocin of Lactobacillus sp. From Dairy product	Atul T. Sirsat, Dr. P. M. Tumane, Durgesh Wasnik	173-179
30	Current Status And Position Of Indian Women	Prashant T. Nargude	180-183
31	Inventory Management –A profit making concept	Aparna S. Chorghade, Dr. Prakash N. Somalkar	184-187
32	इतिहासाची साधने	डॉ. सौ. वीरा पवन मांडवकर	188-192
33	The Forest Industries Produce Bamboo: Role in Pulp & Paper Industries	Dr. Prakash N. Somalkar, Nagsen J. Shambharkar	193-196
34	''पाणलोट क्षेत्र विकासातून पर्यावरण विकासाकडे''	प्रा. एस. एम. कोल्हापूरे, प्रा. डॉ. एस. एस. अंभोरे	197-202
35	प्रेमचंद युगीन हिन्दी उपन्यास	शारदा साहेबराव शेळके	203-206
36	Networked Youth of Kolkata: A Sociological Investigation of Changing Relationship	Deepika Singh	207-214
37	Social Determinants of Emotional Intelligence and its influence on Learning Outcomes - A study	Ramdas Banoth	215-229
38	WOMEN'S EMPOWERMENT	Er. Rekha Phad (Gitte)	230-232
39	उदयोग आणि आर्थिक विकास	डॉ. सुनिल जि. नरांजे अनिल देवराव कुंभलकर	233-236
40	विपणन पर्यावरण-एक जटिल समस्या	प्रा.राजेश सुधाकर डोंगरे	237-240
41	**दलित आत्मकथनांचे प्रेरणास्थान डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर**	**प्रा. संजय केशवराव लाटेलवार** **डॉ. इसादास** भडके	241-247
42	विश्वजाणीवेचा कवी अरूण काळे	प्रा. रंजीत वानखेडे डॉ. इसादास भडके	248-254
43	Indian Cultural Ethos In Nissim Ezekiel's Poetry	Dr. A.V.DHOTE	255-259
44	आंतरराष्ट्रीय संबंध आणि परराष्ट्रीय धोरण	प्रा. सौ. बैजू प्रकाश सोमलकर	260-264
45	उपेक्षा के शिकार बुजुर्ग	डॉ0 मकरन्द जायसवाल	265-270
46	Dimensions Of Challenges & Opportunities In Job Oriented Commerce Education	Prof. Jugalkishor M. Somani	271-275
47	भारतीय लोकशाही : स्थित्यंतरे व आव्हाने	अमोल सातपुते	276-280
48	यवतमाळ जिल्ह्यातील आदिवासी स्त्रियांचे निर्णय प्रक्रियेतील स्थान	शुभांगी अ. भोयर & डॉ.सौ. अपर्णा ढोबळे	281-284
49	Analytical Study of Impact of Cultural Factors on the Consumer Behaviors	Raju Dhabale	285-290
50	मराठी भाषा संवर्धन : काही उपाय	प्रा. मिलिंद साठे	291-294

Gurukul International Multidisciplinary Research Journal (GIMRJ)
with
International Impact Factor 2.254

ISSN No. 2394-8426
Dec – 2015
Issue – I, Volume – V
Online Journal

गडचिरोली जिल्हे कि पुनर्वसीत बंगाली शरणार्थीयों के लिंगोत्तर असंतुलन के अध्ययण

Study of Unbalanced Sex Ratio of Rehabilated Bengali in Gadchiroli District

संशोधक
श्री. रंजीत दिलीप साना
पी. एच. डी. रिसर्च स्कॉलर
गोंडवाना विद्यापीठ, गडचिरोली.

मार्गदर्शक
डॉ. एच. डी. लांजेवार
भूगोलविभाग प्रमुख
जे.एस.पी.एम. कॉलेज, धानोरा.

सारांश

एक बेहतर अथवा आदर्श समाज निर्माण होने के लिए समाज के स्त्री और पुरूष इनमें संतूलन रहना अत्यंत महत्वपुर्ण होती है। स्त्रि और पुरूषों के असंतूलन से अनेक प्रकार के समस्या समाज मे निर्माण होने मे जिम्मेदार होती है। अन्न, वस्त्र, आवास यह मानव के तिन महत्वपुर्ण आवश्यकता होकर लैंगीक आवश्यकता (शारिरीक आवश्यकता) यह मानव समक्ष चौथा महत्वपुर्ण आवश्यकता है। और यह शारिरीक आवश्यकता हेतू विवाह प्रणाली से स्त्रि–पुरूष एकत्र आते है। और जब स्त्रि–पुरूषों के प्रमाण मे तफावत निर्माण होता है तब स्त्रि–पुरूष असामाजीक मार्ग का अवलंबन करता है। परिणामतः दहेज प्रथा, वेश्या व्यवसाय, आत्महत्या, अविवाहीतता, बहुपत्नी–बहुपती विवाह आदी प्रकारके समस्या का निर्माण होता है। बंगाली लोग शरणार्थी होकर गडचिरोली जिल्हे मे चामोर्शी, मुलचेरा और आरमोरी इन तिन तालुका मे वास्तव्य कर रहे है। शुरूवाती समय 1970 के दशक मे बंगाली समाज मे स्त्रि–पुरूष के प्रमाण मे संतुलन दिखाई पडती है। परंतू वर्तमान समय मे शिक्षा के प्रसार, कुटूंब नियोजन साधन के उपयोग, वैद्यकीय प्रगती, गर्भजल परिक्षण इन कारणो से अपने वंश के दिपक के रूप मे हम दो हमारे एक के प्रत्यय वर्तमान समय मे दिखाई पडती है। जिससे लडकीयों के प्रमाण बहुत ही कम दिखाई पडती है। यह बहुत ही चिंता का विषय है। स्त्रि यह पुरूषो के समान रहकर स्त्रि पुरूषों के किसी भी क्षेत्र मे पिछे नही है। लडकी भी वंश का दिपक हो सकती है। पुरूषों की मानसीकता, लोकजागृती, गर्भजल परिक्षण मे बंदी, पुरूषों को स्त्रियों के प्रती रही दृष्टिकोण ओर स्त्रियों के प्रती सम्मान आदी से लडकियों के प्रमाण मे बढत होने मे सहयोग हो सकता है। गडचिरोली जिल्हे की पुनर्वसीत बंगाली शरनार्थीयों के लिंगोत्तर असंतुलन से निर्माण होणे वाले समस्याओं का अध्ययन करने का अल्पसा प्रयत्न किया है।

बीज संज्ञा

पुनर्वसीत, शरणार्थी, लिंगानुपात, समस्या

प्रस्ताविक

भारत सरकार द्वारा 60 के दशक मे पुर्व पाकिस्तान (वर्तमान मे बांग्लादेश) से शरणार्थी बनकर आए हुए बंगाली लोगों को गडचिरोली जिल्हे मे पुनर्वसन किया गया। गडचिरोली जिल्हे मे कुल 12 तालुका मे से चामोर्शी, मुलचेरा एवं आरमोरी इन तिन तालुका मे कुल 48 गावों मे इन शरणार्थीयों का पुनर्वसन किया गया।

प्रस्तुत संशोधन के लिये सन 1991–2001 एवं 2011 इन तिन दशकों के जनगणना के आधार पर गडचिरोली जिल्हे में पुनर्वसीत बंगाली शरणार्थीयों के लिंगोत्तर असंतुलन का अध्ययन के लिए चयन किया गया है। 1964 के दशक में बांग्लादेश से आए हुए पुनर्वसीत बंगाली शरणार्थीयों को प्रारंभिक अवस्था में विशेष कोई सुविधा न होने तथा सामाजिक स्थिती, आर्थिक स्थिती खराब होने एवं शिक्षा के क्षेत्र मे पिछड़ा होने के कारण साथ ही स्वास्थ के क्षेत्र मे विशेष कोई सुविधा न होने के चलते इन पुनर्वसीत लोगों में स्त्रि– पुरूष लिंगानुपात में वृद्धी होती गई है। इन लोगों को पुनर्वसीत स्थान पर नई वातावरण के साथ संतुलन बनाने में अनेक कठिनाई का सामना करना पड़ा । गडचिरोली जिल्हे की 48 पुनर्वसीत बंगाली गावों मे शुरूवाती समय में गरीबी, लड़कीयों की कम उम्र मे विवाह, गर्भवती माता की स्वास्थ की निम्न दशा एवं प्रसव के समय माता का होनेवाली मृत्यु मे बढ़त तथा पुरूषों के प्रति रहे विचार के कारण इन पुनर्वसीत लोगो मे स्त्रि – पुरूष असमानता में वृद्धी दर सन 1991, 2001 एवं 2011 के दशको के अध्यायन से ज्ञात होता हैं।

अध्ययन क्षेत्र

प्रस्तुत संशोधन के लिए उक्त विषय हेतू गडचिरोली इस जिल्हे को अध्ययन क्षेत्र के रूप मे लिया गया है। गडचिरोली जिल्हा यह विविधापुर्ण है। वन संपत्ती, खनिज संपत्ती, जल संपत्ती से यह जिल्हा परिपुर्ण है। इस जिल्हे मे वनाच्छादित क्षेत्र अधिक होने तथा उद्योग विरहीत होने से यह जिल्हा पिछडा हुआ है। एवं आदिवासी के बहुलता होने से इस जिल्हे को आदिवासीयों का जिल्हे के रूप मे जाना जाता है। जिल्हे मे गोंड, माडीया, बंजारा, मराठा के साथ ही पुनर्वसीत बंगाली षरणार्थीयों के प्रमाण अधिक है। चंद्रपूर जिल्हा का विभाजन करके 26 ऑगस्त 1982 मे

गडचिरोली जिल्हा का निर्माण किया गया ह। गडचिरोली जिल्हा यह महाराष्ट्र राज्य के पुर्व दिशा के ओर स्थित है। इस जिल्हा के पुर्व दिशा मे छत्तीसगड राज्य तथा दक्षीण मे आंध्राप्रदेश पश्चिम मे चंद्रपूर जिल्हा एवं उत्तर मे भंडारा तथा गोंदीया जिल्हा का सिमाना है।

गडचिरोली जिल्हा का अक्षांशीय विस्तार 18^0 41′ से 20^0 50′ उत्तर अक्षांश एवं रेखांकिय विस्तार 79^0 45′ से 80^0 53′ पुर्व रेखांश होकर पुर्व–पश्चिम विस्तार अल्प तथा उत्तर दक्षिण विस्तार अधिक है। जिल्हा के कुल भौगोलीक क्षेत्रफल 14412 चौ.किमी. है।

उद्देश

गडचिरोली जिल्हे के शरणार्थीयों के लिंगोत्तर असंतुलन का अध्ययन के दृष्टि से उद्देश निम्नलीखीत है।

1) पुनर्वसीत बंगाली शरणार्थीयों के स्त्रि–पुरूष असंतुलन के मुल कारणों का अध्ययन करना।

2) पुनर्वसीत शरनार्थीयों के स्त्रि–पुरूष लिंगानुपात का अध्ययन करना।

3) स्त्रि–पुरूष असंतुलन से निर्मीत समस्याओं का अध्ययन करना।

संशोधन पदधती

प्रस्तुत शोध निबंध के लिए संग्रह कि गई आकडेवारी यह द्वितीय स्वरूप के रहा है।संशोधन पदधती के लिए जनगणना 1991–2001 एवं 2011 की जनसांख्यिकीय सर्वेक्षण यह तिन दशकों के आधार पर किया गया है। यह द्वितीय स्त्रोत के जानकारी गडचिरोली जिल्हा के मुलचेरा, चामोर्शी एवं आरमोरी तालुका के विविध कार्यालय के जानकारी एवं प्रकाशित मासिका, जनगणना पुस्तिका वृत्तपत्रक इन पर आधारीत है।प्राप्त जानकारी संख्यात्मक आकडो में प्रदर्शीत करने के लिए आलेख एवं आकृती तयार करने के लिए जनसंख्या भुगोल के विविध सुत्र एवं पदधती का उपयोग कीया गया है।

विषय विवेचन व विश्लेषण

लिंगोत्तर असंतुलन यह बहुत ही बडी समस्या है। इस समस्या का निराकरण करना अत्यावश्यक है। प्रारंभ के कालखंड में इस प्रकार के असंतुलन दिखाई नही देते थे। परंतु मध्यंतर काल में शिक्षा का प्रसार लोगों के जिवनशैली में सुधार, उनके मानसिकता में बदल, छोटा परिवार प्रणाली तथा सुखमय जिवन इन विविध कारनों से इन पूनर्वसित लोगों के परिवार के सदस्यों के संख्या मे कमी तो आई है परंतु उसका सबसे बडा परिणाम लडकीयों के जन्मदर में विशेष रूप से कमी होती गई है। सामान्यतः सभी लोगों को अपने परिवार मे अपने वंश के लिए दिपक चाहीए होता है। इस अपेक्षा के साथ लडका जन्म लेते परिवार की बढना रोक देते दिखाई पडता है। फलस्वरूप शरणार्थीयों के लिंगोत्तर असंतुलन में वृदधी होती गई है। बांग्लादेश से भारत में आने के कालखंड मे संतुलन रहने का अध्ययन से ज्ञात होता है।

संशोधन के आधार पर 1901 के जनगणनानुसार गडचिरोली जिल्हे कि पुनर्वसीत बंगाली शरणार्थीयों के कुल जनसंख्या 40265 है जिनमें से स्त्रियों की संख्या 19573 और पुरूषो की संख्या 20692 है। 2001 मे शरणार्थीयों के कुल जनसंख्या 44011 है जिनमें से स्त्रियों की कुल संख्या 21236 है और पुरूषों की संख्या 22775 का आकडा प्राप्त हुआ है। और सन 2011 के जनगणना के आधार पर सन 2011 में इन शरणार्थीयों की कुल जनसंख्या 50693 है जिनमें से 24292 स्त्रियों की संख्या है और 26401 यह पुरूषों की संख्या प्राप्त हुई है।

गडचिरोली जिल्हे में पुनर्वसीत बंगाली शरणार्थीयों के गावों की जनसंख्या :–

अ.क्र.	गावों का नाम	सन 1991		सन 2001		सन 2011	
		स्त्रि	पुरूष	स्त्रि	पुरूष	स्त्रि	पुरूष
1	गेविंदपुर	355	377	365	392	377	399
2	हरिनगर	378	395	385	403	420	454
3	मथुरानगर	250	270	260	284	341	351
4	श्रीरामपुर	338	365	350	371	412	460
5	सुंदरनगर	620	670	635	679	704	792
6	खुदिरामपल्ली	440	472	455	506	488	539
7	भगतनगर	309	323	320	346	343	373

8	भवानीपुर	415	425	437	450	465	506
9	गणेशनगर	227	240	237	249	245	252
10	विवेकानंदपुर	965	1009	1205	1289	1535	1611
11	श्रीनगर	332	355	343	363	526	599
12	उदयनगर	92	100	109	111	119	129
13	देशबंधुग्राम	587	595	590	615	670	722
14	विश्वनाथनगर	348	356	355	369	386	428
15	गीताली	495	560	510	576	530	662
16	शांतीग्राम	469	525	482	527	608	662
17	कांचनपुर	390	400	400	422	459	503
18	विजयनगर	278	295	290	308	325	344
19	कालीनगर	449	471	457	476	509	580
20	लक्ष्मीपुर	311	320	324	335	370	422
21	गांधीनगर	366	395	380	407	409	487
22	तरूणनगर	150	159	155	163	174	194
23	देवनगर	239	242	235	251	254	268
24	विकासपल्ली	445	461	489	530	565	655
25	पलासपुर	401	425	450	488	487	523
26	शीमुलतला	348	366	360	390	393	418
27	नेताजीनगर	647	687	691	751	790	860
28	श्यामनगर	195	205	207	222	241	271
29	विष्णूपुर	340	360	365	391	418	463
30	गौरीपुर	547	573	585	605	621	681
31	नवग्राम	199	211	212	223	265	212
32	श्रीनिवासपुर	340	360	385	420	425	474
33	कृष्णनगर	520	541	571	611	632	692
34	विक्रमपुर	435	455	451	481	548	579
35	जयनगर	487	522	581	606	632	664
36	चित्तरंजनपुर	407	425	434	455	514	578
37	दुर्गापुर	358	380	389	420	450	525
38	रविंद्रपुर	430	450	592	620	701	785
39	रामकृष्णपुर	482	497	521	552	632	667
40	बहादुरपुर	487	507	598	656	546	631
41	बसंन्तपुर	490	520	557	578	761	831
42	आनंदग्राम	467	488	497	517	507	577
43	नरेंद्रपुर	333	408	418	443	437	469
44	ठाकुरनगर	410	430	442	462	770	534
45	राममोहनपुर	307	323	335	557	373	426
46	सुभाषग्राम	850	899	888	933	941	1049
47	देवीपुर	480	500	548	570	571	635
48	शंकरनगर	365	380	391	402	403	465
योग		**19573**	**20692**	**21236**	**22775**	**24292**	**26401**

उपरोक्त तालीका से यह ज्ञात होता है की, इन पुनर्वसीत गावों मे प्रति दशक के अनुसार लिंगोत्तर असंतुलन मे वृद्धी होती दिखाई पड़ती है। सन 1991 के तुलना में 2001 मे और सन 2001 के तुलना मे 2011 मे स्त्रि – पुरूष असमानता मे वृद्धी होती हुई दिखई पड़ती है। अर्थात आर्थिक सुधार, शिक्षा के प्रसार, स्वास्थ के क्षेत्र मे सुधार होने के बावजुद भी इन पुनर्वसीत लोगों के लिंगोत्तर असंतुलन मे कोई कमी नही होती हुई दिखाई पड़ती है। अर्थात तालीका के अनुसार इन तीन दशक में पुनर्वसीत बंगाली शरणार्थीयों के पुरूषों के तुलना मे स्त्रियों की संख्या मे लगातर कमी होती गई है।

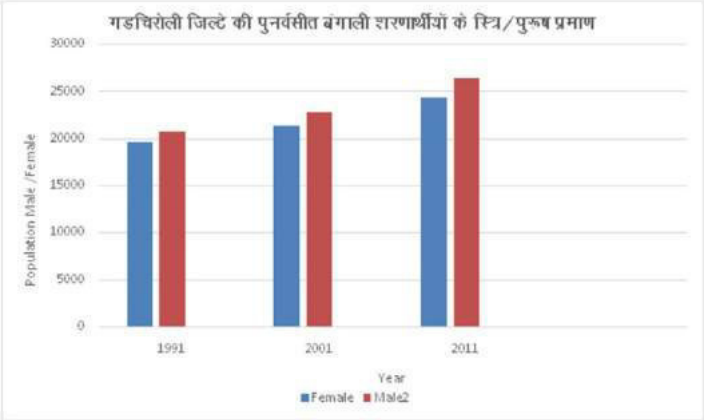

आलेख से यह ज्ञात होता है कि गडचिरोली जिल्हे की पुनर्वसीत बंगाली शरणार्थीयों की जन्मदर प्रत्येक दशक में वृदधी होती गई है।परंतु पुरूषों के वृदधीदर के तुलना में स्त्रि के वृदधी बहुत ही कम होती गई है। इस क्षेत्र मे स्त्रियों के विविध समस्या के कारण उनमे कमी आई है। जिसमे स्वास्थ के समस्या, स्त्रियों के लीए रोजगार के साधन की कमी, तथा कम उम्र मे विवाह हो जाने से भि पुरूषों की तुलना में स्त्रियों की संख्या मे कमी आई है। शिक्षा के क्षेत्र में स्त्रियों को महत्व न देने से भि कही न कही पुरूषों के तुलना में स्त्रियों की कमी पाई गई है।

लिंगानुपात

जनसंख्या मे प्रती 1000 पुरूषों के पीछे स्त्रियों का प्रमाण ही लिंगानुपात या लिंग गुणोत्तर कहलाता है।

$$\text{लिंगानुपात} = \frac{\text{स्त्रियों की कुल संख्या}}{\text{पुरूषों की कुल संख्या}} \times 1000$$

1) सन 1991 मे गडचिरोली जिल्हे की पुनर्वसीत बंगाली शरणार्थीयों की लिंगानुपातः

1991 मे कुल स्त्रियों की संख्या 19573

कुल पुरूषों की संख्या 20692

$$\text{लिंगानुपात} = \frac{19573}{20692} \times 1000$$

लिंगानुपात = 945

2)सन 2001 मे गडचिरोली जिल्हे की पुनर्वसीत बंगाली शरणार्थीयों की लिंगानुपातः

2001 मे कुल स्त्रियों की संख्या 21236

कुल पुरूषों की संख्या 22775

$$\text{लिंगानुपात} = \frac{21236}{22775} \times 1000$$

लिंगानुपात = 932

3) सन 2011 मे गडचिरोली जिल्हे की पुनर्वसीत बंगाली शरणार्थीयों की लिंगानुपातः

2011 मे कुल स्त्रियों की संख्या 24292

कुल पुरूषों की संख्या 26401

$$\text{लिंगानुपात} = \frac{24292}{26401} \times 1000$$

लिंगानुपात = 920

इस प्रकार तिन दशकों के लिंगानुपात अध्ययन से ज्ञात होता है कि सन 1991 मे गडचिरोली जिल्हे मे बंगाली शरणार्थीयों के प्रती 1000 पुरूषों पर 945 स्त्रिया हुई।सन 2001 मे प्रती 1000 पुरूषों पर 932 स्त्रिया हुई और सन 2011 मे शरणार्थीयों का प्रती 1000 पुरूषों पर 920 स्त्रिया हुई तात्पर्य यह निकलता है कि प्रत्येक दशक के पश्चात स्त्रियों की संख्या प्रती 1000 पुरूषों के पीछे कम होती दिखाई पडती है।

उपाय योजना :

गडचिरोली जिल्हे की पुनर्वसीत बंगाली शरणार्थीयों के लिंगोत्तर असंतुलन रोकने हेतू निम्नलिखीत उपाय योजना किए जा सकते है।

1) पुनर्वसीत लोगों को स्त्रियों के प्रती सकारात्मक दृष्टीकोन लाना होगा।
2) लडकी भी वंष का दिपक हो सकती है इस विचार को पुनर्वसीत लोगों के मन मे लाना होगा।
3) लडकीयों के स्वास्थ पर ध्यान देना होगा।
4) लडकीयों के शिक्षा पर जोर देना होगा।
5) लडकीयों के लिए रोजगार के साधन उपलब्ध कराई जाने चाहीए।

निष्कर्ष :

गडचिरोली जिल्हे की पुनर्वसीत बंगाली शरणार्थीयों के लिंगोत्तर असंतुलन के अध्ययन से निचे दिए गए निष्कर्ष प्राप्त हुए है।

1) गडचिरोली जिल्हे की पुनर्वसीत बंगाली शरणार्थीयों मे पुरूषों के तुलना मे स्त्रियों की संख्या कम हुई है।
2) लडकीयों की सामाजीक स्थिती निम्न दशा मे है।
3) पुनर्वसीत बंगाली शरणार्थीयों के लडकीयों को उच्च शिक्षा के ओर निरूत्साही धोरण दिखाई पडती है।
4) कुमारावस्था आने के पुर्व ही लडकीयों की विवाह कराई जाती है।
5) पुनर्वसीत स्त्रियों की स्वास्थ के स्थिती दयनिय है।
6) घरदार संभालने तक ही आयु खर्च हो जाती है।

संदर्भसाहित्य

1) Sarveet Sing and Tajinder Kour (2013) "A Geographical Analysis of Literacy and Sex Ratio in Jammu & Kashmir" Journal of The Decan Geographi Vol. 51 No 1&2 P_P 75- 81
2) भैसे संजय आणि चौधरी शं. रा. (2003) पुनर्वसीत खेडयातील आर्थिक बदलांचा तौलनिक अभ्यास (संदर्भ हतनपुर धरण, ता. भुसावळ जि. जळगांव.) महाराष्ट्र भूगोल शास्त्र संशोधन पत्रिका, खंड 16 पृष्टांक 31–40
3) घारपुरे डॉ. विठ्ठल लोकसंख्या भूगोल, पिंपळापुरे ॲन्ड कंपनी पब्लीकेशन, नागपूर.
4) तिवारी डॉ. विजयकुमार भारत का जनसंख्या भूगोल अध्ययन, हिमालया पब्लीकेशन, नागपूर
5) जिल्हा सामाजिक आर्थिक समालोचन– 1995 / 2000/2005, महाराष्ट्र शासन
6) जिल्हा जनगणना पुस्तिका

परिभाषिक संज्ञा

पुनर्वसीत	–	Rehabilated
शरणार्थी	–	Refugee
लिंगानुपात	–	Sex Ratio
असंतुलन	–	Unbalanced

समस्या – Problems

Gurukul International Multidisciplinary Research Journal (GIMRJ)
with
International Impact Factor 2.254

ISSN No. 2394-8426
Dec – 2015
Issue – I, Volume – V
Online Journal

Seasons Sensitivity and Sustenance An Assessment of Seasonal Dimensions of Disasters in Bauphal Upazila (Patuakhali).

1st Author : **Tazrin Jahan Satu**
Qualification : MS Student
Designation : Student
Institute : Dept. of Geography and Environment, Jahangirnagar University, Savar, Dhaka, Bangladesh

2nd Author : **Dr. Sheikh Tawhidul Islam**
Qualification : Professor
Designation : Professor
Institute : Dept. of Geography and Environment, Jahangirnagar University, Savar, Dhaka, Bangladesh

Abstract:

Due to geographical location Bangladesh is one of the most seasonal variable countries in the world. Every human community depends on natural environment. People cope with these adverse natural environments. Cyclone, flooding, erosion, water logging etc. are common hazard in Bangladesh. Bangladesh has three distinct seasons. Such as summer season, winter season and rainy season. Seasons regulate the life style of the Bangladesh. Unseasonal flood swept through river plain in July and twice in September. But annual seasonal flood brings fresh mud which full of nutrients and people can produce good crop. Season contributes to increase frequency and severity of disasters with adverse impacts on humans, natural ecosystem and quality of human life. Most of the people in Bangladesh depend on agriculture and agricultural production depends on season. Seasonal disaster becomes burden or challenges for different sector (agricultural and fishing). Due to seasonal crisis people suffer from malnutrition, scare labor job, high price of essential things, damage of crop, loss of habitat, fishing pattern also change. Seasonal migration is a common picture in this area. People chose high land to cultivate onion, sugarcane and low land to cultivate rice. So, only season force people to act different activity. Poverty, unemployment, high price of seed, migration, food crisis, women violence, political influence and life security become seasonal crisis in Bauphal upazila. People of Bauphal upazila use season according to their benefits and they face season related challenges in different sector. People have both internal and external strengths and capacity of the community to adjust with the seasonal challenges.

Keywords:

Season, Seasonal natural Hazard, Bauphal upazila, crop production, vulnerability.

1. Introduction Geographic location and geo-morphological conditions have made the Bangladesh one of the most vulnerable to weather and climate induced changes. The seasons of Bangladesh regulate its economy, communications, trade and commerce, art and culture and, in fact, the entire lifestyle of the people. Seasons are periods in a year marked by specific weather

conditions, temperatures and length of day. A season is a division of the year, marked by changes in weather, ecology and hours of daylight. Seasons help new things grow and old things die in nature. The four seasons (winter, spring, summer, and autumn) has a huge impact on how we lead our daily lives. Seasons are created by two very important events – 1.The rotation of the Earth that gives us day and night, and 2.The rotation of the Earth around the sun that gives us our year.

Objective of the Research:

- Identify the seasonal characteristics (climate, physical processes, crop phenology etc.) and assess how seasons stimulate people to act differently in different seasons.
- Identify major disaster events happening in different seasons and how related impacts conditions trigger different (first, second, cyclic order) problems in the area.
- Examine people's coping strategy to sustain in conditions where seasonal oscillation is a common phenomenon.

2. Methods and Materials

2.1 Selection of the study site

Considerations of science and society must be needed to select a study area. I select Bauphal upazila for my research work. Bauphal upazila is a disaster prone area. Extreme weather condition is a common picture of this area. Patuakhali district is one of the coastal regions in Bangladesh. People of Bauphal upazila depend on river. Season plays a vital role in human life. That's why I select Bauphal upazila as my study area.

2.2 Data analysis

Field observation helps a researcher to understand the local environment in depth. In my research seven focus group discussions were arranged with different stakeholders to collect data on the organization and management of fishermen and farmer as well as to get their opinions. For the purpose of this research work several calendar analyses have been conducted such as Livelihood seasonal calendar, Hazard Seasonal Calendar, Agricultural Seasonal Calendar and Land use Seasonal Calendar. In my research work, I can identify river line from Google earth. All image analysis and map representation can produce by GIS approaches.

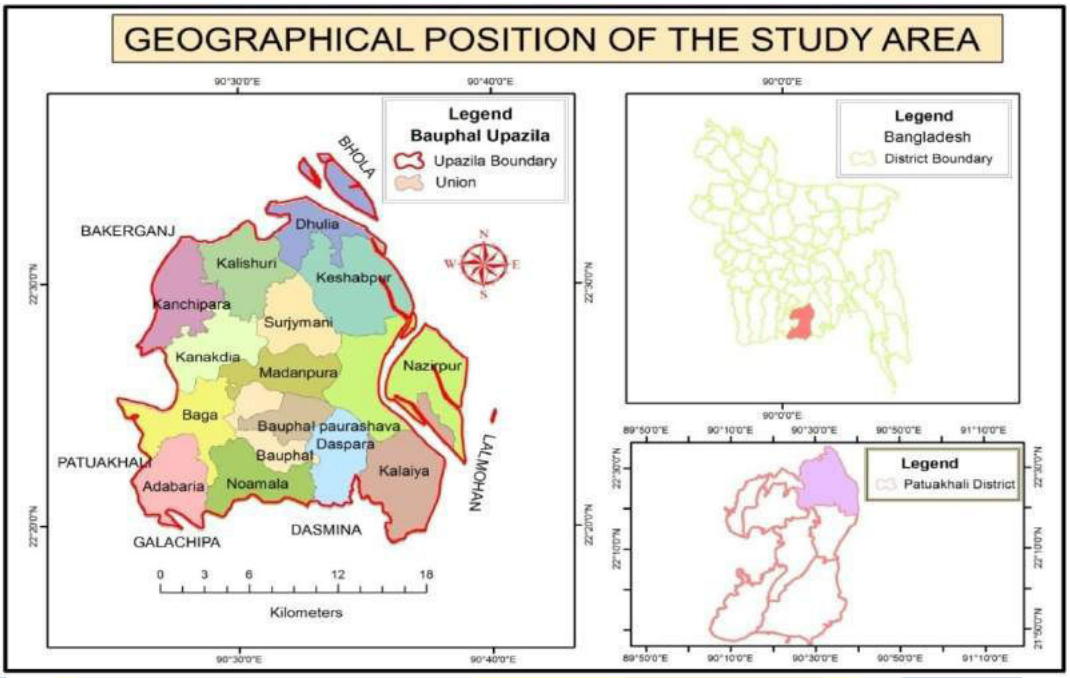

Figure 1: Geographical Position of the Study area. Source: *Compiled by Author, 2015*

3. Results

3.1 Climatic condition of the study area

Climate change and climate related hazard increasing day by day. Food security of the world becomes threaten due to increasing population and these food securities depend on climatic condition. The climatic condition of Bauphal upazila is characterized by high temperature, excessive humidity and rainfall, nor'wester wind. Pre-monsoon, post monsoon, summer, and winter wind control over the climatic condition.

3.2 Major Hazard of the study area

Location of Bauphal Upazila makes a disaster porn area in Bagladesh. Bauphal upazila abound with both aquatic and terrestrial resources. Natural hazard like as cyclone, strom surge, river erosion and flood are the major hazard of Bauphal upazila. Intensity of multiple disasters impacts on human life.

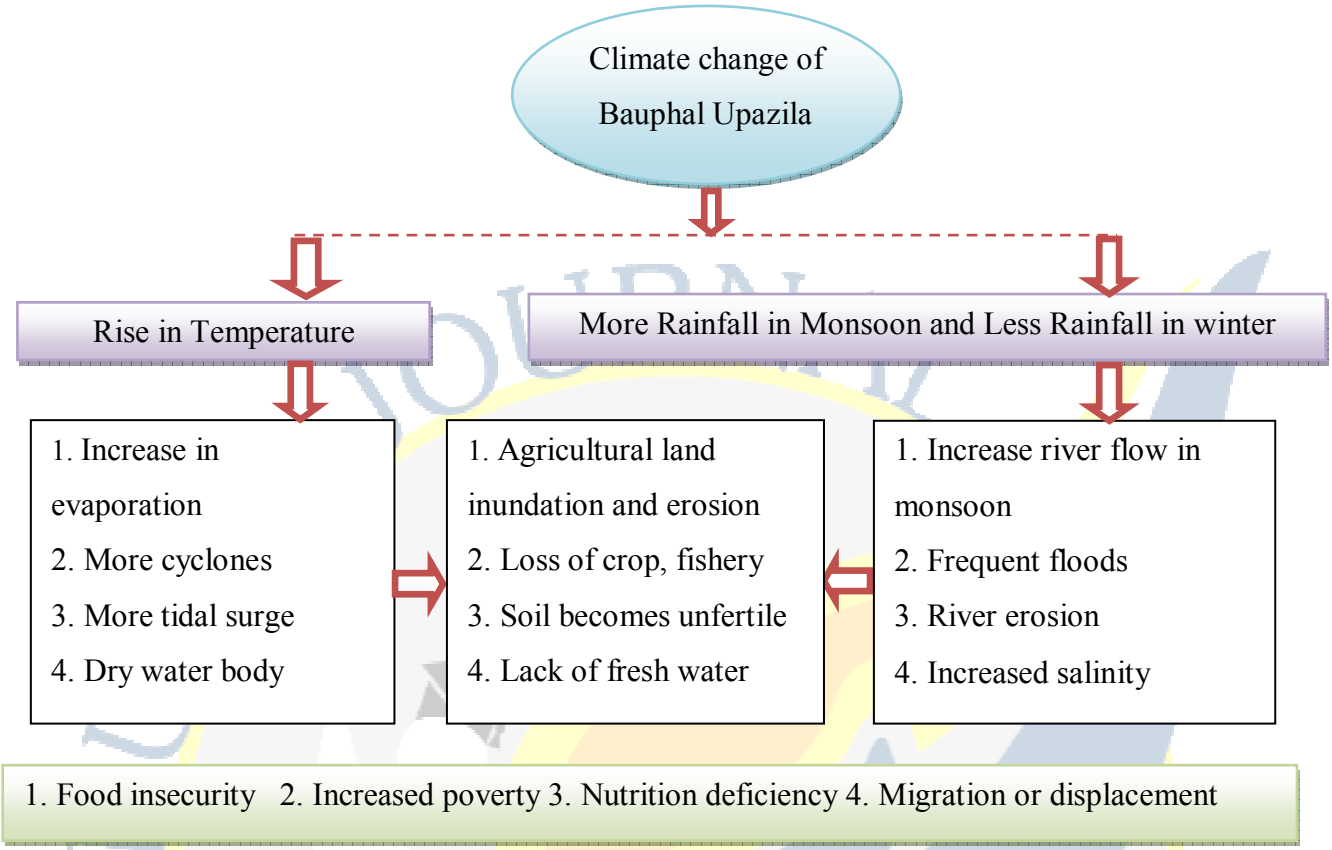

Source: Field Survey at Bauphal Upazila, 2015

3.3 Agricultural practice in the study area

Due to seasonal variation, Farmers in Bangladesh adopt a diversified cropping system. Physical, social and human factors are also responsible to develop these diversified cropping systems. Mahmud (1994) observed that the area planted to non cereal crops has continuously fallen since late 1970, mainly due to the expansion of irrigation facilities, which led to fierce competition for land between modern Boro season (dry winter) rice and non-cereals. There is an apparent paradox in the reduced cultivation of many non-cereal crops (e.g., potatoes, vegetables, onions, and cotton) science they yield more profits (both in economic and financial terms) than modern rice cultivation; the farmer has been mainly attributed to high risk as well as the incompatibility of the existing irrigation system to produce non-cereals in conjunction with rice (Mahmud, 1994). For the development of agricultural sector, access to inputs such as seed, fertilizer and irrigation is necessary for the farmer. Different hazard forced some factors for crop production.

Price subsidy for fertilizer and other agricultural inputs are not affordable for farmers during disaster period. Some tolerant technologies (seed, fertilizer, irrigation, agronomic practices) and their expansion acts as positive adaptive action against seasonal change. To cope with these seasonal change people change the cropping pattern season to season.

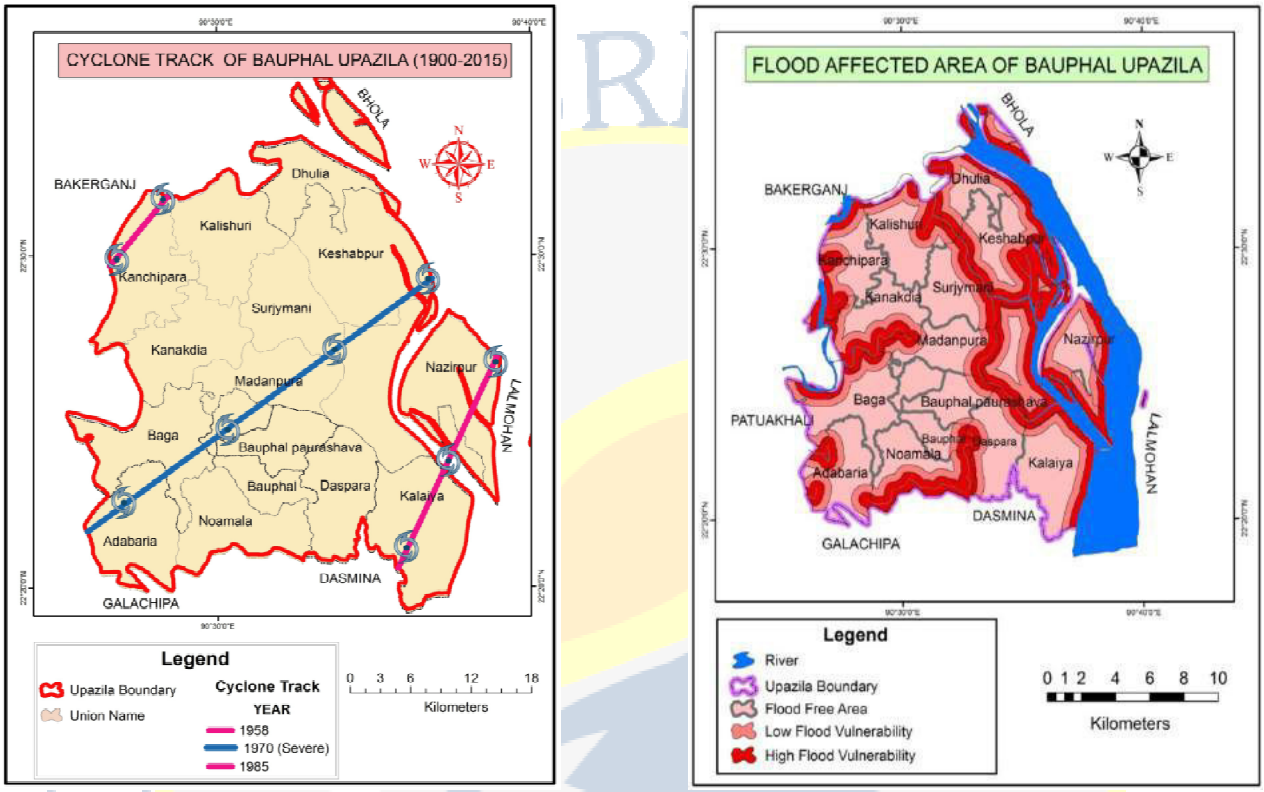

Figure 2: Major Hazard of the Study area. Source: *Compiled by Author, 2015*

4. Discussion

4.1 Impact of season on crop production

Bangladesh has a marked seasonal pattern of agricultural production that results in large differences in the levels of income, consumption and demand for labor across seasons. Seasonal climatic condition is a major factor for seasonal supply. Seasonal variation also found in price sector. When supply of vegetable is high then the demand becomes low. Similarly, when the demand exceeds the supply, price tends to rise. During winter season vegetable supply is more and price of vegetable also low. Demand for crop also affected according to people habit. For example people chose salad during summer season and soups in winter season. Prices are lower in winter and spring season and higher in the summer season. Seasonal variation impacts on soil fertility which is increase for crop production.

"The price of agricultural production goes up after a flood. The price of seeds, fertilizer and oil all increase. The price of food for man and animals also increases…we have to eat less and feed our livestock and poultry less" **Aleya (Adabaria, Bauphal upazila)**

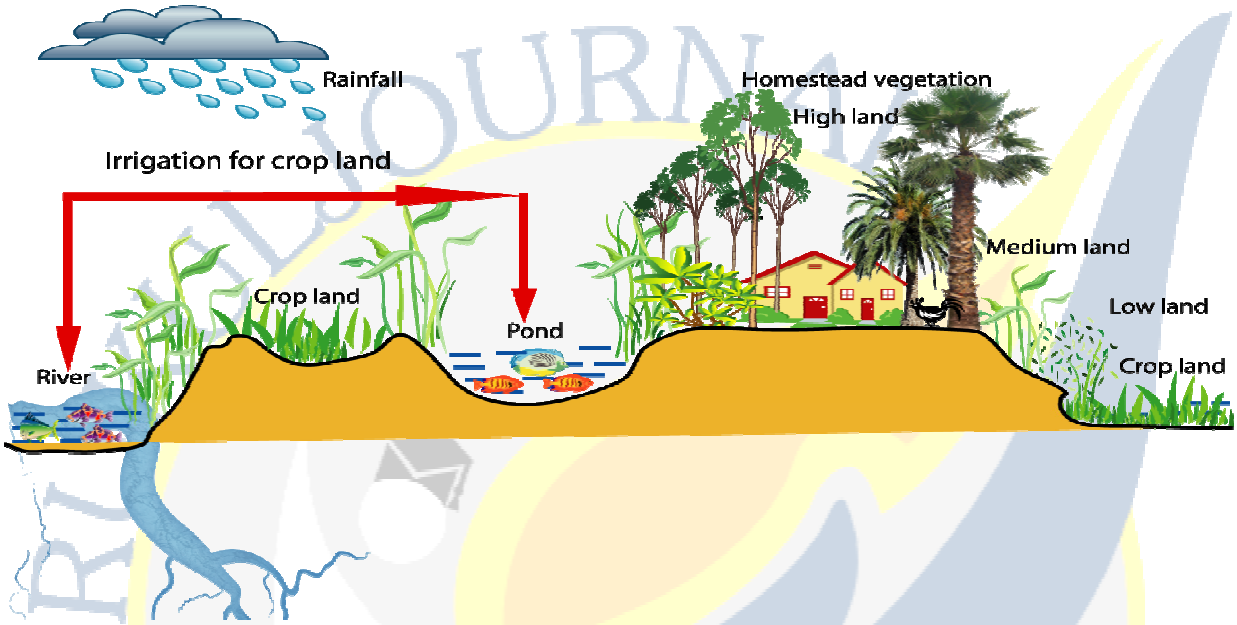

Diagram: Irrigation Source for crop production in the study area. Source: *Compiled by Author, 2015*

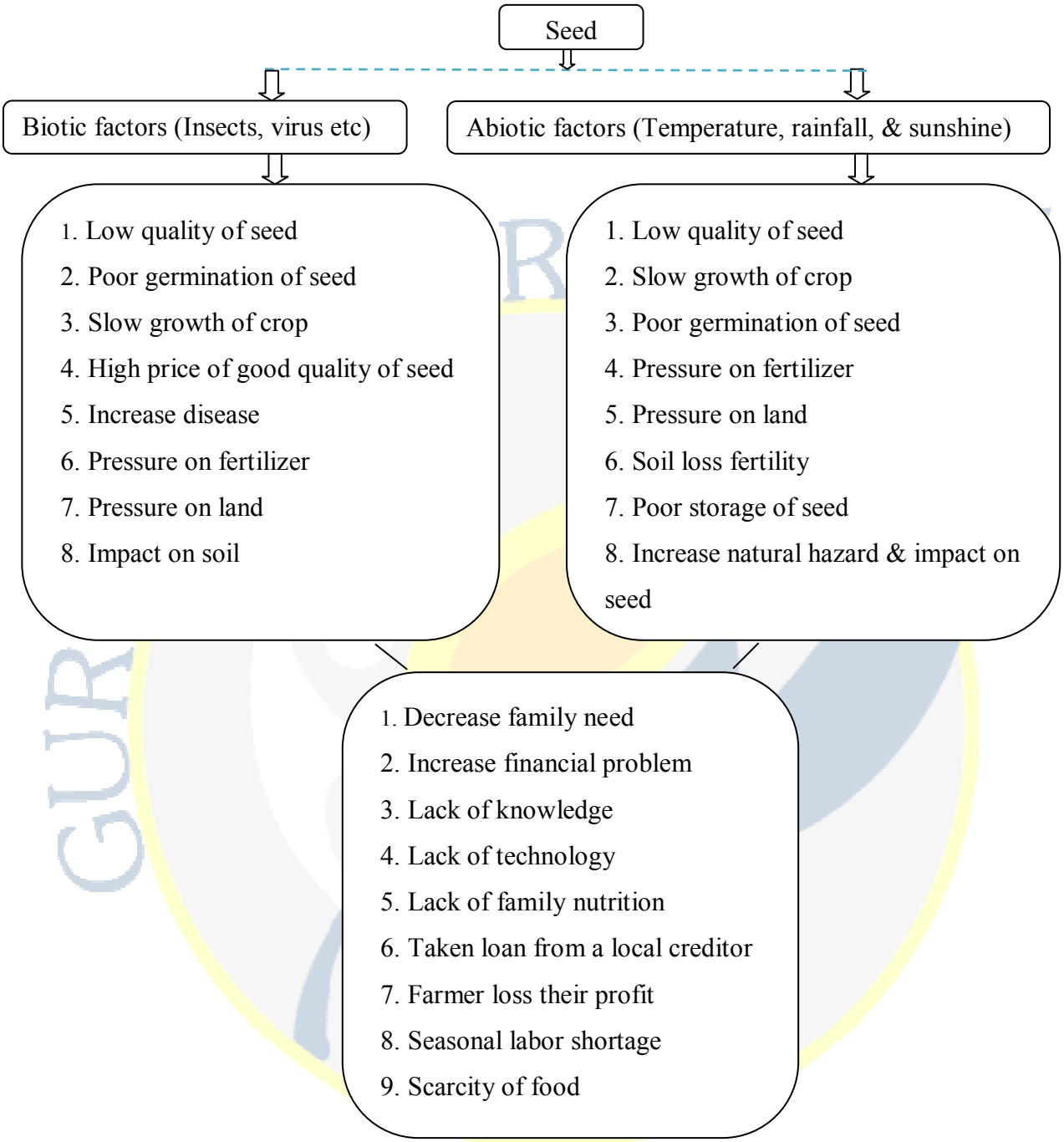

Chart: During disaster period seed impacts on farmer's livelihood

5. Conclusion

Bangladesh is widely considered as one of the most climate vulnerable countries. The vulnerability to climate is high due to a number of hydro-geological and socio-economic factors of Bangladesh (Ahmad, 2004 & 2006). Crop production of Bauphal upazila depends on nature. From sowing to harvesting crop production passes through different stages. If the growth cycles of crop production are not satisfied then final yield do not fulfill the demand. Various factors such as land types, soil, cropping pattern, investment, good quality of seed, fertilizer etc influenced the crop production of the study area. Natural disaster is a common factor of crop production. Food security is defined as "access by all people at all times to enough food needed for an active and healthy life. It's essential elements are the availability of food and the ability to acquire it" (Reutlinger, 1985). All people vulnerability is not same and these vulnerability classifications shaped the society. Some small farmer does not have seed to produce the crop. Farmer loss their profit and become more vulnerable. So, relationships among the disaster, agriculture and season are interrelated with each other.

5. Reference

1. Acharya, A. (2010). "Derived Value of Provisional Ecosystem Goods and Impacts on Human Development Index: A study of Chhekampar VDC, Manaslu Conservation Area of Gorkha District" M.S. thesis, Kathmandu University, Nepal, 1998.
2. Malla, G. (2008). Climate Change and its impact on Nepalese Agriculture, The Journal of Agriculture and Environment, 9(8), 62-71.
3. BBS (Bangladesh Bureau of Statistics).Bangladesh Bureau of Statistics. Bangladesh population census *Bangladesh statistical year book,* Dhaka, Bangladesh. **2011**
4. Miyan, M. A. Cyclone Disaster Mitigation in Bangladesh. S*outh Asian Disaster Management Center (Sadmc)*.**2005**
5. 2015 by the authors; licensee MDPI, Basel, Switzerland. This article is an open access article distributed under the terms and conditions of the Creative Commons Attribution license http://www.int-res.com/articles/cr/12_2/c012p109.pdf

Gurukul International Multidisciplinary Research Journal (GIMRJ)
with
International Impact Factor 2.254

ISSN No. 2394-8426
Dec – 2015
Issue – I, Volume – V
Online Journal

Metacognition Awareness Of Prospective Teachers

Venkatapati.Charan Kumar
M.Sc.,M.Ed.,M.Phil.,(Ph.D).,
Research scholar
Acharya Nagarjuna University
GUNTUR
ANDHRA PRADESH.

ABSTRACT

The present study of the investigation is study of the Metacognition Awareness of Prospective Teachers in. Vishakhapatnam District of AndhraPradesh.There are One hundred and twenty four prospective teachers who were studying in the various private teacher training college trainees is constituted sample There were 23 B.Ed. colleges and 16 D.Ed colleges in Vishakhapatnam District as per the www.maabadi.com. The colleges of education were selected by the simple random techniques i.e., lottery system. It means that the researcher used lottery system method to select the colleges of education by simple random technique to collect the data. In this case researcher used a set of 39(23+16) tickets. The tickets were thoroughly mixed up and then 14 tickets were drawn out among the 39. The tickets which have the serial numbers occurring on 39 tickets were used to select 02 colleges of education for the sampling purpose. Which were perfectly alright could be considered for the analysis.

Key words

Components of Metacognition, Metacognitive Knowledge, Metacognitive Regulation, Metacognition Awareness, Role in Training Metacognition

Introduction

The concept of metacognition has been considered in recent years in field of education as a concept that is worked on. Metacognition is the awareness one has about his/ her thinking process and how he/she is able to control these processes. Metacognition strategies are the sequential process individuals use to learn how to control themselves and to reach a goal. They significantly help the arrangements and control of the individual learning. Metacognition concept was put forward for the first time in 1976 by **John Flavell** and developed by many researchers until today. Metacognition plays an important role in communication, reading comprehension, language acquisition, social cognition, attention, self-control, memory, self-instruction, writing, problem solving, and personality development.

Definition of Metacognition

*A recent definition describes metacognition as "one's knowledge and beliefs about one's own cognitive process and one's resulting attempts to regulate those cognitive processes to maximize and memory" (**Ormrod,** 2006).*

Components of Metacognition

According to Flavell (1979, 1987), metacognition consists of both metacognitive knowledge and meta-cognitive experiences or regulation. Metacognitive knowledge refers to acquired knowledge about cognitive processes, knowledge that can be used to control cognitive processes. Flavell further divides metacognitive knowledge into three categories i.e., knowledge of person variables, task variables and strategy variables.

Metacognitive Knowledge: Stated very briefly, knowledge of person variables refers to general knowledge about how human beings learn and process information, as well as individual knowledge of one's own learning processes. Knowledge of task variables includes knowledge about the nature of the task as well as the type of processing demands that it will place upon the individual

Metacognitive Regulation: Metacognitive experiences involved the use of metacognitive strategies or metacognitive regulation (Brown, 1987). Metacognitive strategies are sequential processes that one uses to control cognitive activities, and to ensure that a cognitive goal (e.g. understanding a text) has been met. These processes help to regulate and oversee learning, and consist of planning and monitoring cognitive activities, as well as checking the outcomes of those activities.

Metacognitive Skills

Metacognition is an important concept in cognitive theory. It consists of two basic processes occurring simultaneously: monitoring your progress as you learn, and making changes and adapting your strategies if you perceive you are not doing so well. (Winn, W. & Snyder, D., 1998) It's about self-reflection, self-responsibility and initiative, as well as goal setting and time management.

Metacognitive Skills include

1. Taking conscious control of learning
2. Planning and selecting strategies
3. Monitoring the progress of learning
4. Correcting errors
5. Analyzing the effectiveness of learning strategies and
6. Changing learning behaviours and strategies when necessary

Teacher's Role in Training Metacognition

The study of metacognition has provided educational psychologists with insight about the cognitive processes involved in learning and what differentiates successful students from their less successful peers

In this rapidly changing world, the challenge of teaching is to help students develop skills which will not become obsolete. Metacognitive strategies are essential for the twenty-first century. They will enable students to successfully cope with new situations. Teachers and school library media specialists capitalize on their talents as well as access a wealth of resources that will create a metacognitive environment which fosters the development of good thinkers who are successful problem-solvers and lifelong learners.

Statement of the Problem

Title of the present study of the investigation is *"A study of the Metacognition Awareness of Prospective Teachers"*.

Metacognition Awareness: The term metacognition was introduced by Flavell in 1976 to refer to "the individual's own awareness and consideration of his or her cognitive processes and strategies". An awareness of the process of how an answer is found, what strategies and type of thought has gone on and the previous experiences that have been used and awareness of the different processes involved in thinking.

Prospective Teachers

It refers to those who are undergoing teacher training courses in different colleges of teacher training in Andhra Pradesh.

Objectives of the Study

The investigator has designed the following specific objectives for this study.

1. To study the influence of the following variables on the metacognition awareness of prospective teachers.

   1) Gender 2) Age 3) Academic qualifications

   4) Mode of admission 5) Locality 6) Level of teacher education

Hypotheses of the Study

The following hypotheses have been formulated basing on the objectives.

1. There is a significant difference in the metacognition awareness of prospective teachers in relation to the following variables.

   1) Gender 2) Age 3) Academic qualifications

4) Mode of admission 5) Locality 6) Level of teacher education

Methodology of the Study

Sample

Normative Survey Method was adopted in this study. The sample for the study was 124 prospective teachers belonging to four colleges of education in Visakhapatnam district of Andhra Pradesh. The sample for the study had been selected by the simple random technique.

Tools used

The investigator used meta-cognition inventory developed by Punita Govil (2003), Lecturer Department of Education, N.K.B.M.G. Degree College, and CHANDAUSI**.** The inventory contains 30 items to measure the various facets of meta-cognition such as knowledge of cognitive and regulation of cognitive. The inventory was prepared on four-point scale type with not at all, somewhat, to considerable extent, and very much so. If a respondent marks 'Not at all' it is given a weightage of 1 point. Similarly 2, 3, 4 points are given for marking on 'somewhat', 'to considerable extent' and 'very much so' respectively. The range of scores is from 30 to 120. The range of obtained scores for this sample was from 57 to 108, as reported by the investigator. The validity of the tool was 0.85 and reliability of the tool was 0.82. From the self correlation of the half tests, reliability of the tool was found to be 0.54 by split half method, as stated by the investigator.

Statistical Techniques Used

The investigator has used the following statistical techniques for analysis of data i.e., Mean, Standard Deviation and Critical Ratio.

ANALYSIS OF DATA AND INTERPRETATION OF RESULTS

H_1: Gender of prospective teachers makes a significant difference in their metacognition awareness.

H_0: Gender of prospective teachers does not make a significant difference in their metacognition awareness.

Table-1:Metacognition-Gender–Mean-S.D. and C.R

Variable	N	Mean	S.D	D	σ_D	C.R
Male	065	109.14	11.71	0.89	2.12	0.42*
Female	059	110.03	11.87			

* Not significant at 0.05 level

From the above table No.1 , it is observed that the obtained C.R. value (0.42) is less than the table value of 1.96. Therefore, it is not significant at 0.05 level. Hence, the null hypothesis is retained. It can be inferred that gender of prospective teachers does not make a significant difference in their metacognition awareness .

Hence, gender of the prospective school teachers does not make a significant difference in their metacognition awareness.

H_2: Academic qualifications of prospective teachers make a significant difference in their metacognition awareness.

H_0: Academic qualifications of prospective teachers do not make a significant difference in their metacognition awareness.

Table-2: Metacognition-Academic Qualifications–Mean-S.D. and C.R.

Variable	N	Mean	SD	D	σ_D	C.R.
Intermediate	53	106.77	10.63	4.88	2.05	2.38*
Graduate	71	111.65	12.18			

*Significant at 0.05 level

From the above table No.2, it is observed that the obtained C.R. value **(2.38)** is greater than the table value of **1.96**. It is significant at **0.05** level. Therefore, the null hypothesis is rejected. That is, prospective teachers with above the mean academic qualifications group make a significant difference in their metacognition awareness .

H_3: Mode of admission of prospective teachers makes a significant difference in their metacognition awareness.

H_0: Mode of admission of prospective teachers does not make a significant difference in their metacognition awareness.

Table-3: Metacognition-Mode of Admission–Mean-S.D. and C.R.

Variable	N	Mean	SD	D	σ_D	C.R.
Convener Quota	085	86.17	10.80	6.17	2.37	2.60*
Management Quota	039	80.00	10.57			

*Significant at 0.05 level

As is obvious from table No.3, it is observed that the obtained C.R. value (2.60) is greater than the table value of 2.58. It is significant at 0.01 level. Therefore, the null hypothesis is rejected. Hence, mode of admission of the prospective school teachers makes a significant

difference in their metacognition awareness. The mean difference (6.17) is in favour of convener quota prospective school teachers. Hence, it can be stated that prospective teachers admitted under convener quota possess high metacognition awareness, when compared to their counterparts under management quota.

H_4: Locality of admission of prospective teachers makes a significant difference in their metacognition awareness.

H_0: Locality of admission of prospective teachers does not make a significant difference in their metacognition awareness.

Table-4: Metacognition-Locality–Mean-S.D. and C.R

Variable	N	Mean	SD	D	σ_D	C.R.
Urban	079	88.31	11.28	3.66	2.19	1.67*
Rural	045	84.65	10.79			

*Not significant at 0.05 level

As is obvious from table No.4, it is observed that the obtained C.R. value (1.67) is less than the table value of 1.96. It is not significant at 0.05 level. Therefore, the null hypothesis is retained. Hence, locality of the prospective school teachers does not make a significant difference in their metacognition awareness.

H_5: Level of teacher education of admission of prospective teachers makes a significant difference in their metacognition awareness.

H_0: Level of teacher education of admission of prospective teachers does not make a significant difference in their metacognition awareness.

Table-5: Metacognition-Level of Teacher Education–Mean-S.D. and C.R.

Variable	N	Mean	SD	D	σ_D	C.R.
B.Ed.	064	84.08	10.94	2.14	1.70	1.25*
D.Ed.	060	86.22	10.92			

*Not significant at 0.05 level

As is obvious from table No.5, it is observed that the obtained C.R. value (1.25) is less than the table value of 1.96. It is not significant at 0.05 level. Therefore, the null hypothesis is retained. Hence, level of teacher education of the prospective school teachers does not make a significant difference in their metacognition awareness.

Major findings of the Study

1. Gender of the prospective school teachers does not make a significant difference in their metacognition awareness.
2. Age of the prospective school teachers does not make a significant difference in their metacognition awareness.
3. Academic qualifications of the prospective school teachers do not make a significant difference in their metacognition awareness.
4. Mode of admission of the prospective school teachers makes a significant difference in their metacognition awareness.
5. Locality of the prospective school teachers does not make a significant difference in their metacognition awareness.
6. Level of teacher education of the prospective school teachers does not make a significant difference in their metacognition awareness.

Suggestions for further Research

The following suggestions are made for further research in this area.

1. A similar study may be conducted with large sample in the thirteen districts of Andhra Pradesh.
2. A study may be undertaken in the two regions of Andhra Pradesh namely, Coastal and Rayalaseema.
3. A comparative study may be undertaken with the samples in Southern States of India, namely Andhra Pradesh, Telangana, Tamil Nadu, Karnataka and Kerala.
4. The study may be undertaken to +2 students, degree, post graduate students and engineering students studying in various colleges situated in Visakhapatnam District.

Educational Implications

Variables like gender, age, academic qualifications, mode of admission into teacher training course, locality and level of teacher education does not make a significant difference in the metacognition awareness of prospective teachers suggest that curriculum design, the teacher training activates, evolution procedures and teaching practice training activities can be designed and organized in a uniform pattern to enable prospective teachers receive pre-service training through uniform methods. This helps in standardizing training schedules and evaluation techniques.

Acknowledgements:

My great full thanks to my mother Smt. V.KAMESWARI and my Brother Mr.V.CHANDRA SEKHAR for their financial co-operation to complete this piece of Research work.

I am thankful to all the teacher education college principals and Lecturers and teacher trainees selected colleges. Who have co-operated for this study, with out whom this study would not have been possible.

References

Annaraja, P. and Sheeja V. Titus (2012). Meta-Cognitive awareness of secondary teachers education students, Edutracks March 2012, Vol. 11, No. 6, pp. 29-31.

Flavell, J. H. (1976). Metacognition and cognitive monitoring: A new area of cognitive-developmental inquiry. American Psychologist, 34(10), 906-911.

Henry E. Garrett (2006). Statistics in Psychology and Education, PP. 241-242, 260, 339-340Bombay: Published by Mr. Saikh, A.F. for Vakils, Feffer and Simmons Limited.

Henry E. Garrett (2006). Statistics in psychology and education, Surjeet publications: Delhi, PP.403-417.

Kulbir Singh Sidhu, (1984). Methodology of Research in Education, PP. 107-115, New Delhi, Bangalore, Jalandhar: Sterling Publishers Private Limited.

Lokesh Koul, (2007). Methodology of Education Research, (3rd ed), PP. 430-462, New Delhi: Vikas Publishing House Pvt. Ltd.

Punita Govil (2003). Metacognition inventory, Lecturer Department of Education, N.K.B.M.G. Degree College, and CHANDAUSI.

Sankereswari, N. and Porgio, G. (2015). Study on academic self-regulated learning and metacognition of high school students, Xavier Journal of research Abstracts 2014-15, Vol. 2, No. 2, pp.7-8.

Shareeja Ali M C. (2010). Metacognition Concept and its Development, Edutracks May 2010, NeelKamal Publications Pvt. Ltd, Hyderabad, Vol. 9, No. 9, pp.10-13. ISSN: 0972-9844.

Sharma, R.A. (2006). Advanced statistics in education and psychology, R. Lall Book Depot: Meerut (UP), PP. 188, 237, 410.

Vembudurai, R. and Annaraja, P. (2015). Study the relationship between metacognition and academic self regulation of B.Ed students, Xavier Journal of research Abstracts 2014-15, Vol. 2, No. 2, pp.15-16.

Gurukul International Multidisciplinary Research Journal (GIMRJ)
with
International Impact Factor 2.254

ISSN No. 2394-8426
Dec – 2015
Issue – I, Volume – V
Online Journal

Competency Based Employee Development

Dr. Purnima V. Meshram
M.Com, M.Phil, Ph.D,
Chintamani College of Commerce,
Pombhurna, Dist. Chandrapur
drpurnimavilas@gmail.com

Abstract

This is competency era. It is beyond doubt that it is beneficial and cost effective, to have competent people to occupy all level positions. Competency refers to the intellectual, managerial, social and emotional competency. Many organizations in India and abroad are making their efforts to mapping competencies and implementing assessment and development centers. This paper gives a deeper insight into the areas of competency based and employee development.

Keywords

Employee Development, Changes, Approaches, Competency Management

Introduction

Employee development consists of experience and training opportunities designed to enhance current employees, knowledge and skills. Employee development tends to focus on manager, but can be used for other employee as well. It is important for companies because it helps to retain employees and ensures that the organization has capable employees for filling positions throughout the company. Many companies will emphasize a "promote from within" philosophy. This practice helps to ensure that employees will see a career path at the organization and is important in ensuring that valuable employees are retained. The company also benefits by having a pool of skilled and talented workers to choose from to fill higher position in the company. Thus, in order to successfully utilize a "promote from within" philosophy, companies must demonstrate a strong focus on employee development to ensure that there is a steady supply of talent to fill positions.

Employee Development in a Changing Organization and Ways to Foster Changes

Organisations change in response to changing markets. These days, global market Change is coming at a breakneck pace. A recent report published by the Conference Board of Canada, entitled Leadership for Tomorrow; playing Catch –up with change, reveals that the complexity and speed of change is more than most high-level executives can manage on their own. Increasingly, corporate leaders are relying on the skills, education and competence of their employee's at all organizational levels.

As we enter the new economic age, in which human intellectual capital drives the bottom line, organization must obtain the maximum contribution from their knowledge workers. In addition to recruiting the highest quality people, they must also find ways to develop and retain them. This however, is easier said than done. During times of organizational change,

management's attention is so often diverted by day-to-day demands that employee development gets forced into a subordinate position.

- How do organizations develop their people during such intense times?
- How do they do this in ways that benefit the employee and move the organization forward?
- Furthermore, how do they prevent their most talented people from leaving the organization?

These are some of the question which cannot be left unanswered, but one can explain this with the help of approaches which when followed can help the employee to tackle change and accordingly develop themselves for their betterment.

Approaches of Employee Development

- Formal education
- Assessment
- Job experiences
- Interpersonal relationships

Formal education - Companies may decide to develop employees through the use of formal education. This typically involves employee taking courses at local universities, but some very large organizations have created their own formal educational facilities to develop employees. These formal educational offering needs of a particular company.

Assessment - Assessment is the process through which one can assess an employee's skills and abilities. The organization may use this to identify high potential employees, who then may be guided to Other developmental experiences to further develop their skills. This information is often used to provide feedback to managers regarding their strengths and weaknesses so that they can try to make improvements. Ability and personality tests are often used in the assessment process. As one would guess by the title of these tests, cognitive ability tests are use to assess one's intelligence and personality. These are usually used more for delivering feedback regarding strengths and weaknesses. The reason is that these tests are designed to measure stable attributes of individuals; that is, characteristics that one would not expect to change much. In some cases, however. These tests may be given to employees to give them greater awareness of their abilities.

Job experience - Employee development also occurs through job experiences. These are probably the most common ways of fostering employee development. Companies may enlarge the employee's job. This entails giving the employee most responsibilities and/or more tasks. Job rotation may also be used which involved rotating the employee through the different functional area of the company. Job rotation appears to be particularly common to prepare managers for high level positions within the company. For example, an employee working in domestic sales may be transferred to perform a similar job in another country. A promotion would involve taking on a different jab that involves more responsibility and challenge. Finally, organization may utilize temporary assignment or projects to help expand an employee's skill.

Interpersonal relationships - Mentoring involves having a more experienced employee provide guidance and advice to a less experienced employee. Mentoring can be formally mandated by the company. Where the company assigns mentors or it can occur informally. Because of the potential of informal mentoring to leave out under represented groups. Many companies have adopted formal mentoring programs. Although mentoring programs are being primarily a benefit to the less experience employee, the more experience employee can receive many benefits as well. They may improve their skills in mentoring and developing employees, which will likely be very helpful to them as they move up the corporate ladder.. Also, it may help the mentor learn about new and innovative developments. Another interpersonal relationship involves having a personal coach. This may be another employee within the company or could be an outside consultant. The role of the coach is to help you improve your performance. If the coach is an outside consultant, they will probably assess the employee's current skills and then work with the employee to develop a plan to improve the employee's skill. The advantage of hiring an outside consultant to serve as a coach is that the employee may be more willing to honestly explore his or her weaknesses. On the other hand, a coach who is also an employee of the same company may have a better understanding of what it takes to be successful at the company and may have a strong relationship with the employee that is based on working closely with this person for a number of years.

Other Approaches

Some organizations have designed and implemented employee development initiatives, which are know. For example, career management or career development programs.

Other programs offer education, for instance, on daily living or basic skills, team building, leadership and visioning. Few of these program have a long –terms significant impact on either individual development or organizational success- as some leaders have learnt as cost-benefit results became more available.

These are the approaches which will help in employee development but there should be certain ways to promote the growth of employee development and the ways to foster employee development can be done as follows:

- **Implement a mentoring program-** Pairing newer, less experienced employees with more experienced employees is a great way for people to learn from another. Mentors often help their charges to see the "bigger picture" when it comes to their working life. And, at the same time, mentors themselves can gain valuable insight from their protégés and become better managers.
- **Launch employee-training programs :** Investing in employee continuing education demonstrates that the company values its people and wants them to grow, Even after an individual joins an organization and the "honeymoon" period has passed, companies should continue to provide training on an ongoing basis for any skills that may be pertinent to the employee's job.
- **Reimburse tuition costs:** Helping employee finance their education is a tangible way to demonstrate a company's commitment to fostering a workforce full of skilled and talented people. This form of employee development also benefits the company as a whole-better

educated employees increase firm's chance for success in a competitive marketplace. Adding tuition reimbursement to benefits package also makes company a much more desirable place to work and can help attract top talent.

- **Hire and promote from within:** Employee appreciate job security but in order to grow professionally, people want and need new responsibilities. Giving employees opportunities to grow within the company let them know that company values their past contributions and has faith in their abilities to take on greater challenges. Let people know when new position are available in the company before opening up those jobs to outside applicants and be sure to give first consideration to in house candidates.
- **Reward star performers:** don't make the mistake of neglecting employees who do great work don't need much managing. Some managers make the mistake of believing that star performers don't need occasional paths on the back. But disregarding their hard work can be demoralizing. Call them out for their efforts or else they may come to think no one notices and their performance may suffer as a result.
- **Foster creative learning processes:** Often, employees want to make suggestions about the way things are done but don't have a way to voice their ideas. Develop a method that makes it easier for staffers to share their creative ideas or suggestion with top management.

Competency based performance systems have proven effective in both industry and other sectors. However developing high performing leaders who are able to navigate with sensitivity and compassion in a global environment, and who engender trust as they confront complex challenges, required more than mastering a common set readily assessed performance standard. Rather, leadership development requires more complex competencies dependent upon individual characteristics. In particular, it is essential for global leaders to be men and women of integrity and character.

Employee Development Becomes Competency based

For employee development one of the best constitutes can be a competency-based system which is no better than its best component. Following are the competency-based system component.

- Identification/assessment of desired results; you need to know organizational performance you are trying to achieve in order to identify the "desired state" competencies. Organisational performance assessment will also provide data to help evaluate the success of your development efforts.
- Competency models: you need to identity the competencies that truly have an impact on results.
- Employee competency assessment: you need to know that competencies of employee in order to compare them with the desire state (competency model).
- Employee development strategies and resource: you need to have the training and development programs and resource that can address the gap in competencies.

All four components require attention to achieve positive results, ensure efficient utilization of resource and yield a high return on investment. If the information on results is

faulty or insufficient, the wrong competencies may be in the model. If the model is poorly constructed. The competencies may not accurately link to desired result. One may waste resource developing employee's competencies that are not needed. This could also happen if the method of assessing employee's competencies is inaccurate. Finally, if staff development is not made a priority with sufficient resources committed to it, the development objective may not be achieved. Employee and supervisor expectations would not be met and the effort would have a negative impact. The key to avoiding these problems is to plan for all four components and scale the efforts appropriately.

Reference :

1. Athey T. and Orth M. "emerging competency methods for the future human resource management". Human resource management .38,215-26(1991)
2. Competency management in support of organizational change. International journal of manpower (2007)
3. Hendry C. and pettigrewA. " the practice of strategic human resources management ", personnel review, 15,2-8(1986)
4. Hamel G. ,"the concept of core competence", in the Hamel G. and Heene A. (eds), competence-based competition, Wiley, NY (1994).
5. http;//www.cs.state.ny.us/successionplanning/ workgroup/competencies.

Gurukul International Multidisciplinary Research Journal (GIMRJ)
with
International Impact Factor 2.254

ISSN No. 2394-8426
Dec – 2015
Issue – I, Volume – V
Online Journal

एकविसाव्या शतकातील शैक्षणिक ग्रंथालयांची वाटचाल

श्रीमती. जयश्री माणिकराव गित्ते
ग्रंथालय विभाग
जवाहरलाल नेहरू कला, वाणिज्य
विज्ञान वरिष्ठ महाविद्यालय,
परळी वै. जि.बीड

प्रस्तावना :–

देशातील ग्रंथालय चळवळीत शैक्षणिक ग्रंथालये ज्यात विद्यापीठांची आणि महाविद्यायालयांची ग्रंथालये येतात, त्यांचे महत्वाचे योगदान आहे. हा एक मोठा आणि महत्वाचा घटक आहे. देशातील ४३० च्यावर वेगवेगळया स्वरूपातील विद्यापीठे, त्यांच्याशी संलग्न अशी वीस हजारांवर महाविद्यालये, ज्या ठिकाणी असलेल्या एक कोटी दहा लाखांवर विद्यार्थ्यांना आणि पाच लाखांवर शिक्षकांना अभ्यासासाठी आणि संशोधनासाठी ही ग्रंथालये सेवा देत आहेत. या आकडेवारीत दरवर्षी झपाटयाने वाढ होत आहे. शिक्षण क्षेत्रातील झपाटयाने होणारा हा बदल असामान्य अचाल आहे. देशाला स्वातंत्र्य मिळाले त्या वेळी केवळ अठरा विद्यापीठे आणि सहाशेच्या जवळपास महाविद्यालय होती. या विलक्षण आणि अकालनीय अशा वेगाने झालेल्या बदलात शैक्षणिक ग्रंथालयांची अवस्था ही कोणत्या स्वरूपाच्या संस्थेचे घटक आहेत, कोणत्या विद्यापीठाशी संलग्न आहेत, कोणत्या राज्यात आहेत, कोणत्या प्रकारच्या वाचकांना सेवा देतात, यावर अवलंबून आहे. ग्रंथालयात झालेला बदल वरील सर्व घटकांवर आवलंबून आहे. त्यामुळे भारतात काही ग्रंथालये ही खरोखरीच उत्कृष्ट तर काही यथातथच आहेत.

शैक्षणिक ग्रंथालये ही अनेक प्रकारांत, अनेक विषयांची आणि विविध आकारांची आहेत. यासाठी एकच 'नमुना' त्यांना एकविसाव्या शतकाकडे नेण्यास उपयोगी ठरणार नाही. असे असले तरी या सर्व ग्रंथालयांत काही समान सूत्र, सारखे प्रश्न, समस्या , विषय असतील जे एकविसाव्या शतकाकडील वाटचालीत विशेष घटक म्हणून मांडता येतील.

एकविसाव्या शतकातील ग्रंथपालन :

अमेरिकेमधील आणि इंग्लंडमधील ग्रंथालयांत उपलब्ध असलेल्या, शैक्षणिक ग्रंथालयांच्या विकासातील या बदलत्या काळातील व्यावसायिक साहित्यात एकविसाव्या श्शकतकातील ग्रंथालयांच्या विशिष्ट लक्षणाबद्लची माहिती आढळते. यासाठी खालील दोन प्रलेखांचा उल्लेख वरील विधानाच पुष्टयर्थ देता येईल.

१. रिडिझायनिंग लायब्ररी सर्व्हिस : ए मॅनिफेस्टो बाय मिचेल बकलॅंड, अमेरिकन लायब्ररी असोसिएशन, श्शिकागो, १९९२ आणि २. द लायब्ररी इन द टुंटीफस्ट सेंच्यूरी – न्यू सर्व्हिसेस फॉर द इन्फॉरमेशन एज बाय पीटर ब्रॉफी, लायब्ररी असोसिएशन पब्लिशिंग, लंडन २००९ विद्यापीठ ग्रंथालयांनी वैयक्तिक स्तरावर ग्रंथालयांच्या आधुनिकीकरण, संगणकीकरणाचे प्रकल्प तयार करून त्याची कालबध्द पूर्तता केलेली आहे. तंत्रज्ञानविषयक विकासाचा एक भाग म्हणून विजीय जाळयांची निर्मिती, साधनसामग्रीत सहभासाठी कन्शॉरशियांची स्थापन करून ग्रंथालयांचे आधुनिकीकरण केलेले

आहे. यासाठी आर्थिक आणि भांडवली गुंतवणुकीकरिता फ्रेंडस ऑफ लायब्ररीज, अल्मूनी असोसिएशन यासारख्या व्यावसायिक संघटनांनी सहाय केले आहे.

ग्रंथालयांची नैमित्तिक कामे आणि सेवा यांसाठी या नव्या तंत्रज्ञानाचे प्रशिक्षण ग्रंथालय कर्मचाऱ्यांना ज्यात विद्यार्थी, सहायकही येतात त्यांना दिले आहे. याचबरोबर ग्रंथालयांचा वापर करणाऱ्या वाचकांनाही विश्वासात घेउन ग्रंथालयात हे बदल केले आहेत. पारंपारिक पध्दती आता नव्या तंत्रांनी बदलल्या आहेत. विशेष त्रास न होता विकासनशील देशात शैक्षणिक ग्रंथालयांचे आधुनिकीकरण करण्यात फारसा त्रास झालेला नाही. कारण बाहय घटक ज्यात संगणक साक्षरता आणि तंत्रज्ञान उपयोजन सर्व थरांत असल्याने त्याचा वापर सहज करता आला.

एकविसाव्या शतकातील शैक्षणिक ग्रंथालय :

‘ एकविसावे शतक ’ या शब्दप्रयोगात माहिती आणि संप्रेषण तंत्रज्ञानाच्या प्रवेशाने ग्रंथालयातील वातावरणात झालेला बदल अभिप्रेत आहे. माहितीची/ज्ञानाची निर्मिती, संकलन, संघटन, संस्करण आणि वितरण या विदत जगातील मूलभूत प्रक्रियेत १९८० पासून सतत बदल होत आहेत. माहिती आणि ज्ञानाची नोंद , जपणूक आणि वितरण यांच्या माध्यातही बदल झालेला आहे. ग्रंथालये ही पारंपरिक छापील ग्रंथसंपदेपासून माहिती आणि ज्ञानाच्या बहुविध माध्यमांची केंद्रे बनली आहेत. सूक्ष्मफिती, सूक्ष्म स्वरूपातील वाचन साहित्य, दृक – ज्ञाव्य फिती आणि आता अनेक विजीय स्वरूपातील साहित्य ज्याचा ऑनलाईन / ऑफलाईन वापर ज्यात अंकीय स्वरूपात साठविलेल्या वाचन साहित्यामुळे ग्रंथलयांच्या वाचनकक्षात आणि ग्रंथसंग्रह जागत लक्षणीय बदल झालेला आहे. या विशेष प्रकारच्या वाचन साहित्यासाठी खास प्रकारच्या साधनांच्या वापराने अशा वाचन साहित्याचा परिणामकारक वापर करता येईल. शैक्षणिक ग्रंथालयांच्या सेवांमध्ये संगणक आणि संप्रेषण तंत्रज्ञानाच्या उपयोगाने गुणवत्तापूर्वक आणि संख्यात्मक बदल झालेला दिसून येत आहे.

अ.) ग्रंथालयांसाठीची संगणक प्रणाली/अज्ञावली.

ग्रंथालयांच्या आधुनिकीकरणाचा, संगणकीकरणाचा विचार प्रगत दृष्टिकोनातून करताना त्याची सुरूवात होते ती ग्रंथालयांसाठी उपयुक्त अशा संगणक प्रणालीची/ आज्ञावलीची निवड करण्यापासून यासाठी ग्रंथालयात आणि ग्रंथपालांना या क्षेत्रातील योग्य व्यावसायिक मार्गदर्शन उपलब्ध नसल्याचे आढळून येते. या बाबतीत चार वेगवेगळे मतप्रवाह आढळून येतात.

१. संगणकाचा वापर हा अत्यावश्यक भाग असल्याने बऱ्याच विद्यापीठांत आणि महाविद्यालयांत स्वतंत्र असा संगणक विभाग आता अनिवार्य झाला आहे. या विभागात संगणक क्षेत्रातील तज्ज्ञ मंडळी असल्याने ग्रंथालयांसाठीची संगणक प्रणाली/ आज्ञावली ही संस्थांतर्गत विकसित केली जाते. यात ग्रंथालय सेवकांचा बरोबरीचा सहभाग नसल्याने ही आज्ञावली ग्रंथालयांच्या संगणकीकरणाच्या सर्व गरजा पुऱ्या करू श्शकत नाही. अखेर या अपुऱ्या आणि अकार्यक्षम अशा आज्ञावलीचाच उपयोग करावा लागतो. या ठिकाणी व्यवस्थापनाची आत्मप्रौढी घातक ठरते. उपलबध असणाऱ्या विनामूल्य आज्ञावलीपैकी या संस्थातर्गत विकसत आज्ञावली चांगल्या असल्या तरी त्यात ग्रंथालयांच्या वाढत्या मागण्या, बदली व्यवस्था, तंत्रज्ञानानुसार वेळोवेळी सुधारणा केलेल्या नसलयाने अनेक नव्या उपक्रमात त्याचा वापर करता येत नाही.

२. ग्रंथालयांची संगणकीय जाळी स्थापन झाल्यावर जाळयाच्या संभासदांना ग्रंथालयाची संगणक आज्ञावली मोफत वा अगदी नाममात्र किमतीत दिली जाते. संगणक जाळीचे निर्माते सुरूवातीस जरी व्यावसायिक संस्थेपेक्षा या आज्ञावलीसाठी विशेष परिश्रम घेत असले, तरी सहभागी ग्रंथालयांच्या वैयक्तिक गरजा, आवश्यकता पुऱ्या करण्यास त्यांना अडचणी येतात. याशिवाय अशा आज्ञावली वापरतांना उद्‌भवलेल्या अडचणींवर योग्य उपाययोजना, विक्रीपश्चात सेवा या महत्वाच्या गोष्टी होत नाही.

३. व्यावसायिक तत्वावरच्या ग्रंथालयांच्या आज्ञावली या त्यांच्या विक्री कौशलयावर बाजारात आणल्या जातात. या जरी सर्वसमावेशक, गुणवत्तापूर्ण असल्या, तरी त्याचे मूल्य हे लहान ग्रंथालयांच्या आवाक्याबाहेर जाते. मुंबईतील मध्येम स्वरूपाच्या शैक्षणिक ग्रंथालयांच्या संगणक आज्ञावलीच्या वापराबाबत केलेल्या सर्वेक्षणाचे निष्कष हे उद्रेगजनक आढळले आहेत. बऱ्याच ग्रंथालयांनी आधीची आज्ञावली काही काळातच बदलून नवी आज्ञावली घेती आहे.

४. मुक्तस्त्रोंत ग्रंथालय आज्ञावलीची उपलब्धता फार उशिराने झाली असल्याने एक नवा पर्याय पुढे आला आहे. ग्रंथालय आज्ञावली कोणतेही श्शुल्क न देता उपलब्ध झाल्याने अनेक लहान–मोठी ग्रंथालये याकडे आकृष्ट झाली आहेत. या सर्व आज्ञावली व्यवस्थित चालण्यासाठी सुनियोजित योजना, आर्थिक उपलब्धी याबरोबरच ते वापरण्यासाठी ग्रंथालय सेवकांची मानसिकता बदलून त्यांना प्रशिक्षित करूनच मग ती वापरण्यास उद्युक्त करणे आवश्यक आहे. ग्रंथालय आज्ञावली ही ग्रंथालयातील कामे आणि ग्रंथालयांच्या विविध सेवा यांना सहायभूत असली पाहिजे. त्याचबरोबर वेळोवेळी त्यांच्या वापराचा आवाका वाढला पाहिजे. ग्रंथालय आज्ञावलीतील मर्यादा या ग्रंथालय आज्ञावलीतील मर्यादा या ग्रंथालय विकासास बाधक ठरू शकतात ग्रंथालय आज्ञावलीची खरेदी ही एकवेळची गुतंवणूक आहे आणि संगणकीकरण, आधुनिकरण यासाठी ती आवश्यक घटक आहे. हे सर्वांनी ध्यानात घेउनच निर्णय घेतले पाहिजेत. तंत्रज्ञानाधारित आवृत्त्या ज्यात डॉस, विंडोज, लिनक्स, बेब एनेबल, इत्यांदीचा समावेश होतो. यातील प्रत्येंकाचे असे स्वतंत्र फायदे आहेत. ग्रंथालय कर्मचाऱ्यांनी संगणक आज्ञावलीतील या सर्व कार्यक्षमतेची पूर्ण माहिती करून घेवून त्याचा उपयोग त्यांना आणि वाचकांना कसा करता येईल यावर लक्ष केंद्रीत केले पाहिजे.

आ.) पुनर्लक्ष्यी रूपांतर

तंत्रज्ञानाचे दृष्य परिणाम दिसण्यासाठी ग्रंथालयातील सर्व वाचन साहित्यावर, संग्रहांवर संगणकीय संस्कारण होणे गरजेचे आहे. बऱ्याच शैक्षणिक ग्रंथालयांना नेमके हे करण्यासाठी झगडावे लागत आहे. ग्रंथालयातील कर्मचारी वर्ग हा ग्रंथलयाच्या दैनंदिन आणि नैमित्तिक कामात व्यग्र असणे, कर्मचाऱ्यांची कमतरता यांमुळे सर्व संग्रह संगणकीय प्रक्रियेत आणणे शक्य होत नाही. यासाठी एक पर्याय आहे तो म्हणजे बाहेरील स्त्रोताची मदत घेणे. परंतु या कामाकडे योग्य लक्ष न देता, घाईघाईने कोणतेही व्यावसायिक संकेत न पाळता हे काम उरकले जाते ही दुरैवाची गोष्ट आहे. यामुळे ग्रंथालयात उपलब्ध असणारे वाचन साहित्य ग्रंथालयात असूनही ते शोध प्रक्रियेत मिळू शकत नाही ही एक उणीव निर्माण होते. ग्रंथालयात प्रत्यक्ष असणारे वाचन साहित्य संगणकावर नीट नोंद न झाल्याने वाचकांपर्यंत पोहोचत नाही. याची कारणमीमांसा अशी आहे ती ग्रंथवर्णनात त्यांच्या विषय वर्तनासाठी पुरेसे लक्ष दिलेले नसणे, योग्य ग्रंथवर्णन हे एक मुलभूत व्यावसायिक कौशल्य आहे. डॉ. रंगनाथन यांचे

प्रिन्सिपल ऑफ ऑसमॉसिस नुसार सुनियोति कार्यक्रम तयार करून त्यानुसार पत्रतालिकेचे रूपांतर संगणकीय तालिकेत केल्यास त्याचा चांगला उपयोग होउन चांगले निर्णय होईल.

इ) विजीय स्त्रोत

हे सर्व अंकीय स्वरूपात तयार झालेले वा रूपांतर केलेले ग्रंथ, नियतकालिके आणि इतर वाचन साहित्य यांचे वेगळे स्वरूप आहे. एके काळी ग्रंथालयातील विशेष संग्रह म्हणून शोभेच्या वस्तु आता ग्रंथालयातील एक प्रमुख वाचन साहित्य घटक झाला आहे. या साहित्याच्या साठवणिनुसारच कमी जागा लागते आणि याचे सहज, कमी वेळात हस्तांतरण करता येते.छापील साहितयांपेक्षा ग्रंथालयात वाढत जाणाऱ्या अंकीय ग्रंथामुळे आणि नियतकालिंकांमुळे ग्रंथालयाची एकविसाव्या शतकाकडे झपाटयाने वाटचाल होत आहे. कन्शॉरशियाच्या सभासदस्यत्वामुळे वाचकांना असंख्य नियतकालिके, माहिती संचयका, अंकीय वाचन साहितय हे शोधासाठी आणि संदर्भासाठी उपलब्ध झाले आहेत. हा आहे ‘ साधन स्त्रोत सहभागाचा ’ बदलेला प्रकार इफिलबनेच्या संगणक स्थानावर असंख्य विजीय स्वरूपातले वाचन साहित्य उपलब्ध आहे. शैक्षणिक ग्रंथालयाच्या गंथपालांनी आता या सर्व वाचन साहित्याचा लाभ आपलया वाचकांना तयांच्या अभ्यासासाठी आणि संशोधनासाठी किती करून द्यावयाचा हे त्यांच्याच हाती आहे. ग्रंथालय व्यावसायिकांचे प्रमुख गव्हाची टरफले कशी वेगळी करतरत यावर त्यांना मान्यता मिळणार आहे. अशा या वाचन साहित्याची संगणकस्थानावरील उपलब्धी विद्यापीठ मर्यादित न राहता दिवसाचे चोवीस तास, आठवडयाचे सातही दिवस दूरस्थ वाचकांना याचा लाभ होईल.

ई) पारंपरिक ग्रंथालयांचा एकविसाव्या शतकातील बदल

पारंपरिक ग्रंथालय व्यवस्थेतून एकविसाव्या शतकाला साजेसा आत्याधुनिक बदल घडवून आणण्याची जबाबदारी ही त्या – त्या शैक्षणिक ग्रंथालयांची आहे. वाचकांना उत्तम, दर्जेदार, अल्प वेळात सेवा देण्यासाठी ग्रंथालयांना फार मोठया प्रमाणात पूर्वतयारी करावी लागणार आहे. हे काम व्यावसायिक स्वरूपाचे आणि तंत्रज्ञानाशी निगडित आहे. ग्रंथालयांसाठी ग्रंथखरेदी करणे, खरेदी केलेल्या ग्रंथांवर संस्करण करून ग्रंथांना देवघेवीसाठी तयार करणे यांत आमूलग्र बदल झालेला आहे. भसमान पुस्तक विक्रेत्यांकडून माहितीचा प्रचंड ओघ येते आहे. या माहिती स्त्रोंतांचा उपयोग करणे म्हणजे आपण काळाबरोबर जात असलयाचे निदर्शक आहे. इंटरनेटवरील माहिती स्त्रोत हे सर्वासाठी सेवेस तयार आहेत. असे असले तरी इंटरनेटवर आधारित सेवा ग्रंथालयांच्या माध्यमातूनच चांगल्या व परिपूर्ण देता येताता. सूचीय आणि संदर्भ सेवेत नेमकेपणा आणि कालबध्दता आणणे, संगणक जाळयावर काही अतिशय उपयुक्त व्यावसायिकांची आहेत. त्यांचा शोध घेउन माहितीचे संघटन आणि वितरण करणे ही कौशल्ये ग्रंथालय व्यावसायिकांकडे असतात. इंटरनेटवरील अशा वेगवेगळया स्थानांचा ग्रंथालय व्यावसायिकांना एक सखा/मित्र म्हणून उपयोग करता येईल. हेच एक उदाहरण म्हणून ‘रिसर्चिंग लायब्ररीयन : वेब रिसोर्सेस हेल्पफूल फॉर लायब्ररीयन्य डुईंग रिसर्च’ या संगणक स्थानाचा आणि अशा व्यावसायिक संगणकीय स्थानांचा उपयोग आपले व्यावसायिक कौशल्य, ज्ञान जे शैक्षणिक ग्रंथालयाला एकविसाव्या शतकात नेण्यास लागणर आहे ते मिळविण्यासाठी करता येईल.

समारोप :

शैक्षणिक ग्रंथालय आधुनिकीकरणाचा मागोवा घेताना असे दिसून आले की, ग्रंथालयांनी समकालीन तंत्रज्ञानाचा उपयोग करून काळाच्या पुढे जाण्याचा प्रयास केला आहे. परंतु आताचे बदल हे अतिशय वेगवान आहेत आणि त्याच्याबरोबर जाण्यात ग्रंथालयांना अडचण आहे. या नव्या परिस्थितीस तोंड देण्यासाठी त्यांना आर्थिक आणि प्रशासकीय मदतीची विविध संस्थांकडुन गरज आहे. पारंपारिक शैक्षणिक ग्रंथालयांचे एकविसाव्या शतकातील शैक्षणिक ग्रंथालय हे नाव सार्थ ठरविण्यासाठी ग्रंथालय व्यावसायिकांना व्यावसायातील बदलेले परिस्थिती आत्मसात करून त्या अनुषंगाने कृती करण्याची मानसिकता तयार करावी लागणार आहे. याबाबात विद्यापीठांनी उचलेले पाउल म्हणजे ग्रंथालय सेवकांना चर्चासत्र, कार्यशाळा, उजळणीवर्ग यातून नवीन तंत्रज्ञानाची बदलाची ओळख करून देण्यास पुढाकार घेता येईल.

संदर्भ सूची

1- Brophy peter, the library in the 21st Century, new services in the information age, London, Library association Publication, 2001
2- National Knowledge Commission (NKC) Libraries : Gateways to Knowledge, A Roadmap For Revitalization, New Delhi NKC, 2007
3- Goraman Michael, Our Enduring Values – Librarianship in the 21st Century, Chicago, ala, 2000

Gurukul International Multidisciplinary Research Journal (GIMRJ)
with
International Impact Factor 2.254

ISSN No. 2394-8426
Dec – 2015
Issue – I, Volume – V
Online Journal

A Study Of Work Engagement Among Primary School Teachers In Thane District

Dr. Sunil Karve
Director,
Maratha Mandir's Babasaheb Gawde Institute of Management Studies, India
drkarve@gmail.com

Abstract

Work engagement is defined as a positive, fulfilling, work-related state of mind characterized by vigor, dedication and absorption (Schaufeli, Salanova, Gonzales-Roma, & Baker, 2002). In this paper authors tried to investigate the relationships between different marital status & different length teaching of primary school teachers and their work engagement. This paper evaluates the work engagement among a sample of primary school teachers in Thane District located in rural areas. Data were collected by using the Utrecht Work Engagement Scale (UWES 9; Schaufeli et al, 2002). Researcher studied how different marital status & different length/experience in teaching have an effect on their work engagement.

Keywords: Work Engagement

Introduction

Organizations need energetic and dedicated employees who are engaged with their work.Work engagement is most often defined as "...a positive, fulfilling, **work**-related state of mind that is characterized by vigor, dedication, and absorption" (Schaufeli & Bakker, 2010; Schaufeli, Salanova, González-Romá, & Bakker, 2002). Research in work engagement has been done in various professions, including teaching. Many have come to suggest that work engagement or sometimes also referred to as work engagement, has been identified as having correlation with both positive and negative aspects of work achievement (Kirkpatrick, 2007; Mauno, Kinnunen, & Ruokolainnen, 2007; Milner & Hoy, 2002). Kahn was the first scholar to define "personal engagement" as the "…harnessing of organization member's selves to their work roles: in engagement, people employ and express themselves physically, cognitively, emotionally and mentally during role performances". In recent years, worldwide there is high attrition rate and turnover noticed In terms of teaching profession. Therefore issues like work engagement among primary school teachers have also received importance today.

Review on the Literature

Work engagement has been defined as "work engagement which is an employee's interest in, enthusiasm for and investment in his or her work" (Kirkpatrick, 2007). Kirpatrick has also mentioned that empirical studies have revealed that work engagement is associated with various positive behaviors and outcomes for both employees and the organization.

Scaufelli et al viewed work engagement in a different dimension and defined it as "a positive, fulfilling, work-related state of mind characterized by vigor, dedication and absorption" (Schaufeli, Salanova, Roma, & Bakker,2002). Vigor is characterized by high levels of energy and mental resilience while working, the willingness to invest effort in ones work and persistence in the face of difficulty. Dedication is ones' sense of significance, enthusiasm, inspiration, pride and challenge. Absorption refers to the state in which one is highly concentrated and happily engrossed in works so that s/he feels time passes quickly and it is difficult to detach from work. Engaged teachers, therefore, feel strong and vigorous at work, enthusiastic and optimistic about the work they do and are very often engrossed in that work.

Further Schaufeli et al (2006) explained that work engagement is not a momentary and specific state, it is a more persistent and pervasive affective- cognitive state that is not focused on any particular object, event, individual or behavior.

Research has suggested that the level of work engagement in general is affected by personal characteristics, the work place (Brown, 1996; Kahn,1990, in Kirkpatrick, 2007) and the characteristics of the work, including work status and work demands (Mauno et al., 2007). Teachers' engagement might be affected by their personal characteristics like identity, self-esteem, and the sense of efficacy. Therefore, teachers with clear identity, higher self- esteem, and higher sense of efficiency tend to be more engaged in their work.

Methods

1. Subject

The researchers had selected 350 teachers randomly from primary schools in Thane district in rural areas to fill in the questionnaires. But we have received only 259 questionnaires, reaching a response rate of 74%. These primary schools are located in the rural areas. Of all the teachers, 149 were male ones, occupying 57.6%; and 110 female teachers, with a percentage of 42.4%.

2. Instruments

The present research work of work engagement was conducted with the UWES (Utreeht work engagement scale), which was designed by Schaufeli. The scale used involves three factors: vigor, dedication, and absorption. UWES has a high degree of reliability and validity for teachers has proved by Zhang Yiwen, a scholar in China.

3. Measures

Teacher work engagement in this research was measured using UWES 9 developed by Schaufeli et al (Scaufeli et al, 2002). This measure is a three-factor scale consisting of nine different items targeting to measure mainly the three dimensions of work engagement that is vigor; dedication and absorption. Three items were used to measure each of the dimensions. Statements like (V1) At my work, I feel bursting with Energy, (V2) At my work, I feel strong and vigorous, and (V3) When I get up in the morning, I feel like going to work-are used to address the vigor dimension of work engagement of respondent teachers. Respondent teachers dedication to the work of teaching was measured using items such as, (D1) I am enthusiastic about my work, (D2) My work inspires me, and (D3) I am proud of the work that I do. Absorption aspect of the respondent teachers was also measured using a three-item subscale consisting of statements like (A1) I feel happy when I am working intensely, (A2) I am immersed in my work, (A3) I get carried away when I am working.

All nine items were tested on a seven-point Likert scale ranging from 1 (never) to 7 (always).

Data Analysis

Table 1. Work engagement and teachers' marital status

	Unmarried teachers (SD)	Married teachers (SD)
vigor	28.65(7.40)	27.41(6.77)
dedication	24.69(6.43)	23.87(6.63)
absorption	24.42(5.19)	24.21(5.75)

Source: Primary data

Table 1 indicates that the marital status of teachers has a significant impact on the dimensions of vigor and dedication of work engagement. It also shows that unmarried primary school teachers have higher scores than those married ones on all the three dimensions of work engagement, especially on the dimensions of vigor and dedication.

Table 2. Work engagement and teachers' length of teaching

	vigor (SD)	dedication (SD)	absorption (SD)
0—6 years (group1)	30.00(6.22)	26.58(5.89)	26.02(5.25)
7—12 years (group2)	27.84(7.50)	24.48(7.17)	25.03(5.92)
13—18 years(group 3)	28.32(6.53)	25.46(6.52)	25.26(0.29)
19—24 years(group 4)	28.30(7.55)	23.69(6.21)	24.53(6.73)
Above 25 years(group 5)	25.00(6.10)	23.42(7.40)	24.23(6.26)

Source: Primary data

Table 2 indicates the scores of primary school teachers depending on length of teaching. It shows that primary school teachers with 0~6 years of teaching gain the highest scores on vigor, dedication, absorption. Fall is observed in the work engagement of teachers who have a 7~12 years of teaching experience and a rise in work engagement of teachers with 13~18 years of teaching experience. Teachers who have above 19 years of teaching experience show the low scores on the dimensions of Vigor, dedication and absorption.

Discussions

The results of the above study show that-

- Unmarried teachers got higher scores than married teachers on Vigor, dedication, absorption, this may be explained by the fact that unmarried teachers have more time and energy to spend on the education work since they do not have more family responsibilities.
- Teachers with a length of teaching for 0~5 years got higher scores than those in other groups in work engagement on all the three dimensions. It is always assumed and noticed that the teachers who have just begun teaching career have a lot of energy, enthusiasm towards their work. Such teachers are more focused towards teaching assignments. There appears a fall in work engagement of teachers as the length of teaching increases.

Conclusion

- Energy, enthusiasm and deep work engagement of unmarried teachers in teaching should be made good use by school authorities.

- The school management, culture, policies etc should be favorable and encouraging for relieving the stress, tiredness and pressure of teaching so as to make them more dedicated into teaching.

REFERENCES

1. Kirkpatrick, C. L. (2007). To Invest, Coast or Idle: Second-stage Teachers Enact their Job Engagement. Paper presented at the American Educational Research Association Annual Conference.
2. Kahn, WA. (1990). Psychological Conditions of Personal Engagement and Disengagement at Work. Academy of Management Journal, 33(4): 692~724.
3. Mauno, S., Kinnunen, U., & Ruokolainnen, M. (2007). Job demands and resources as antecedents of work engagement: A longitudinal study. Journal of Vocational Behaviour, 70, 149-171.
4. Milner, H. R., & Hoy, A. W. (2002). Respect, Social Support, and Teacher Efficacy: A Case Study. Paper presented at the The Annual Meeting of the American Educational Research Association, Session 26.65.
5. Schaufeli, W. B., Salanova, M., Roma, V. G., & Bakker, A. B. (2002). The measurement of engagement and burnout: A two sample confirmatory factor analytic approach. *Journal of Happiness Studies, 3*, 71-92.
6. https://en.wikipedia.org/wiki/Work_engagement

- (Abstract)6

#$ ' 7 0) 89 %& #$ ' " 5
; 0 10 % 1= = #& >3 1 % 1 % 108& &
>3 1 >#0 ? < 51 @ >7#4 1) 1 #$ #$
#$ 0 1=; @7 " 89 % A 9 #
7 % '7 89 B 5 C (Special Economic Zone) ' ' "
) DEEF 0 % 0 " # 6 #G
3H 0 <I #$J K0 " 7 ' 0
5 # % 50 0 '17 '
4) ' B 0 0"

%) > L 9(Objectives of Research)6

M ,
% =) 8 "
D' 0 #& @ ' "
N' G % K00 # "
O' G %0 0G #$ & % =) 8 "
P' #$Q) 00 R &G
"

- S S (Hypothesis) 6

C (Special Economic
Zone) 4) ' 'C

%) # L (Research Methodology) 6

># A %)) S G & #$ L %0
=A G & %) L % 8 0 0 ")
0<1#$ %) 8 0 0 "

#$ (Introduction) 6

' 0 ' " 0 % : G % = #%
5 % 4 % 0 U) #$7 0 "
%& & '0" C 5 C
KG & 7 # K0 " 0) % &
L #$ 5 8 0 0 7 % < 7 0) V0 "
0 >7 B & = 4 #$ #$ #$ % 0 "
K: #$ & $ %1 >3 5 % 4) 5 0 #' 0 "
6) 0 K0 "
G# A 0 8 0'# '5 ') & #
7 % 'C #9 MWO) % !' ' % % 5 ' 0"
' & B 5 > (Liberalisation) < 5 (Privatisation)
5 (Globalisation) ' " & 0 > #'G 89 0 5
'7 X G 7 %59 0 0 &= '
= 0 4 K0 & (Special Economic Zone
) %G# > L K0 "

%G# (Concept of 'SEZ') 6

< 3 >7# 0 % 0 5 5 .
7 = # & #$ 1 # 1 #$
0 #$7 ' ' 7 0 (SEZ: Special
Economic Zone) B "

0 #&@ ' (Previous History of 'SEZ' In India) 6

%G# 4 ' #/ #$Q ('EPZ'-
Export Processing Zone) 7 ' " #$ MWP) %0
(&) #$Q #'0 >Y & 0 "
MWP) + % Z " & 0 % #$Q 0
>Y % H) # 0"
%G# & 8 0 ' " MWE MWE
% #$7 & 0 " #$7 %) #$ &
& & % 9 % #) & & #$7 '
01 Y 0 #$) 4 0

0 #$7 ' 0" 5 6
& V 89 0 ' 1 5 0 &I Q % ' 7 B &
: < 0 5 " # 6 < 0 #>0 #>0 >
L #0 R 9 #$7 & 0"
0 7 % ' 7 0
8 DEEP) = ('SEZ' Act-2005) %) %0
ME] R& DEEF # & ' % . # %& 0 "
% 0 9 (Deflation In America) 6
MP A9 % DEE ' <] 8 0 " 0'
R$ < L R^ % # K 0 < # & & K 0 " 0G 5
A : 0 % ' 5 < 0 0' R$ #$ R^ %
$ % #$ 5 0 " 5 & K G & 7 % R& 5
(Bad Debts) V0 R^ ' 7 % R% K G " # 6
% 8 0 "
G % K 0 0 #
(Impact of deflation stage of America on Indian economy)6
' 5 0 ' " < L 9_
K 0 G 7 % % #$ @ 9 %$ 0 < 0 '
0 0" # 0 (Share Market) G % &]] 9
R 0 % #77 % R%G #$: 0"
G %] 9 : # 0 R 0 '
>3 % < 0 # & 0 " R L >3 %&
Z % V& 9 0" #$ & (Air Services), ' %2
>3 (Information Technology Industries)1 # 9 >3 (Toursim Industries)1 %
>3 (Cement Industries)1 9 0 >3 (Steel Industries) 4 >3
(Other Production Industries) @7 >3 % ' "
G %0 '
(The Challenge accepted by special economic zone to minimise the effect ofDeflation stage In America)6
G %] % # K 0" # ' #0
#&# V : 0 ' " 5 ' 0 >3 % #& 5 1
R K 0 G & R 0 - # V "
' & = 0 #$7 ' #) 0 #$ G " 7 0 '
0 #& 0 #$ "

M' L >3 % '7 PEEE ' A9 5 < 0 G
0 "
D' % # ' I >3 % #$J #$
0 "
N' L >3 % # & 0 PE 9 D # % 5 8 #
0 "
O' %$ Q #&#] 0 "
P' +] 0"
F' 5] 0 "
>#A 0 & G % 3 1
6 < 0 7 # K0 ' " ' =A K0
B 5 : &"

(The Contribution of SEZ for the development of Indian Economy)

' Z . # & 5 1 5
7 % %& #$ ' " @ #$ % + 89 %& #$
K0 ' 89 7 % 0 >#0 ? 0G) # %
89 % - #$ 0 ># . 8 0 R 9 :
2 %) 0 ' " #$
) >7 S ; G &) '5 7 0 ' " # 6
7 # K0 ' " 7 0
' # #&K0 #$ "
>3 % K0 ' "
G % <I 3
>3 % K0 " ' 1 9 01 0 <%1 9% @7 >3 %
5 R5 # %) #0 < (Goodwill) 0 ' "
= I % R 0 #$J ' "
= I % % >3 % 5 G ; % %0
A R 0 B & : "
& % K0 ' "
1 1 0 &1 #&1 ;%R 1 % @7 5GL 0 &
%)) >3 % & G & & %
) & K0 ' "
5 VK0 ' "
&) >3 % 9 K0 ' " # 6
>7# 1 # 1 Q 15 ' 1 # @7 %)
0 % L #$ 5 #$J K0 ' "
>3 5 & % ' "

< 0 5 ' (8>
5 = < 0 8 0 #$7 0 ' " #G
>7# 0 5 R5 # %) . # ' >3 5
%2 ' 1 #$ ' 0
% - 5 ' " 7 89 %&
7 % G >3 5 & % K 0 ' "
% 9_ ' VK 0 ' "
+ % 9_ # 0 1 S9
#$ 50 5 " 0 ')
% 9_ R5 # %) 0 #0 # 0 ' " # . #1 L #$
# 0 #$J K G & % 9_ ' VK 0 ' "

+ ' 5 6*ME DEMP & ,

	+ ' '	#$	% S
M	%$	NN	DW
D	% V	ED	ED
N	a7 V	ED	EM
O	G0	ED	EE
P		E[	EN
F	&	NM	D[
[	'	DW	DP
\	K <%	EM	EM
W	9	PW	NW
ME	:	ND	DP
MM	) #$	MN	E\
MD	' 9_	FM	FM
MN	#&	EM	EM
MO	0^	ED	ED
MP		DM	EO
MF	# ^	EM	EE
M[	#% R	EO	ED
M\	5	EW	E\
MW	: &	PO	PE
DE	0%	O\	OD
DM	>7 #$	DP	DD
DD	9 R%0	MD	EP
	&	ONF	NO[

6 # *] ,

S S # : (Verification of Hypothesis) 6
%) #&0 S b7 8 0 ' "
CC (Special Economic Zone)
4) ' 'CC
S S 7 # 6
MWE DEEE %) L #$ 3 8 &
0 " # %& 5 R5 # %) >3 5 #0 :
. = 0 ' " H DEEF) %&& KG %
3 0 0 <I 0 1 5 %
KG 5 < +5 K0 "
5 #G)0 ' 1 7 H
7 % & 4) ' 1 ' G &
=) R%) 0G &$ %$ & ' #9 KG & 0 S S #& 6 7
' 1' #9 ' "
6
DEEF) 7 0 " 5 3 0
5 : 5 : #& ' 0 0
5 9 0 ' " # %& # 5 ' 0 1
5 R5 # R5 #G 0 =A ' ' "
3 % %) K0 # ' 5 5 (New Strategy towards Globalization) 0 # ' 5 " KG #G 0
' 7 R # / ' %& = ' "
% 6
4 ' #& #$ $ 7 ' "
MWP) 7 0 + % Z " & 0 % >3 %
) # 0 " H c 6 & 89
0 " & #$ 0 #0
9J# #&# K0 1 @ G % < 0
] # # K0 ' "
& VK0 ' 1 = I % = - R0
#$J K0 ' 1 # & &) % KG & % K0 '
5 < 0 VK0 ' 1 >3 5 & % K0 ' 1 # 0 #$J
KG & % 9_ ' VK0 ' 1 # 3 %
K0 ' 1 # # K0 ' 1 % 9_ R5 # R5 KG '
=A K0 : : L " '
' 1 + & 5 ' #0
+5 K0 ' "

ISSN No. 2394-8426
Dec – 2015
Issue – I, Volume – V
Online Journal

% $% (Bibliography)

'Q #& 0< #$

M 5 %) #$!' & R) @ #$
L #$' 0) # 1 #/

D >3 5 *5 &; DEEW >3 5 %$ N 3 '
G 9 1 ;%R
#$

N WEPZA (World Export Processing Zone Association)

4 WIKIPEDIA, The free Encyclopedia

Gurukul International Multidisciplinary Research Journal (GIMRJ)
with
International Impact Factor 2.254

ISSN No. 2394-8426
Dec – 2015
Issue – I, Volume – V
Online Journal

भारतातील लोखंड आणि पोलाद उद्योग

प्रा. डॉ. सुनिल नि. नरांजे,
(M.Com, M.A., M.Phil, Ph.D)
वाणिज्य विभाग प्रमुख
जनता महाविद्यालय, चंद्रपूर

प्रा. अनिल देवराव कुंभलकर
(M.Com, M.A., B.Ed., I.T.I., M.Phil)
Email :anil.kumbhalkar@yahoo.com

प्रस्तावना :-

पोलाद व लोखंड उद्योग हा कोणत्याही देशातील औद्योगिक प्रगतीचा पाया समजला जातो. कारण देशातील सर्व प्रकारच्या उद्योगासाठी लोखंड पोलादाची गरज असते. त्याचप्रमाणे ग्राहकोपयोगी वस्तु उत्पादन करणारे उद्योग, अभियांत्रिकी उद्योग, रेल्वे गॅन्स, रेल्वेसाठी लागणारे डब्बे तयार करणे, रेल्वेची इंजिन, रेल्वेचे रुम इत्यादींसाठी त्याचप्रमाणे जहाज बांधणी, मोटार उद्योग यासारख्या अनेक उद्योगांना लोखंड व पोलादाची गरज असते. त्याचप्रमाणे कृषी क्षेत्राला लागणारी अवजारे उत्पादन करण्यासाठी लोखंड आणि पोलादाची गरज असते. कृषी क्षेत्राची प्रगती या उद्योगावरच अवलंबुन असते.

लोखंड आणि पोलाद उत्पादनाचा इतर उद्योगांवर परिणाम होत असतो. म्हणजेच लोखंड आणि पोलाद उद्योगाचा विकास झाल्यास इतरही उद्योगाची प्रगती कितीतरी अधिक प्रमाणात होते. म्हणूनच लोखंड आणि पोलाद उद्योगाला 'मदर इंडस्ट्री' म्हणण्याची प्रथा आहे.

भारतातील लोखंड आणि पोलाद उद्योगाची प्रगती

भारतात या उद्योगातील उत्पादनासाठी काही मुलभूत असे फायदे प्राप्त होतात. भारतातील खाणीत अत्यंत उच्च प्रतीचे लोखंड सापडते. एवढेच नव्हे, तर लोखंड आणि कोळसा यांच्या खाणी जवळ जवळ आहेत.

भारतात लोखंड व पोलाद उद्योगांची सुरुवात स्वातंत्र्यपूर्व काळात १९०७ मध्ये झाली. पश्चिम बंगालमधील कुल्टी येथे बंगाल आयर्न वर्क्स कंपणीने या उद्योगाला प्रारंभ केला. परंतु या उद्योगाची खरी सुरुवात १९०५ मध्ये जमशेदपूर येथे झाली. १९०८ मध्ये, इंडीयन आयर्न वर्क्स ॲन्ड स्टील कंपणी नावाचा बंगाल राज्यातील असनसोल येथे दुसरा पोलाद उद्योग सुरु झाला. सन १९२३ मध्ये म्हैसूर राज्यात भद्रावती येथे तिसरा पोलाद उद्योग सुरु झाला स्वातंत्र्याच्या वेळी १९४७ मध्ये लोखंड आणि पोलादाची उत्पादन क्षमता १.३ द.ल. टन एवढी होती. दुसऱ्या पंचवार्षिक योजनेत या उद्योगाकडे विशेष लक्ष देण्यात येवून या उद्योगाला 'अ' श्रेणीत ठेवण्यात आले. त्यामूळे नव्या पोलाद उद्योगाची जबाबदारी सरकारवर आली. त्यानंतर रुरकेला, भिलाई आणि दुर्गापूर येथे नविन पोलाद उद्योग स्थापण करण्यासाठी आले. तिसऱ्या पंचवार्षिक योजनेत बोकारो येथे आणखी एक नविन उद्योग सुरु करण्यात आला. पण या योजने लोखंड पोलाद उद्योगांचा उत्पादन कमी झाले. चौथ्या योजना काळात अस्तित्वात असलेल्या पोलाद

उद्योगाच्या उत्पादन क्षमतेत वाढ करण्याचे ठरविण्यात आले. तामिळनाडुमधिल झेलम, कर्नाटकातील विजयनगर आणि आंध्र प्रदेशातील विशाखपट्टणम येथे पोलादाचे प्रकल्प सुरू करण्यात आले.

सन १९७४ मध्ये ही स्टील ॲथोरिटी ऑफ इंडिया लिमिटेड (Steel Authority of India) ची स्थापना करण्यात आली. पोलाद उद्योगाच्या प्रगतीची जबाबदारी आणि या उद्योगाला लागणारा कच्चा माल विकसित करून देण्याचे कार्य सोपविण्यात आले. सहाव्या योजनेत लोखंड पोलाद उत्पादनात घट झाली त्यानंतर पोलाद उत्पादन वाढविण्यासाठी रूरकेला, दुर्गापूर आणि बोकारो या उद्योगांची क्षमता वाढविण्यात आली.

सातव्या आणि आठव्या योजनाकाळात लोखंड आणि पोलाद उद्योगासाठी भरीव प्रयत्न करण्यात आले. या आधुनिकीकरण, सुधारित तंत्रज्ञानाचा वापर, बाद झालेली यंत्रे काढून टोकणे तसेच तांत्रिक असमतोल दुर करणे इ. झाली त्याचाच परिणाम म्हणून भारतात पोलादाच्या उत्पादनात वाढ होत आहे.

पोलाद उद्योगातील उत्पादण

(मि.टन.)

वर्ष	खनिज	पोलाद
१९५०-५१	१.५	१.००
१९७०-७१	६.१	४.६
१९८०-८१	१०.३	६.८
१९९०-९१	१३.७	१३.५
१९९९-२०००	२३.१	२७.२

संदर्भ :- आर.बि.आय. रिपोर्ट ऑन करन्सी ॲण्ड लायनान्स १९९७-९८

वरीलप्रमाणे पोलादाचा उत्पादणात वाढझाली असली तरी ती फारसी समाधानकारक नाही. भारताला पोलाद व लोखंड उत्पादणात वेग आणण्याची फार आवश्यकता आहे.

लोखंड आणि पोलाद उद्योगाच्या प्रगतीचे मुल्यमापन

भारताचा औद्योगिक विकास साध्य करावयाचा असेल तर लोखंड आणि पोलाद उद्योगांचा विकास होणे आवश्यक आहे, याची जाणिव सरकारला होती. म्हणून योजनेच्या सुरुवातीचा काळात या उद्योगाचा विकास ही एक प्रकारची संधी आणि आव्हान आहे असे समजून या उद्योगाच्या विकासाकडे लक्ष देण्यात आले. सन १९५० या काळात १.५ द.ल. टनापर्यंत वाढ करण्याऐवढी प्रगती उद्योगाने केली. याच काळात चांगल्या प्रतीचे पोलादाचे उत्पादन ९ द.ल. टनावरून २७ द.ल. टन ऐवढे झाले पुढे सन २००९-१० मध्ये ५६ द.ल. टन होऊन भारत जगात ला ५ व्या क्रमांकांचा देश बनला.

जगातील पोलाद उत्पादन देश

(द.ल.टन)

क्रमांक	देश	उत्पादन
१	चीन	५६७.८
२	जपान	५९.९
३	रूस	५९.९
४	अमेरिका	५८.१
५	भारत	५६.६
६	दक्षिण कोरिया	४८.६
७	जर्मनी	३२.७
८	युक्रेन	२९.८
९	ब्रांजिल	२८.५
१०	टर्की	२५.३

स्त्रोत :- वर्ल्ड स्टिल असोसिएशन

स्वातंत्र्यप्राप्तिनंतर योजना काळात भारताने वैज्ञानिक, तांत्रिक, वाहतूक, दळणवळण माहिती तंत्रज्ञान यासारख्या क्षेत्रात उल्लेखनीय प्रगती केली त्याचाच परिणाम म्हणून भारतात लोखंड आणि पोलाद उद्योगाचा विकास जलद गतीने झाला. आज भारत देश हा पोलाद उद्योगाची उभारणी स्वबळावर करू लागला आहे. अलीकडच्या काळात सरकारने लहान पोलाद उद्योगांना परवानगी देण्याचे धोरण स्वीकारले आहे. भारतात एकून १७९ लहान पोलाद उद्योग असून यांची उत्पादन क्षमता ५.६ दे.ल. टन आहे हे उत्पादण एकून उत्पादणाचा ३०: ऐवढे आहे.

भारतात अलीकडच्या काळात लोखंड व पोलाद क्षेत्रात अनेक सुधारणा करण्यात आल्या आहेत. जसे पोलादाच्या आयात निर्यात केल्या जाणाऱ्या वस्तुंवरिल बंधने रद्द करण्यात आली. किंमत व वितरणावरील नियंत्रणे रद्द करण्यात आले. लोखंड व पोलादाच्या वस्तुवरिल आयात कर कमी करण्यात आहे. त्यामुळे या उद्योगांचा विकासाला चांगलीच मदत मिळाली.

लोखंड व पोलाद उद्योगाची स्थाननिश्चिती

लोखंड व पोलाद उद्योगाची स्थाननिश्चिती खनिज, लोखंड, कोळसा चुनखडी इ. कच्चा मालाच्या उपलब्धतेवरून ठरते. तथापि स्थाननिश्चितीविषयीचा निर्णय घेताना बाजारपेठ, विद्युत पुरवठा, तांत्रिक आर्थिक बाजु इ. घटकांचा विचार केला जातो. या उद्योगाला लागणारा कच्चा माल उत्पादन प्रक्रियेत वनज घटणारा असल्याने शक्यतो कच्चा मालाच्या उपलब्धतेजवळ स्थाननिश्चितीचा निर्णय घेतला जातो. भारतात खनिज, लोखंड आणि कोळसा उपलब्ध असलेल्या ठिकाणी लोखंड व पोलाद उद्योगांची स्थाननिश्चिती झालेली दिसते.

लोखंड व पोलाद उद्योगाबाबत धोरण

सन १९९१ मध्ये सरकारने नवे औद्योगिक धोरण जाहिर केले. या धोरणात लोखंड व पोलाद उद्योगाबाबद पुढील निर्णय घेण्यात आले.

1) जानेवारी १९९२ पासून लोखंड आणि पोलादाच्या किंमती आणि वितरण यावरिल नियंत्रणे रद्द केली.

2) मे १९९२ पासून या उद्योगाचा समावेश अतिप्राधान्य क्रम क्षेत्रात करण्यात आला.

3) अतिलहान पोलाद उद्योगांना परवानामुक्त करण्यात आले.

4) पोलादी वस्तुच आयातीवरील बंधने दुर केली.

5) पोलाद आयातीवरील आयात कर कमी केला.

6) पोलाद उद्योगाच्या समस्या सोडविण्यासाठी टास्क फार्सची स्थापना करण्यात आली टास्क कोर्सने केलेल्या शिफारशी सरकारने मान्य केल्या.

सरकारने स्वीकारलेल्या उदारीकरणाच्या धोरणामुळे या उद्योगाने खाजगी क्षेत्राच्या साहयाने विकास साध्य करावा. स्पर्धाशक्ती निर्माण व्हावी आणि देशाला लागणारे लोखंड व पोलाद पुरेसा प्रमाणात मिळुन या उद्योगांमध्ये स्पर्धा निर्माण व्हावी असे सरकारचे मत होते.

लोखंड व पोलाद उद्योगांचा समरत्या

१. उत्पादण क्षमतेचा अपुरा वापर :-

भारतात लोखंड व पोलाद उत्पादन क्षमतेच्या पुरेपूर वापर होत नाही. अपूऱ्या उत्पादण क्षमतेमुळे लोखंड व पोलाद उद्योगांना लागणारी साधन सामुग्रीचे अपव्यय होते. त्याचमुळे देशात लोखंड व पोलाद उत्पादनाची टचांई भारते.

२. कच्चा मालाची समस्या :-

पोलाद निर्मितीसाठी कच्चामाल म्हणून कोळसा, कच्चे लोखंड आणि फेरोमॉग्निजचा वापर केला जातो. भारतातील कोळसा हलक्या दर्जाचा आहे. त्याचप्रमाणे फेरोमॅग्निज देखील कमी प्रतीचे, अपूरे तसेच अशुध्द आहे. तसेच उद्योगाला लागणारा कच्चामाल दुरवरचा प्रदेशातून मागवावा लागतो. त्यामुळे वाहतुक खर्च जास्त येतो.

३. सरकारी नियंत्रणे :-

भारतातील पोलाद उद्योगाची एक समस्या म्हणजे सरकारचे किंमतीवर असणारे नियंत्रण होय. भारतात पोलादाचे वितरण सरकारने ठरवून दिलेल्या किंमतीनुसार होत असते. यामुळे भ्रष्टाचार, साठेबाजी, काळाबाजारला चालणा मिळते. तसेच ग्राहकांना जास्त किंमत मोजावी लागते.

४. सार्वजनिक क्षेत्रातील उद्योगांची कार्यक्षमता :-

लोखंड व पोलाद उद्योगातील सर्वसमस्यांचे मुळ भारतातील सार्वजनिक क्षेत्रातील उद्योग आहे. या उद्योगांचा स्थापणेपासुन अकार्यक्षमतेने कार्यकरित आहे. या उद्योगांमध्ये, औद्योगिक जलद, अकार्यक्षम व्यवस्थापणे उत्पादण तंत्राचा अपूरा वापर होत आहे. या उद्योगांना कार्यक्षमते चालवीण्याची आवश्यकता आहे.

५. लहान पोलाद उद्योगांचे आजारपणा :-

भारतातील लहान पोलाद उद्योगाची समस्या आणखी अवघड झाली आहे. या उद्योगात सतत कच्चा मालाची समस्या, अपुरे भांडवल, अपूरा विद्युत पुरवठा, सदोष व्यवस्थापन इ. अडचणी सतत निर्माण होत आहे.

६. उत्पादनाचा वाढता खर्च :-

लोखंड आणि पोलाद उद्योग अति खर्चाचा असा उद्योग आहे. या उद्योगाला लागणारा कच्चामाल अधिक महाग आहे. तसेच आयातीवरील कर, वाहतुक खर्च, श्रमिक प्रशिक्षण खर्च, उद्योगांचा आधुनिकीकरणावरील खर्च या सर्वांमुळे उत्पादन खर्च सतत वाढत आहे.

निष्कर्ष

भारतातील लोखंड व पोलाद उद्योगांची स्थितीत सुधारणा होण्याची फार आवश्यकता आहे. याकडे सरकारणे या उद्योगांचा विकासाकरीता विशेष लक्ष देण्याची गरज आहे. या उद्योगांना काही मुलभुत समस्यांचे अती जलद रित्या निवारण करण्याची आवश्यकता आहे. सरकारी नियंत्रणामध्ये असणारे सार्वजनिक उद्योगांचा प्रगतीकडे विशेष व योग्य व्यवस्थापनाची गरज आहे. तसेच लहान लोखंड व पोलाद उद्योगांचे आजारपणा दुर करून या उद्योगांना सुलभ कर्ज पुरवठा करून देण्याकरिता सरकारने लक्ष पुरविले पाहीजे. भारतातील पोलाद उद्योगांने आधुनिक यंत्रसामुग्री वापर करून उत्पादण वाढविण्याकडे भर देण्याची आवश्यकता आहे. नविन पोलाद उद्योगांची स्थापणा करून मागणीप्रमाणे उत्पादण करण्याची आवश्यकता या उद्योगांना लवकर अमलात आणावे लागेल. भारत सरकारने लोखंड व पोलाद उद्योगांना लावलेले नियंत्रण दुर करून या नियंत्रणमध्ये शितीलता आणन्याची आवश्यकता आहे. या उद्योगांची उत्पादण कार्य क्षमता वाढण्याची आवश्यकता दिवसेंदिवस अधिक तिव्रतेने भासु लागणार आहे. त्याकरिता भारतीय लोखंड व पोलाद उद्योगांना आजच तयार करून समोर येणाऱ्या स्पर्धेत टिकवून ठेवण्याचे मोठे आव्हान भारतासमोर व या उद्योगांसमोर उभे आहे.

संदर्भ :-

१. प्रा. रायखेलकर ए.आर., प्रा.डॉ.दामजी बी.एच. ''औद्योगिक अर्थशास्त्र'', विद्या बुक्स पब्लिशर्स औरंगापुरा, औरंगाबाद, प्रथम आवृती २००५ पृष्ठ क्र. १६१ ते १८०.
२. ''इस्पात मंत्रालय'' भारत सरकार, नवी दिल्ली.
३. प्रा. दिनेशचंद्र - औद्योगिक अर्थशास्त्र श्री. वैभव प्रकाशन, नागपूर - पृष्ठ क्र. .....
४. www.steelworld.com/newsletter/oug10/intervies0810/pdf.
५. www.info.com/iron+steel+industry?
६. Kumari Anita, 1993 "Productivity in public sector " Economic and political weekly.
७. Steel Authority of india Ltd. 1996 Statistics for iron & Steel industry in India, New Delhi.
८. http//jpcindiasteel.nic.in

Gurukul International Multidisciplinary Research Journal (GIMRJ)
with
International Impact Factor 2.254

ISSN No. 2394-8426
Dec – 2015
Issue – I, Volume – V
Online Journal

A case study of elderly women residing in Aaradhna old age home of Delhi

Dr. Lalan Yadav
MSW, Ph.D.

Abstract:

In the field of contemporary, social, economic, public interest government efforts are increasing rapidly presently the situation against senior citizens is rapidly changing[1], youngsters has started hating them, these old people are found by these youngsters to move from their own homes, due to this they become homeless and many of them move to old age homes. This article is based on the various demands of old citizens and taken from an old age home of Delhi, which is working in the field of protection of old people rights to make clear the need of study.

Keywords:

Old Age Home, Respondents, Socio-economic status, Family relationships of the respondent

Introduction

People are affected in many ways like rapid growing of industry, modernization in India[2]. In Indian society the tradition of joint family is disappearing slowly which was based on the love, affection and tradition. Rather than combined or joint family, people started believing in nuclear family now a day parents are afraid from their children, moreover they have started refusing to live with them. In India the population of old citizens is growing in 1901 it was 12.1 million, but it has been recorded in 2011 is 103.2 million[3]. The population of elderly in India ranks second in the world. The main reason for this is the best instruments, advanced medicines, good treatment, social protection, living standard and food is available now a days[4].

Objectives:

In some circumstances, old age home seems to have all the choice of old person, as many of them find living with their adult children to all move difficult then living alone and many do not have a choice and have to live separately from their adult children. The questions that arise Are old age homes are capable to provide an options for family conservation? Do they compromise with the situation and free to live with group people? With these questions in mind the following study was conducted on an old age home in Delhi city with the following objectives.

1. To study the facility being provided by the old age home.
2. To study the socio-economic background of the respondent.
3. To study the family and family relationships of the respondent.
4. To study the reasons for shifting from own home to the old age home.

METHODOLOGY

Having interviewees with staff and respondent the data was collected 25 respondents were there at the time of survey out of which 20 were interviewed.

Aaradhna An Old Age Home:

At Bhagwan Das Lane this old age home was set up in 2001 by Delhi government. In half acre of land the old age home is a 2nd floor building. There are 20 rooms with attached bathroom, a library, a first aid room. Each room has two beds, a small table, a cupboard. There is a ceiling fan in each room. The home has been set up to provide free foods and 1554/- charged for one bed. The capacity of the home is 30 beneficiaries at present. Admission in the old age home is open to old women who are, in the age group of 60 years and above, who have none to support or maintain them, who are not suffering from any infectious/communicable disease, who are residents of Union Territory of Delhi. On voluntary basis, admission in the old age home is applicable desiring admission in the home will apply on the prescribed application form along with some documents as ; copy of age certificate, copy of medical fitness certificate , evidence of residence in the Union Territory of Delhi. The Manager will place duly investing and applications along with his own comments before the admission and discharge committee for decision. This old age home provides all the necessary facilities. The staff includes one Manager, one nurse, one care taker, one house attendant, two ladies made, three cook and three sweepers. Every old woman gets her bed tea at 7:00a.m. and the breakfast is served to them by between 9:00 to 10:00 a.m.. They visit library between 10:00 to 12:00, lunch is served from 13:00 to 14:30 p.m., and items includes unlimited Roti, Rice, Pulse, Vegetables. They take rest till 5 p.m. and then they have their dinner.

Results and Discussion:

1. **Socio Economic status:**

There are 20 female, in which 80% are Hindu, rests are Sikhs and Christians. 18% of them are illiterate or have never gone to school various studies have reported that 10 to 15 % of elderly population suffers from significance and treatable depression. 60% of aged livings in old age home are in age group of 71-80 years. 80 % of residents are widows and without partners in old age home because of death of their respective partners. Various studies have reported that 15-20% of elderly population suffer from significant and treatable depression[5]. In their active adult life 4 of them were in jobs and 16 of them were house wives. It has been observed that those old

women who live in old age homes is more under stress than those who live with their family members[6].

2. Family relationships of the respondent:

More attention is needed by the old people as it is the time when they become weak, dependent and vulnerable from both physically and mentally[7]. Table 1 shows 30% had both sons and daughters, another 20% had only sons and 40% had only daughters. However, 10% had no children. Table 2 shows as for as relations with the family are concerned, 70% majority had estranged relations with their children. They all have observed that mostly old citizens have moved in old age homes due to carelessness of their family members and social elements[8].

3. Study at the old age home

Table 3 shows that 60% majority of respondents have been living more than 2 to 5 years. 20% have been living from 6 – 10 years.

4. **Reasons for shifting to the old age home**.

Due to their loneliness people shift to old age homes, some had conflict with their sons, many of them said that their children insulted them; some feels that old age home had an independent and peaceful life. Table 4 shows the most commonly stated reason by the respondents for shifting to old age home was conflict with their sons 10% respondents reported that their sons would insult them. 40% respondents came to the old age home to lead an independent and peaceful life. Study by a researcher he finds that 42% female have moved towards old age home due to stress[9]. 10% had nobody to take care of them and 40% joined the old age home because they had no sons and they do not want to live with their married daughters. The health of women who live in old age homes were not so good, but they have no another way to live[10].

Table 1

Children of the respondents

Children	Number	%
No Child	2	10
Only Sons	4	20
Only Daughters	8	40
Both sons and daughters	6	30
Total	**20**	**100**

Table 2

Relations of respondents with their family members

Relations	Number	%
Estranged	14	70
Good	6	12
Total	**20**	**100**

Table 3

Duration of stay in an old age home

Period	Number	%
Up to 1 Year	4	20
2-5 Years	12	60
6-10 Years	4	20
Total	**20**	**100**

Table 4

Reasons for shifting to the old age home

Response Category	Number	%
Have no sons and did not want to live with married daughters	8	40
Conflicting relations with sons	2	10
Wanted independent peaceful life	8	40
Nobody to look after	2	10
Total	**20**	**100**

Conclusion:

Different caste and religion are more found in this old age home. Women spend their most of the time in doing household works and had no income for their livelihood which forced them to depend on their family[11]. Probably old age is the age when a human being feels more in need of someone to interact with. The problem of elder abuse cannot be solving if there essential needs

for food, shelter, security and health care are not met. Widow older women are very far away from government schemes. The nations of the world must create an environment in which ageing is accepted as a natural part of the life cycle, where older people are given the right to live with dignity-free from abuse and are given opportunities to participate fully in social cultural and economical activities[12.]

References:

1. Yadava K.N.S. (2011) "Ageing some Emerging Issues", Manak Publications, New Delhi.
2. Mcdonald Lynn, Sharma K.L. (2011) "Ageism and Elder Abuse", Rawat Publications, New Delhi.
3. Registrar General and census Commissioner, India **(2011)**
4. Srivastava Shuchi **(2013)** "Ageing Life at the Edge", APH Publishing Corporation, New Delhi.
5. Aacharya Arpita – Depression, loneliness and insecurity filling among the elderly female, living in old age homes of Agartala – Indian journal of gerontology, volume **26, (2012),** page no. **524-536**
6. Mahapatra Tanuja – Problems of elderly widows in Udisa an empirical study, Indian journal of gerontology, volume-**26, (2012),** page no. **549-563**
7. Audinarayana N. (2012) "Urban Elderly in India", B.R. Publishing Corporation, New Delhi
8. Dubey Aruna, Seema Bhasin, N.Gupta, N. Sharma- A study of elderly living in old age home and within family set-up in Jammu- Studies on home community science, volume-**5(2), (2011)**, page no. **93-98**
9. Raju S. Siva (2011) "Voice of the Elderly in India", B.R. Publishing Corporation , New Delhi
10. Gandotra Veena, Patel Sarjoo (2011) "Ageing: An Interdisciplinary Approach", Rawat Publications, N D
11. Rani T. Indira (2010) "Adjustment of Senior Citizens", Discovery Publishing, New Delhi.
12. .Sharma Ratan (2011) "Sociology of Senior Citizens", College Book Depot, Jaipur.

Gurukul International Multidisciplinary Research Journal (GIMRJ)
with
International Impact Factor 2.254

ISSN No. 2394-8426
Dec – 2015
Issue – I, Volume – V
Online Journal

A study on impact of mid day meal scheme in government aided school of Nagpur city

Name- Vandana Ramteke
Designation-
Assistant Professor (Zulekha College of Education, Shantinagar Itwari Nagpur.)
Address-
893, Mudilar square near Dr. Deshmuck house, Shantinagar Itwari Nagpur-2

Abstract

This paper attempts to study the impact of mid day meal scheme in government aided school of Nagpur city. The primary data has been collected during the session of December 2014-August 2015 from 100 students and 50 teachers from west and east of Nagpur city. Sample has been randomly selected by probability sampling method of 4 government school of Nagpur city of Maharashtra state. The survey method is used to collect the data. A self made structured questionnaire was used. Data collection was done immediately after the administration and all the response sheets were retrieved from the students. The results of survey revealed that the MDM scheme was cost – benefits for the students of government school of east region as compared to west region of Nagpur city in some selective cases e.g.- enhancing enrolment, attendance, removal of classroom hunger; social habits of students (like bring their own utensils) and from teachers perception though the interest level of the students has been increase but it's a burden activities for them as they have to involved in supervise, cooking etc.

Key Words

mid-day meal scheme, west and east region students and teacher attitude.

Introduction

Mid day meal scheme was been launched by government on 15 august 1995,Tamil Nadu became the first state in India to introduce a noon meal programme in primary schools, as per government, this scheme is the world's largest school feeding programme. The mid day meal scheme provide children in over 1.2 million government-run schools a hot and nutrition meal every day besides this encouraging attendance and improving nutritional levels, also helps to reduce dropout rates. The Supreme Court directed all the state governments to implement MDMS and to provide every child a cooked meal with a minimum content of 300 calorie and 8-12 grams protein every day of school for a minimum of 200 days in every government and government aided primary schools.

The main target of millennium development goals was to

- To eradicate extreme poverty and hunger
- To achieve universal primary education
- To promote gender equality
- To reduce child mortality
- To improve maternal health
- To combat HIV/AIDS, malaria, and other diseases

ISSN No. 2394-8426
Dec – 2015
Issue – I, Volume – V
Online Journal

- To ensure environmental sustainability
- To develop a global partnership for development

Centrally-sponsored schemes that address this MDG (millennium development goal) include

- Sarva Shiksha Abhiyan (SSA)
- Mid Day Meal Scheme
- Kasturba Gandhi Balika Vidyalaya (KGBV)

Eleventh five-year plan goals:

- Reduce dropout rates of children at the elementary level from 52.2 percent in 2003–04 to 20 percent by 2011–12
- Develop minimum standards of educational attainment in elementary schools, to ensure quality education
- Reduce the gender gap in literacy to 10 percentage points by 2011–12

Major objectives of MDMS

The objective of Mid Day Meal

- Avoid classroom hunger.
- Increase school enrolment
- Increase school attendance
- Improve socialization among castes
- Address malnutrition & Empower women through employment

Need for the study

Today's children are the future citizens and hence they need well nutritious food. In this way school feeding programme could be a better investment. Regarding the state of Maharashtra, the situation of the child is quite worst and the mortality rate is a regular phenomenon even though it is the most industrially developed state in India.

The Mumbai High Court intervened along with the Supreme Court's order to start MDMS as early as possible to protect children from hunger deaths, child labour, illiteracy, etc. The government of Maharashtra stated that a continuous effort has been made it to extend the MDMS to all government and government aided primary schools in state.

The present study tries to make a modest contribution towards the understanding of the functioning of MDM as a right and its impact on children's right to food. This study basically aims to compare the levels of performance of MDMS in Nagpur city.

Objective of the present study

- To compare the impact of MDMS on the students residing in the east region with the students in the west region of Nagpur city.
- To compare the attitudes and views towards mid day meal scheme of east region teachers with the west region teachers of Nagpur city.

Research methodology

The survey method is used to collect the data. Survey method is design to study the phenomenon under investigation.

Sample of the study

The primary data has been collected during the session of December 2014-August 2015 from 50 students and 25 teachers from the east and west from 4 government school of Nagpur city of Maharashtra.

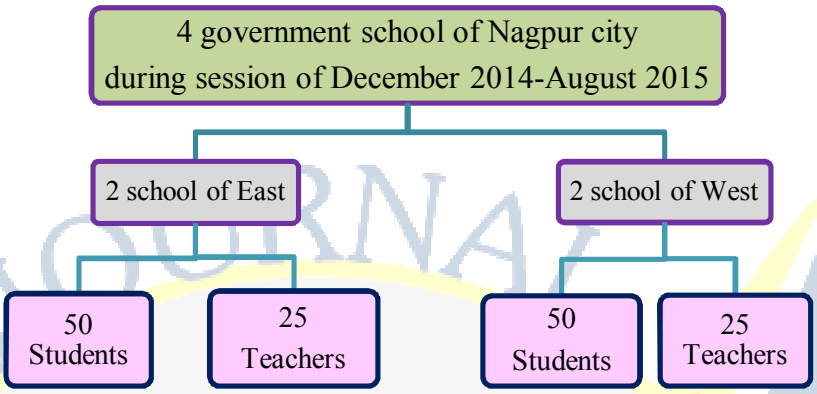

Tools for data collection

A self made structured questionnaire was used.

Data collection procedure

Self made questionnaire on (MDMS) was administered to total number of 100 students and 50 teachers from 4 government school of Nagpur city of Maharashtra (half each from east and west). The researcher assisted during the administration of the questionnaire.

Instructions on how to respond to questionnaire was read to the participants, this ensured the proper filling. Data collection was done immediately after the administration and all the response sheets were retrieved from the students.

Analysis and discussion of results

Objective No:-1

Percentage of responses of the students on mid day meal scheme from west and east area of Nagpur city

Table No-1

No	Question Asked	West			East		
		Yes	No	Don't know	Yes	No	Don't know
1	Do you take breakfast daily before coming to school	81%	19%	0	20%	80%	0
2	Do you bring your own lunch-box for eating food in school	79%	21%	0	40%	60%	0
3	Do you like to eat Mid Day Meal daily in the school	22%	68%	10%	80%	20%	0
4	Have you ever checked up by health department	80%	20%	0	0	100%	0
5	Are you getting hygienic and healthy food in mid day meal scheme	39%	21%	40%	85%	9%	6%
6	Are you coming regularly to the school after starting of mid day meal scheme	20%	70%	10%	91%	4%	5%

- During the survey it was found that 80% students from the east region did not take breakfast before coming to school, So for them MDM is an incentive to fulfill they hunger and 81% student from the west region take their breakfast and 19% don't.
- From the table -1 it was revealed that 40% students from east region bring their own plates from home for having MDM while the rest 60% students are provided with plates by the school. While 79% of the students from the west region bring their lunch-box.
- As compared to the west region where 68% students didn't liked to have mid day meal where else 80% students from the east region like to have MDM daily in the school, 20% do not like to have MDM in the school.
- During the survey, 80% students of west region also revealed that apart from MDM they are checked up by the health department, 100% students from the east region did not.
- 85% Students from east region said they get hygienic and healthy food in MDMS, while 21% students from the west region they didn't and 40% don't know whether they are getting or not.
- 20% of the students from the west region reported that they are coming regularly to the school after starting of MDMS while 70% don't. While the east region 91% students were coming to schools due to MDMS.

Objective No:-2

Percentage of responses of the teachers on mid day meal scheme from west and east area of Nagpur city

Table No-2

No	Question Asked	West			East		
		Yes	No	Don't know	Yes	No	Don't know
1	Are you involved in the mid day meal programme in your school like supervise, cooking, etc.	80%	20%	0	88%	12%	0
2	Do you think that mid day meal programme is a burden for teachers	65%	35%	0	61%	39%	0
3	Do you feel that the MDM disrupts teaching	76%	24%	0%	79%	21%	0
4	Does the level of interest rate increased among the student after the mid day meal have started	29%	52%	19%	82%	8%	10%
5	Do you think the MDM should continue in school	50%	42%	8%	59%	34%	7%
6	MDM should be given in ration form so that they can cook at their home	89%	11%	0	54%	46%	0

- From the table-2, it's reveled that; 88% teachers from the east region are involved in MDMS in school as compared to the west region teachers, and their responsibility to supervise, cooking etc.

- 65% and 76% teachers from the west region said that MDMS is a burden and reported that it creates disputes in their teachings.61% and 79% teachers from the east region also reported same.
- 82% of teachers from the east region of Nagpur city reported that the level of interest rate has been increased among students and 8% did not while 29% teachers of west region said that level of interest among the students towards the studies have increased due to MDM and 52% did not.
- As per the students' point of view, as compared to west region teachers 59% teachers of east region said that MDMS should continue in schools, as it's an incentive for poor/backward class students and 34 % reported should not and 7% don't know.
- 54% teachers of the east region and 89% of teachers of west region schools reported that MDM should be given in ration form so that they can cook at their home, as well as it will save the teachers' time.

Researcher's Observation

- It was not a pre-planned investigation, the authority of the sample school was not ready to allow for research, the researchers gave brief introduction about her research, there after they allow and ready to co-operate very well.
- In east region school, the researcher got a chance to have MDM with the staff as well as with the students and found that MDM is tasty and cooked very well.
- It was also found from the study that the east region students as compared to the west region students are more beneficial from MDMS on the other side few teachers in the schools was in favor for dry rations given to the students, so that their burden will be reduce.
- One thing was very notable that in government schools students really want to have their teaching medium in English.

Conclusion

On the basis of the results obtained in the study, the following Conclusion were drawn

Thus we can conclude through the data and observation, the MDM scheme was cost – benefits for the students of government school of east region as compared to west region of Nagpur city. It had a positive impact in some selective cases e.g. -enhancing enrolment, attendance, removal of classroom hunger; social habits of students (like bring their own utensils) in one side and on another is a burden activities for the teachers and create dispute in teaching.

References

Analysis of Mid Day Meal Scheme and School Health Clinics. Lath,Rahul.(2006). Retrieved January 20, 2014 from

http://ccs.in/internship_papers/2006/Education%20schemes%20in%20Mumbai%20-%20Rahul.pdf

- Nangia, Anita and Ms Poonam. (2011). "Impact of mid day meal scheme on enrollment of elementary school students."Retrieved January 20, 2014 from http://www.ssmrae.com/admin/images/6e71e2bdc1c77cb3a08d06b7365ed48d.pdf

- Right to Food and Mid-Day Meal Scheme: A Comparative Study of Tamil Nadu and Orissa. Padhi Rajashree.(2009) Retrieved December 29, 2013 from http://shodhganga.inflibnet.ac.in/handle/10603/4244

- Impact of mid day meal programme on academic performance of students: evidence from few upper primary schools of burdwan district in west Bengal. Paul P.K,and Mondal N. K. (2012).Retrieved December 29, 2013 from http://www.ijmra.us/project%20doc/IJRSS_AUGUST2012/IJMRA-RSS1750.pdf

- Mid-Day Meal Nutrition on Paper, Poor Food on the Plate. Shukla Siddheshwar.(2014). Retrieved February 9, 2014 from http://www.im4change.org/siteadmin/tinymce/uploaded/MDMS_1.pdf

Gurukul International Multidisciplinary Research Journal (GIMRJ)
with
International Impact Factor 2.254

ISSN No. 2394-8426
Dec – 2015
Issue – I, Volume – V
Online Journal

Food Insecurity in India

Prof. Dr. Sunil G. Naranje
Janata Mahavidyalaya, Chandrapur
Email:- Sunilnaranje@rediffmail.com
Mob. No. 09422836093

Abstract :-

Food security is a condition related to the ongoing availability of food. Concerns over food security have existed throughout history. There is evidence of granaries being in use over 10,000 years ago, with central authorities in civilizations including Ancient China and Anecient Egypt being known to release food from storage in times of famine. At the 1974 World Food Conference the term "availability at all times of adequate world food supplies of basis foodstuffs to sustain a steady expansion of food consumption and to offset fluctuations in production and prices".

Established as a formal concept. Originally, food security was understood to apply at the national level, with a state being food secure when there was sufficient food to "sustain a steady expansion of food consumption and to offset fluctuations in production and prices". Food security can also be extended globally. For example, for global catastrophic risks such as nuclear winter that involve a significant reduction or elimination of traditional agriculture, alternative food conversion is necessary.

Key words :-

Food insecurities, food securities hunger, food and agriculture organization nutritious, healthy life, starvation.

Introduction :-

For less extreme circumstances, a new definition emerged at 1996 World food summit, this time with the emphasis being on individuals enjoying food security, rather than the nation. According to the Food and Agriculture Organization (FAO), food security "exists when all people, at all times, have physical and economic access to sufficient, safe and nutritious food to meet their dietary needs and food preferences for an active and healthy life".

Household food security exists when all members, at all times, have access to enough food for an active, healthy life. Individuals who are food secure do not live in hunger or fear of starvation. Food insecurity, on the other hand, is a situation of "limited or uncertain availability of nutritionally adequate and safe foods or limited or uncertain ability to acquire acceptable foods in socially acceptable ways", according to the United States Department of Agriculture (USDA). Food security incorporates a measure of resilience to future disruption or unavailability of critical food supply due to various risk factors including droughts, shipping disruptions, fuel shortages, economic instability, and wars. In the years 2011-2012, an estimated 842 million people were suffering from chronic hunger. The FAO identified the four pillars of food security as availability, access, utilization, and stability. The United Nations (UN) recognized the Right to

food in the Declaration of Human Rights in 1948, and has since noted that it is vital for the enjoyment of all other rights.

The 1996 World Summit on Food Security declared that "food should not be used as an instrument for political and economic pressure. According to the International Centre for Trade and Sustainable Development, failed agriculture market regulation and the lack of anti-dumping mechanisms engenders much of the world's food scarcity and malnutrition.

Household Food Insecurity Access Scale (HFIAS) – continuous measure of the degree of food insecurity (access) in the household in the previous month

Household Dietary Diversity Scale (HDDS) – measures the number of different food groups consumed over a specific reference period (24hrs/48hrs/7days).

Household Hunger Scale (HHS) – measures the experience of household food deprivation based on a set of predictable reactions, captured through a survey and summarized in a scale.

Coping Strategies Index (CSI) – assesses household behaviours and rates them based on a set of varied established behaviours on how household cope with food shortages. The methodology for this research is base on collecting data on a single question; "What do you do when you do not have enough food, and do not have enough money to buy food? "

Food insecurity is measured in the India by questions in the Census Bureau's Current Population Survey. The questions asked are about anxiety that the household budget is inadequate to buy enough food, inadequacy in the quantity or quality of food eaten by adults and children in the household, and instances of reduced food intake or consequences of reduced food intake for adults and for children. A national Academy of Sciences study commissioned by the criticized this measurement and the relationship of "Food security" to hunger, adding "it is not clear whether hunger is appropriately identified as the extreme end of the food security scale".

The FAO, World Food Program (WFP), and International Fund for Agricultural Development (IFAD) collaborate to produce The State of Food Insecurity in the World. The 2012 edition described improvements made by the FAO to the prevalence of undernourishment (POU) indicator that is used to measure rates of food insecurity. New features include revised minimum dietary energy requirements for individual countries, updates to the world population data, and estimates of food losses in retail distribution for each country. Measurements that factor into the indicator include dietary energy supply, food production, food expenditures, and volatility of the food system. The stages of food insecurity range from food secure situation to

full-scale famine. A new peer-reviewed journal of Food Security: The Science, Sociology and Economics of Food Production and Access to Food began publishing in.

History:-

In late 2007, export restrictions and panic buying, US Dollar Depreciation, increased farming for use in bio fuels, world oil prices at more than 100 a barrel, global population growth, climate change, loss of agricultural land to residential and industrial development, and growing consumer demand in China and India are claimed to have pushed up the price of grain. However, the role of some of these is under debate. Some argue the role of bio fuel has been overplayed as grain prices have come down to the levels of 2006.

Nonetheless, food riots have recently taken place in many countries across the world. The World Summit on Food Security held in Rome in 1996, aimed to renew a global commitment to the fight against hunger. The Food and Agriculture Organization of the United Nations (FAO) called the summit in response to widespread under-nutrition and growing concern about the capacity of agriculture to meet future food needs. The conference produced two key documents, the Rome Declaration on World Food Security and the World Food Summit Plan of Action.

The Rome Declaration calls for the members of the United Nations to work to halve the number of chronically undernourished people on the Earth by the year 2015. The Plan of Action sets a number of targets for government and non-government and non-governmental organizations for achieving food security, at the individual, household, national, regional and global levels.

Another World Summit on Food Security took place in Rome between November 16 and 18,2009. The decision to convene the summit was taken by the Council of FAO in June 2009, at the proposal of FAO Director- General Dr. Jacques Diouf. Heads of State and Government attended the summit, which took place at the FAO's headquarters.

A concept note on the proposed National Food Security Act circulated to all states continues to push for a targeted public distribution system instead of a universal one, and propose to reduce the issue of food grains to 25 kg per BPL household, completely ignoring the contentious issue of who is poor and what an adequate and nutritious diet consists of

Objective :-

1) To offer a conceptual from work summarizing the unique charecteristic of food insecurities and strategies as appropriate to overcome the problem

2) In the literature with those reported by food insecurities in India.
3) To offer recommendation and suggestion to remove food insecurities in India
4) How India depend on his self food security

Hypotheses :-

1) Food security in India difficult to Solve due to Nature Uncestanity
2) By the small Dam and other water resours to develop Agriculture land and remove food insecurity
3) In Drought Situation food Supply from other country

Methodology :-

For the present study in food insecurities in India is based on food in securities literature and food survey. The sample consists on food question and Interview. The primary data called through literature and question answers system. Schedule by adopting the interview method. The study comers both primary and secondary data for analysis. The secondary data and collected from the published and unpublished reports. Journals and also website.

Recommendations :-

Currently, the limits of annual income required for a household to be declared BPL are illogical. In Karnataka, for instance, the figures are Rs 11,000 and Rs 17,000 in rural and urban areas respectively. That means that a household of five people in Bangalore would have to be living on around Rs 47 per day, or about Rs 10 per person, on which even a beggar would not survive. In other words, a person would have to be earning less than half the minimum wage of Rs 88 (which itself is inadequate) to be considered poor. If universalisation of the PDS is not accepted, those earning less than the minimum wage need to be considered poor.

The concept note assumes without any justification that the nation may not be able to procure the required amount of food grain or bear the cost of a food subsidy. It is therefore proposing to reduce the scale of issue to 25 kg per BPL household, or 5 kg per person. This, despite the Supreme Court ruling that every BPL family shall be given 35 kg, and that no changes shall be effected in any food-related scheme without its permission. This will result in families having to buy 10 kg from the market, paying more for the same amount of food than earlier.

Taking all this into consideration, the Wadhwa Committee recommends that “the income criterion needs to be revisited” and that “estimation of poverty should not be made on a criteria (sic) which is less than the minimum wage fixed by the state for agricultural labourers”. Also,

that " the government may also consider using calorie intake per person per day as an indicator of poverty".

The people's Health Movement has demanded that every person be given enough food grain to ensure 2,400 calories per day. Moreover, the predominance of cereals and lack of adequate pulses, oil, fruit and vegetables in the diet of most Indians is what is causing high levels of malnutrition among them. We need to find ways to get these items to the populace through the PDS, if malnutrition is to be addressed.

Conclusion :-

The concept note does not mention the word 'malnutrition' at all; it completely ignores the contentious issue of defining who is poor and how much and what constitutes 'adequate and nutritious food'. It does not recognize anywhere that entitlements should be linked to levels of malnutrition, if food security is to be achieved. It concentrates wholly on how to reduce the number of BPL families, reduce entitlements, and reduce subsidies. A great way indeed to ensure food security and raise India's position on the World Hunger Index.

The concept note recognises that some households may have more than the average number of persons whereas others may have less than the average. But nowhere does the centre make a commitment to provide food grain to every individual in a family, whether it has five or 10 members. It continues to think in terms of an upper ceiling of five units per household as the maximum that a family can receive. What happens to the guarantee of having the "individual as the focus" ?

The only good points in the concept note appear to be the government's commitment ensuring doorstep delivery of food grain to all fair price shops (FPSs) monitoring, FPSs and certification of issuance of food grain by local vigilance committees, social audit by local bodies, computerisation of operations, effective grievance redressal mechanisms, and the setting up of food security tribunals at the taluka level, and appellate tribunals at the district level.

Reference :-

1) *The hitavada daily news paper*
2) *The encyclopedia new edition 2015*
3) *The wiki pedia*
4) *The times of India daily News paper*
5) *India express daily news paper*
6) *India today magazine monthly*
7) *Co-operation and rural development in India – Rashi Arora.*

Gurukul International Multidisciplinary Research Journal (GIMRJ)
with
International Impact Factor 2.254

ISSN No. 2394-8426
Dec – 2015
Issue – I, Volume – V
Online Journal

Review of Environmental concern in Sociological Theory

Mr.Prashant T. Nargude

Introduction:

When we think about environmental problems and how to solve them, we have to consider human societies, how they act, and why they do what they do. One way to think about society and the environment is to consider how a society uses common resources. The term 'environment' originates from the French word 'environ' meaning 'around', 'round' about 'to surround' or 'to encompass'.

The classical approaches to understand the structure of society shared two basic features. One was the ambition to provide ways of conceptualism the large-scale structural features of whole societies, and to situate them in the context of long-term historical change and in relation to the alternative social forms and historical tendencies in the rest of the world. Environment and Social theory outlines the complex interlinking of the environment, nature and social theory from ancient and pre-modern thinking to contemporary social theorising. It explores the essentially contested character of the environment and nature within social theory, and draws attention to the need for critical analysis whenever the term 'nature' and 'environment' are used in debate and argument.

Objectives:

1. To criticize environmentalism in classical sociological theory.
2. To review the environmental concern in contemporary sociological theory.

Research method:

The present research paper is dependent secondary data like articles, books, research papers, journals and internet etc.

Theme:

- **Classical Sociology and the Environment:** The full complexityof the socialconstruction of the environment can be seen if we examine how we think about the environment. The environment as term of social discourse is a human concept.

Classical sociology the science of society has little to say about the environmental basis of human society. Where non-human world did appear in classical sociology it was usually as one half of the organizing dualism- society/nature, and/or as that which humans have historically overcome in their evolution from the Stone Age to the modern industrial age. As Goldblatt puts it:

The primary ecological issue for classical social theory was not the origins of contemporary environmental degradation, but how pre modern societies had been held in check by their natural environments, and how it was that modern societies had come to transcend those limits or had separated themselves in some sense from their 'natural' origins.

Particularly in work on natural environments, environmental sociology has always placed emphasis on environmental degradation, whether investigating the causes of consequences of problematic environmental conditions. In recent years, however, environmental sociologist in some of the highly advanced European nations which appear to have made considerable progress in cleaning up their environments have begun to emphasize the need for sociological attention to the phenomena of environmental improvement. As we point out below, environmental sociology and theoretical debates in the field have their roots both in ninteeth-century social theory and later American sociology during its theoretical inception.

- **Contemporary Sociological Theory and the Environment:**

It has been observed that 'contemporary forms of environmental degradation present one of the most, if not the most, complex and catastrophic dilemmas of modernity' (Goldblatt 1996; preface). In his context, two important issues emerge: the causes and consequence of environmental degradation in modern societies, and the role environmental degradation.

Webers work shows the least engagement with the natural world. Even Marx and Durkheim, Goldblatt argues, who saw the relation between human societies and the natural word. Classical theory was concerned more with how pre modern societies had been constrained by their natural environments than with how

Industry in modern society led to environmental degradation. Nor could it see at the time that capitalism would prove to be environmentally problematic in a fundamental sense.

In Giddense view, the debate about whether capitalism or industrialism has been the prime mover in shaping the modern world, until relatively recently, ignored he destructive effects but modern production system may have upon the environment (Giddense 1987:49) Giddense argues capitalism combine with industrialism is responsible for the environmental crisis.

Ulrich Beck distinguishes the modern society from the earlier ones as the risk society, characterised by its catastrophic potential resulting from environmental deterioration. He called **Risk Society** of current society. In the pre-industrial societies, risks resulting from natural hazards occurred. The nature of risk changed in the industrial societies. These society also developed institutions and methods to cope with the dangers and risks, in the of insurance, compensation, safety etc. Beck sees the welfare state as 'a collective and institutionalised response to the nature of industrialised risks.

Conclusion:

We can see in Classical perspectives in sociology that they ignored environmental awareness and regarding issues. When constructing sociological thoughts that time they had only focussed on material things but nature was central spot of many theories. Today we can see mostly Social theories and thoughts attention to the environment and this is implication of developing social and environmental knowledge.

References:

1. Barry John, Second edition, "Environment and Social Theory", RoutledgeTylor and Francis Group 2006.
2. Dunlap Rilley E., Michelson Willam,(Edited) " Handbook of Environmental Sociology", rawat publications 2008.
3. MunshiIndra, "Envronment in Sociological Theory", Sociological bulletin,49 (2) September 2000.
4. www.sagepub.com/_/17276_01_pretty accessed on 22'nd Jan.14 3:33pm
5. www.isei-sociology.org/_/_22/20society accessed on 22'nd Jan.14 4:00pm

सामाजिक आणि सांस्कृतिक ऐक्याचे प्रतिक म्हणजे अहेरीचा दसरा उत्सव

प्रा.डॉ. आनंद के. भोयर,
इतिहास विभाग प्रमुख,
भगवंतराव कला महाविद्यालय सिरोंचा,
जि. गडचिरोली.

प्रस्तावना :-

भारतीय संस्कृतीमध्ये प्रत्येक दिवस, सण आपले वेगळेपण आणि वैशिष्टये व्यक्त करणारा आहे. गडचिरोली हा आदिवासी बहुल जिल्हा या जिल्हयातील संस्कृती, उत्सव देखील आपल्या वेगळेपणाची आणि सांस्कृतिक प्रगल्भतेची छाप पाडणारी आहे. गडचिरोली जिल्हयातील शंकरपट असोत, नाटयकला असो अथवा सण असो त्या सर्वांची आगळीवेगळी ओळख आहे. गडचिरोली जिल्हयातील अहेरीच्या आत्राम राजपरिवारातील विजयादशमीचा उत्सव हा देखील या जिल्हयातील आदिवासी संस्कृतीचे मोठेपण दर्शविणारा आणि गतकालीन वैभवाची साक्ष पटवून देणारा तसेच आधुनिक काळात सामाजिक आणि सांस्कृतिक ऐक्याचे प्रतिक म्हणवून घेणारा अहेरीचा दसरा उत्सव होय.” ‘१’

१) अहेरीतील जमिनदारी :-

सुमारे सव्वासे ते दिडशे वर्षाचा जूना आणि समृध्द इतिहास लाभलेला अहेरीतील आत्राम राजपरिवारातील दसरा उत्सव म्हणजे या जिल्हयातील सांस्कृतीक ठेवाच आहे. आत्राम राजपरिवारातील राजगादीनुसार स्व. धर्मराव महाराज आत्राम(पहिले) राजे मानले जातात. अहेरी जमिनदारीचे पहिले राजे स्व. धर्मराव महाराज १८७१ ते १८९३ पर्यंत राजपाठ सांभाळला त्यानंतर दुसरे राजे भुजंगराव महाराज आत्राम यांनी सन १८९३ ते १९२८ पर्यंत राजसत्ता सांभाळली. त्यानंतर तिसरे राजे स्व. दुसरे धर्मराव महाराज यांची कारकिर्द सन १९२८ ते १९५० अशी सांगितली जाते. त्यांच्या काळातच देश स्वतंत्र झाला. या काळातच संस्थानिकांना बरखास्त करण्यात आले. परंतु जनतेची अपार श्रध्दा आणि अपार प्रेमापोटी ते अखेरपर्यंत राजे म्हणूनच वावरले. त्यांच्या निधनानंतर स्व. राजे विश्वेश्वरराव महाराज चवथे राजे झाले. सन १९५० ते १९९७ पर्यंत ते या पदावर होते. त्यानंतर पाचवे राजे म्हणून सत्यवानराव महाराज आत्राम हे सन १९९७ पासून राजगादी २०११ पर्यंत सांभाळली आणि आता सहावे राजे म्हणून अम्ब्रीशराव महाराज(राज्यमंत्री महाराष्ट्र राज्य) राज गादीवर आहेत. ‘२’

२) मुख्य सोहळा :-

शेकडो वर्षाची ऐतिहासिक परंपरा असलेल्या या राज परिवारातील दसरा उत्सव एकेकाळी

आकर्षणाचा आणि कौतुकाचा विषय असायचा. अहेरी शहराबाहेर दक्षिणमुखी हनुमान मंदिर आहे. या मंदीराला विशेष महत्व आहे. दस-यापूर्वी राजे आपल्या लवाजम्यासह या भागात सिमा लंघनासाठी जात असत. लंघनावरून परत येतांना विजयाचे प्रतिक म्हणून शिकार केली जायची. विजयादशमीच्या आदल्या दिवशी या मंदिराकडील भागात लंघनाचे प्रतिक म्हणून अलिकडे फायर केले जाते. राजपरिवारातील विजयादशमी म्हणजे अहेरी परिसरातील जनतेसाठी मोठा उत्सवच असायचा. दूरवरून माडिया, आदिवासी जनता मजल दरमजल करित अहेरीत पोहोचायची. सुमारे ६ ते ८ हजार जनता विजयादशमीचा काळात राजवाडयाच्या शेजारी मुक्कामाने यायची. येतांना राजासाठी नजराणा म्हणून यथाशक्ती वस्तूही आणल्या जायच्या. ७ ते ८ दिवस या जनतेचा मुक्काम राजवाडयाभोवती असायचा. या मुक्कामाच्या काळातच प्रजेच्या साक्षीने विजयादशमीच्या नेत्र दिपक सोहळा होत असे.

दस-याची गीते :-

दस-यासाठी पूर्वी पायीच माडियांचे जथ्थे येत, तेव्हा नाचत हे गाणे म्हणत व पुढे जात.

तिना नामूर, नेई नामूर हो हो हो SS.....
नेई नामूर हो हो हो SS.....
तेदाना उदाना
भावोर बाबोना डेरा
नेई नामूर ना ना ती ना नामूर ना ना ..... ।।१।।
अहेरी नाटे जिम्मेदार
रामराम बोलो
ना ना ती ना..... ।।२।।
तेदाना उदाना
भावोर बाबोना डेरा
नेई नामूर ना ना ती ना नामूर ना ना ..... ।।३।।

मराठीत अर्थ :-

उठत, बसत म्हणजे मजल दर मजल करित आमच्या लोकांचा, जमाव चालला आहे. अहेरी गावाचा जमिनदार असलेल्या राजाला राम-राम करून उठत-बसत आमच्या राजाकडे जमाव दस-याला पोहोचेल.

अहेरीला पोहोचल्यानंतर राजाला उद्देशून आळवून आळवून प्रस्तुत गीत गातात.

बाबाले बाबाले
चिट्टीत पोहेन चिटी बाबाले,
जगता पोहेन, डागी बाबाले..... ।।१।।
निम्मे चिटी लोहतानीन बाबाले
पटीन पटीन चिटी बाबाले
लोहंतानीन बाबाले,
चिट्टीत पोहोन चिटी बाबाले ..... ।।२।।

मराठीत अर्थ :-

हे राजा, तू पूनः पून्हा पत्र पाठवून आम्हाला बोलावले. तू पत्र पाठवून आम्हाला बोलावले. प्रत्येक पट्टीत पत्र पाठवून तू आम्हाला बोलावले, तु पुनः पुन्हा बोलावले म्हणून आम्ही आलो.

दसरा हा उत्सवाचा मूळ दिवस या दिवशी सकाळी राजपरिवाराचे दैवत आणल्या जाणा-या साईबाबांची पालखी काढली जायची. या पालखीमागे गादीवर असलेल्या राजाची पालखी सेवक खांदयावर वाहायचे. त्यामागे राजगादीच्या वारसदारांची पालखी व त्यामागे राजपरिवारातील सदस्यांची पालखी अखायची. शोभायात्रेमध्ये छत्र, चामरे, ध्वज, हत्ती, घोडे, चौघडा सेवक आदिवासी गोंड, माडिया, गैरआदिवासी स्त्री-पुरूष, सेवक असा बराच मोठा थाट असायचा. या उत्सवासाठी दूरवरून आलेली प्रजाही मिरवणूकीत सामील व्हायची. संपूर्ण अहेरी नगरीला प्रदक्षिणा घालून अहेरीच्या शेजारीच असलेल्या गडअहेरी येथे हा काफीला जायचा. गडअहेरी म्हणजे या राजपरिवाराच्या मुक्कामाचे मुळ ठिकाण स्व. राणी लक्ष्मीबाईनी येथूनच जमिनदारीचा कारभार सांभाळला होता. मिरवणूक तिथे पोहोचल्यावर इस्ट देवतांची पूजा, शस्त्रपूजन व्हायचे. त्यानंतर सोने लुटल्यावर पुन्हा हा काफीला राजवाडयात परतायचा. तोपर्यंत सायंकाळ झालेली असायची. त्यानंतर सायंकाळी महाभोजनाचा कार्यक्रम होत असे. सर्व प्रजा या भोजनाला आणि समारंभात हजर असायची. सायंकाळी शेकोटी पेटवून राजाच्या उपस्थितीत मनोरंजनाचे कार्यक्रम व्हायचे. रेला, माडियानृत्य, भजन किर्तनाचे कार्यक्रम रंगायचे. '३'

३) सांस्कृतीक कार्यक्रम :- आदिवासींचे रेलॉ नृत्यू :-

रेलॉ रेलॉ, ऑ S
नावारे
नावरे च्याते मरका मरा
मरका मरा बारून वातारे
आली श्रृंगार डोळे वाता

किती सुंदर, अहाहा
माझी बाग ही
या बागेतलं हे आंब्याचं झाड, बघ
किती सुंदर बहर आला आहे.
वा-यावर कसं डोलत आहे.

रेलॉ रेलॉ, ऑ..... ।।१।।
नावारे च्याते लिंबू मरा
लिंबू मरा बाऊत वातारे
आली श्रृंगार डोळे वाता
रेलॉ, रेलॉ, ऑ..... ।।२।।
नावारे च्याते शिंती मरा
रेंगा मरा बाऊत वातारे
आली श्रृंगार डोले वाता
रेलॉ, रेलॉ, आ..... ।।३।।
नावारे च्याते सितामरा
सितामरा बाऊन वातारे
आली श्रृंगार डोळे वाता
रेलॉ रेलॉ, ऑ..... ।।४।।
नावारे ज्यांनी मंता
हौशातुरं हिंद मंता
रेलॉ रेलॉ, ऑ.... ।।५।।

किती सुंदर, अहाहा ! .....
या बागेतल हे लिंबाच झाड बघ
लिंबानी कस नम्र झाला आहे.
वा-यावर कसं डोलत आहे.
किती सुंदर, अहाहा ! .....
या बागेतलं हे शेवंतीचे झाड बधं
सुगंधीत फुलांनी कसं डवरलं आहे.
वा-यावर कसं डोलत आहे.
किती सुंदर, अहाहा ! .....
या बागेतलं हे सिताफळाचं झाड बघ
पिकल्या फळांनी ओथंबल आहे.
वा-यावर कसं डोलत आहे.
किती सुंदर, अहाहा !.....
माझ्या यौवनाची बाग अशीच आहे
प्रियकरा, तू यावेळी कुठं आहेस ?
किती सुंदर, अहाहा !..... '४'

४) समारोप :-

प्रजेचा मुक्काम, राजवाडयाशेजारी ५-६ दिवस तरी असायचाच. या सर्व दिवसात राजवाडयातून भोजनदान व्हायचे. याच निमित्ताने दरबारही भरायचा. दरबारात प्रजा राजाला आपल्या अडी-अडीचणी सांगायची राजेही प्रजेचे सुख दुःख ऐकून घ्यायचे. नडलेल्यांना मदत करायचे. दुष्टांना शासन करायचे. प्रजा परत जायला निघाली की, 'बिदागी' चा परतीच्या प्रवासाला निघणारे राजाच्या मस्तकावर गुलालाचा टिळा लावून निघायचे. निघतांना त्यांच्याही माती सन्मानाचा टिळा लागायचा. शेकडो वर्षापूर्वीचा हा दसरा उत्सव म्हणजे आदिवासींच्या स्वच्छ आणि नितळ जीवन प्रवाहाचा सुखद प्रवासच होता.

अलिकडच्या काळात जंगलातूनही शहरी करणाचे वारे वाहायला लागले आहे. ६५ वर्षांतील लोकशाहीच्या प्रवासात राजवाडयातील दसरा उत्सवातही अलिकडे फरक दिसतो आहे. दळणवळणाची साधने वाढल्याने पूर्वी ५-६ दिवस चालणारा हा उत्सव आता दोन दिवसांवर आला आहे. परंतु उत्सवात येणा-या प्रजेची या राजघराण्यावरील श्रध्दा आणि प्रेम मात्र कायमच आहे.

कहाणी बनके जिये, हम तो उस जमाने में
लगेंगी आपको सदियाँ, हमे भुलाने मे
न जो भुले, भुलाना थी न आये
यादों के पंछी ऐसे के, लौटकर फिर-फिर आये !... '५'

५) वैशिष्टये :-

१) दसरा उत्सवामध्ये मोठया संख्येने माडीया, गोंड, इतर आदिवासी, गैरआदिवासी जनता प्रामुख्याने असते.

२) आदिवासी जनता राजांची काळी टोपी डोक्यावर परिधान करून येतात.

३) अजूनही मिरवणूक ही प्राचीन वाद्यांच्या गजरांमध्ये निघते.

४) अजूनही राजाची पालखी सेवक(भोई) खांदयावर धरून नेतात.

५) जेवणानंतर रात्री नाचगाण्यांचा कार्यक्रम चालतो.(आदिवासी कला & नृत्यू)

६) दुस-या दिवशी निवडक लोकांचा दरबार भरतो.

७) दस-यामध्ये उत्सवाचे वातावरण असले तरी सर्वत्र शांततेत पार पडते.

८) या दस-यामध्ये हिंदू, मुस्लीम, बौध्द, आदिवासी, बंगाली जनता एकत्रितपणे उत्सवामध्ये भाग घेतात.

संदर्भ ग्रंथ :-

१) मांडवकर गोपालकृष्ण - लोकमत दैनिक वृत्तपत्र.

२) राजुरकर अ.ज. - चंद्रपूरचा इतिहास - महाकाली प्रकाशन चंद्रपूर., १९८२ पृ.क्र. १३७

३) देवगांवकर डॉ.सौ.शैलजा-महाराष्ट्रातील आदिवासींचे लोकसाहित्य-श्री. साईनाथ प्रकाशन, नागपूर-१९९३ पृ.क्र. ८८, ८९

४) बडवे म.रा.-इंद्रावतीच्या परिसरातील माडिया जमात नारायण मुद्रनालय, नागपूर १९९०, पृ.क्र. ५०

५) कित्ता- मांडवकर गोपालकृष्ण - लोकमत दैनिक वृत्तपत्र

Gurukul International Multidisciplinary Research Journal (GIMRJ)
with
International Impact Factor 2.254

ISSN No. 2394-8426
Dec – 2015
Issue – I, Volume – V
Online Journal

DEVELOPING LEADERSHIP SKILLS: A STUDY

Dr. Pawan R. Naik
Add.:- Flat No.302, Amit-Sumit Apt.,
Nehru Coloney, Yogendra Nagar,
Nagpur – 440013

ABSTRACT:

Leaders help themselves and others to do the right things. They set direction, build an inspiring vision, and create something new. Leadership is about mapping out where you need to go to "win" as a team or an organization; and it is dynamic, exciting, and inspiring. Yet, while leaders set the direction, they must also use management skills to guide their people to the right destination, in a smooth and efficient way.In this article, we'll focus on the process of leadership. In particular, we'll discuss the "transformational leadership" model, this model highlights visionary thinking and bringing about change, instead of management processes that are designed to maintain and steadily improve current performance.

Keywords

Leadership, skills, vision, mission, creativity, honesty

INTRODUCTION:

What is leadership? It is a process by which one person influences the thoughts, attitudes, and behaviors of others. Leaders set a direction for the rest of us; they help us see what lies ahead; they help us visualize what we might achieve; they encourage us and inspire us. Without leadership a group of human beings quickly degenerates into argument and conflict, because we see things in different ways and lean toward different solutions. Leadership helps to point us in the same direction and harness our efforts jointly. Leadership is the ability to get other people to do something significant that they might not otherwise do. It's energizing people toward a goal. May be it's a politician, a famous businessperson, or a religious figure. Or maybe it's someone you know personally – like your boss, a teacher, or a friend. You can find people in leadership roles almost everywhere you look. However, simply having the responsibilities of a leader doesn't necessarily make a person an effective leader. This is a shame because, with a little study, humility and hard work, all of us can learn to lead effectively.

So, how can you do this ? You can start by analyzing your performance in specific areas of leadership. Complete the quiz below to identify where you already lead effectively, and to

explore where your skills need further development. In the analysis sections underneath, we'll direct you to the resources you need to be an exceptional leader. Leading a team or group is a real skill that takes time, thought and dedication. Leadership is the most studied aspect of business and organization because it is the one overarching topic that makes the difference between success and failure. At times it may seem overwhelmingly complex, but by focusing on some fundamentals you will find that you can lead your team with confidence and skill. The ability to lead effectively is based on a number of key skills. These skills are highly sought after by employers as they involve dealing with people in such a way as to motivate, enthuse and build respect.

THE NATURE OF LEADERSHIP

True leadership is special, subtle, and complex. Too often we confuse things like personal style and a position of authority with leadership.

- Leadership is not primarily a particular personality trait. A trait closely linked to leadership is charisma, but many people who have charisma (for example, movie actors and sports figures) are not leaders.
- Leadership is not primarily a set of important objectives. It involves getting things done.
- Leadership is not primarily a formal position. There have been great leaders who did not hold high positions—for example, Martin Luther King, Jr. and Jeanne d'Arc—and there are people who hold high positions who are not leaders at all, but administrators who don't want to rock the boat.
- Leadership is not primarily a set of behaviors. Many leadership manuals suggest that what defines leadership is things such as delegating and providing inspiration and vision; but people who are not leaders can do these things, and some effective leaders don't do them all.

1. CREATING AN INSPIRING VISION OF THE FUTURE

In business, a vision is a realistic, convincing and attractive depiction of where you want to be in the future. Vision provides direction, sets priorities, and provides a marker, so that you can tell that you've achieved what you wanted to achieve.

2. MOTIVATING AND INSPIRING PEOPLE

A compelling vision provides the foundation for leadership. But its leaders' ability to motivate and inspire people that helps them deliver that vision. For example, when you start a new project, you will probably have lots of enthusiasm for it, so it's often easy to win support for the project at the beginning. However, it can be difficult to find ways to keep your vision inspiring after the initial enthusiasm fades, especially if the team or organization needs to make significant changes in the way that they do things. Leaders recognize this, and they work hard throughout the project to connect their vision with people's individual needs, goals, and aspirations.

3. MANAGING DELIVERY OF THE VISION

This is the area of leadership that relates to management. Leaders must ensure that the work needed to deliver the vision is properly managed – either by themselves, or by a dedicated manager or team of managers to whom the leader delegates this responsibility – and they need to ensure that their vision is delivered successfully.

4. COACHING AND BUILDING A TEAM TO ACHIEVE THE VISION

Individual and team development are important activities carried out by transformational leaders. To develop a team, leaders must first understand team dynamics. Several well-established and popular models describe this, such as Belbin's Team Roles approach, and Bruce Tuckman's Forming, Storming, Norming, and Performing theory

IMPORTANT LEADERSHIP SKILLS

- Commitment, resolve and perseverance – driving every aspect of the organization toward a singular unified purpose.
- Risk-taking – breaking conventions and developing new products and services to establish marketplace dominance (and possibly even create a unique market).
- Planning – though a leader typically doesn't get too involved in the details, he or she must orchestrate a high-level plan that drives everyone toward the unified goal.
- Motivating – an effective leader must be able to encourage contributions from the entire organization, navigating the specific motivators of each individual or group to push the right

buttons and inspire employees at every level to achieve not only their personal best but the best for the organization as a whole.

- Communication skills that rely on active listening – far more than just being able to speak and write persuasively, leadership communication skills incites others to work toward the stated goal in line with the path the leader has chosen.
- Possessing or obtaining the skills required to successfully achieve business goals – bringing a unique knowledge set to the table or acquiring it personally or through employees and other subordinates.

FIRST, TAKE TIME TO HONESTLY ANALYZE YOURSELF

Learn to understand yourself. It's the first step to understanding others. Consider these important questions:

1. What kind of leader am I? One who helps solve problems? A leader who helps people get along? How do others see me as a leader?
2. What are my goals, purposes, and expectations in working with this particular group?

Identify areas for improvement. Ask yourself these questions:

1. Do I try to be aware of how others think and feel?
2. Do I try to help others perform to the best of their abilities?
3. Am I willing to accept responsibility?
4. Am I willing to try new ideas and new ways of doing things?
5. Am I able to communicate with others effectively?
6. Am I a good problem solver?
7. Do I accept and appreciate other perspectives and opinions?
8. Am I aware of current issues and concerns on campus or in my community?

Then--after analyzing your strengths and weaknesses--take action. Devise a strategy for upgrading your skills. Here are a few strategies to consider:

1) COMMUNICATE EFFECTIVELY.

Effective communication is dialogue. Barriers are created by speaking down to people, asking closed questions that elicit yes or no answers, using excessive authority, and promoting a culture that depends on unanimity. If your focus is winning the argument or if you react defensively to criticism, you'll create fear of openness and hinder the organization's growth.

2) ENCOURAGE ENTHUSIASM AND A SENSE OF BELONGING. SHOW:

- Friendliness: others will be more willing to share ideas if you're interested in them as people too.
- Understanding: everyone makes mistakes. Try to be constructive, tolerant and tactful when offering criticism.
- Fairness: equal treatment and equal opportunity lead to an equally good effort from all group members.

3) KEEP EVERYONE WORKING TOWARD AGREED UPON GOALS:

- Remind everyone of the group's purposes from time to time. It's easy to become too narrowly focused and lose sight of the larger goals.
- Provide encouragement and motivation, by showing your appreciation for good ideas and extra effort.
- Harmonize differences and disagreements between group members by stressing compromise and cooperation.
- Involve everyone in discussions and decisions, even if asking for opinions and ideas means a longer discussion.

4) GET TO KNOW THE PEOPLE AROUND YOU

Everyone has different abilities, wants, needs, and purpose in life. To get along with others and get results, you need to get to know them.

- Interact with group members as often as possible. The only way to get to know someone is through direct personal contact.
- Become familiar with every member of your group. Take note of each person's unique qualities and characteristics.

5) TREAT OTHERS AS INDIVIDUALS

Put your knowledge and understanding of each group member to work!

- Be aware of expectations. Everyone expects something different: recognition, a chance to learn, a chance to work with other people, etc.
- Be creative. A repetitious routine can cause boredom. A successful leader thinks of new and better approaches to old ways of doing things.
- Provide rewards. Recognition by the group is a source of personal satisfaction and positive reinforcement for a job well done.

6) ACCEPT RESPONSIBILITY FOR GETTING THINGS DONE

- Take the initiative. Why stand around and wait for someone else to get things started? Set an example.
- Offer help and information. Your unique knowledge and skills may be just what's needed.
- Seek help and information. Ask for advice if you need it. This will encourage group involvement and help accomplish group goals.
- Make things happen. By being decisive, energetic, and enthusiastic, you can and will help get things done!

7) PROBLEM SOLVE IN A STEP-BY-STEP WAY

Whether you are faced with a decision to make or a conflict to resolve, following a logical approach will help.

1. State the problem as simply and clearly as possible.
2. Gather all relevant information and available resources.
3. Brainstorm as many ideas or solutions as you can think of (with others if possible).
4. Evaluate each idea or solution and choose the best one.
5. Design a plan for using your idea or solution. Include a timetable, assigned roles, and resources to be used.
6. Follow up on your plan by asking if your idea worked and why or why not.

CONCLUSION

Leadership can be hard to define and it means different things to different people.In the transformational leadership model, leaders set direction and help themselves and others to do the right thing to move forward. To do this they create an inspiring vision, and then motivate and inspire others to reach that vision. They also manage delivery of the vision, either directly or indirectly, and build and coach their teams to make them ever stronger.Effective leadership is about all of this – and it's exciting to be part of this journey.

REFERENCE

❖ How to be an Effective leader – 2010
❖ Leadership Skills - 2004
❖ Strengths Based leadership – Tom Rath, Barry Conchie – 2009
❖ The leadership challenge – Kouzes Posner – 1987
❖ The seven habits of highly effective people- Stephen Covey- 1989

Gurukul International Multidisciplinary Research Journal (GIMRJ)
with
International Impact Factor 2.254

ISSN No. 2394-8426
Dec – 2015
Issue – I, Volume – V
Online Journal

चंद्रपूरचा गोंड राजवंश

प्रा. डॉ. गौतम ए. शंभरकर
जनता महाविद्यालय, चंद्रपूर

सारांश :

रामचंद्रदेव यादवाच्या काळात खिलजी आक्रमणाने त्याचे राज्य डळमळीत झाले होते. रामचंद्रदेवाने अल्लाउद्दीनशी समझोता करून खंडणी देण्याचे मान्य केले. 1305–1306 मध्ये देवगिरीच्या यादवांनी खंडणी बंद करताच सेनापती मलिककाफुरने देवगिरीवर विजय मिळवून खंडणी वसूल केली.[3] यादवांची सत्ता डळमळीत झाल्याचे पाहून वैरागडच्या राजाने बंड केले. ते बंड मोडण्याच्या दृष्टीने जेव्हा मलिककाफूरने 1309 मध्ये वारंगळवर स्वारी केली. तेव्हा रामचंद्रदेवाचे सैन्य त्यास मिळाले. वारंगळच्या परभवानंतर अल्लाउद्दीनशी मैत्री वाढवून चांदा प्रदेशातील सत्ताधिशांना भयभित करून वैरागडच्या राजाचा मुलोच्छेद केला. परंतु हा प्रदेश यादवांच्या राज्यात जास्त दिवस राहिला नाही. कारण यावेळी यादवांचीच सत्ता कमजोर झाली होती. या अस्थिरतेच्या काळात गोडांना प्रगतीची संधी मिळाली. अर्थात देवगिरीचे यादव, नागवंशीय माना आणि माळव्याचे परमार यांचे या प्रदेशावरील प्रभुत्व संपुष्टात आल्यावर या प्रदेशात चौदाव्या शतकाच्या पूर्वार्धात गोंडाचा उदय झाला. मानानागवंशीयांचे वैरागड येथील अधिपत्य बाराव्या–तेराव्या शतकात संपुष्टात येत असल्याचे पाहुन आंध्रप्रदेशातील जुनगांव–मोवाड ते शिरपूर–माणिकगड या भागात तेराव्या शतकात राजगोंड जमातीतील कोलभिल्ल नावाच्या पराक्रमी पुरूषाने देवगिरीच्या यादवांची व वैरागडच्या माना नागवंशियांची सत्ता कमजोर झाल्याचे पाहून यादवांची व नागांची सत्ता समाप्त केली. त्याने गोंडाचे राजकीय संघटन करून नागांचा बालेकिल्ला माणिकगढ जिंकून गोंड राजवटीस प्रारंभ केला.[4] चंद्रपूर राज्यात एकून तेवीस गोंड राजांनी राज्य केले. त्या गोंड राजवटीचा थोडक्यात आढावा या लेखात घेण्यात आला आहे.

बीजशब्द :

पहिली राजधानी शिरपूर व गोंडराजे, दुसरी राजधानी बल्लारपूर व गोंड राजे, तीसरी चंद्रपूर राजधानी व गोंड राजे.

प्रस्तावना :

चंद्रपूर शहरास कृतयुगात लोकपूर, द्वापारयुगात इंदुपुर, गोंडकाळात चंद्रपूर, ब्रिटीश काळात चांदा आणि 1964 मध्ये स्वातंत्र्यानंतर पुन्हा चंद्रपूर अशी नावे होती. वन्य जमातीला आदिवासी जमात म्हणून संबोधले जाते. आदिवासींच्या सुमारे दोनशे जातीमध्ये गोंड जमात प्रमुख होती. या गोंड जमातीचा विस्तार जबलपूरपासून तेलंगणापर्यंत उत्तर–दक्षिण आणि वऱ्हाडच्या सातपुडयापासून छत्तीसगडापर्यंत पूर्व–पश्चिम असा होता. पर्वताच्या आश्रयाने राहणाऱ्या व विशिष्ट वन्य धर्माचे पालन करणाऱ्या लोकास तेलगू लोक कोंड म्हणत होते. कोंड या शब्दाचा अपभ्रंश गोंड असा झाला आहे.[1] गोंड, राजगोंड, माडियागोंड या जाती दक्षिण गोंडवणात आढळतात. ते घनदाट अरण्यात, डोंगर प्रदेशात निवास करीत असल्यामुळे त्यास गोंडवन म्हणून ओळखले जाते. या गोंडवनाचे प्रादेशिक रचनेवरून उत्तर गोंडवन, मध्य गोंडवन, दक्षिण गोंडवन असे तीन उपविभाग पडतात. या गोंडवनात देवगड, गढामंडला, खेरला व चंद्रपूर ही चार मोठी राज्ये प्रसिध्दीस आली.[2] याच गोंड लोकांनी या प्रदेशातील जंगले साफ करून ती जमीन शेतीयोग्य केली व त्यातून जमीन पोषणाची सामुग्री निर्माण केली. चंद्रपूरचे गोंड राज्य सर्वात अधिक भरभराटीस आले. या घराण्यात तेवीस कर्तबगार राजे होऊन गेले.

राजधानी शिरपूर :

चंद्रपूर येथील गोंड राजे प्रथम वर्धानदीच्या पश्चिम किनाऱ्यावर शिरपूर येथे राज्य करीत होते. शिरपूर ही त्यांची पहिली राजधानी होती.

1) **भिका उर्फ भिमबल्लाड सिंह :**

भिका हा चंद्रपूरच्या गोंड राजवटीचा मुळ पुरूष होय. भिमबल्लाडसिंहाने (1247–1272) सर्व गोंडाना एकत्रीत करून शिरपूर (जि. आदिलाबाद, आंधप्रदेश) येथे राज्य स्थापन केले. शिरपुरच्या जवळच माणिकगड–गडचांदूर येथे एक प्रसिध्द किल्ला आहे. त्याच्या आश्रयाने त्याने ही राजधानी स्थापन केली.

2) **खरजा उर्फ खुर्जा बल्लाळसिंह :**

भिमबल्लाळसिहानंतर त्याचा मुलगा खुर्जा बल्लाळसिंह (1272–1297) राजगादीवर आला. त्याने गोंड लोकांना संघटित करण्याचा प्रयत्न केला.[5]

3) **हिरसिंह :**

हिरसिंह (1297–1322) हा खुर्जा बल्लाळसिंहानंतर गादीवर आला. हा राजनितीकुशल व युध्दकलेत निपून होता. त्याने गोंडांना शेती करण्यास व बागायती करण्यास प्रोत्साहन दिले. जमिन महसूल वसूल करण्याची पध्दत सुरू केली. त्यामुळे गोंड जमातीची व गोंड राज्याची आर्थिक स्थिती सुदृढ झाली.

- **राजधानी बल्लाळपूर :**

4) **आदिया बल्लाळसिंह :–**

हिरसिंहानंतर आदिया बल्लाळसिंह (1322–1347) राजा बनला. यावेळी यादवांचे साम्राज्य व खिलजी साम्राज्य डळमळीत होते. तुघलक काळातील अराजकतेचा फायदा घेऊन माहुरपर्यंतचा भाग त्याने अधिपत्याखाली आणला. त्यामुळे प्रशासनाच्या सोईच्या दृष्टीने वर्धा नदीच्या पूर्व तीरावर शिरपूरवरून राजधानी आणून बल्लाळपूर असे नाव ठेवले. सुरक्षिततेसाठी किल्ला बांधला.[6]

5) **तलवार सिंह :–**

तलवार सिंहाच्या काळात (1347–1372) गुलबर्ग्याचा बहामणी सुलतान अल्लाउद्दीन बहमनशाहने (1347–1358) चंद्रपूर राज्याच्या अधिनस्थ असलेल्या माहुरवर स्वारी केली. तेव्हा तलवारसिंहाने बहमनशहास खंडणी देऊन माहुरचा प्रदेश सुरक्षित केला.

6) **केसरीसिंह उर्फ केसरसिंह :–**

केसरीसिंहाने (1372–1397) चांदा राज्यातील बंड शांत करून बऱ्याच सुधारणा केल्या. त्याने राज्यात स्थिरता, शांतता निर्माण करून आपल्या राज्याची सीमा माहुर–कळंबपर्यंत पसरविली. यावेळी चांदा राज्याच्या सीमा बहामणी साम्राज्यास जाऊन भिडल्यामुळे संघर्ष अटळ ठरला.

7) **दिनकर सिंह :–**

दिनकरशाहानेही (1397–1422) सुधारणा पुढे चालू ठेवून बाहेरील कर्ते पुरूष आणि विद्वान लोक राज्यात आणले. त्यामुळे राज्यात सुव्यवस्था स्थापन होऊन उत्पन्नात वाढ झाली. त्याच्या समृध्दीमूळे त्याच्याकडे पारस असावा अशी लोक समजूत होती. चांदा राज्याच्या समृध्दीमुळे बहामनी सुलतान फिरोजशहाने (1397–1422) इ.स. 1412 मध्ये माहुरवर स्वारी केली. दिनकरशाहाने खंडणी देण्याचे मान्य करून सुलतानाचे मांडलिकत्व स्विकारले.[7]

8) **रामसिंह :–**

दिनकरसिंहाचा मुलगा रामसिंह (1422–1447) हा देखील शुर व प्रामाणिक राजा होता. त्याने जमीनदारांकडून कर वसूल करून सैन्यांना वेतन म्हणून जमीनी दिल्या. त्याने राज्याचा विस्तार

करून ताडवेल, वज्रदेही सैन्यांची निर्मिती केली. यावेळी बहामनी सुलतान अहमदशाहाने 1426, 2427, 1428 मध्ये तिनदा माहुरकर स्वारी केली. माहुर ताब्यात घेऊन कळंब येथील हिऱ्याची खान ताब्यात घेतली. त्यानंतर त्याने मुहम्मदखानास माहुरचा सुभेदार नेमले.[8]

9) **सुरजा बल्लाळसिंह उर्फ शेरशाहा :–**

सुरजा बल्लाळसिंह देखील (1447–1472) शुर होत्या. त्याने उत्तर हिंदुस्थानात जाऊन नवीन युध्दकला व नवीन राजकारण शिकण्याकरिता काही दिवस मोगल दरबारात घालविले. त्याच्या पराक्रमामुळे बादशाहाने (बहलोल लोदी) सुरजाचा सन्मान शेरशाहा ही पदवी बहाल करून मंडल्यापासून संपूर्ण गोंडवनाची सनद दिली.[9] तेव्हा पासूनच चांदयाचे गोंड राजांनी आपल्या नावामागे सिंह ऐवजी शाहा हे नाव सुरू केले. तसेच हत्तीवर आरूढ असलेला सिंह हे शौर्याचे प्रतिक म्हणून स्विकारले. बादशहाने सुरजा बल्लाळसिहास विनायकराव औरंगाबादकरांच्या माहितीनुसार साडे बावन परगण्याचे राज्य दिले.[10]

- **राजधानी चंद्रपूर :–**

10) **खांडक्या बल्लाळशाहा :–**

सुरजानंतर खांडक्या बल्लाळशाहा (1472–1497) गादीवर बसला. त्याच्या शरीरावर कृष्ठरोगाचे चिन्ह दिसत होते. त्याची राणी हिरातानी उर्फ हितारानी बुध्दीमान, सद्गूणी होती. तीने राजास मोकळया हवेत फिरण्यास प्रोत्साहित केले. त्यास शिकारीचा छंद होता. त्याने बल्लाळपूरपासून 10 कि. मी. अंतरावर जुनोना येथे एक महाल व तलाव बांधला. एक दिवस त्यास शिकार मिळाली नाही. तो तहानेने व्याकुळ झाला. झरपट नदी सुकलेली होती. परंतु नदीच्या किनाऱ्यात एका कुंडात पाणी होते. तेथील पाणी पिल्याने व तोंड धुतल्यामुळे त्याच्या आरोग्यास लाभ मिळाला. त्या आनंदात त्याने तेथे अंचलेश्वर मंदिराची स्थापना केली. तो नियमितपणे देवदर्शनास येऊ लागला. तिथेच त्याने सश्यास शिकारी कुत्र्यांवर हल्ला करतांना बघितले. या जागेस त्याने अजिंक्य समजून तिथे (चंद्रपूर) किल्ला बांधण्याचा निश्चय केला. परकोटाचे कामास प्रारंभ करून चंद्रपूर शहर बसविले. हा बल्लारपूर राजधानीतील शेवटचा राजा असून त्यानंतर गोंड साम्राज्याचे शासन चंद्रपूर शहरातून सुरू झाले.

इ. स. 1412 पासून बल्लारपूरचे राज्य बहामनीचे मांडलिक होते. जेव्हा दिल्लीच्या सुलतानाने (बहलोल लोदी) सुरजास साडे बावन परगण्याची सनद व शेरशाहा ही उपाधी दिल्यापासून चांदयाने बहामणीचे अधिपत्य नाकारून खंडणी देणे बंद केले. यावेळी चांदा राज्याच्या विस्तारात व समृध्दीत वाढ झाली होती. वैरागडची हिऱ्याची खाण व माहुर–कळंबचा भाग घेण्याकरिता बहामनी सुलतान तृतीय महम्मदशाहाने (1463–1483) स्वारी केली.[11] युसूफ आदिलखानाने वैरागडचा किल्ला ताब्यात घेऊन मुस्लिम किल्लेदाराची नेमणूक केली. पुढे खांडक्या बल्लाळशहाने सैन्य पाठवून अधिकाऱ्यास व सैन्यास हाकलून किल्ला ताब्यात घेतला.[12] त्याने चांदयाच्या किल्याचे बांधकाम तेल ठाकूर नावाच्या वास्तू शास्त्रज्ञाकडे सोपविले. राजधानी स्थलांतरीत केली. महालाची सोय नसल्याने तो बल्लाळपूराहून चांदयास जाणे–येणे करित होता. हीच गोंड साम्राज्याची तिसरी राजधानी होय.

- **चंद्रपूर राजधानीतील गोंड राजे :–**

11) **हिरशाहा :–**

खांडक्या बल्लाळशाहाच्या मृत्युनंतर त्याचा मुलगा हिरशाहा (1497–1522) राजा बनला. 1490 मध्ये बहामनी साम्राज्याचा ऱ्हास झाल्यामुळे त्यास आपल्या राज्याचा विकास करण्याची संधी मिळाली. त्याने चंद्रपूरच्या परकोटाचे काम पुर्ण केले आणि शहराच्या चार महाद्वारांची निर्मिती केली. तसेच पाच लहान द्वारांची निर्मिती केली. त्यावर गजारूढ सिंहाची राजमुद्रा कोरली. तसेच चांदयास राजवाडा बांधून त्याच्याभोवती पाच कोटांचा किल्ला बनविला. किल्याच्या उत्तरेला लाल दरवाजा व

किल्याचा आत एक तलाव (कोनेरी) बांधला. त्याने महसूल सुधारणा केल्या.[13] त्याने नवीन जमीनदार तयार करून शेतीस प्रोत्साहन दिले. त्याच्या प्रयत्नामुळेच चंद्रपूर राज्यात एकूण सतरा मुख्य जमिनदाऱ्या व तीन उपजमीनदाऱ्या निर्माण झाल्या.[14] अहेरी व दुधमाळा जमीनदाऱ्या प्रमुख होत्या जमीनदारांचे हक्क हे हिरशाहाच्या मर्जीवर अवलंबून असे. तसेच त्याने शेती उपयोगी तलावाकरीता जमिनी इनाम दिल्या होत्या. हिरशाहाने प्रजा, शेती व शेतकऱ्यांच्या हिताचे संरक्षण केले. त्यामुळे चांदा राज्याची प्रगती होऊन चांदयाच्या समृध्दीत वाढ झाली.

12) **अकबा आणि लोकबा :–**

हिरशाहा निपूत्रिक असल्यामुळे त्याची पत्नी राणी हिराईने (1522–1547) आत्राम घराण्यातील अकबा व लोकबा या दोन मुलांना दत्तक घेऊन ते सज्ञान होईपर्यंत राज्यकारभार केला. प्रारंभी लोकबास दत्तक घेतले. परंतु तो अल्पवयातच मरण पावला. त्यानंतर अकबास दत्तक घेतले. सर्व जमीनदार आणि सरदारांना राजधानीमध्ये संमेलन करण्याची हिरशाहाने सुरू केलेली प्रथा हिराईने पूर्ववत सुरू केली. राणी हिराईचा काळ धार्मिक व्यवस्थेकरीता प्रसिध्द आहे. तीने महाकाली, एकविरा तसेच अंचलेश्वर मंदीर बांधले. चंदनखेडा येथे किल्ला बांधला. जुनोना किल्याचा पाया भरून दीड मिटरपर्यंतच्या भिंती उभ्या केल्या.[15] तीच्या काळात धर्म, व्यापार आणि सांस्कृतिक देवाणघेवाणीस प्रोत्साहन मिळाले.

13) **कर्णशाहा उर्फ कोंडीशाहा :–**

लोकबा, अकबा, राणी हिराईनंतर अकबाचा मुलगा कर्णशाहा (1547–1572) राजा बनला. त्याच्या शासनकाळात चांद्याचे राज्य दुर्बल झाल्याचे समजून रतनपुरच्या कल्याणशाहाने चंद्रपूरवर स्वारी केली. तेव्हा कर्णशाहाने तात्पुरता समझोता करून नामधारी मांडलीकत्व पत्करले. परंतु लवकरच तो स्वतंत्र झाला. कर्णशाहाने आपले राज्य उत्तरेस उमरेड, पवनी, चिचगडपर्यंत पसरविले. तो धर्मपरायण, न्यायप्रिय आणि प्रजाहितदक्ष राजा होता. त्याने बाबुपेठ वस्ती वसविली. चांदा व इतरत्र शिवमंदिरे बांधली. जुन्या मंदिराचा व गुहांचा जिर्णोद्वार केला. पठाणपूरा वार्डात जोड शिवमंदीर बांधले. बालाजी वार्डात दोन जोड शिवमंदीर आहेत. मारोडा येथे सोमनाथ मंदिर बांधले. नलेश्वर येथे शिवमंदीर बांधले. उमरेडचा किल्ला बांधला. तो न्यायप्रिय शासक होता.

14) **बाबाजी बल्लाळशाहा :–**

कर्णशाहाच्या मृत्यूनंतर त्याचा मुलगा बाबाजी बल्लाळशाहा (1572–1597) चांदयाचा शासक बनला. तो वीर, महत्वाकांक्षी व स्वतंत्र्य प्रवृत्तीचा होता. त्याने बहामनीचे अधिपत्य व रतनपूरच्या हैहयवंशियांचे अधिकार अमान्य केले होते. त्याने तृतीय महम्मदशाहा बहामनीने जिंकलेला वैरागडचा किल्ला टिप्पागडचा राजा पुरमशाहाचे मदतीने परत मिळविला. पुरमशाहाच्या मृत्युनंतर टिप्पागडचा किल्लेदार म्हणून हरचंदची नियुक्ती केली. हरचंद हा धार्मिक प्रवृत्तीचा होता. त्याने वैरागड येथे भंडारेश्वर, पाताळेश्वर, बुबलेश्वर, अंचलेश्वर, राजेश्वर आणि महाबळेश्वर नावांच्या सप्तधामांची निर्मिती केली. तसेच आरमोरी येथे शिवाचे जोडमंदिर बांधले. बहामनी सुलतानाकडून कळंब सरकारातील आठ परगने परत मिळविले. हा अकबराच्या समकालीन होता. 1597 मध्ये अकबराने अहमदनगरचा पराभव केला. तेव्हा चांद्याचे राज्य मोगल साम्राज्याचे भाग बनले होते. खंडणी घेऊन चांद्याचे राज्य बाबाजीकडेच कायम ठेवले.

15) **धुंडया रामशाहा :–**

बाबाजी बल्लाळशाहाच्या मृत्युनंतर त्याचा मुलगा धुंडया रामशाहा (1597–1622) चांद्याचा राजा बनला. त्याने आपल्या काळात चंद्रपूरच्या परकोटाचे काम पूर्ण केले. याच्याच काळात मोगलांनी

वऱ्हाड काबीज केले व धुंडया रामशाहास आपले सामंत बनविले. रामशाहास अकबराच्या काळात मोगलांचे मांडलिकत्व स्विकारावे लागले. त्याने शेतीस प्रोत्साहन देण्याकरीता ब्राम्हण आणि वीरशैव लिंगायतांना जमिनी इनाम दिल्या. त्याच्याच काळात रायप्पा कोमटी याने चंद्रपूर येथे (लालपेठ) शिवमंदीर बनविण्याचा संकल्प केला. त्याकरीता दशमुखी दुर्गा आणि अन्य मूर्ती घडविल्या.

16) **किबा उर्फ कृष्णशाहा :–**

रामशाहाच्या आकस्मिक निधनामुळे चांदा राज्यावर मोठे संकट आले. त्याचा मुलगा कृष्णशाहास (1622–1640) मोगलांकडून राजा म्हणून नियुक्त करण्यात आले. जहांगीर नंतर शहाजहान बादशाहा (1628–1658) झाला. त्याने शहाजहानचे मांडलिकत्व स्विकारून सहा लाख रूपये खंडणी आणि दरवर्षी 20 हत्ती आणि 80 हाजर रूपये देण्याचे मान्य केले. जुंझारसिंहाच्या विरोधात मोगलांना कृष्णशहाने सहकार्य केले. तसेच त्याला पकडण्यात व ठार मारण्यात मोलाची कामगिरी केली.[16] जेव्हा खानदौराननने देवगडावर स्वारी (1637) केली. तेव्हा सुध्दा कृष्णशाहाने मदत केली.[17] देवगडचा जातभाई कोकशाहास वाचविण्याचे कृष्णशाहाने बरेच प्रयत्न केले. परंतु यश आले नाही. अखेर खानदौराननने नागपूरच्या किल्याची भिंत उडविली आणि किल्लेदार देवजीस कैद केले. शेवटी कोकशाहा 16 जून 1637 रोजी खानदौरानास शरण आला. कृष्णशाहाने 18 वर्ष चांद्याचे राज्य सांभाळले आणि आजीवन मोघलांचा निष्ठावान सामंत म्हणून कामगिरी केली.

17) **बाबाजी उर्फ मानजी बल्लाळशाहा :–**

कृष्णशाहाच्या मृत्युनंतर मानजी बल्लाळशाहा (1640–1667) चांद्याचा शासक बनला. गादीवर बसताच त्याने दख्खनचा सुभेदार औरंगजेबाची भेट घेतली. आणि त्यास चार लाख रूपये खंडणी म्हणून नजराणा दिला. 1640–44 च्या दरम्यान चांदा राज्यात दुष्काळ पडला होता. तेव्हा औरंगजेबाने 1655 मध्ये चांदा राज्याचा चालू कर आणि थकीत खंडणी माफ केली. याच्या कार्यकाळात शेतजमिनीचे मोजमाप करून भूमापन अभिलेख तयार करण्यात आले. ज्या गावात मुकदम नव्हते त्या गावात मुकदमाची नेमणूक करण्यात आली. त्यामुळे शेतकऱ्यांवरील अन्याय दूर होऊन राज्याचा महसूल वाढण्यास मदत झाली. गरीब शेतकऱ्यांना बीजाई, अवजारांचा पुरवठा केला. तकाबी कर्जाची व्यवस्था केली. त्यामुळे चंद्रपूर राज्याचे उत्पन्न वाढले.[18]

1657 मध्ये औरगंजेबाने शाईस्तेखानास शिवाजीविरूध्द पाठविले होते, तेव्हा चंद्रपूरच्या राजास शाईस्तेखानाच्या मदतीकरिता पाठविण्यात आले. परंतु शाईस्तेखान यशस्वी झाला नाही. त्यानंतर जयसिंहास पाठविले, त्यावेळेही मानजी बल्लाळशाहा व त्याच्या मुलास मोगल सैन्यात भरती होण्याचे आदेश होते. परंतु मानजी हा जयसिंहाच्या निरोपानंतर सुध्दा मोगल सैन्यात सामील झाला नाही. यावरून तो स्वराज्यप्रेमी होता हे स्पष्ट होते. मानजीच्या वरील धोरणामुळे मोगलांना शंका आली. म्हणून औरगंजेबाने मानजीचा बदला घेण्यासाठी दिलेरखानास (1667) पाठविले. वऱ्हाडचा सुभेदार इरिजखान यास अचलपूरहून, बिकानेरचा राजा रावकर्ण तसेच छत्रसाल बुंदेला यांना यवतमाळकडे रवाना केले. दिलेरखानाने माणिकगड किल्ला जिंकला. त्यानंतर चंद्रपूरवर आक्रमण केले. चंद्रपूरातील राजवाडयाची नासधूस केली. तेव्हा मानजी भयभित झाला. त्यामुळे मानजीने मुलगा रामसिंहासोबत माढेळी येथे दिलेरखानाची भेट घेतली. पाच लाख रूपये लाच आणि बादशाहास एक करोड रूपये दंड आणि वार्षिक खंडणी देण्याचे मान्य केले. परंतु दिलेरखानास विश्वास नव्हता. मानजीने 77 हजार रूपये अग्रीम भरले आणि उर्वरीत रकमेकरीता जेष्ठ मुलगा मधुकरशाहास पवनारचा सुभेदार कादरदादखानाकडे जमानत ठेवले. आठ लाख भरल्यावर मधुकरशाहाची सुटका

झाली. मानजी हया अपमानामुळे आणि आर्थिक नुकसानीमुळे दुःखी झाला. अशा स्थितीत एका राजपूत सैनिकाने खाजगी कारणाने 1667 मध्ये मानजीची हत्या केली.

18) **रामसिंह :–**

मानजीनंतर त्याचा अल्पवयस्क मुलगा रामसिंग (1667–1684) चंद्रपूरचा शासक बनला. तो वयस्क होईपर्यंत मानजीचा जेष्ठ पुत्र मधुकरशाहाने गादी सांभाळली. कदाचित मधुकरशाहा दासीपुत्र असावा. 1681 मध्ये रामसिंग वयस्क झाल्यावर 30 नोव्हेंबर 1681 रोजी तयाने औरंगजेबाची भेट घेतली. औरंगजेबाने 1 जानेवारी 1682 रोजी त्यास मानाची वस्त्रे, सोनेरी सजविलेला घोडा, एक हत्ती व रत्नजडीत सिरपेच देऊन सन्मानपूर्वक निरोप दिला.[19] चांद्याचे गोंड राजे मोगलांकडे असणे छत्रपती शिवाजींच्या साम्राज्य हिताचे नव्हते. म्हणून त्याने 1673 मध्ये चंद्रपूरवर आक्रमण केले. परंतु मोगलांपूढे त्यांचा टिकाव लागला नाही. शिवाजीनंतर संभाजीने 1682 मध्ये चंद्रपूरवर आक्रमण केले. यावेळी रामसिंग मोगल शिबिरात होता. परंतु स्थानिक सैन्यांनी प्रतिकार केला. रामसिंगाच्या काळातच औरंगजेब पुत्र अकबराने बंड केले होते. त्यास पकडण्याची जबाबदारी औरंगजेबाने रामसिंगावर सोपविली होती. परंतु या दरम्यान रामसिंगावर मोठे संकट आले. किसनसिंह उर्फ त्रिवरसिंहाने औरंगजेबास खुष करून चंद्रपूरची गादी बळकावली. आक्टोंबर 1683 मध्ये रामसिंगास विद्रोह करण्याचा प्रयत्न केला. परंतु त्यात त्याला यश आले नाही. अखेर दोनशे सैनिकांसह तो पळून गेला. पुन्हा त्याने चांद्याच्या राजवाडयात प्रवेश करण्याचा प्रयत्न केला. परंतु त्यात यश आले नाही. औरंगजेबाने 1684 मध्ये रामसिंगास चांद्याच्या राजगादीवरून बडतर्फ करून 31 डिसेंबर 1684 रोजी किसनसिंगास जमीनदार म्हणून मान्यता देऊन चांद्याच्या राजगादीवर बसविले. 19 नोव्हेंबर 1684 रोजी किसनसिंगाच्या हस्तकांनी रामसिंगास ठार केले.

19) **किसनसिंग :–**

रामसिंगानंतर किसनसिंग (1684–1696) चंद्रपूरचा शासक बनला. मराठयांचे राज्य बुडविण्याच्या मनसुब्यात किसनसिंगाने मदत केली. त्याचेकडे खजिन्याचे संरक्षण, तंबुभोवती पहारा देणे, रसद आणणाऱ्या उंच हत्तींचे संरक्षण, जनानखाण्याचे संरक्षण, हेर हुडकून आणणे इत्यादी लहानसहान कामे सोपविली होती. शहजादा मुईउद्दीनने घातलेल्या पन्हाळयाच्या वेढयात (1691–92) किसनसिंगाने बरीच कामगिरी बजावली. त्यानंतर 1694 च्या आदेशाने हमीदखानाच्या (लुत्फलल्लाखान) हाताखाली त्यास काम करण्यास सांगितले. किसनसिंग 1694 मध्ये मोगल सैन्यात दाखल झाला. तेव्हा चंद्रपूर राज्यात बंडखोरांचा उपद्रव झाला. त्यामुळे चांद्याकडे जाण्याची परवानगी मागितली. परंतु ती नाकारली आणि बादशाही कामगिरी कोणत्याही इतर कामापेक्षा श्रेष्ठ असे बजावले. दिलेली कामगिरी चोखपणे बजवावे. 1694 मध्ये मराठयांनी पन्हाळयावरून मोगलांची हकालपट्टी केली. किसनसिंगाची रजा मंजूर होताच तो चांद्यास येऊन त्याने बंडखोरांचा बंदोबस्त केला. बंडखोर रामगीर हैद्राबादला पळून गेला. त्यानंतर पुन्हा तो बादशाहाच्या सेवेत रूजु झाला. किसनसिंगास वीरसिंह व कालसिंह (कानसिंग) अशी दोन मुले होती. जमीनदारीच्या महत्वाकांक्षेपोटी आपल्या आईसोबत इस्लाम धर्म स्विकारीला. बादशाहाने त्याचे नाव नेकनामखान असे ठेवले.

20) **बिरसिंग उर्फ विरशाहा (बिरशाहा) :–**

किसनसिंगाच्या मृत्युनंतर बीरशाहा (1696–1704) सिंहासनावर बसला. त्याची शिफारस बादशाहाचा वजीर आसदखानाने केली होती. तेव्हा ऑगष्ट 1696 मध्ये त्यास दीड हजारी मनसबदारी, राजा ही पदवी, एक हत्ती, खिलतीची वस्त्रे व एक खंजीर देण्यात आले. यावेळी देवगडचा राजा बख्यबुलंदने मोगलांविरूध्द बंडखोरी केली होती. तेव्हा बादशाहाने बीरशाहास आदेश

दिले की, आपल्या भावास नेकनामखानास देवगड येथे स्थापन करून चांद्यास परत यावे.[20] तेव्हा बख्तबुलंदने बीरशाहास धडा देण्यासाठी माहूर परगण्यावर आक्रमण केले. परंतु बादशाही सैन्यांनी त्याचा बंदोबस्त केला. खंडणी वसुलीसाठी बादशाहाकडून पवनारचा फौजदार बिंद्रावन यास पाठविले. त्याप्रमाणे बीरशाहाने खंडणी भरली. परंतु बिंद्रावनने ती खजिण्यात भरली नाही. त्यामुळे त्यास पदावरून बडतर्फ केले. त्याच्या जागी अलीमर्दानखान यास पवनारचा फौजदार म्हणून नेमले. अलीमर्दान खानाने 27 एप्रिल 1701 रोजी बीरशाहाकडून पुन्हा एक लाख रूपये खंडणी वसुल केली. बीरशाहाने सुरजागडच्या प्रदेशातील साधो व मुळो नावाच्या बंडखोरांनी माजविलेला धुमाकूळ कोकशाहा शेडमाकेच्या नेतृत्वात शांत केला. त्यामुळे त्यास सुरजागडची जमीनदारी दिली. त्याचे मुख्यालय अहेरी होते. तो अहेरी जमीनदारीचा संस्थापक बनला.

बीरशाहाचा जावई दुर्गशाहाने बीरशाहाच्या मुलीचा अपमान केला तेव्हा त्याचा सुड घेण्यासाठी बीरशाहाने त्यास ठार मारून त्याचे शिर महाकालीस अर्पन केले, असे कथानक आहे. तसेच बीरशाहास संतती नव्हती म्हणून त्याने दुसरे लग्न करण्याचे ठरविले. हयामुळे त्याची पत्नी राणी हिराई उर्फ गंगाबाई च्या अंगरक्षक हिरामनने बीरशाहास ठार केले. नेकनाम खानाने बीरशाहास ठार मारले असेही म्हटले जाते. बीरशाहाच्या मृत्युनंतर चंद्रपूर राज्याची विनाशाकडे वाटचाल सुरू झाली.

21) **राणी गंगाबाई उर्फ हिराई :–**

बीरशाहाच्या मृत्युनंतर त्याची पत्नी राणी गंगाबाई उर्फ राणी हिराईने (1704–1719) चंदनखेडा येथील दिराचा (गोविंदशाहा) तीन वर्षाच्या रामशाहास दत्तक घेतले. राणी गंगाबाईने दिवाण बापूजी वैद्याच्या मदतीने तो सज्ञान होईपर्यंत राज्यकारभार केला. तीने महाकाली मंदीराचा जिर्णोध्दार आणि बीरशाहाच्या समाधीचे बांधकाम केले. राजमाता गंगाबाईची कारकिर्द महत्वपूर्ण हयासाठी आहे की, तिने महाकाली, अंचलेश्वर आणि गणपती मंदीराचा जिर्णोध्दार केला. तसेच गोवध बंदी लागू करून पुष्कळ दानधर्म केला. मंदीरांना उत्पन्ने लावून दिली. सुखावह प्रजा, शिक्षण, संस्कृतीकरिता तिची कारकिर्द महत्वपूर्ण ठरली. रामशाहा सज्ञान होईपर्यंत म्हणजेच 1704 ते 1719 पर्यंत तीने राज्यकारभार केला.

राणी गंगाबाईच्या काळात 1707 मध्ये नेकनामखानाने चांद्यावर स्वारी केली. तसेच 1710–11, 1714, 1715, 1718 मध्ये मराठयांनीही चांद्यावर स्वारी केली. तरी देखील राणी गंगाबाईने न डगमगता त्यांचा प्रतिकार केला. राणी गंगाबाईच्या काळापासूनच चंद्रपूर राज्यावर मराठयांची जोरदार आक्रमणे सुरू झाली.

22) **रामशाहा :–**

रामशाहा (1719–1735) सज्ञान झाल्यावर त्याने राज्यकारभार आपल्या हाती घेतला. रामशाहाने स्वतःचा शिक्का बादशाहाकडून मंजूर करून घेतला. कान्होजी भोसल्याने रामशाहाच्या काळात चंद्रपूरवर (1724) स्वारी केली. परंतु गोंड, जाट, पठाण सैन्याच्या मदतीने कान्होजीचा प्रतिकार केला. रामबागेजवळ मोठी लढाई होऊन त्यात कान्होजीचा पराभव झाला. त्यास वर्धेपार हाकलून देण्यात यशस्वी झाले. तसेच निजामाने पालखेड मोहिमेच्या नुकसानभरपाईसाठी चांदा राज्यावर आक्रमण केले. तेव्हा रामशाहाने भयभित होऊन माणिकदुर्ग, शिरपूर, वीरशाहापेठ, पाटणबोरी, जुनगाव, तुरूकचांदा, उटणूर, सिरकुंडा, कवालकायेर, राळेगाव, वेठाभादी आणि वडुरपेठचे महाल व किल्ले निजामास सोपविले.[21] यावेळी रघुजीने कान्होजीचा बंदोबस्त करून त्याला साताऱ्यास पाठविले.

त्यावेळी रघुजी व रामशाहाची महाकाली पटांगणात भेट झाली. शिष्टाचारपूर्वक एकमेकांचे स्वागत केले. रामशाहाच्या पवित्र आचरणाचा व साधुवृत्तीचा परिणाम रघुजीवर झाला आणि रघुजीने त्यास वस्त्रालंकार देऊन सन्मान केला व खंडणी घेऊन परत केला. रामशाहाने मराठा राज्याची मांडलिक स्थिती मान्य केली. गडबोरी परगण्यात झालेले बंड सेमाजी ढुमे यांनी मोडल्याने त्यास गडबोरी परगण्यातील 209 गावांच्या देशपांडेपणाची सनद आणि नवरगाव व चारगांव मोकासा म्हणून दिले. यावरून रामशाहाची गुणग्राहकता लक्षात येते.

23) **निलकंठशाहा :–**

रामशाहानंतर चंद्रपूर राज्याचा शेवटचा गोंड राजा निलकंठशाहा (1735–1751) गादीवर बसला. प्रारंभी त्याने चांगल्या प्रकारे राज्यकारभार केला. परंतु त्यास नंतर अनेक व्यसने जडली. त्याचा स्वभाव तापट व क्रुर झाला. तो प्रजेस व दिवाणास त्रास देऊ लागला. त्याचे बोकारे सावकाराशी घनिष्ट सबंध होते. त्याच्याच शिफारशीवरून सेमाजी उर्फ शंकर दुम्याचा मुलगा नारायण यास शिरपूर–वणी परगण्यातील 198 गावाचे सरमुकादम आणि भद्रावती व वरोडा परगण्यातील 141 गावांची देशमुखी 1743 मध्ये दिली. तसेच त्याने अनेक ब्राम्हणांना आश्रय दिला. निलकंठशाहा तापट व लहरी असल्यामुळेच त्याने शिरपूर (वणी) चा मोकसदार कन्नाके बंधू राघबा, आगबा, बागबा यांना अनुक्रमे घुग्गूस, वरोडा येथील लढाईत ठार मारले. बागबाने शिरपूर येथील गुहेत आत्महत्या केली. त्यामुळे निलकंठशाहाची प्रतिमा जनमानसामध्ये मलीन झाली. निलकंठशाहाच्या काळात खरी सत्ता त्याचा दासीपुत्र गणेश ठाकुर याचेकडे होती. त्याने तिमाजी सखदेवसारख्या मुरब्बी दिवाणास पदावरून काढले. याचवेळी महादेव वैद्यसारखा कर्ता पुरूष पठाणांकडून मारल्या गेला. म्हणून रघुजी भोसल्यांनी महादेव केशव यास चंद्रपूरचा सुभेदार नेमले. तसेच शिवाजीपंत केशव टाळकुटे यास 4000 सैनिकांसह शांतता व सुव्यवस्था कायम ठेवण्यासाठी नियुक्त केले. चांद्याचा किल्लेदार म्हणून रहिमदादखान यास ठेवून त्यास भांदकची जागीर दिली.[22]

5 जून 1749 रोजी रघुजीने मराठयांचा चंद्रपूरवरील हिस्सा दोन तृतीयांस करून जवळजवळ निलकंठशाहास निवृत्तच केले.[23] परंतु 1750 मध्ये चंद्रपूरमध्ये पठाण, गोंड, खंडाईत या असंतुष्ट लोकांनी बंडखोरी केली. रघुजी पुणे येथे असल्यामुळे बंडखोरांचा बिमोड लगेच करता आला नाही. परंतु सप्टेंबर 1750 मध्ये रघुजीने पुर्ण ताकदीनिशी चंद्रपूरला वेढा दिला आणि त्यात त्याला पूर्णपणे यश आले. रघुजीने निलकंठशाहास कैद केले. 1 जानेवारी 1751 रोजी भोसल्यांनी चंद्रपूरवर पूर्णतः विजय मिळविला आणि किल्यासहीत संपूर्ण प्रदेश, चंद्रपूर राज्य खालसा केले. चंद्रपूर राज्याच्या व्यवस्थेकरिता कृष्णाजी नारायण कऱ्हाडे याची नियुक्ती केली. निलकंठशाहास बल्लाळपूरच्या किल्यात नजरकैदेत ठेवले. अशाप्रकारे अपमानीत जीवन जगतांना 1765 मध्ये बल्लाळपूरच्या कैदतेच त्याचा मृत्यु झाला.

- **निष्कर्ष :–**

अशाप्रकारे 1247 ते 1751 पर्यंत एकूण 504 वर्षाच्या कालखंडात एकूण तेवीस गोंड शासकांनी अनुक्रमे शिरपूर, बल्लाळपूर व चांदा या तीन राजधान्यामधून राज्यकारभार केला. गोंड शासकांनी विविध योजना अंमलात आणून चंद्रपूर राज्याचा विकास केला. कृषीचा विकास केला. अनेक वास्तू निर्माण करून सांस्कृतिक विकास साधला. या गोंड शासकांनी मोगलांचे मांडलिक म्हणूनच कारभार केला. रामशाहाने ज्या चुका केल्या त्या सुधारल्याशिवाय शेवटचा गोंड राजा निलकंठशाहाने त्याचा कित्ता गिरविला. त्याचे परिणाम पूर्वीपेक्षाही गंभीर झाले आणि चंद्रपूरचे राज्यच समाप्त झाले. चंद्रपूर राज्यावर मराठयांचा अधिकार स्थापित झाल्यावर निलकंठशाहा साहजिकच असंतुष्ट झाला. परंतु

रघुजीपुढे त्याचा टिकाव लागला नाही. 1751 मध्ये रघुजीने चंद्रपूरवर स्वारी करून भोसल्यांची सत्ता स्थापित केली. नागपूर राज्यांतर्गत नवीन सुभा तयार केला. 1854 पर्यंत नागपूरचे राज्य खालसा होईपर्यंत चांद्यावर भोसल्यांची राजवट होती. 1854 मध्ये चांद्याचे राज्य खालसा करून ब्रिटीशांनी आपली सत्ता निर्माण केली.

- **संदर्भ सूची :–**

1) अंधारे भा. रा., देवगडचे गोंड राजे, पृ. क्र. 1
2) नागपूर डिस्ट्रिक्ट गॅझेटियर, 2005, पृ. क्र. 133
3) गद्रे प्रभाकर, मध्ययुगीन चंद्रपूर पृ. क्र. 10
4) राजुरकर अ. ज., चंद्रपूरचा इतिहास, 1982, पृ. क्र. 106
5) मेजर लुसी स्मिथ, चांदा सेटलमेंट रिपोर्ट, 1869, पृ. क्र. 69
6) राजुरकर अ. ज., चंद्रपूरचा इतिहास, 1982, पृ. क्र. 114–115
7) मेजर लुसी स्मिथ, चांदा सेटलमेंट रिपोर्ट, 1869, पृ. क्र. 62
8) काळे या. मा., नागपूरकर भोसल्यांचा इतिहास, पृ. क्र. 16
9) राजुरकर अ.ज., चंद्रपूरचा इतिहास,1982, पृ. क्र. 122
10) गद्रे प्रभाकर, मध्ययुगीन चंद्रपूर, पृ. क्र. 17
11) विल्स सी. यु., द राजगोंड महाराजाज ऑफ सातपुरा हिल्स, पृ. क्र. 40
12) नागपूर डिस्ट्रिक्ट गॅझेटियर, 2005, पृ. क्र. 145
13) कित्ता, पृ. क्र. 147
14) राजुरकर अ. ज., चंद्रपूरचा इतिहास, 1982, पु. क्र. 131 ते 136
15) गद्रे प्रभाकर, मध्ययुगीन चंद्रपूर, पृ. क्र. 21
16) चांदा डिस्ट्रिक्ट गॅझेटियर, 1973 पृ. क्र. 85
17) विल्स सि. यु., द राजगोंड महाराजाज ऑफ सातपुरा हिल्स, पृ. क्र. 141
18) सरकार जदुनाथ, हिस्ट्री ऑफ औरगंजेब, खंड–5, पृ. क्र. 191,192
19) राजुरकर अ. ज., चंद्रपूरचा इतिहास, 1982, पृ. क्र. 162, 163
20) पगडी सेतु माधवराव, मोगल–मराठा संघर्ष, पृ. क्र. 122–125
21) कित्ता, स्टडीज इन मराठा हिस्ट्रि, खंड–2, पृ. क्र. 84, लेख–23, पृ. क्र. 89, लेख–27
22) काळे या. मा. (संपा.), गुप्ते बंखर, पृ. क्र. 54–55
23) गद्रे प्रभाकर, मध्ययुगीन चंद्रपूर, पृ. क्र. 38

Gurukul International Multidisciplinary Research Journal (GIMRJ)
with
International Impact Factor 2.254

ISSN No. 2394-8426
Dec – 2015
Issue – I, Volume – V
Online Journal

Public Sector Enterprises In India And Status Of Executive Training And Development: An Overview

Sneh Lata
Assistant Professor in Commerce
WRS Govt College,
Dehri, Kangra(H.P.)

ABSTRACT

The department of Public Enterprise acts a nodal agency for coordinating training and development of managers in public enterprises. Training efforts organized by public enterprises are supplemented by courses offered by premier management and training institutes which provide specialized training facilities that are generally not available with public enterprise. The building up of infrastructure for expansion of training facilities has been given increasing importance by the management of public enterprises. An important milestone in the development of training has been the setting up of separate training department in public enterprise to identify the training requirements, specify the object of training, and ensure lying down of goals in regard to improving necessary knowledge to keep pace with change in the external environment. Within the organization, a public enterprise must re-design its training plans and objectives, care must be taken with regard to the method of objectives, provisions of training schemes for groups with common needs, assessment of external training facilities, methods of implementation and evaluation procedures and achieving better results.

Training and Development increasingly occupies a significant position within central enterprises, as a result of the growing interest in the training and development function which increase the level of production and productivity which securing reasonable returns on the investment, keeping in view the larger interests of the public.

The research paper is based on executive training and development in Public Sector Enterprises. Hence, the Public Sector Enterprises and the status of training and development is discussed in this paper.

Keywords:

Training, Development, Executive, knowledge, Productivity.

Introduction

The Public Sector Enterprises, both at the Central level and at the State level have played a very important role in industrialization and overall economic development of the country. While the macro-economic objectives of the Public Sector Enterprises have been derived from the Industrial Policy Resolutions and Five Year Plans, the need for public utilities in the states has been the main motivation behind the establishment of State Level Public Sector Enterprises. The

State Level Public Sector Enterprises have, therefore, contributed greatly towards the development of infrastructure in the country.

Growth of Public Sector Enterprises in India

At the dawn of independence from the British Colonial rule, the Indian economy was in a shattering state and mass population of poor, illiterate and unemployed sections of the society were looking towards the national leaders of that period for building a new India, which could a provide positive hope to them in a 'real promising' way. Pundit Jawahar Lal Nehru was leading the team of other nationalist leaders and by becoming the first Prime Minister of free India; he shouldered this great responsibility of building a strong and modern India. From day one he was committed to provide social justice as well as to create a strong base for lifting the Indian economy. He was in favour of a greater role of the government in all activities of development and very soon he paved the way for creation of a large base and scope for the public sector by introducing the First Industrial Policy Resolution. There was a widespread belief that, without increasing the role of the State, it was not possible either to accelerate the process of growth or to create an industrial base for sustained economic development of the country **(Dutt, *Indian Economy*, 2009, p.226).** The draft of the **Second Five Year Plan (1956)** stated, "the adoption of the socialist pattern of the society as the national objective, as well as the need for planned and rapid development, require that all industries of basic and strategic importance, or in nature of public utility services, should be in public sector . . . . The state has, therefore, to assume direct responsibility for the future development of industries over a wider area." Although this Nehru Model of development supported a bigger role for public sector, yet, it left some scope for private sector also in smaller areas of activity and in areas of non-strategic nature. Since the adoption of first Industrial Policy Resolution in 1948, the public sector, therefore, has played a very strategic and dominant role in the development of India and the number of public sector undertakings kept on growing with more and more investment in them by the government.

Table 2.1

ISSN No. 2394-8426
Dec – 2015
Issue – I, Volume – V
Online Journal

Growth of Investment in Public Sector Enterprises

As on March 31	No. of Units	Total Investment (in Crores)
1951	5	29
1961	47	950
1980	179	18150
1990	244	99330
2001	242	274198
2007	247	421089
2008	214	763815
2009	213	793096
2010	217	908842
2011	220	603975
2012	260	729298
2013	277 (48 under construction)	850559

Source: Public Enterprises Survey 2012-13

This trend was followed with some changes and with the coming up of new industrial policies till 1991, a new era of economic reforms began in India with the introduction of the New Economic Policy in 1991, for a complete change in the Government of India's policy for public sector.

Development of Infrastructure in Public Sector Enterprises

According to Nagaraj (1991 Economic and Political Weekly p.877)

Economic Development in any underdeveloped country depends on infrastructure without sufficient doses of investment in expansion power and energy. Transportation and Communication facilities, and basic and heavy industries, the process of industrialization cannot be sustained. India had inherited an undeveloped basic infrastructure from the colonial period. After Independence, the Private Sector neither showed any inclination to develop itself nor did it has any resources to make this possible. It was comparatively shy both financially and technically and was incapable of establishing a heavy Industry immediately. This has forced the state's participation in industrialization essential, as the state could enforce a large scale mobilization of capital, the co-ordination of industrial construction and training. The Public Sector has not only improved the road, rail, air and sea transport system, but also expanded them in manifold. Thus, the Public Sector has

enabled the economy to develop a strong infrastructure for the further economic growth. At the same time, the private sector has also benefited immensely from these projects undertaken by the Public sector".

Review of Poor Performance of Public Sector Enterprises in India

Singh (Public Sector Enterprises in the Eighties, 1981) has made an exploratory study on the performance of public enterprises during the period of ten years ending in 1979-80. He has identified number of reasons for poor performance of public enterprises. These include, the long gestation period, adoption of administered price policies, managerial inefficiencies and indifferences, lack of accountability, role of politicians in policy making etc. **Bagchi** (The Role of Public Enterprises in India, 1982) had made an evaluation on the role of Public Sector Enterprises in India against the explicit and implicit objectives during the period of 1976 and 1985. He has appreciated the performance of these enterprises in respect of their efficiency in generation of employment and their contribution to the net domestic savings in India. He lamented on the non-implementation of different recommendations made by the different Committees for the betterment of efficiency of these enterprises. He also pleaded for restructuring the management styles and accountability aspects of these enterprises.

Bhatia (Researches on Profitability of Public Enterprises, 1983) has made a review that the common reason for deteriorating performance of public enterprises is the lack of commitment and lack of accountability of management at all levels.

Chattopadyay (Central Government Enterprises: An Eighteen Year Plan, 1989) has brought an evaluation work on the performance of Central Government enterprises covering a period of 18 years from 1969-70 to 1986-87. He has presented the criticism leveled against the performance of Public Sector Enterprises. He evaluated that in order to have the potential to record much better results, have to run on business lines by maximizing the rate of return on capital employed. He has put forwarded a number of suggestions to improve the working of these units, including the application of principles of sound management.

Executive Development in Public Sector Enterprises

Public Enterprises recognize human resources as their prime asset. Furthermore, in view of the fact that India is engaged in the task of bringing about

a basic transformation in its industrial and economic structure, training assumes greatest purpose and urgency, at the Central and State levels. The training goes a long way in enhancing much-needed self-confidence, authority and respect. The training becomes particularly vital for the future needs of organizations, as a paucity the of trained employees may hold up its development. The training not only paves the way for growth and development of an organization, but also goes a long way towards placing management in this country on a sound professional basis. In order to ensure the availability of properly qualified and trained personnel in the required numbers for various levels of management- technical as well as nontechnical, it is necessary to institute training progmmmes at different levels in the organization. Thus, the Executive training and development is the direct responsibility of management in all organizations. Whatever the system of recruitment, there is always a need to improve the capability of employees through training. The training improves employee's productivity and performance, and creates a favourable organizational climate.

Importance of Executive Training and Development in Public Sector Enterprises

Public Sector Enterprises have gone a long way towards development of personnel by establishing formal training departments and budgets. So, it is necessary to review the training objectives, training policies and training programmes in the light of the changing technologies and environment. Moreover, effective adoption of management development and training orientation, and the concomitant emphasis on specific development and strategy, would evolve depending upon the type of pressures the organization takes from its internal and external environment. Hence, planning (both short-term and long-term) at various levels and a coordinated effort on the part of the public enterprise management and the government would help promote management development in public enterprises. The public sector has now entered a new phase of its development/disinvestments. As such, the policies pursued in all the functional areas of the management should aim at improving the competitiveness of this sector. Professionalism in management has to be made the catalyst for economic and industrial development. So, the training of employees in Public Sector

Enterprises has two objectives: getting the necessary number of employees' requisite qualifications, and enhancing the skills of personnel already in service. Training and development of personnel is not a choice of top management, it is a necessary requirement of the socio-economic system, organizational growth, changing technology, and the changing competitive environment. Today, the planned development of executives as well as workers and administrative staff at lower levels is one of the main tasks of any public enterprise to ensure its very survival. The top management of the enterprise should extend full support and participation in the training programmes designed by their organizations. It is the Top management responsibility to see that the organizations' climate is conducive to training. By showing interest in long range planning, the progress of training and development of sound plans and procedures, the top management can play a big role in cost-effective training.

Thrust Areas for Training in Public Sector Enterprises

The following are the thrust areas for imparting training to the employees/officers.

(i) Information Technology: The training programmes should contain significant inputs on IT application / e-governance for all categories of employees.

(ii) Service Delivery: The emphasis in such courses should be on the quality service delivery within prescribed time period.

(iii) Project Monitoring and Management: Frequent training in Project Monitoring and Management to avoid costs and time over runs in implementing the projects. It will be useful for Class-I Officers.

(iv) Office Procedures and Rules, for all officers and officials.

(v) Ethics and Values: Training programme emphasis to be on ethics and value based administration and all emergent issues in the society. This type of training is required for all level of officers & officials.

(vi) Governance issues: Special efforts to sensitize the officers to the emerging issues like Human Resources Development, Gender, Social Justice, Right to Information, Consumer Protection and Human Right. This type of training shall be useful for Class-II & Class-I Officers.

Thus, the paper gives the brief definition of Public Sector Enterprises, its growth and infrastructure development and also reviews the poor performance of Public Sector Enterprises. It also explains Executive development, importance of Executive training and development. The paper also explains the thrust areas of training in the Public Sector Enterprises in India.

References

1. http://www.dpemou.nic.in/MOU/files/MOUModel.pdf.
2. **Dutt Ruddar (2009)** "*Indian Economy*," K.P.M. Sundharam,p. 226
3. **Planning Commission *(1956)***, *Second Five Year Plan* Government of India, p. 29.
4. **Nagaraj R. (1991)** *"Public Sector Performance in the Eighties"*, Economic and Political Weekly, p. 877.
5. **Singh R.K. (1981)** "*Public Sector Enterprises: an Evaluation of Performance*," pp.9-14.
6. **Bagchi K. Amiya (1982)** *"The Role of Public Enterprises in India"*, *Asian Development Review*, p. 89-100.
7. **Bhatia B.S. (1983)** *"Researches on Profitability of Public Enterprises"*, *RBI Occasional Papers*, p.32-39.
8. **Chattopadhayay P. (1989)** *"Central Government Enterprises: An Eighteen Year profile, Facts For You"*, Vol. 10, No. 9, p.11-19.
9. http://theglobaljournal.com/paripex/file.php?val=November_2012...41...

Gurukul International Multidisciplinary Research Journal (GIMRJ)
with
International Impact Factor 2.254

ISSN No. 2394-8426
Dec – 2015
Issue – I, Volume – V
Online Journal

Alice Walker's The Color Purple: A Pure Feminist Novel

Ravindra D. Hajare,
Assistant Professor,
Dept. of English, Shankarrao Bezalwar Arts And Commerce College, Aheri
Distt. Gadchiroli M.S. 442705.

Abstract:

Alice Walker is self- declared womanist Afro -American contemporary novelist, essayist and political activist is truly a hard core feminist. Her 1982 novel **'the Color Purple'** is an epitome of her feminism for which she jumped into the civil rights movement of 1960s in America and her novels and essays became her mouthpiece of her feminism. She is truly the feminist who writes only for female and stereotypes the male characters. The dignity she wants to achieve for depressed, pressed and suppressed women is out her hostile approach that she had for men. She joins the group of feminist authors who used their pens to voice women's predicament to win a status. Like many of her works the Color Purple is purely a feminist novel that truly expresses feminist approach. She presents women gaining the lost status, dignity at the cost of men in form of 'Pa'.

Key words:
Feminism, twin affliction, spirituality, autonomy, resurrection, humanity, quintessence.

❖ Introduction:

Ms. Alice Walker, as a Black American novelist, poet, short story writer, essayist, critic and editor, has contributed a lot to enrich Afro-American literature. Much of her writing reveals her concerns with Black women and families. Ms. Walker deftly sculpts her people and delineates their relationships. She writes from a world of experience which no white poet could possibly share.As an acclaimed writer whose controversial novel **The Color Purple** (1982) won both the American Book Award, and the Pulitzer Prize, Walker writes powerful expressive fiction in which she delineates the black women's struggle for spiritual wholeness and political autonomy. Viewing the African-American women as a symbol representing hope and resurrection for humanity, Walker stresses the importance of bonds between women as a means to content with racism and sexism.

Walker's heritage and history provide a vehicle for understanding the modern world in which her characters live. She relies upon sexual violence and physical abuse to portray breaches in black generations. Typically she brings to her works a terrible observance of black self -hatred and destitute. The present paper is a study of her novel from feminist point of view.

❖ Walker as a Feminist:

Alice Walker is an acclaimed feminist writer who took cudgel to put forth the predicament, injustice, sexual and racial oppression and suppression of black women in particular. Almost all

her works deal with the problems of black women. One can easily trace feminist thoughts in her novels and short stories. She literally jumped into the Civil Rights Movement and brought the issue of black women on international scene. Alice Walker's contribution to feminist Movement and for the cause of women can be traced in her work.

Alice Walker like any other Feminist recognizes the inadequacy of male created ideologies and struggles for the spiritual, economic, social and racial equality of women sexually colonized and psychologically subjugated. She strives to undo this tilted and distorted image of women whose cries for freedom and equality have gone and still go unheard in a patriarchal world, a male's culture. Thus, denied the freedom to act and choose on their own, women remained solely inside the field of vision, mere illusion to be dreamt and cherished. A woman is a woman and a woman must remain but not 'man's shadow self.' The development of Feminist thought at the outset of the 20th century has brought about a perceptive change in our outlook towards women. **Elaine Showalter,** the famous feminist writer and critic posits three phases in the growth of feminist tradition, "**Imitation, protest and self discovery."**Walker's women also rediscover their dignity through these phases and the Color Purple is the quintessence of it.

The early feminist was mainly concerned with social and political change. So little attention was paid to literature and literary criticism, but soon enough their political action was extended to the cultural field. A work of literature invariably reflects the personal or cultural bias of its author. It is also true about Alice Walker. The first goal before her was to lay bare the patriarchal practices in literary discourse. That is why **Elaine Showalter** observes:

> *"In its earliest years, feminist criticism concentrated on exposing the misogyny of literary practice: the stereotype of women in literature as angels or monsters, the literary abuse or textual harassment of women from literary history."*

❖ **AliceWalker: Champion of Women's Emancipation.**

Alice Walker champions the freedom of black women from oppression of all kinds, and a total empowerment of self as well as the wholeness of the community through her novels and short stories. **Mary Helen Washington**, an Alice Walker critic, states that 'the author is on apologist for Black women' and she uses the term **'apologist'** in the sense that Walker 'speaks or writes in defense of a cause or a position.' The cause is the liberation of Black womanhood, but as an apologist, she demonstrates this position basically in the sense of acknowledging. To be sure, she acknowledges the condition, but prior to her novel ***'The Color Purple**,' she was either not yet ready or willing to go to the level of defense. In **The Color Purple**, she lifts Black women off their knees, uses love as a defensemechanism and raises Black women to a level of royalty.*

The novels of Alice Walker written in such background deal with these issues at par and bring them out to a sufficient level to prove what her proposition of the black women is and seeks to visualize a state as envisioned by other black women writers and activists still battling to win a status once enjoyed by them. She portrays them struggling for freedom, emancipation and liberation from all types of bondages.

❖ **The Color Purple: A Feminist Approach**

Alice Walker makes an interesting study with her southern background and feminist approach in the Color Purple and other fictions. The Color Purple has brought her an important place among contemporary American novelists. Walker's novels focus on racial, political and sexual issues while they highlight women's struggle for survival. The Color Purple more particularly provides an insight into predicament of women on the domestic front. The story revolves round an unfortunate, abused woman, Celie and other black women characters and brings home the predicament perpetrated against black women. The predicament, as the history bears a testimony, is the result of their sexual, racial and interracial suppression and oppression, physical exploitation and violence. The women in ***the Color Purple*** live in an unpleasant, difficult, perplexing and dangerous situation. They are always in a dilemma, in a quandary. They try to come out of racial and sexual discrimination, inhuman treatment and the patriarchal system which encourages women's oppression and offers secondary status. The women are treated like slave. They are deprived of freedom and social position. They are mere puppets fallen in the hands of men and mere objects of sex.

Alice Walker depicts these multifaceted problems and predicament of women quite realistically and naturally in the Color Purple. The novel provides them a wide canvass to put forth their sufferings and pains in a new light. Though male characters have been dealt harshly, it is with didactic purpose; to suggest a solution to their predicament. Her aim is to emphasize and highlight the predicament of women caused by repetitive violence, suppression, physical and sexual exploitation, and patriarchal taboos so that the men would be introspective, sympathetic and considerate towards women and bring about a change in their attitude and treatment. Being a `womanist', Walker loves women and becomes the spokesperson of them.

> *`` Like the best writers of any era Walker has probed deeply into the soul of the nation in which she was bred and in doing so, has brought to the light our country's dark secrets"* remarks **Richer Wesley.**

- **The Color Purple: Journey from Powerlessness to Empowerment-Individual and Economical.**

The Color Purple is the story of a poor black girl named Celie. It celebrates the mere realistic and socially engaged fiction that of Toni Morrison. It is the story of the love between two black sisters that survive a separation over years. During the same period, the shy, ugly and uneducated sister discovers her inner strength through the support of female friend. It exclusively deals with the portrayals of women characters victimized by either black or women. Celie, the protagonist, a black woman of south, writes letters to God in which she narrates her painful life story, her roles as a daughter, wife, and mother. In the course of her story, Celie meets a number of other black women who shape her life and also tell the tale of their predicament caused by several reasons. Nettie, Celie's sister, Shug Avery- the blues singer, Sofia, the strong willed daughter- in- law, Tashi, an Olinka tribe girl, and Squeak, who goes through awakening of her art. Celie is the center of this community of women, the one who knows how to survive. There are several women portrayals and especially multi-colored portrayal of Celie deserves genuine efforts to explore her sorrows and suffering caused by the male dominated society to understand literary genius of Alice Walker. Celie implicitly compares herself to a tree when she mourns her lot-

``He beats me like he beat the children. Cept he never hardly beat them. He say, Celiegit the belt. It all I can do not to cry. I make myself wood. I say myself, Celie you a tree. That's how come I know trees fear men."

Celie is in a position of complete powerlessness. She is so powerless that the only person she can talk to is God, and even she is forced to write letters rather than pray. Celie first loses the ability to control her own life and completely dominated by `Pa' who treats her like a slave. The only living person who provides Celie with friendship and comfort is her sister, Nettie.Celie writes about her hopelessness and helplessness. Celie has to bear violence and very cruel treatment at Mr. Albert's house.Celie does not know how to fight. *``All I knows how to do is stay alive."*Celie's predicament is worsened with the arrival of Shug Avery in the beginning. She is a vivacious and determinedly independent blues singer, whose pride, independence and appetite for a living act as a catalyst for Celie. Albert beats her only because she cannot enjoy sex with him and to maintain his patriarchal dominance Celie never gets a status of wife. She remains just a slave carrying the yoke of family and works.

This segment of the novel marks the gradual humanization of the characters and the slow empowerment of Celie.The necessary catalyst comes in form of letters from her sister Nettie, whom she has missed most for many years. The case of hiding letters of Nettie from her shatters her capacity to endure and she gradually learns to resist. This is the moment that revitalizes and rejuvenates Celie and she appears to be an empowered woman as if she is phoenix rising from the ashes.

Celie, now, instead of writing to God, writes to Nettie and starts searching for God to redeem her from her predicament as an internal force. Celie finally gets the courage to leave Albert and move to Memphis with Shug. Albert, who is still under his patriarchal impression, underestimates Celie and says that she will not be able to do anything. She won't leave him because it was he who feeds her and she is dependent.

Celie, before leaving, has one last confrontation with Albert. Celie demands toknow how many letters from Nettie have arrived. As he starts laughing, Celie grows stronger with her damnation of him. Albert becomes furious at Celie and tries to attack her but Shug intervenes.

Celie finally is able to break away from the oppression of her life and leave her husband. The final moment after freedom for Celie is when she gets angry. She had been able to put up with beatings, hard labor and loveless sexual intercourse without ever getting upset. It is only when she finds out that Albert has been hiding Nettie's letters from her that she is to take action. The anger that Celie releases manifests itself first in a desire to kill Albert.

Celie creates occupational freedom by making something for herself rather than for other people. This highlights the fact that she has obtained more individuality and is willing to assert herself.

Celie's new awareness of life is that life is something to be marveled at. This interpretation makes her more aware of her own existence. Thus, if the Color Purple should be noticed, then so should she. This is manifested in Celie's words:

``I'm pore, I'm black. I may be ugly and can't cook, a voice say to everything listening. But I'm here."

Along with Shug, Celie manages to start up her pants business and gets existence. She gets money, power of fortitude and acquaintance. Albert is a changed man following the cursing he receives from Celie. Celie's relationship with other also changes. She now seems more in control of what is happening, primarily because she runs her own business.

The full empowerment of Celie arrives in full force at the end of novel when Nettie returns to her and she has Shug by her side. Celie is now surrounded by a large group of people whom she loves. For her, this is the greatest moment of her life, and thus she remarks that she feels younger than she has ever felt before. For Celie, having her family return and to finally be loved by other people is the equivalent of starting a new life from prolonged predicament. Thus, the ending is really the beginning for Celie and other women characters also. It is suggested that the other women characters like Nettie, Sofia, Squeak etc. who have suffered a lot due to racial and patriarchal system, will be free from their predicament under the loving canopy of Celie.

The novel as it moves to catastrophe towards the end, itself serves as a solution to the predicament of women. Celie creates her own world where women are free to live their life giving scope to their talent which they have never got in the patriarchal system. They are free from oppression and suppression and able to enjoy equal status as a human being. They are free to consummate a satisfying and reciprocally loving relationship. The violence and estrangement are over and relationship between black men and women established.

❖ **Conclusion:**

In short, the portrayals of each woman as depicted by Walker in the Color Purple., speaks of their dilemma, which is a direct consequence of their spiritual and physical oppression and suppression. However, they are not left to remain in the state permanently. Rather Walker becoming a mouthpiece of them tries to bring up them on their knees suggesting a solution on political, economic and social ground this giving the novel full feminist touch.

❖ **REFERENCES**

1) Cash, W.J., ***The mind of the South***, (New York-Vintage books, 1960) P.282.
2) Walker, Alice, ***the Color Purple***, (Washington Square New York 1982) p., 10.
3) Sengupta, Ashish, ***Afro-American Women's Fiction: Perspective on and Sex, New Quest***, 110, March - April, 1995.p
4) Hooks, Bell, ***Writing the Subject: Reading the Color Purple***, (in Henry Louis Gates, Jr. Ed, Reading Black, Reading. Feminist,1990.
5) Old, Maria Lauret, ***Liberating Literature: Feminist American*** (Routledge, 1994), P.68.
6) Warhol, Robins, Diane Price Hernal eds., ***Feminisms: An Anthology*** (New Brunswick : Rutgers University Press, 1991), P.101
7) Ruth, Robins, ***Literary Feminisms*** (Macmillan, 2000), p.190.
8) Riley, Carolyn, & Phyllis Carmel Mendelson, eds.,:***Contemporary Literary Criticism***(Gale Research Company, Detroit Michigan, 1976) p.553
9) Donovan, Josephine (ed.) ***Feminist Literary CriticismExplorationin Theory***, Kentucky the University Press of Kentucky1989, p.5.
10) Showalter, Elaine, ed., ***the New Feminist Criticism: Essays on Women, Literature and Theory,*** (New York: Pantheon Books, 1985) p.5.

11) Rogers, Katherine M. ***The Troublesome Helpmate: History of Misogyny in Literature, Seattle***: University of WashingtonPress, 1966, p. 272.
12) Washington, Mary Helen, ***an Essay on Alice Walker, In Sturdy Black Bridges: Vision of Black Women in Literature,***Rosema P. Bell,Betty J. Parker, Beverly Gay. Shefall, eds. Anchor
13) Babb Valerie, ***the Color Purple: Writing to Undo What Writing Has Done***.Phylon, 47:2(June pp. 107-116)
14) Bradley, David, ***Novelist Alice Walker Telling the Black Women's Story***, New York Times Magazine, January 8,1988,p.34.
15) David, Thadius- ***Alice Walker's Celebration of Self in Southern Generations.*** The Southern Quarterly 21:4 (Summer1983) pp. 261-75.
16) Eko, Gerd, ***the Color Purple as Everybody's Protest Art***. Antioch Review 44 (Summer 1986) pp 261-75.
17) Eko, Eble, ***Beyond the Myth of confrontation: A Comparative Study of African- American Female Protagonists***, Ariel (Atlanta). 17(Oct.1986) pp 139-59.
18) Gatson, Keren C., ***Women in the Lives of Grange Copeland***. C. C. A Journal, 24:3(March, 1981) pp. 1-17.
19) From Victimization to Free Enterprise Alice Walker's the Color Purple, ***the Color Purple, Studies in American Fiction***, 14:1(Spring 1986) pp, 1-17.
20) Henderson, Mac G. ***the Color Purple Revisions and Redefinition***, Age:2:1 (Spring 1985) pp 12-18.
21) Hogue, W. Lawrence, ***History of Feminist Discourse and Alice***
22) *Walker's the Third Life of Grange Copeland,*Melus, 12:2(Summer 1985) pp. 45-62.
23) McDowell, Deborah E. *Selfin Bloom : Alice Walker's Meridian CLA Journal,* 24.3 (1981) pp. 262-275.
24) Sterin, Karen, Meridian: ***Alice Walker's Critique of Revolution Black American Literature Forum***, 20:1-2.
25) Some Letters Went to God, ***Review of the Color Purple by Alice Walker***, New York times book Review (June 25, 1982) p. 7.
26) Puri, Usha, ***Towards a New Womanhood: A Study of Black Women Writers,*** Jaipur, Printwell Publishers (41-42).

Gurukul International Multidisciplinary Research Journal (GIMRJ)
with
International Impact Factor 2.254

ISSN No. 2394-8426
Dec – 2015
Issue – I, Volume – V
Online Journal

Comparative Study Of Longterm Solvency Position And Its Influince On Earnings Of The Company-- A Case Study Of Ashoke Leyland & Tatamotor

Amalesh Patra
Assistant professor
Department of commerce
Calcutta Girls' College
3, Goaltuli lane, Kolkata-13

ABSTRACT

The solvency ratio measures a company's ability to meet its long-term obligations. The Long term financial soundness of any business can be judged by its long term creditors by testing its ability to pay interest charges regularly and its ability to repay the principal as schedule. In general, a solvency ratio measures the size of a company's profitability and compares it to its obligations. By interpreting a solvency ratio, an analyst or investor can get insight into how likely a company will be to continue meeting its debt obligations. Solvency ratios indicate a company's financial health in the context of its debt obligations. There are a number of different ways to measure financial health as **Debt-equity ratio, Proprietary ratio, Fixed assets to Proprietary ratio, Debt to assets ratio, Interest coverage ratio** and to measure the Profit Earnings ability as **Operating profit ratio, Capital Employed Ratio ,EPS ratio** etc. The main aim of present study is to comparatively analyze the long-term solvency position of the automobile industry with the reference of Ashoke Leyland and Tatamotor. The study is descriptive and analytical which is conducted on the basis of secondary data. The present study is based on the analysis of five years annual reports of Ashoke Leyland and Tatamotor from 2011 to 2015.

KEYWORDS:-
'Proprietor's Funds', 'Borrowed Funds', Solvency, Obligations, Struggle.

INTRODUCTION

Solvency refers to a company's ability to meet the long term liabilities. All activities of a company like financing, investing, and operating-affect the solvency position. One of the important components of the solvency analysis is the composition of capital structure. Solvency also depends on the operations. The ability to meet the long term obligations depends on the profit generating ability of the business. Solvency ratios are primarily used to measure a company's ability to meet its long-term obligations. In general, a solvency ratio measures the size of a company's profitability and compares it to its obligations. By interpreting a solvency ratio, an analyst or investor can gain insight into how likely a company will be to continue meeting its debt obligations.. Solvency ratios indicate a company's financial health in the context of its debt obligations. As we might imagine, there are a number of different ways to measure financial health. Debt to equity is a fundamental indicator of the amount of leverage a firm is using. Debt generally refers to long-term debt; though cash not needed to run a firm's operations could be netted out of total long-term debt to give a net debt figure. Equity refers to shareholders' equity, or book value, which can be found on the balance sheet. Book value is a historical figure that would ideally be written up (or down) to its fair market value. But using what the company reports presents a quick and readily available figure to use for measurement. Debt to assets is a closely related measure that also helps an analyst or investor measure leverage on the balance sheet. Since assets minus liabilities equals' book value, using two or three of these items will provide a great level of insight into financial health. The solvency ratio measures a company's ability to meet its long-term

obligations. Liquidity ratios measure short-term financial health. Basically, solvency ratios look at long-term debt obligations while liquidity ratios look at working capital items on a firm's balance sheet.

LITERATURE REVIEW

Sahu (2002) found that liquidity plays a significant role in the successful functioning of a firm. Illiquidity threatens the very survival of the firm and leads to business failure. On the contrary, a very high degree of liquidity hampers the profitability. He observed that most of the paper producing companies in India has been caught in a Vicious down cycle and facing a threat to their viability.

Manos *et al.* (2007) Direct evidence on the differences in the total debt ratio between group affiliated and non-group affiliated companies is reported significantly higher leverage levels for Indian listed group affiliates.

Bhunia, (2010), identified that the liquidity position in both the companies was strong, therefore, it reflects the abilityof the companies to pay short-term obligations within due date. It was also observed that the companies relied more on external funds in terms of long-term borrowings, thereby providing a lower degree of protection to the creditors.

Mishra(2011) in his study observed a changing pattern in financing of PSUs with reforms in Indian economy. He found that PSUs have challenge to access the market for both equity & debt finance.

Kumar,Anjum & Nayyar (2012) in their paper analyzed the change in capital structure pattern of three reputed pharmaceutical companies for the period of 2007-2011.It was found that in the initial period, companies were raising maximum debt fund to reduce the cost of capital but which resulted in increase of financial risk. So, later on they shifted to equity financing..

Kalyani & Reddy (2012) in their study found that Amara Raja Batteries Ltd mostly depended on equity financing. It was suggested that ARBL should raise the debt funds to bring the optimum capital structure for improving financial performance of the companies.

Marimuthu (2012) revealed that that the sample companies having good performance in the current and quick ratio except interest coverage ratio. It was concluded that the companies should concentrate on their liquidity position, receivables, and payables particularly on working capital.

NEEDS AND SIGNIFICANCE OF THE STUDY

Solvency is a measure of the long-term financial viability of a business which means its ability to pay off its long-term obligations such as bank loans, bonds payable, etc. Information about solvency is critical for banks, employees, owners, bond holders, institutional investors, government, etc.

1) Solvency ratios are extremely useful in helping analyze a firm's ability to meet its long-term obligations.
2) Investors can evaluate overall investment appeal and decide whether a security is under or overvalued.
3) Debt holders and regulators might be more interested in solvency analysis. They look into the firm's overall financial profile by solvency analysis, and how fast it is growing and whether the firm is well-run overall

It will also help the professionals, academicians who have a better understanding of the relevance of solvency ratio of the motor companies.

OBJECTIVE OF THE STUDY

i. comparatively analyze the long-term solvency position of Ashoke Leyland and Tatamotor
ii. The effect of *long*-term solvency position on the profitability of the companies in relation of various ratios.

RESEARCH METHODOLOGY

Information and data for the research is collected from secondary sources i.e. published articles, journals, news papers, reports, books and websites. The profit & loss account and balance sheet of the **Ashoke Lyland and**

Tatamotor for the last five years i.e. from 31st March 2011 to 31st March 20015 were studied to get the clear picture of the solvency position and its influence in the earnings of the company. The available data between these periods has been carefully analyzed, interpreted and presented by studying the Solvency position and its influence in earnings of the companies. Commensurate with the objective of the study, various tools of analysis have been employed in order to arrive at certain conclusions regarding "**Comparative study of Long term solvency position and its influence in earnings of the company-A case study of Ashoke Lyland and Tatamotor**. Tabular analysis, percentage and graphs have been used for analysis of the data.

COMPANY PROFILE

Ashok Leyland is an Indian automobile manufacturing company based in Chennai, India. Founded in 1948, it is the 2nd largest commercial vehicle manufacturer in India, 4th largest manufacturer of buses in the world and 16th largest manufacturer of trucks globally. Operating six plants, Ashok Leyland also makes spare parts and engines for industrial and marine applications. It sells about 60,000 vehicles and about 7,000 engines annually. It is the second largest commercial vehicle company in India in the medium and heavy commercial vehicle (M&HCV) segment with a market share of 28% (2007–08). With passenger transportation options ranging from 19 seaters to 80 seaters, Ashok Leyland is a market leader in the bus segment. The company claims to carry more than 60 million passengers a day, more people than the entire Indian rail network. In the trucks segment Ashok Leyland primarily concentrates on the 16 ton to 25 ton range of trucks. However Ashok Leyland has presence in the entire truck range starting from 7.5 tons to 49 tons. With a joint venture with Nissan Motors of Japan the company made its presence in the Light Commercial Vehicle (LCV) segment (<7.5 tons).Ashok Leyland's UK subsidiary Optare has shut down its bus factory in Blackburn, Lancashire.[1] This subsidiary's traditional home in Leeds has also been vacated in favor of a purpose built plant at Sherburn-in-Elmet.

Tata Motors Limited (formerly **TELCO**, short for **Tata Engineering and Locomotive Company**) is an Indian multinational automotive manufacturing company headquartered in Mumbai, Maharashtra, India and a subsidiary of the Tata Group. Its products include passenger cars, trucks, vans, coaches, buses, construction equipment and military vehicles. It is the world's 17th-largest motor vehicle manufacturing company, fourth-largest truck manufacturer, and second-largest bus manufacturer by volume. Tata Motors' principal subsidiaries purchased the British premium car maker Jaguar Land Rover (the maker of Jaguar, Land Rover, and Range Rover cars) and the South Korean commercial vehicle manufacturer Tata Daewoo. Tata Motors has a bus-manufacturing joint venture with Marcopolo S.A. (Tata Marcopolo), a construction-equipment manufacturing joint venture with Hitachi (Tata Hitachi Construction Machinery), and a joint venture with Fiat Chrysler which manufactures automotive components and Fiat Chrysler and Tata branded vehicles. Founded in 1945 as a manufacturer of locomotives, the company manufactured its first commercial vehicle in 1954 in collaboration with Daimler-Benz AG, which ended in 1969. Tata launched the first fully indigenous Indian passenger car, the Indica, and in 2008 launched the Tata Nano, the world's cheapest car. Tata Motors acquired the South Korean truck manufacturer Daewoo Commercial Vehicles Company in 2004 and purchased Jaguar Land Rover from Ford in 2008.Tata Motors is listed on the Bombay Stock Exchange, where it is a constituent of the BSE SENSEX index, the National Stock Exchange of India, and the New York Stock Exchange. Tata Motors is ranked 287th in the 2014 *Fortune* Global 500 ranking of the world's biggest corporations.

DATA ANLYSIS AND FINDINGS

The objectives of the study have been achieved after analyzing the following ratios of Ashoke leyland and Tatamotor for the period 31st March 2011- 31 st March 2015.

i. Debt-Equity ratio for five years of Ashoke Leyland and Tatamotor
ii. Proprietary ratio for five years of Ashoke Leyland and Tatamotor
iii. Fixed assets to Proprietary ratio for five years of Ashoke Leyland and Tatamotor
iv. Debt to Total assets ratio for five years of Ashoke Leyland and Tatamotor
v. Interest Coverage ratio for five years of Ashoke Leyland and Tatamotor
vi. Operating profit ratio for five years of Ashoke Leyland and Tatamotor
vii. Capital Employed ratio for five years of Ashoke Leyland and Tatamotor
viii. Return on Investment ratio for five years of Ashoke Leyland and Tatamotor
ix. Earnings Per Share ratio for five years of Ashoke Leyland and Tatamotor

ANALYSIS OF DEBT EQUITY RATIO

Debt to equity ratio is a long term solvency ratio that indicates the soundness of long-term financial policies of the company. It shows the relation between the portion of assets provided by the stockholders and the portion of assets provided by creditors. It is calculated by dividing total debt by stockholder's equityThe higher the gearing, is the more volatile the return to the shareholders. The objective is to provide a security to outsiders on liquidation of the firm. An appropriate mix of the debt and equity improves the value of the firm.

Debt-equity ratio=*Total debt/Shareholders fund or Net worth*

TABLE-1:-DEBT EQUITY RATIO OF ASHOKE LEYLAND AND TATAMOTOR (Rs.in crore)

YEAR	ASHOKE LEYLAND			TATAMOTOR		
	Total debt	Net worth	Ratio	Total debt	Net worth	Ratio
2011	2,348.13	2,656.68	0.883859	14,638.19	19,989.11	0.732308
2012	2,395.10	2,894.82	0.827374	11,011.63	19,602.26	0.561753
2013	3,504.82	3,158.46	1.109661	14,268.69	19,111.53	0.746601
2014	3,883.91	3,273.96	1.186303	14,515.53	19,153.78	0.757842
2015	2,591.34	4,096.89	0.632514	20,080.97	14,839.72	1.353191
Average			**0.927942**			**0.830339**

FIGURE-1

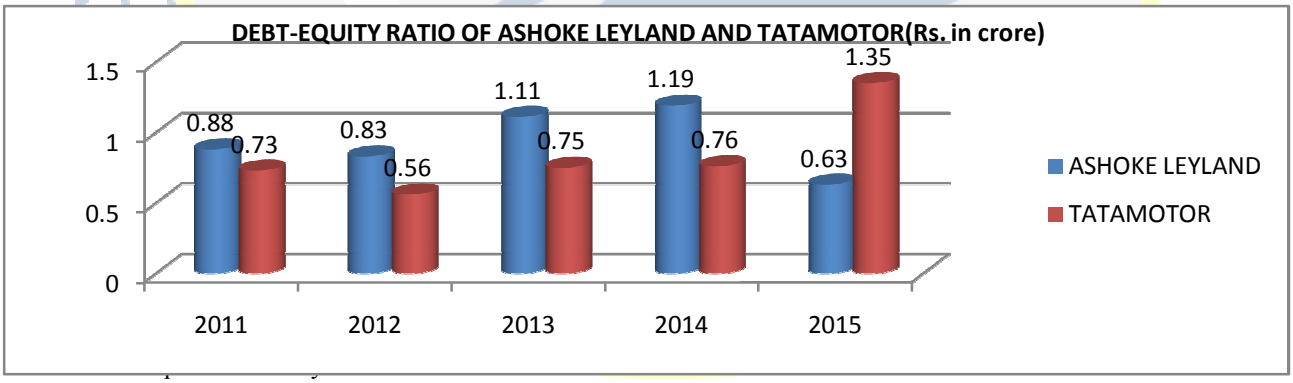

FINDINGS:-Analysis shows that the debt equity ratio of Ashoke Leyland was 0.88 in 2011, 0.83 in 2012,1.11 in 2013,1.19 in 2014 and 0.63 in 2015,with the average of 0.93. The debt equity ratio of Tatamotor was 0.73 in 2011, 0.56 in 2012, 0.75 in 2013, 0.76 in 2014 and 1.35 in 2015, with the average of 0.83. From the comparative bar chart it is clear that the debt equity ratio of Ashoke Leyland is higher than Tatamotor.

ANALYSIS OF PROPRITARY RATIO

Proprietary ratio relates the shareholders' funds to total assets. It is calculated by dividing the shareholders' funds by the total tangible assets. This ratio indicates the long-term or the future solvency position of the business. This ratio throws light on the general financial strength of the company. It is of great importance to creditors since it

enables them to find out the proportion of shareholders' funds in the total assets used in the business. While a high proprietary ratio indicates a relatively secure position to the creditors in the event of liquidation, a low proprietary ratio will include greater risk to the creditors.

TABLE-2:- PROPRIETARY RATIO OF ASHOKE LEYLAND AND TATAMOTOR (Rs. In crore)

Year	ASHOKE LEYLAND			TATAMOTOR		
	Shareholders fund	Total assets	*Ratio*	Shareholders fund	Total assets	*Ratio*
2011	2,656.68	5,004.81	0.530825	19989.11	34627.3	0.577264
2012	2,894.82	5,289.92	0.547233	19602.26	30613.89	0.640306
2013	3,158.46	6,663.28	0.47401	19111.53	33380.22	0.572541
2014	3,273.96	7,157.87	0.457393	19153.78	33669.31	0.568879
2015	4,096.89	6,688.23	0.612552	14839.72	34920.69	0.424955
Average			**0.524403**			**0.556789**

FIGURE-2

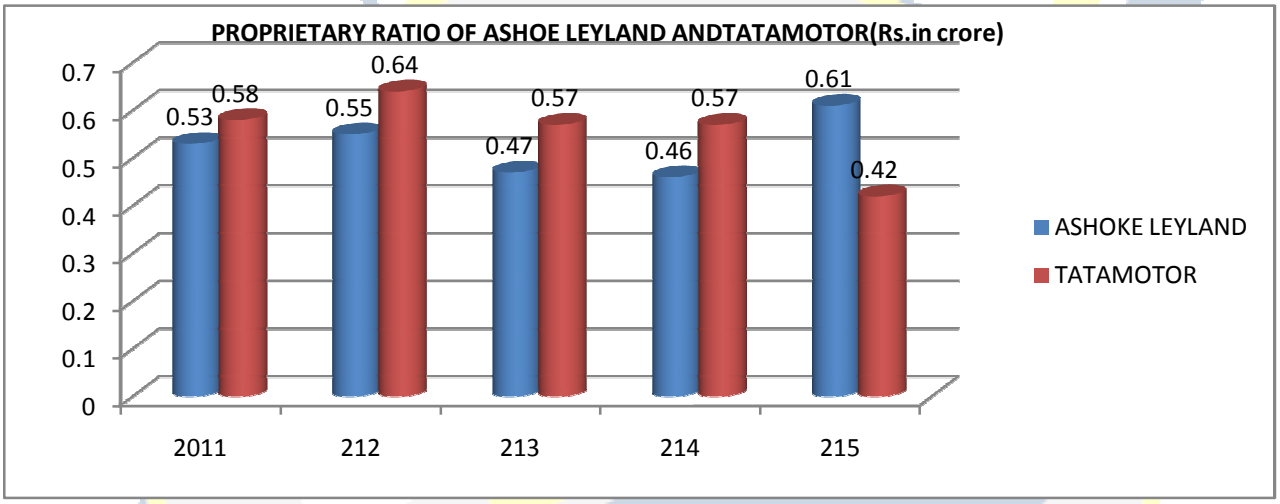

Source: Compile Personally from Dion Global Solutions Limited

FINDINGS:- The table and graph shows that the Proprietary ratio of Ashoke Leyland was 0.53 in 2011,0.55 in2012, 0.47 in 2013,0.46 in 2014 and 0.61 in 2015, with the average of 0.52.On the other hand the Proprietary ratio of Tatamotor was 0.58 in 2011,0.64 in2012,0.57in 2013, 0.57 in 2014 and 0.42 in2015, with the average of 0.55.

ANALYSIS OF FIXED ASSETS TO PROPRIETORS FUND RATIO

Fixed assets to Proprietary ratio are the relationship between fixed assets and shareholders' funds. The purpose of this ratio is to indicate the percentage of Owners' Funds invested in fixed assets. A high ratio indicates a relatively secure position to the proprietors in the event of liquidation; a low ratio will include greater risk to the proprietors.

The formula is: **- Fixed assets to proprietors' fund ratio**=Fixed Assets/Proprietors' Fund

TABLE-3:-FIXED ASSETS TO PROPRIETORS FUND RATIO OF ASHOKE LEYLAND AND TATAMOTOR (Rs.in crore)

Year	ASHOKE LEYLAND			TATAMOTOR		
	Fixed assets	Proprietors' Funds	*Ratio*	Fixed assets	Proprietors' Funds	*Ratio*
2011	3,327.52	2,656.68	1.25251065	13392.88	19989.11	0.670009
2012	3,600.14	2,894.82	1.243649	14995.77	19602.26	0.765002
2013	3,985.23	3,158.46	1.26176364	15432.43	19111.53	0.807493
2014	4,485.94	3,273.96	1.37018778	15217.7	19153.78	0.794501
2015	4,233.74	4,096.89	1.03340339	15760.36	14839.72	1.062039
Average			**1.23230289**			**0.819809**

FIGURE-3

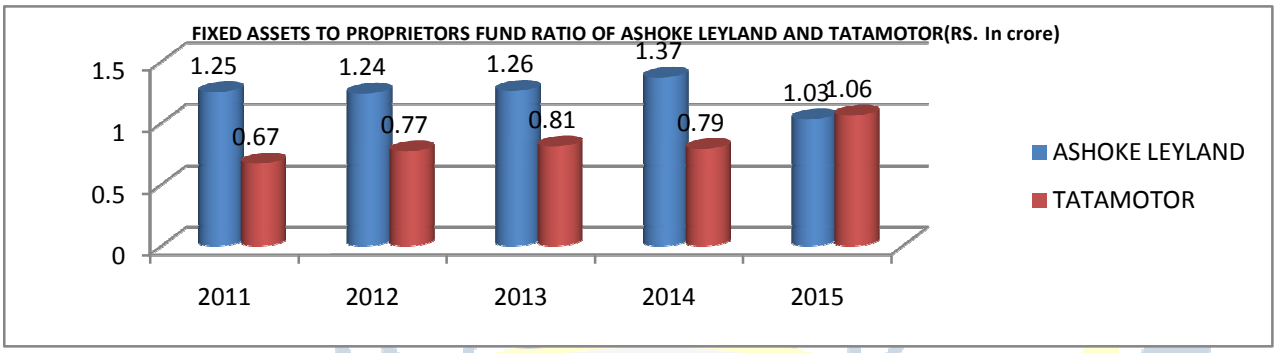

Source: Compile Personally from Dion Global Solutions Limited

FINDINGS:- The above table and bar chart shows that the Fixed assets to proprietors' fund ratio of Ashoke Leyland was 1.25 in 2011,1.24 in2012, 1.26 in 2013,1.37 in 2014 and 1.03 in 2015, with the average of 1.23.On the other hand the ratio of Tatamotor was 0.67 in 2011,0.77 in 2012,0.81 in 2013, 0.79 in 2014 and 1.06 in2015, with the average of 0.82.

ANALYSIS OF DEBT TO TOTAL ASSETS RATIO

Debt to assets ratio is a closely related to **Solvency ratio,** is a variant of proprietary ratio. It shows the relationship between total liabilities to outsiders to total assets. It provides a measurement of how likely a company will be continue meeting its debt obligations. It is observed that the lower ratio i.e. outsiders liabilities in the total capital of company the better is the long term solvency of the company. A Firm is said to be solvent when total asset are greater than the total liabilities payable to outsiders

The formula is:-**Debt to total assets ratio**=Total liabilities to outsiders/total assets

TABLE-4:DEBT TO TOTAL ASSETS RATIO OF ASHOKE LEYLAND AND TATAMOTOR (Rs.in crore)

Year	ASHOKE LEYLAND			TATAMOTOR		
	Outsidersl iabilities	Total assets	*Ratio*	Outsiders Liabilities	Total assets	*Ratio*
2011	2,348.13	5,004.81	0.46917465	14638.19	34627.3	0.422736
2012	2,395.10	5,289.92	0.45276677	11011.63	30613.89	0.359694
2013	3,504.82	6,663.28	0.5259902	14268.69	33380.22	0.427459
2014	3,883.91	7,157.87	0.54260695	14515.53	33669.31	0.431121
2015	2,591.34	6,688.23	0.3874478	20080.97	34920.69	0.575045
Average			**0.49763464**			**0.443211**

FIGURE-4

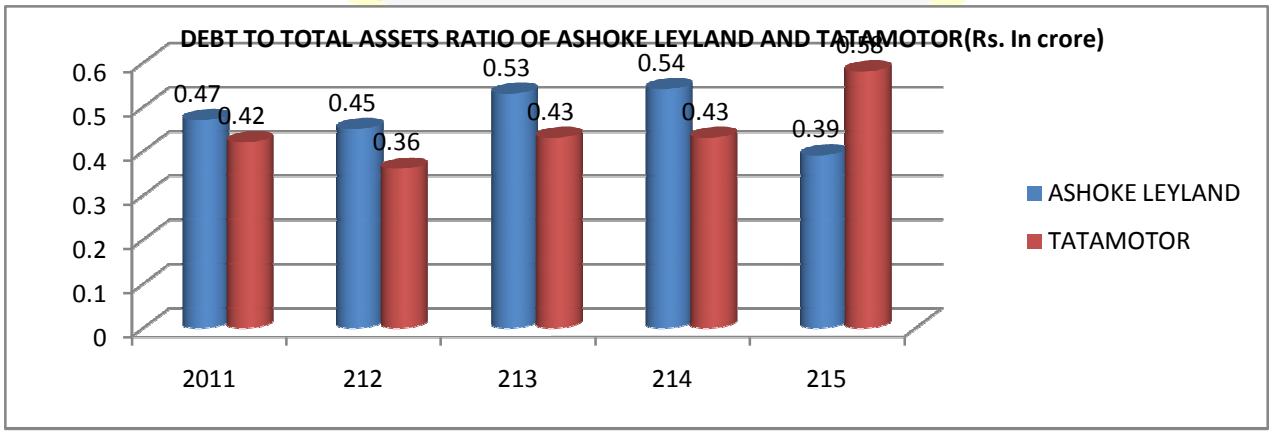

Source: Compile Personally from Dion Global Solutions Limited

FINDINGS:- The table and graph shows that the debt to total assets ratio of Ashoke Leyland was 0.47 in 2011,0.45 in2012, 0.53 in2013,0.54 in 2014 and 0.39 in 2015, with the average of 0.50.On the other hand the debt to total assets ratio of Tatamotor was 0.42 in 2011,0.36 in2012,0.43 in 2013, 0.43 in 2014 and 0.58 in2015, with the average of 0.44. The dependence on external sources of finance of Ashoke Leyland is more than Taamotor.

ANALYSIS OF INTEREST COVERAGE RATIO

The **interest coverage ratios** establish the relationship between fixed claims and the firm's profitability out of which these claims are to be paid. So, this measure tries to relate profitability to the level of debt payments to assess the degree of comfort with which the firm can meet these payments. The interest coverage ratio help to analyze the firm's ability to service the fixed interest claims.

The formula is:- **Interest coverage ratio=EBIT/Interest**

TABLE-5. INTEREST COVERAGE RATIO OF ASHOKE LEYLAND AND TATAMOTOR (Rs.in crore)

YEAR	ASHOKE LEYLAND			TATAMOTOR		
	EBIT	Interest	Ratio	EBIT	Interest	Ratio
2011	990.71	188.92	5.244072	3580.22	1,383.70	2.587425
2012	945.23	255.25	3.703154	2559.65	1,218.62	2.10045
2013	847.6	376.89	2.248932	1562.69	1,387.76	1.126052
2014	361.71	452.92	0.798618	311.72	1,337.52	0.233058
2015	835.7	393.51	2.123707	-2363.04	1,611.68	-1.4662
Average			**2.823696**			**0.916158**

FIGURE-5

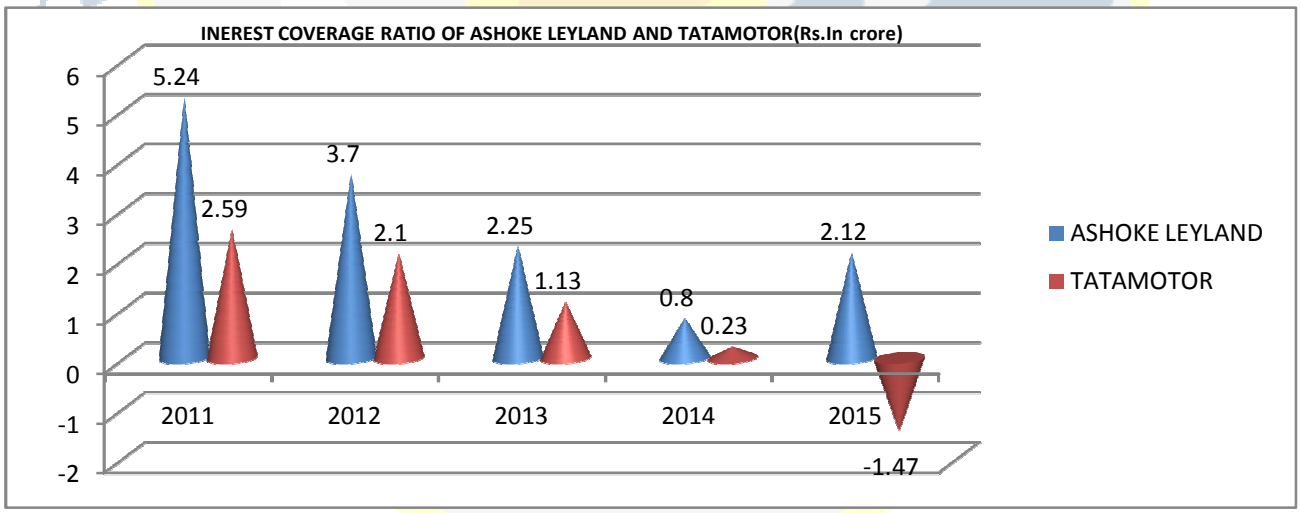

Source: Compile Personally from Dion Global Solutions Limited

FINDINGS:- Interest coverage ratio of Ashoke Leyland is 5.24 in 2011, 3.7 in 2012,2.25 in2013,0.8 in 2014 and it stood at 2.12 in 2015, with the average of 2.82. The ratio gradually decreased over the study period except2015. It is not good for the company. While interest coverage ratio of Tatamotor is 2.59 in 2011which reduces to 2.1 in 2012.In 2013 it stood at only 1.13, In 2014 it was 0.23,and it stood(-1.47)with the average of 0.92, Which shows bad sign for the company.

PROFITABILITY RATIO

ANALYSIS OF OPERATING PROFIT RATIO

The operating profit ratio is a key indicator for investors and creditors to see how businesses are supporting their operations. If companies can make enough money from their operations to support the business, the company is usually considered more stable. A higher operating profit ratio is more favorable compared with a lower ratio because this shows that the company is making enough money from its ongoing operations to pay for its variable costs as well as its fixed costs.

The formula is **–Operating profit ratio = Operating Income/Net sales *100**

TABLE-6.OPERATING PROFIT RATIO OF ASHOKE LEYLAND AND TATAMOTOR (%)

YEAR	ASHOKE LEYLAND			TATAMOTOR		
	Operating profit	Net sales	Percentage	Operating profit	Net sales	Percentage
2011	1,213.69	11,177.11	10.85871	4,665.14	47,088.44	9.907187
2012	1,256.09	12,841.99	9.781116	4,177.55	54,306.56	7.692533
2013	876.47	12,481.20	7.022322	1,708.31	44,765.72	3.816112
2014	166.57	9,943.43	1.675176	-911.15	34,288.11	-2.65734
2015	1,026.63	13,562.18	7.569801	-1,237.48	36,294.74	-3.40953
Average			7.381425			3.069793

FIGURE-6

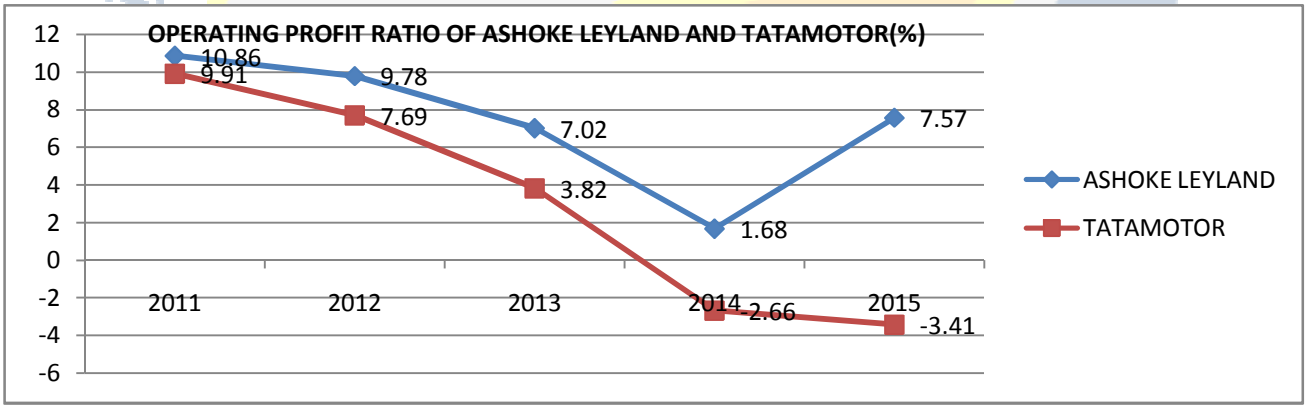

Source: Compile Personally from Dion Global Solutions Limited

FINDINGS-The table and bar chart shows that the operating profit ratio of Ashoke Leyland was 10.86% in 2011, 9.78% in 2012, 7.02 %in 2013, 1.68 %in 2014 and 7.57% in 2015. On the other hand the ratio of Tatamotor was 9.91% in 2011, 7.69 %in 2012, 3.82% in 2013, -2.66% in 2014 and -3.41% in 2015. It shows bad sign for the company.

ANALYSIS OF RETUDN ON CAPITAL EMPLOYED RATIO

Return on capital employed is a profitability ratio that measures how efficiently a company can generate profits from its capital employed by comparing net operating profit to capital employed. In other words, return on capital employed shows investors how many dollars in profits each dollar of capital employed generates. ROCE is a long-term profitability ratio because it shows how effectively assets are performing while taking into consideration long-term financing.

The formula is- **Return on Capital Employed ratio**=Operating profit/Capital Employed *100. **Capital Employed**=Total assets- Current Liabilities

TABLE-7.RETUDN ON CAPITAL EMPLOYED RATIO OF ASHOKE LEYLAND AND TATAMOTOR (%)

YEAR	ASHOKE LEYLAND			TATAMOTOR		
	Operating profit	Capital employed	Ratio	Operating profit	Capital employed	Ratio
2011	1,213.69	1,218.00	99.64614122	4,665.14	18,355.45	25.41555778
2012	1,256.09	474.38	264.7856149	4,177.55	10,333.07	40.42893351
2013	876.47	1,913.69	45.79999895	1,708.31	16,799.75	10.16866322
2014	166.57	2,837.66	5.869977376	-911.15	20,335.18	-4.480658642
2015	1,026.63	1,421.41	72.22616979	-1,237.48	22,638.36	-5.466297029
Average			**97.6655804**			**13.2132398**

FIGURE-7

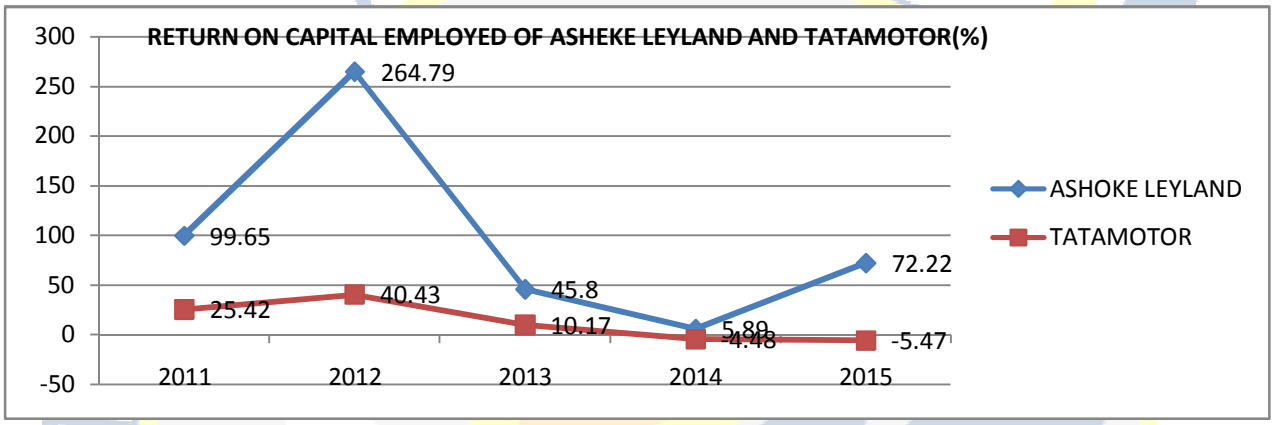

2011,0.4 in 2012, 0.1 in 2013, -0.04 in2014 and itstood at -0.05 in 2015.It shows a bad sign for the company.

ANALYSIS OF RETURNS ON INVESTMWNT

Return on investment (**ROI**) is performance measure used to evaluate the efficiency of investment. It compares the magnitude and timing of gains from investment directly to the magnitude and timing of investment costs. It is one of most commonly used approaches for evaluating the financial consequences of business investments, decisions, or actions. If an investment has a positive ROI and there are no other opportunities with a higher ROI, then the investment should be undertaken. A higher ROI means that investment gains compare favorably to investment costs. The formula is"- **Return on Investment** = Net profit after interest and tax / Total Assets

TABLE-8.RETURNS ON INVESTMWNT OF ASHOKE LEYLAND AND TATAMOTOR (%)

YEAR	**ASHOKE LEYLAND**			**TATAMOTOR**		
	Net profit	Total assets	Ratio	Net profit	Total assets	Ratio
2011	631.3	5,004.81	12.6138655	1,811.82	34627.3	5.232345577
2012	565.98	5,289.92	10.6992166	1,242.23	30613.89	4.057733271
2013	433.71	6,663.28	6.50895655	301.81	33380.22	0.904158211
2014	29.38	7,157.87	0.4104573	334.52	33669.31	0.993545754
2015	334.81	6,688.23	5.00595823	-4738.95	34920.69	-13.5706081
Average			**7.04769083**			**-0.47656507**

FIGURE-8

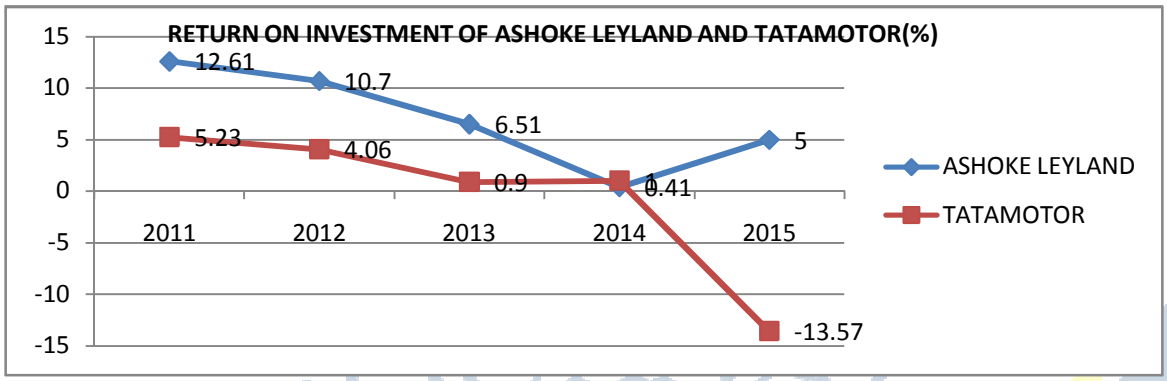

Source: Compile Personally from Dion Global Solutions Limited

FINDINGS-The above chart shows that the Return on Investment ratio of Ashoke Leyland was 12.61% in 2011,10.7% in 2012, 6.51% in 2013, 0.41% in 2014, and 5% in 2015. On the other hand the ratio of Tatamotor was 5.23% in 2011,4.06% in 2012, 0.9% in 2013, 1% in 2014 and it stood at -13.57% in 2015.It shows a bad sign for the company.

ANALYSIS OF EARNING PER SHARE

Earnings per share are the same as any profitability or market prospect ratio. Higher earnings per share are always better than a lower ratio because this means the company is more profitable and the Company has more profits to its shareholders. EPS simply shows the profitability of the firm on a per share basis. It is measured by dividing the net profit available to equity shareholders by number of Equity shares.

The formula is**:-Earnings Per share**= Net income after tax-Preferred stock dividend/ Average number of common Shares outstanding

TABLE-9.EARNING PER SHARE RATIO OF ASHOKE LEYLAND AND TATAMOTOR (%)

YEAR	ASHOKE LEYLAND			TATAMOTOR		
	Earnings per share	Facevalue per share	Percentage	Earnings per share	Facevalue per share	Percentage
2011	4.75	1	475	28.55	10	285.5
2012	2.13	1	213	3.91	2	195.5
2013	1.63	1	163	0.95	2	47.5
2014	0.11	1	11	1.04	2	52
2015	1.18	1	118	-14.72	2	-736
Average			**196**			**-31.1**

FIGURE-9

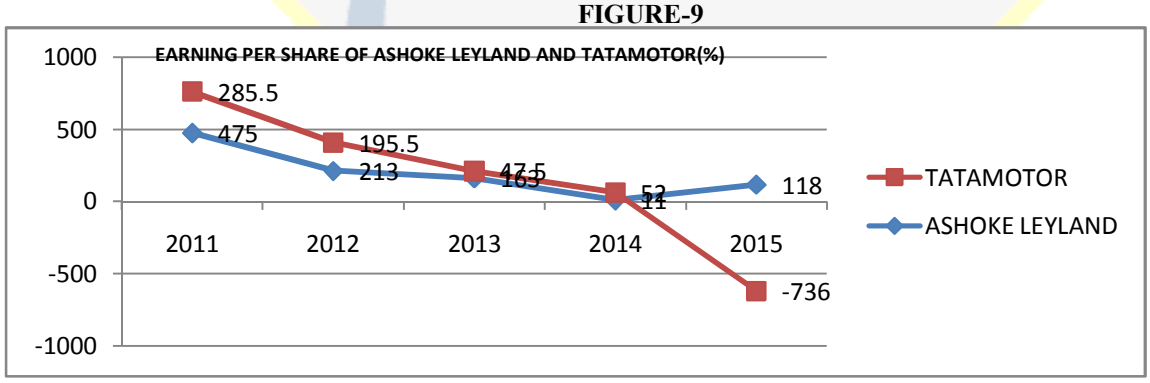

Source: Compile Personally from Dion Global Solutions Limited

FINDINGS:-The earning per share of Ashoke leylandwas 475% in 2011,213% in 2012,163% in 2013,11% in 2014 and 118% in 2015 on its Face value per share with the average of 196%. On other hand the EPS of Tatamotor was 285.5% in 2011,-195.5% in 2012, 47.5% in 2013, and 52% in 2014 and in 2015 it stood at (-736) %, with the average of (-31.1)%. It shows bad sign for the company.

CONCLUSION AND RECOMMENDATION

CONCLUSION:-

TABLE-10.SOLVENCY RATIOS AT A GLANCE OF ASHOKE LEYLAND AND TATAMOTOR

NAME OF RATIOS	ASHOKE LEYLAND	TATAMOTOR
Debt-Equity ratio	-	BETTER
Proprietary ratio	-	BETTER
Fixed assets to Proprietary ratio	BETTER	-
Debt to assets ratio	-	BETTER
Interest coverage ratios	BETTER	

1. After analyzing the Debt-Equity ratio of Ashoke leyland and Tatamotor, it shows that the ratio of Ashoke Leyland varies from 0.88 to 1.19 with the average of 0.93.On the other hand the ratio of Tatamotor varies from 0.56 to1.35 with the average of 0.83. Higher debt equity ratio means higher risky financial position of the company. From the comparative study it shows that the Long term solvency position of Tatamotor is better than Asoke Leyland.
2. From the Proprietary ratios of Ashoke leyland and Tatamotor, it is showing that the ratio of Ashoke Leyland varies from 0.45 to 0.61 with the average of 0.52.On the other hand the ratio of Tatamotor varies from 0.42 to 0.64 with the average of 0.56. Higher proprietary ratio indicates secure position to the creditors in the event of liquidation; a low proprietary ratio will include greater risk to the creditors. From the comparative study Long term solvency position of Tatamotor is better than Asoke Leyland
3. After analyzing the Fixed assets to proprietary' fund ratios of Ashoke leyland and Tatamotor, it shows that the ratio of Ashoke Leyland varies from 1.03 to 1.37 with the average of 1.23.On the other hand the ratio of Tatamotor varies from 0.67 to 1.06 with the average of 0.82. A high ratio indicates a relatively secure position to the proprietors in the event of liquidation; a low ratio will include greater risk to the proprietors. From the comparative study Long term solvency position of Asoke Leyland is better than Tatamotor
4. After observing the debt to total assets ratios of Ashoke leyland and Tatamotor, it is clear that the ratio of Ashoke Leyland varies from 0.38 to 0.45 with the average of 0.50.On the other hand the ratio of Tatamotor varies from 0.35 to 0.57 with the average of 0.44. lower ratio i.e. outsiders liabilities in the total capital of company the better is the long term solvency of the company. From the comparative study Long term solvency position of Tatamotor is better than Ashoke Leyland.
5. From the Interest coverage ratio of Ashoke leyland and Tatamotor, it is clear that the ratio of Ashoke Leyland varies from 0.79 to 5.24 with the average of 2.82.On the other hand the ratio of Tatamotor varies from (-1.47) to 2.59 with the average of 0.92. High ratio indicates a relatively secure position to the outsider's liability; a low ratio will include greater risk to the creditors. From the comparative study Long term solvency position of Ashoke leyland is better than Tatamotor.

TABLE-11.PROFITABILITY RATIOS AT A GLANCE OF ASHOKE LEYLAND AND TATAMOTOR

NAME OF RATIOS	ASHOKE LEYLAND	TATAMOTOR
Operating profit ratio	BETTER	-
Return on capital employed ratio	BETTER	-
Return on investment	BETTER	-
Earnings per share ratio	BETTER	-

1) After analyzing the operating profit ratio of Ashoke leyland and Tatamotor, it is clear that the ratio of Ashoke Leyland varies from 1.68% to 10.86 % with the average of 7.38%.On the other hand the ratio of Tatamotor varies from (-3.41)% to 9.90% with the average of 3.07%. From the comparative study, it is clear that the Operating Profit ratio of Ashoke leyland is better than Tatamotor
2) From the return on capital employed ratio of Ashoke leyland and Tatamotor, it is clear that the ratio of Ashoke Leyland varies from 5.89% to 264.79 % with the average of 97.67%.On the other hand the ratio of Tatamotor varies from (-4.48)% to 40.43% with the average of 13.217%. From the comparative study, it is to be said that the return on capital employed ratio of Ashoke leyland is better than Tatamotor.
3) After analyzing the return on investment ratio of Ashoke leyland and Tatamotor, it is clear that the ratio of Ashoke Leyland varies from 0.41% to 12.61 % with the average of 7.05%.On the other hand the ratio of Tatamotor varies from (-13.57)% to 5.23% with the average of (-0.48)%. From the comparative study, it shows that the return on investment ratio of Ashoke leyland is better than Tatamotor.
4) After studying the earnings per share ratio of Ashoke leyland and Tatamotor, it is clear that the ratio of Ashoke Leyland varies from 11% to 475 % on the face value per share with the average of 196%.On the other hand the ratio of Tatamotor varies from (-736)% to 285.5% with the average of (-31.1)%%. From the comparative study, it shows that the return on investment ratio of Ashoke leyland is be tter than Tatamotor.

From the overall observation, it is clear that the solvency ratio of Ashoke Leyland is lower than the solvency ratio of Tatamotor. But the Profitable ratio of Ashoke Leyland is greater than the profitable ratio of Tatamotor. <u>So, it is concluded that the lower a company's solvency ratio, the greater is the probability that the company will default on its debt obligations.</u>

RECOMMENDATION:-

1. The best combination of debt and equity of both the company has to be mixed, spatially Tatmotor.
2. Interest payable ability of Tatamotor has to be increased.
3. Miscellaneous expenses of both the company has to be controlled.

REFERACES

Books:

1) *Banerjee, B. (2002**). Financial Policy and Management Accounting**. Kolkata:The World Press Private Limited.*
2) *Banerjee, D. (2002). **Modern Accounting Theory and Management Accounting.** Kolkata: Book Syndicate Private Limited.*
3) Chaudhari S.B. (1964) in book " Analysis **of company financial statement on published through Asia publishing House**, London Deeply
4) *Chandra, P. (2011). **Financial Management Theory and Practice**. New Delhi: Tata McGraw Hill Education Private Limited.*
5) *Marimuthu, K. (2012**). Financial Performance of Textile Industry: A Study on Listed Companies of Tamil Nadu.***
6) *N Arora (2010), "**Accounting for Management**", Himalaya Publishing House, Mumbai Dr.Priti R Majhi &*
7) *Dr Prafull K Khatua (2011), "**Business Research Methods**", Himalaya Publishing House, Mumbai.*
8) *Sahu, R. K. (2002). **A simplified model for liquidity analysis of paper companies. The Management Accountancy.***
9) *Tamari,M (1978), **Financial Ratio Analysis and Prediction**. London. Paul Elak Ltd.*
10) *Dr.T.Ramasamy (2011), "**Management Accounting**", Gold books publishing House, Srivilliputtur.*
11) *Van Horn,J.c.**, Financial management and Policy**,12th ed., Prantic hall of India, New Delhi,2002. P.255-257.*

Journals:

1) ***Asia Pacific Journal of Marketing & Management Review*** **ISSN 2319-2836 Vol.2 (6), June (2013)**
2) *Global Journal of Management and Business Studies.* ***Analysis of Solvency of Selected FMCGCompanies in India****ISSN 2248-9878 Volume 3, Number 4 (2013),*
3) ***International journal of research in commerce & Management Volume No.3(2012),Issue No.10 (October),ISSN0976-2183***
4) *International Journal of Business and Management Research* ***Comparative Analysis of Financial Perfomace of Indian Farmer Fertilizer Cooperative Ltd. (IFFCO)*** *" VSRD, Vol. 3 No. 6 June 2013 / 217 e-ISSN : 2231-248X,.*

Websites:

1) www.moneycontrol.com
2) www.anualreportof ashokeleyland
3) www.anualreportof tatamotor
4) www.investopedia

Gurukul International Multidisciplinary Research Journal (GIMRJ)
with
International Impact Factor 2.254

ISSN No. 2394-8426
Dec – 2015
Issue – I, Volume – V
Online Journal

The Role Of Libraries In Aquiring Excellence For The Students In Schools

Smt. Nagaratna S
Research Scholar
Dept.Of Education
Gulabarga University Gulbarga

Abstract

In schools libraries have moved from being the location for search, access and advice to playing a much smaller role within a much larger information landscape. The relationship between student and library has become more distant. The library finds itself needing to understand the behaviors and expectations of students .In future libraries engaging vital role in molding students personality. This paper highlights the role of the school library, the importance of school library in the school, the school library is the future of school. Therefore the paper analysis that schools fail to fulfill their potential of school libraries. Hence to enhance the future of school, school libraries are very important in developing the school future.

INTRODUCTION:

Libraries are playing a vital role by providing the information required by the students for their studies. The libraries offer various types of services to the students and spread the knowledge. Libraries are greatly challenged in satisfying students needs and help the students become the best they can be, by addressing students to read and thus create the habit of reading and stimulate the thirst for more and more knowledge. But for the libraries there would be no authors, no poet, and no thinkers. The libraries thus help in the advancement of learning and expansion of knowledge. There are many kinds of libraries like personal, public and institutional.

An institutional library is one which belongs to an institution such as a university, a college, a club, a governmental department and a school.

SCHOOL LIBRARY:"The school library provides information and ideas that are fundamental to functioning successfully in today's information and knowledge-based society. The school library equips students with life-long learning skills and develops the imagination enabling them to live as responsible citizens".

Many school libraries are known as "learning resource centers" or "open learning centers". The school library is the heart of a school, which itself has learning at its core and good libraries can empower the learner.

"Learner- oriented laboratories which support, extend, and individualize the school's curriculum……..A school library serves as the center and coordinating agency for all material used in the school".

THE ROLE OF THE SCHOOL LIBRARY:

- To take a lead role in teaching and learning information literacy across the curriculum.
- To collaborate with teaching colleagues to embed information literacy across the curriculum.
- To provide targeted teaching for pupils and inset for staff.
- To provide an environment suitable for group and indent research.
- To provide a wide range of resources.
- To provide opportunities to browse and discover.
- To stimulate independent learning.

THE IMPORTANCE OF SCHOOL LIBRARY IN THE SCHOOL:

- Through using school library students develop questioning skills and enhance creativity for more in-depth information and become active seekers and users of information.
- If students refer library regularly it supports for their inquiry learning.
- By utilizing library, students can become competent constructors of knowledge. And its resources helps to solve the problems and to develop an understanding of the world and world's beyond their immediate experiences.
- In learners its develops effective skills based on careful choices of information. students and educators learn to discriminate useful and valid information relevant to their task.
- The school library includes a wide range of genre, text types and different media, books,magazines,news papers and online resources.
- Students will use a variety of media in the library. They select best media for their context and message while sharing teaching and learning with their peers and teachers.
- The collection of books in the library its environment reflects awareness and empathy with a variety of culture and languages for both teachers and students.
- The library provides levelled learning goals in students and empower them to step up to take the lead or to work as in a group with others.
- The school library is the place where students go for wonderings for model excellences and encouraging high levels of engagement with learning.

- Libraries are founded on the principle of equity. School library aims to give every student the opportunity to learn, to enjoy reading, to creating new knowledge and understanding.
- Library staff should be model integrity through their day-to-day interactions with students and staff.
- School library is a welcoming place for the whole school community.

THE SCHOOL LIBRARY IS THE FUTURE OF SCHOOL:

Libraries are vital resources for school pupils and educators to grow as responsible citizens who make an effective contribution to society. Hence school library changes the future of school. The following features are essential to school for bright future.

SOCIAL INCLUSION:

School libraries aims to help people feel valued and provide opportunities to participate in their community. It connects with local communities, work mates, family and friends to build relationships by networks, and addressing isolation and promoting social inclusion.

CREATIVITY:

School libraries offer an ideal environment for fostering discovery and innovation, acting as "inquiry learning labs" to foster curiosity, exploration and creative thinking or learning play grounds.

Creativity can lead to Innovation can lead to Entrepreneurship

Scope of novelty Role in ensuring adoption

PERSONALITY:

School libraries mould pupils personality. By library pupils develop responsible personality, creativity, enthusiasm, innovation, evoking, self-learning.

VIRTUALITY:

The essence of school library is very important because students future depends upon the virtuality vise versa school future becomes excellent.

CONCLUSION:

The school libraries offer knowledge and information to the pupils and teachers through books, and to encourage a life-long love of reading for education, enlightenment or entertainment. The school library is the power house of school, Nowadays schools seems to be failing to play a full and active part in raising and creating an innate love of reading. School libraries becomes more essential for pupils of all ages to be able to access and make sense of the information they need to

help themselves in educational success and the ability to participate in society. This paper analysis that schools fail to fulfill their potential of school libraries .Hence to enhance the future of school, School libraries are very important in developing the school's future.

REFERANCES:

Morris.(2004).Administering the school library media center.Westport,CT:Libraries Unlimited.(p.32).

American Association of school librarians and Association for Educational communications and technology.(1998).

The British Library and E-Learning-Lynne Brindley.(2005).IFLA Journal.

School libraries making a difference-school library association.www.Google.com

Smith.(2002):
"Building student learning through school libraries."-
http://www.imls.gov/news/events/whitehouse3.shtm

Lonsdale,M.(2003).Impact of school libraries on student achievement: A review of the research.Camberwell,Victoria,Australia.

Gurukul International Multidisciplinary Research Journal (GIMRJ)
with
International Impact Factor 2.254

ISSN No. 2394-8426
Dec – 2015
Issue – I, Volume – V
Online Journal

महाराष्ट्रातील प्रादेशिक असमतोल : कारणे व उपाय

REGIONAL IMBALANCE IN MAHARASTRA : CAUSES & SUGGESTIONS

प्रा. डॉ. एच. एम. कामडी
विभाग प्रमुख, वाणिज्य विभाग
आदर्श कला व वाणिज्य महाविद्यालय, देसाईगंज (वडसा)

सारांश :

महाराष्ट्र राज्य पुरोगामी प्रगतीशील आणि पुढारलेले असे वारंवार सांगीतले जात असले तरी 'दिव्याखाली अंधार' अशी स्थिती निर्माण झाली आहे. राज्य सरकारच्या निर्देशानुसार आजच्या महाराष्ट्राची प्रगती कुठवर आली आहे याचा अंदाज घेण्यासाठी 25 जणांची अभ्यास समिती नेमली आहे. की आकडेवारीच्याद्वारे अशी साद घालण्याची गजर निर्माण झाली आहे. त्या समितीच्या निरीक्षणानुसार राज्यातील 10 जिल्हयातील 55. 5 टक्के जनता दारीद्रय रेषेखाली जिवन कंठते आहे. राज्याची हीच सरासरी 35.7 टक्के आहे. नांदेड, जालना, वाशिम आणि गडचिरोली हे चार जिल्हे तर अतिमागास म्हणुन नोंदविले आहेत. यासाठी दरडोई उत्पन्नाचा निकष लावण्यात आला आहे. महाराष्ट्रात सरासरी दरडोई उत्पन्न 54,867/– रुपये आहे. दहा मागास जिल्हयाचे दरडोई उत्पन्न 23,030 रुपयांपर्यंतचा आहे. मुंबई, पुणे, ठाणे, नाशिक, रायगड, कोल्हापूर आदी प्रगत जिल्यांचे दरडोई सरासरीपेक्षा अधिक आहे. त्याच वेळी मागास जिल्हयाच्या उत्पन्नापेक्षा दुप्पट–तिप्पट आहे. एका अर्थाने हे महाराष्ट्राचे दुभंगलेपण आहे. वेगवेगळया विभागाचा मराठी माणसांचा, मराठी बोलणाऱ्यांचा, महाराष्ट्र राज्याचा आग्रह धरतांना त्यांच्या समतोल सर्वांगीण विकासाच्या आणाभाका घेतल्या होत्या. आजचे चित्र तसे अजिबात नाही, हे स्पष्ट दिसत आहे. विशेषकरुन खानदेश, विदर्भ आणि मराठवाडयातील बहुसंख्य जिल्हे मागास आहेत. हा अभ्यासदेखिल नवा नाही. डॉ.वि.म.दांडेकर यांच्या अध्यक्षतेखाली महाराष्ट्राच्या विकासातील प्रादेशिक असमतोल शोधण्यासाठी समिती नियुक्त केली होती. समतोल साधण्यासाठी वैधानिक विकास मंडळे सुध्दा स्थापन केली गेली. त्यातुन मागास भागांचे मागासलेपण संपले नाही. उलट ते वाढतेच आहे. हेच नव्या माहिती नुसार स्पष्ट होत आहे.

बीज शब्द :

पुरोगामी, चळवळ, मानवी संस्कृती, दांडेकर समिती, महाराष्ट्र

प्रस्तावना :

भारताच्या स्वातंत्र्यानंतर भाषेप्रमाणे प्रांत निर्मिले जात होते. परंतू भारत सरकारने मुंबईसह महाराष्ट्र निर्मितीसह महाराष्ट्र राज्य निर्मितीस नकार दिला. केंद्राच्या या पवित्र्यावरुन मराठी जनात क्षोभ उसळला. अखेर 105 जनांच्या बलीदानानंतर 1 मे 1960 ला महाराष्ट्राचे सध्याचे प्रमुख भौगोलीक विभाग कोकण, मराठवाडा, पश्चिम महाराष्ट्र, दक्षिण महाराष्ट्र, उत्तर महाराष्ट्र, विदर्भ एकत्र करुन सध्याच्या मराठी भाषिक महाराष्ट्राची रचना करण्यात आली. एकोणविसाव्या शतकापासुन विविध मराठी राजकीय नेते सामाजिक कार्यकर्त्यांनी व समाजाने सामाजिक उत्क्रांती आणि राजकीय स्वातंत्र्याकरीता मोठया प्रमाणावर मोलाचे योगदान केले. 1960 च्या दशकातील संयुक्त महाराष्ट्र चळवळीने महाराष्ट्राच्या विविध भौगोलीक भागास एकत्र आणले. स्वातंत्र्योत्तर काळात राजकीयदृष्टया अशा सहकारी चळवळी आणि राजकीय समिकरणात पश्चिम महाराष्ट्र अग्रणी राहीला.

स्वतंत्र भारतात मराठी भाषिकांचे राज्य स्थापन करण्यासाठी संयुक्त महाराष्ट्र चळवळ हा लढा उभारला गेला. या चळवळीमुळे 1 मे 1960 रोजी महाराष्ट्र राज्य अस्तित्वात आले. महाराष्ट्र राज्यात मराठी भाषा बोलणारे मुंबई, कोकण, देश विदर्भ, मराठवाडा, खानदेश व अजुनही महाराष्ट्राबाहेर असलेले जग बेळगांव, निपाणी, कारवार व बिदर हे भाग अभिप्रेत होते. साहित्यीक सांस्कृतिक वैचारीक, राजकीय या सर्व अंगांनी ही चळवळ उभी राहीली.

प्राचिन इतिहासात विदर्भाला गौरवशाली स्थान आहे. मानवी संस्कृतिचे आदयस्थान म्हणुन सुध्दा विदर्भाचा मान आहे. प्राचिन इतिहासात विदर्भ देश म्हणुन सुध्दा उल्लेख आहे. विदर्भाचा अर्थ म्हणजे नागपूर, वर्धा, चंद्रपूर, गडचिरोली, भंडारा, गोंदीया, अमरावती, अकोला, बुलढाणा,

यवतमाळ, वाशिम असे 11 जिल्हे होते. विदर्भाच्या पाठीशी मोठी सामाजिक व ऐतिहासिक पार्श्वभूमी आहे. पेशवाईच्या काळात विदर्भाला स्वतंत्र राज्याचा दर्जा देण्याचा प्रयत्न नागपूरच्या भोसले राज्याने केला. इंग्रजांनी भोसल्यांचे राज्य खालसा केल्यानंतर विदर्भ हिंदी भाषिक भागाला जोडण्यात आला. आणि नागपूर राजधानी असलेल्या सी. पी. ॲंड बेरार प्रांत अस्तित्वात आला. त्यामुळे विदर्भाच्या एकुन राज्यव्यवस्थेला अनन्यसाधारण महत्व प्राप्त झाले आहे. महाराष्ट्राचे एकुण क्षेत्रफळ 3,07,762 चौ. किमी. असून विदर्भाचे एकुन क्षेत्रफळ 97,537 चौ. किमी. आहे. महाराष्ट्राची लोकसंख्या 2011 च्या शिरगणतीनुसार 11 कोटी 23 लक्ष एवढी आहे.

महाराष्ट्र शासनाच्या भेदभावपूर्ण वागणूकीमुळे प्रत्येक क्षेत्रामध्ये विकासाचा अनुशेष निर्माण झाला आहे. याचा सर्वात जास्त परिणाम विदर्भातील शेतकऱ्यांवर निर्माण झाला असून शेतकऱ्यांची सामाजिक व आर्थिक स्थिती दिवसेंदिवस खालावत चालली असून त्याचे पर्यावसण शेतकऱ्याच्या आत्महत्येत होत आहेत. त्यासाठी महाराष्ट्र शासनाने विदर्भातील शेतकऱ्यांचे प्रश्न सोडविण्यासाठी लक्ष देणे अत्यावश्यक आहे.

जेव्हा मागास भागास वगळून केवळ काही भागातच उद्योगाची संख्या केंद्रीत होते तेव्हा विकासातील प्रादेशिक समतोल निर्माण होतो. उदा. भारतात बिहारमधील आर्थीक विकास पंजाबच्या मानाने कमी तर महाराष्ट्रात पश्चिम महाराष्ट्राच्या तुलनेत मराठवाडा, विदर्भ आणि कोकण मागसलेले आहेत. या असमतोलामुळे बऱ्याच आर्थीक समस्या निर्माण होवून आर्थीक विकासाला अडथळा होत असतो. अशावेळी ग्रामीण आणि मागास भागात सार्वजनिक क्षेत्र, पाणीपुरवठा, वाहतूक, दळणवळण इत्यादी सोयी उपलब्ध करुन देते. अशारितीने मागासभागात उद्योगाची निर्मीती करुन सार्वजनिक क्षेत्र विकासातील असमतोल दुर करते.

प्रादेशिक विकासातील असमतोलासंदर्भात राज्यपालांनी 27 मे 2009 आणि 19 मार्च 2010 रोजी सरकारला निर्देश दिले होते. त्यानुसार समतोल प्रादेशिक विकासाच्या समस्यांचा आढावा घेण्यासाठी शासनाने एक समिती स्थापन केली. 13 व्या वित्त आयोगाचे अध्यक्ष डॉ. विजय केळकर यांचे अध्यक्षतेखाली 14 सदस्यांची समिती अनूशेषाचा आढावा घेण्यासाठी स्थापन करण्यात आली.

अनूशेष समितीचे कार्यक्षेत्र :–

- प्रादेशिक असमतोलाचा आढावा घेणे.
- विकासाचा असमतोल दूर करण्यासाठी उपाययोजना सुचविणे.
- अनूशेषाबाबत विकास निधीच्या वितरणाचे सुत्र ठरविणे.
- भविष्यात पुन्हा असमतोल निर्माण होवू नये यासाठी उपाय सुचविणे.
- वैज्ञानिक विकास मंडळाच्या भूमिकेचा आढावा घेणे आणि सुचना करणे.
- विभागीय असतमोलाचा अंदाज येण्यासाठी निर्देशांक निश्चित करणे
- निर्देशकांच्या सहाय्याने राज्याच्या सरासरी विकासाचा असमतोल निश्चित करणे.
- असमतोलाचे मापदंड आणि निष्कर्ष ठरवितांना राज्य शासनाची थेट गुंतवणूक खर्च, खाजगी क्षेत्रातील गुंतवणूक यांचा विचार करणे.

15 टक्के विकसीत भागासाठी 15 टक्के निधी दयावा आणि अविकसीत भागांसाठी 85 टक्के निधी दयावा अशी शिफारस दांडेकर समितीने केली होती. पण शिफारशींच्या अगदी उलट म्हणजेच पुन्हा विकसीत भागासाठी 85 टक्के निधी वळविल्यामुळे अनूशेष कमी होण्याऐवजी वाढत गेली आहे.

1984 मधील अनूशष –

विभाग	अनूशेष (रु. कोटीमध्ये)	अनूशेषाची टक्केवारी
विदर्भ	1246.55	39.12
मराठवाडा	750.85	23.56
उर्वरित महाराष्ट्र	1989.38	37.32
एकुन अनूशेष	3186.77	100.00

1984 च्या मानव विकास निर्देशांकानूसार विदर्भाचा अनूशेष केवळ 1246.55 कोटी रुपयांचा होता, पण हा अनूशेष भरुन निघण्याऐवजी वाढतच गेला.

1994 मधील अनूशेष –

विभाग	अनूशेष (रु. कोटीमध्ये)	अनूशेषाची टक्केवारी
विदर्भ	6624.02	47.29
मराठवाडा	4004.55	28.59
उर्वरित महाराष्ट्र	3378.20	24.11
एकुन अनूशेष	14006.77	100.00

1994 च्या मानव विकास निर्देशांकानूसार विदर्भाचा अनुशेष केवळ 1246.55 काटी रुपयांचा होता, पण हा अनुशेष भरुन निघण्याऐवजी वाढतच गेला. 1994 च्या मानव विकास निर्देशांकानुसार विदर्भाचा अनुशेष 6624.02 पर्यंत गेला आहे आणि अजुनही तो वाढतच आहे.

सद्याचा अनुशेष :–

माजी आमदार प्रा.बी.टी.देशमुख यांनी सिंचनाच्या अनूशेषावर अनेकवेळ विधानसभेमध्ये सरकारला प्रश्न विचारले आहेत. सिंचनाच्या बाबतीत राज्याची आकडेवारी लक्षात घेतली असता असे लक्षात येते की 18 हजार 889 कोटी रुपये संपूर्ण महाराष्ट्राचा अनूशेष आहे. त्यात विदर्भाचा 10 हजार 32 कोटी रुपयाचा अनूशेष बाकी आहे. विदर्भातील सिंचनाचा अनूशेष वाढत असतांनाच वन विभागाच्या अडथळयामुळे अनेक सिंचन प्रकल्प रखडले आहेत. तर अनेक प्रकल्प पुरेसा निधी उपलब्ध न करुन दिल्यामुळे अनेक वर्षापासून रखडले आहेत. विदर्भातील किमान 7.83 लाख हेक्टर क्षेत्र सिंचनापासून अजूनही वंचित राहीले आहे.

संशोधनाची पध्दती :

हा संशोधन लेख दुययम स्वरूपाच्या माहितीवर आधारित आहे. या लेखासाठी माहिती सांख्यिकी विभागामार्फत प्रकाशित करण्यात येणाऱ्या पुस्तिका, विविध जर्नल, मॅगेझिन, विविध समित्यांचे अहवाल, संशोधन लेख, प्रकाशित पुस्तके, वेबसाईटस् इत्यादि मधून घेण्यात आली आहे.

विदर्भाच्या विकासातील असमतोलाची कारणे –

- विदर्भातील खनिज संपत्तीच्या नियोजनाची उदासिनता.
- विदर्भातील सिचंनाकडे दुर्लक्ष.
- रस्ते व इतर पायाभूत सोयींकडे दुर्लक्ष.
- पाणलोट क्षेत्र व कुपनलिकेबाबत सापत्न वागणूक.
- उद्योगाच्या उभारणीबाबत अन्यायपूर्ण वागणूक.
- मृदू संधारणाबाबत सरकारचे उपेक्षित धोरण.
- शिक्षणाच्या सोयींबाबत सापत्न वागणूक.
- झुडपी जंगलाच्या प्रश्नाकडे दुर्लक्ष.

विदर्भाच्या संतुलित विकासासाठी उपाययोजना –

- खनिज संपत्तीच्या पूर्ण उपयोगासाठी नियोजन करणे.

- नदयांवर बंधारे बांधण्याचे धोरण ठरविणे.
- रखडलेल्या सिंचन प्रकल्पांना पुरेशा प्रमाणात निधी उपलब्ध करुन देणे.
- वनकायदयामूळे अडकलेल्या सिंचन प्रकल्पांना वनकायदयातून सुट देणे.
- वनावर आधारित उद्योगांचा विकास करणे.
- सिंचनाच्या सायींचा विकास करणे.
- पाणलोट व कुपनलिका विकास कार्यक्रम राबविणे.
- शेतकऱ्यांना बिनव्याजी कर्जपुरवठा करणे.
- औद्योगिक विकास कार्यक्रम राबविणे.
- विजेचा न्याय्य वाटप करणे.
- पक्के रस्ते निर्माण करणे.
- झुडपी जंगलाचा प्रश्न सोडविणे.
- वैद्यकिय, अभियांत्रीकी व व्यवसायाभिमूख शिक्षणाच्या सोयी उपलब्ध करुन देणे.

निष्कर्ष :–

विदर्भामध्ये मोठया नदयांची उणीव नाही. वैनगंगा, वेणा, इंद्रावती, पर्लकोटा, पैनगंगा, कन्हान, खाडकपूर्णा, बेंबाडा, पेंच, वर्धा इ. बारमाही वाहणाऱ्या मोठया नदया आहेत. विदर्भामध्ये प्रामुख्याने जी खनिजे आढळतात त्यामध्ये कोळसा, मॅगनिज, चुनखडी, डोलोमाईट, सिलिका हे प्रमुख खनिजे होत. याशिवाय कच्चे लोखंड, तांबे इमारती दगळ, वाळू इत्यादी खनिजेही मोठया प्रमाणात सापडतात. महाराष्ट्रातील एकुण जगंलापैकी 80 टक्के जगंले विदर्भात आहेत. महाराष्ट्र राज्यात हे प्रमाण 21 टक्के आहे. विदर्भातील अनूशेषात दिवसेंदिवस वाढच होत आहे. तंज्ञाच्या समितीद्वारे शोधून काढलेल्या आकडयांपेक्षा कितीतरी पटीने अधिक कोटी रुपयांचा विदर्भाचा अनूशेष आहे. राज्यातील एक तृतियांश जनता दारिद्रय रेषेखाली राहाते. आणि एक तृतियांश जिल्हयातील निम्मी जनता याच अवस्थेत आहे. यावर उपाय करण्यास महाराष्ट्र सरकारला पूर्णताः अपयश आलेले आहे. मुंबई, ठाणे, रायगड, नाशिक, पुणे या परिसरात विकासाचे केंद्रिकरण झाल्याने, या विभागाचे नागरीकरणही वाढले आहे. विदर्भातीत अंतर्गत स्तलांतरही मोठी आहे. त्यात हंगामी स्तलांतरही आहे. पोट भरण्यासाठी रोजगाराच्या शोधात येणाऱ्या परप्रांतियाची चर्चा होते; मात्र अतिदारिद्रयामुळे राज्यांतर्गत होणाऱ्या स्थलांतराकडे दुर्लक्ष होते. विदर्भातील बहुतांश शेती कोरडवाहू आहे, अतिरिक्त उत्पन्नाची इतर साधने नाहीत, त्यामुळे गंतवणूक नाही, उद्योगधंदे नाहीत, राजेगार नहीत. उत्पन्नाचे सर्वच मार्ग खुंटलेल्या या भागासाठी खास प्रयत्न करण्याची गरज आपल्या राज्यकर्त्यांना वाटू नये ही शोकांतीका आहे. त्यामुळे प्रादेशिक असमतोल दूर झालाच नाही.

संदर्भग्रंथ –

1. भारतातील अर्थव्यवस्था विकास, पर्यावरणात्मक अर्थशास्त्र – डॉ.जी.एन. झामरे
2. महाराष्ट्र वार्षिक – 2012
3. India – 2012
4. योजना मासिक
5. ई सकाळ
6- संकेतस्थळे

Gurukul International Multidisciplinary Research Journal (GIMRJ)
with
International Impact Factor 2.254

ISSN No. 2394-8426
Dec – 2015
Issue – I, Volume – V
Online Journal

The Role of ICT in Changing Paradigms in Distance Education

Ms.Rashmi Rekha Devi
Assistant Professor, Assam
Assam Women's University

Abstract

There have been tremendous progress in educational technology and teachers have been using various tremendous tools to make their teaching effective but "How do we *reach* our students?" is the basic question before all teachers. Today's world is a digital world and teachers use teaching strategies of the analogue classroom. Information and Communication Technology (ICT) is playing a vital role in Open and Distance Learning (ODL) to meet the requirements and expectations of the learners' in large scale. It is difficult to perform the same using any traditional institutional system due to its limited resources. Indira Gandhi National Open University (IGNOU) is the world's largest distance learning University. So, as a leading country in distance education it should be our sincere effort to find out ways to make distance learning more effective and learner friendly. In Open and Distance Learning technology comes as blessings to reach the unreached. This paper focuses on various components of ICT which can be used in teaching learning process in distance learning programme. ICT has changed the face of distance education with the help of E-learning, CDs, DVD lectures, Chat sessions, Virtual classroom and Video conferencing. EDUSAT and Whiteboard lessons provide teachers with a way to broaden their deliver of subject matter. The paper also presents the advantages and challenges of ICT in distance mode, security issues of a service in terms of its availability, authenticity, confidentiality and access control so that one can ensure a service to the utmost satisfaction of a learner in open distance learning system.

Introduction:

"***In acquiring new productive forces men change their mode of production, and in changing their mode of production they change their way of living – they change all social relations.***"

…… Karl Marks

Information and Communication technology is one of the fastest growing areas where change is a rule rather than an exception. Application of ICT in the educational field is a rapidly evolving scenario and knowledge of ICT and its applicability in education has now become a pre-requisite qualification of all teachers, educational administrators and all those involved in the field of education. Advances in information and communication technology have created unprecedented opportunities in the field of distance education, and have had a profound effect on the way teachers teach and how learners learn. Mastering ICT skills and utilizing ICT towards creating an improved teaching and learning environment is of utmost importance to teachers in creating a new learning culture. ICT applications are becoming indispensable parts of

contemporary culture, spreading across the globe through distance education. Technology integration plays a crucial role to meet the demands of distance students.

Changing paradigms in Distance Learning:

In distance learning system, learners are remote to the institution and are in large scale. It is difficult for a learner to visit the institution every day to get a service/support as available in a conventional system and at same time, it is even difficult to the institution itself to provide various services to the learners at different phases of a student learning life cycle, due to limited human resource available. Information and Communication Technology (ICT) is a prime resource to overcome such limitations.

Distance education did not challenge or change the structure of higher learning, but was more of a movement to extend the traditional university, a movement to overcome its generic problems of scarcity and exclusivity. ICT is transforming this traditional 'university of convocation' to become the 'university of convergence'. The fact is that distance is becoming less a key descriptor for courses or students. Perhaps flexible learning, distributed learning or networked learning will become more accurate descriptors. According to Hall (1996) "Networked learning describes the grouping availability of aids or alternatives that allow a student to review, speed up or substitute some or all of what normally occurs in a classroom lecture through electronic links. Through applications of technology, possession, scarcity and exclusivity, the characteristics of convocation are replaced by wide access, multiplicity and replicability of resources. Convergence replaces convocation as the organizing concept of the institution providing education. Thus technology is bringing about a fundamental change in the very structure of higher education.

On the other side, the traditional form of open and distance (based on print, audio and video, telephone, mail etc.) would also continue in countries which have not extended deep into the information superhighway. If we look into the history of media, no medium has ever been totally supplanted by another. Television did not kill the cinema and newspapers (Latchem, 1997). Multiple-media is probably what would prevail all over the world and learners would choose what is best for them. Just as governments, telecommunication providers and industry would share a common vision and understanding of the national and global needs. So what is now will also be then but the proportions would vary.

The impact of ICT in today's classroom can be better understood through the below cartoons:

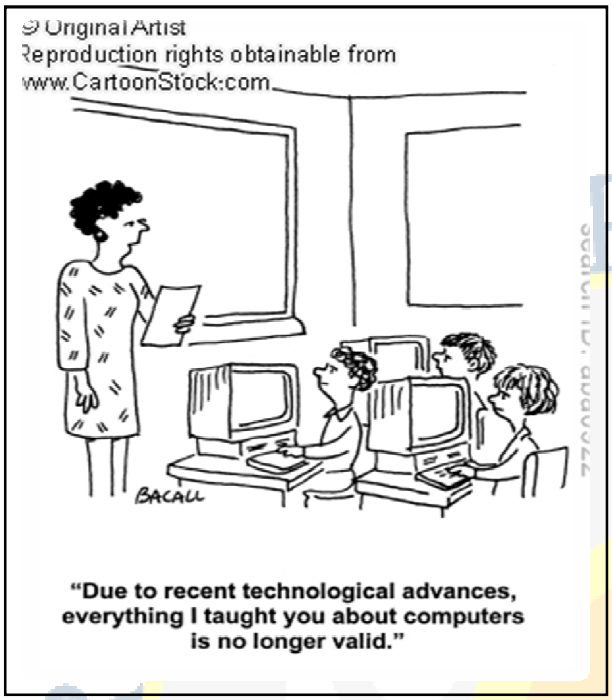

Various components of ICT as used in Open and Distance Learning:

Information and Communication Technology (ICT) is playing a vital role in open and distance learning (ODL) to meet the needs and expectation of the learners' in large scale. The main persistence of ICT in education means employing of ICT equipment and tools in teaching and learning process as a media and methodology. The purpose of ICT in education is generally to make students acquainted with the use and workings of computers, and linked social and ethical issues. Due to assorted requirements in open and distance learning for a Virtual Classroom, there are opportunities and challenges that are to be addressed in usage of the technology and the service(s) being provided through ICT.

ICT applications are becoming indispensable parts of contemporary culture, spreading across the globe through general and vocational education. At the same time, more countries have a chance to take leading roles in the new information or knowledge society. Considering this background, we need to know the various components of ICT as used in distance education.

1. E-Learning CDs

E-Learning is an approach to facilitate and enhance learning by means of personal computers, CD-ROMs, and/or the Internet. The e-learning methodology is an interactive form of learning and helps to bridge the gap between classroom – based learning and distance learning. E-learning helps to enhance the understanding of key topics through examples, scenarios, interactivity, etc. This helps students to understand the subject matter through application and real life examples. It also helps students to view the content on their computer without any internet connectivity. Thus, E-learning CDs play a vital role in teaching learning process and it is one of the important tools of ICT.

2. Pre recorded DVD Lectures

Students can enhance their understanding of key concepts by viewing prerecorded lectures from expert faculty based on the curricula. These DVD lectures provide an asynchronous, yet effective form of learning. These lectures are in an easy to use interface offering faculty notes and reference links along with the actual lecture. For running of the Pre Recorded DVD Lectures students require a computer, DVD-ROM Drive and any version of Windows.

3. Chat Sessions

Chat sessions allow all participants to see and participate in the same live group discussion. Most chat software allows private messaging between two or more participants. Chat

sessions support several instructional activities but are not widely used. The live element in chat sessions creates a sense of immediacy. The sessions help participants to develop connection with the instructor. An illusion of shared physical space is common among the participants.

4. Virtual Classroom

A lot of significant changes have taken place in the educational field due to growing popularity and access to the internet. It is very much essential that an educational institute makes utmost use of '*e-facilities'* for making the teaching learning process more effective. One of the important e-facilities is *Virtual Classroom* and radical transformation can be brought in teaching learning process with the help of virtual classroom. Virtual Class is a simulated classroom via Internet, which provides a convenient communication environment for learners. A virtual class aspires to provide a learning experience that is similar to a real classroom, where the learner can get his doubts clarified by asking questions in live sessions by sitting at his convenient place. A virtual classroom is an online learning environment that contains all course materials. The conception of the virtual classroom has made it possible for learners to tackle the features of the Internet to create meaningful and constructivist learning environments.

5. Video Conferencing

Video Conferencing plays a vital role in teaching learning process, especially in distance education. The most commonly used videoconferencing system in schools is one based on using computers. With the use of dedicated software programs, participants can send files, share programs and even work on the same document simultaneously during a videoconference session. Videoconferencing is a term used to describe a system where two or more participants, based in different physical locations, can see and hear each other in real time (i.e., 'live') using special equipment.

6. EDUSAT

EDUSAT is an indigenously designed satellite, which is exclusively devoted to the field of education. This is a path-breaking effort in the concept of tele-education. EDUSAT is the first exclusive satellite for serving the educational sector. It is specially configured to meet the growing demand for an interactive satellite-based distance education system for the country through audio-visual medium, employing Direct-to- Home (DTH) quality broadcast. The satellite has multiple regional beams covering different parts of India.

7. Interactive White Boards

An interactive whiteboard is a piece of hardware that looks much like a standard whiteboard but it connects to a computer and a projector in the classroom to make a very powerful tool. When connected, the interactive whiteboard becomes a giant, touch -sensitive version of the computer screen. Instead of using the mouse, teacher can control the computer through the interactive whiteboard screen just by touching it with a special pen (or, on some types of boards, with the finger). Anything that can be accessed from the computer can be accessed and displayed on the interactive whiteboard, for example Word documents, PowerPoint presentations, photographs, websites or online materials.

8. Internet

The Internet is a global system of interconnected computer networks that use the standard Internet Protocol Suite (TCP/IP) to serve billions of users worldwide. It is a network of networks that consists of millions of private, public, academic, business, and government networks, of local to global scope, that are linked by a broad array of electronic, wireless and optical networking technologies. The Internet carries a vast range of information resources and services, such as the inter-linked hypertext documents of the World Wide Web (WWW) and the infrastructure to support electronic mail. Teacher can give the link of various websites to students so that they get direct access to store house of knowledge.

Advantages of using ICT in distance Learning:

ICT offers numerous advantages and provide opportunities for:

a) Facilitating learning for students who have different learning styles and abilities, including the talented as well as slow learners, the socially disadvantaged, the mentally and physically handicapped and those living in remote rural areas.

b) Making learning more effective, involving more senses in a multimedia context and more connections in a hypermedia context.

c) Providing a broader international context for approaching problems as well as being more sensitive to local needs.

Challenges in using ICT in distance learning:

ICT can raise students' achievement in any disciplines, but they have to be placed in the right hands and used in the right ways. There are challenges while implementing ICT in ODL.

a) The cost of ICT hardware, software and maintenance is still unaffordable to a majority of distance learning institutes.

b) The lack of teachers who are trained to exploit ICT proficiently.

c) Technology-rich curricula materials are rarely implemented. There is a dearth of Subject Matter Experts (SME) to design the curriculum to exploit the advantages of technology in these materials.

Support services

In open distance learning system, learners are remote to the institution many ways and require various online support services to perform their activities. Since ODL is a flexible system, the operational policies need to be changed frequently and is difficult to provide updated support services in time due to laps at various levels in the system. This problem can be addressed by involving all related personnel at the time of initiation of an activity so that its impact, if any on existing services can be discussed and find timeframe to provide support services in time.

Security in Open Distance Learning:

In open distance learning, many online learning and support services are made available to its learners and other public. As usage of services is increasing day by day, at same time hackers/attackers are playing a vital role to deny the service and damage system resources. Security is essential to protect the resources from hackers and in turn protect the sensitive information and data.

Hackers take advantage of different security flaws in a network service, hosting infrastructure and exploit the vulnerability to compromise the system. The following are various security flaws by which a hacker will play a role:

• Lack of proper hardening of Servers
• Insufficient network boundary security controls
• Insecure design and coding of hosted software (OS, application, etc)
• Weak passwords
• Social engineering

Ensuring security policy:

Security of a system/service/data shall be ensured by protecting the sensitive resources[2] at network, system and the application/service domains. Some of the security parameters are authentication, access control, availability, confidentiality, integrity and non-repudiation. Violation in any of the parameter leads a breach in security. All these security parameters to be enforced along with security policy on the ICT infrastructure being used in open distance

learning. The following are some of the policies to be framed and implemented for smooth functioning of ICT infrastructure in open distance learning system:

• Network security policy
• Host/ Server security policy
• Application software security
• Database security
• Content management policy
• Backup a policy
• Password management policy
• Audit, Incident handling and Recovery policy
• Physical security policy

The institution that is providing education in ODL mode should look at all the addressed issues and challenges and take necessary precautions with a proper action plan along with timeframe.

Conclusion:

The role of ICTs in the distance education is recurring and unavoidable. Rapid changes in the technologies are indicating that the role of ICT in future will grow tremendously in the distance education. These are the ways of achieving an education that is authentic, accessible to all without exclusion or discrimination, modern and universally affordable, will provide each individual with the keys to diversified and virtually limitless knowledge. In the next twenty-five years the emphasis will be on: the Market, not Society; the Consumer, not the Citizen; the Want, not the Need; the Quantity, not the Quality; the Price, not the Value; the Globe, not the Nation (Tracey, 1994).

"It is not the strongest of species that survives, not the most intelligent, but the one most responsive to change" (Charles Darwin).

References :

1. A. Murali M Rao, 2009, ‘ Web-enabled User Support Services System in Distance Learning’, Proceedings of International Conference on Interaction Sciences: Information Technology, Culture and Human(ICIS 2009), The ACM International Conference Proceeding, Vol I, ISBN 978-1-60558-710-3,Seoul, Korea, pp 86-90.
2. A. Murali M Rao, 2010, ‘Digital Library Security: A Layered Approach’, Proceedings of International Conference on Digital Libraries(ICDL 2010), Volume 2, New Delhi, pp 1167-1171.

3. Bernadette Robinson, 2008, 'Using distance education and ICT to improve access, equity and the quality in rural teachers' professional development in western China', International Review of Research in Open and Distance Learning, Volume 9, Number 1, Chaina.

4. Blurton,C.,"New Directions of ICT-Use in Education" http://www.unesco.org/education/educprog/lwf/dl/edict.pdf, accessed 7 August 2002.

5. Bernadette Robinson, 2008, 'Using distance education and ICT to improve access, equity and the quality in rural teachers' professional development in western China', International Review of Research in Open and Distance Learning, Volume 9, Number 1, China.

6. Carr, S. (2000). " Army bombshell rocks distance education. The Chronicle of Higher Education", (August 14), Retrieved from http:/chronicle.com

7. Dirr, Peter, 1. (2001), "Distance and Virtual Learning in the US in Glen M. Farrell (Ed) The Changing Faces of Virtual Education", Vancouver: The Commonwealth of Learning

8. Honeyman, M., Miller, G. (December 1993). "Agriculture distance education: A valid alternative for higher education?" Proceedings of the 20th Annual National Agricultural Education Research Meeting: 67–73.

9. Moore &Kearsley, 1996, SAP higher education and research solution map, 2003, Daniel & Snowden, 1981, Rumble, 1992

10. Reddy, V. Venugopal & Srivastava, Manjulika, 'ICT & The Future of Distance Education' Turkish Online Journal of Distance Education-TOJDE October 2003 ISSN 1302-6488 Volume:4 Number:4

11. Sangay Jamtsho, 2005, 'Challenges of ICT use for distance learning support in Bhutan, ICDE International conference', New Delhi.

12. UNEESCO (1995), International Commission on Education for the Twenty-first century, Paris.

Gurukul International Multidisciplinary Research Journal (GIMRJ)
with
International Impact Factor 2.254

ISSN No. 2394-8426
Dec – 2015
Issue – I, Volume – V
Online Journal

NPA: challenge for Banking Industry (Analysis of Nonperforming assets (NPA) of Indian Banking)

Dr. Abhinn Baxi Bhatnagar
Assistant Professor,
COBA, Dar Al Uloom University

Abstract
The last two decades of Indian banking industry observed frequent changes due to financial reforms in the Indian economy. These reforms are resultants of globalizations, liberalization and series of amendment in the conservative policies of Indian banking. Changing is the regulation of nature, but due to change, if the quality suffers, then there is a question mark for such liberal policies. In banking Industries loans are given for the purpose of credit creation, but if the number of loans become delinquent, then it become challenge for non performance of banks. The present study is an effort to analyze the NPA of schedule commercial banks in India. Now the question is How to overcome from such challenges. The first part the study consist of introduction, objectives and the review of literature, second part of the study is consist of analysis and how to recover such NPA, and the last part of the study is outcome of suggestions and conclusions.

Key words-
RBI, NPA, SCB (Scheduled Commercial banks) Credit risk, DRT (Debt recovery Tribunals)

Introduction:

Indian banking industry is in developing phase and considered among top economies in the world. Since 1991, liberalization and globalization movement, the industry witnessed a vital upsurge in innovative transactions and new policies of banking in India. The Indian banking industry have changed in number of phases such as nationalized, pre liberalization &post liberalization and latest one is the banking law (amendment) bill 2012. The bill allow the RBI (Reserve Bank of India) to make final guidelines on issuing new licenses.

The Indian banking adopted the modern technology and innovations, which results in flexibility in credit policies regarding the loan disbursement due to this, chances increased for purchasing low profile customers for advances and loans results in nonperforming assets.

Banking structure in India:

The Reserve Bank of India is the central and Apex bank of India. The RBI regulates and monitored all banks in India. In India banking structure is divided into commercial banks and non commercial banks.

The Schedule commercial banks divided into public sector banks, private sector banks and foreign banks.

The public sector banks consist of nationalized banks and SBI (State Bank of India) & its associates. On the other hand private sector banks consist of old private sector banks and new private sector banks in India. The annexure No-1 highlights the public sector banks and annexure No-2 highlights the private sector banks for schedule commercial banks in India.

Nonperforming Assets (NPA):

According to RBI norms "Banks are required to classify nonperforming assets into the following three categories based on the period for which assets has remained nonperforming and the reliability of the dues-

(1) Substandard Assets
(2) Doubtful assets
(3) Loss assets

Substandard Assets:

According to RBI norms stated in Master Circular "with effect from March 31, 2005, A substandard assets should be one, which has remained NPA for a period less than or equal to 12 months.

Doubtful assets:

According to RBI norms stated in Master Circular "With effect from March 31, 2005, an asset would be classified as doubtful if it remained in the substandard category for a period of 12 months. A loan classified as doubtful has all the weakness inherent in assets that were classified as substandard, with the added characteristics that the weakness makes collection or liquidation in full.

Loss Assets:

A loss asset is one where loss has been identified by the bank or internal or external auditors or the RBI inspection but the amount has not been written off wholly. In other words, such an assets is considered uncollectible and of such little value that is continuance as bankable assets is not warranted although there may be some salvage or recovery value.

The fourth category of loan accounts, which is not included in NPA category, is Standard Assets. Standard assets are one which does not disclose any problems and which does not carry only normal risk attached to the business.

The definitions of Substandard, doubtful and loss assets differ from country to country. But in India these are the subjects to the RBI circulars published from time to time .

Objective of Study:

The main objective of the study is to analyze the nonperforming assets of schedule commercial banks to find out the performance of loan advance between the private sector banks and public sector by using Nonperforming assets and how to set out such losses.

The sub objectives of the study are as follows-

(1) To compare the gross NPA between the public sector banks and private sector banks.
(2) To compare the substandard advances between private sector and public sector banks.
(3) To compare the doubtful advances between the public sector banks and private sector banks.
(4) To compare the loss advances between the public sector banks and private sector banks.
(5) How to set out and how to recover such NPA's.

Review of Literature:

This topic in not new-fangled, number of empirical studies has been already carried out in India and even throughout the world, but the present study is mainly aim to compare the NPA between public sector and private sector banks in reference to schedule commercial banks in India. An effort has been made to sum up some of the studies on this topic as there is plethora of articles and research studies published in national and international publications –

Swamy (2001) analyzed in his studies about the comparative performance of different banks groups. He focused on the non performing assets and summarized that in many respects nationalized public sectors banks were better than private banks.

Prashanth k Reddy (2002) in his paper "A comparative study of Nonperforming assets in Indian global context" discussed about the Indian NPA problems and also highlight the experience of other Asian countries (like china, Thailand, korea, Japan) in managing of NPA's.

Das rituparna (2002) carried out research on Managing the risk of nonperforming assets in small scale industries in India. The author tried to analyze the non performing assets in small scale industries. It was pointed out the need of the small-scale entrepreneur for becoming aware and educated in modern business.

Smt.V.Kalavathi, C.Sivarami Reddy (2003), worked out for the reasons and the remedies for the non performing assets and also highlights the steps to reduce the NPA.

Choudhry T Datta (2005) has put an effort to work out in his paper "resolution strategies for maximizing value of Nonperforming assets ". The main focus was on that declining capital adequacy adversely affects shareholder value and restricts the ability of bank to access the capital market for additional equity to enhance capital adequacy.

Bhatia (2007) focused in his paper titled "Non-Performing Assets of Indian Public, Private and Foreign Sector Banks: An Empirical Assessment" that NPA were considered as an important parameter to judge the performance and financial health of banks.

Saravanan S, Vasuki K, Karunakar M,(2008), tried to educate that what is NPA? and what are the important factors contributing to NPA and also summarized the reasons for high NPA.

Mandeep Singh, Ashok Khurana (2010), in their study indicated that issue of mounting NPAs is a challenging to public sectors banks and also have recovery problems.

Pacha Malyadri and Sirisha (2011) in their paper "A comparative study of NPA in Indian banking industry" analyzed about the NPA pertaining to special reference to weaker sections.

Parul Mital and Sandeep (2012), focused on the comparative position of nonperforming assets of selected public and private sector banks in India to analyze their efficiency through comparative study by using ANOVA analysis.

Data Analysis:

The present study is mainly focused on the comparative study of nonperforming assets taking public sector banks and private sectors .The data is secondary and collected from the annual reports of RBI. The study is comprises of 6 years from the year 2008 to year 2013. The public sector banks are mainly comprises of SBI & its associates and nationalized banks. The annexure no-1 comprises the details of public sector banks. On the other hand annexure no-2 highlights the private sector banks.

ISSN No. 2394-8426
Dec – 2015
Issue – I, Volume – V
Online Journal

Table No-1.1 Comparison of Standard advances between private and public sector banks.

	Private Sector Banks			Public Sector Banks		
Year	Percent Share	Total Gross Advances	Standard advances	Percent Share	Total Gross Advances	Standard advances
2008	97.25%	4,727.00	4,597.22	97.67%	16,960.51	16,564.51
2009	96.75%	5,200.77	5,031.87	97.90%	20,986.33	20,546.01
2010	97.03%	5,851.10	5,677.23	97.72%	25,124.39	24,551.47
2011	97.55%	7,329.53	7,149.78	97.68%	30,599.53	29,888.72
2012	97.92%	8,812.16	8,628.96	96.83%	35,503.89	34,379.00
2013	98.09%	10,466.65	10,266.73	96.16%	40,558.74	38,999.85

(Sources-Statistical tables relating to banks in India, 2008 to 2013, RBI, India)

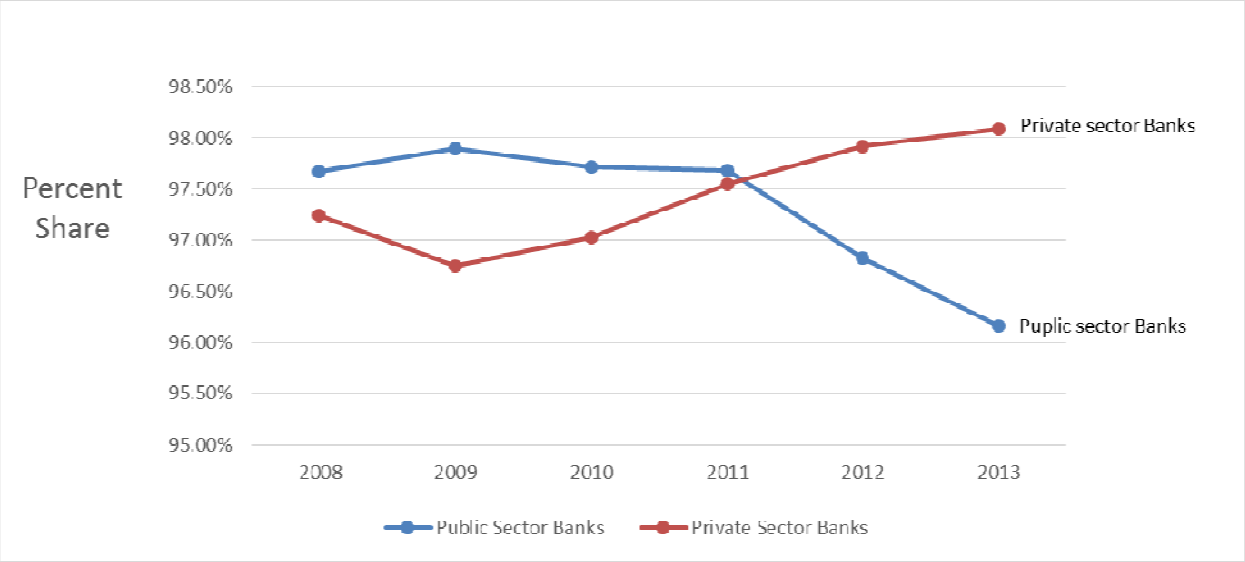

(Sources-Statistical tables relating to banks in India, 2008 to 2013, RBI, India)

From the Table no- 1.1, it depicts that in case of private sector banks from the year 2008 to year 2013, there were slight fluctuations in the share of standard advances to total gross advances .In the year 2008, it was 97.25% for standard advances, which dipped in the year 2009 by 0.5 %, but after that it remain constant at 97 % and increases in the year 2013 up to 98%. On the other hand in case of Public sector banks the share of standard advances is approximately 97%, which remains same up to the year 2011 but after it, there is decrease in the percentage by 1.52%. This indicates that private sector banks standard advances are better than public sector banks.

ISSN No. 2394-8426
Dec – 2015
Issue – I, Volume – V
Online Journal

Table No-1.2 Comparison of Sub -standard advances between private and public sector banks.

	Private Sector Banks			Public Sector Banks		
Year	Percent Share	Sub-Standard Advances	Total Gross Advances	Percent Share	Sub-Standard Advances	Total Gross Advances
2008	1.54%	72.81	4,727.00	0.99%	168.64	16,960.51
2009	2.02%	105.27	5,200.77	0.93%	195.21	20,986.33
2010	1.48%	86.78	5,851.10	1.10%	276.85	25,124.39
2011	0.60%	44.00	7,329.53	1.10%	336.12	30,599.53
2012	0.58%	51.33	8,812.16	1.70%	603.76	35,503.89
2013	0.56%	58.54	10,466.65	1.89%	765.89	40,558.74

(Sources-Statistical tables relating to banks in India, 2008 to 2013, RBI , India)

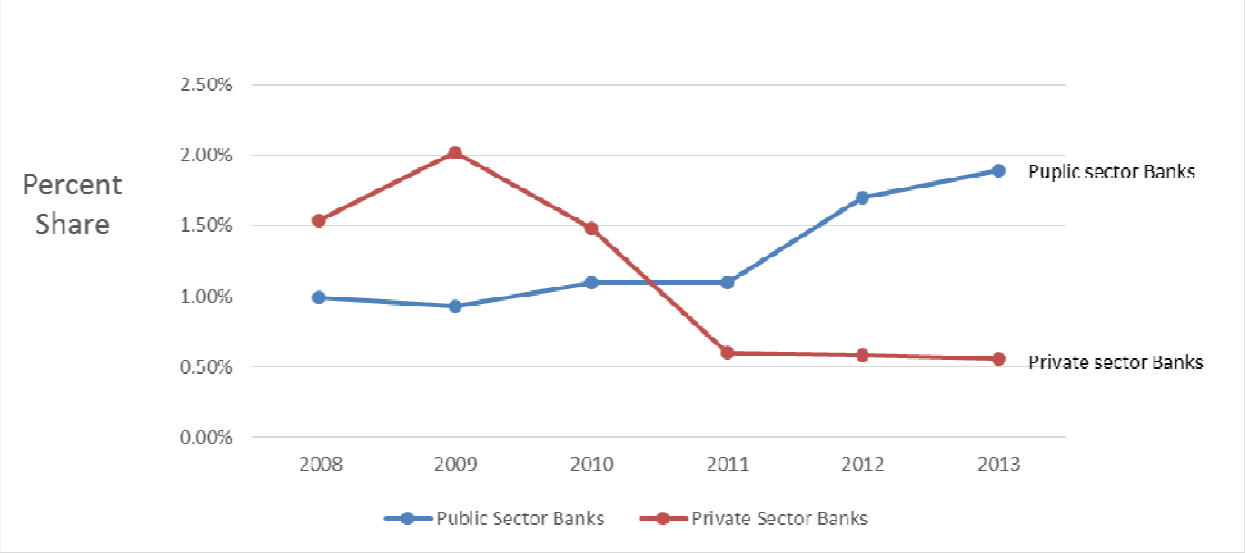

(Sources-Statistical tables relating to banks in India, 2008 to 2013, RBI , India)

It is indicated from the above table no-1.2 that the private sector banks highlighted positive trend from the year 2008 to 2013 for the sub standard advances. In the year 2008, it was 1.54%, which decreases to 0.56% by the end of the year 2013. On the other hand public sector banks has negative trend, in the year 2008, it was 0.99% which increased to 1.89 % by the end of the year 2013, which indicates that there is increase in percentage of Sub standard advances in public sector banks.

ISSN No. 2394-8426
Dec – 2015
Issue – I, Volume – V
Online Journal

Table No-1.3 Comparison of Doubtful advances between private and public sector banks.

	Private Sector Banks			Public Sector Banks		
Year	**Percent Share**	**Doubtful Advances**	**Total Gross Advances**	**Percent Share**	**Doubtful Advances**	**Total Gross Advances**
2008	0.94%	44.53	4,727.00	1.13%	190.83	16,960.51
2009	0.96%	50.18	5,200.77	0.99%	207.08	20,986.33
2010	1.12%	65.43	5,851.10	0.98%	246.79	25,124.39
2011	1.46%	107.36	7,329.53	1.04%	319.55	30,599.53
2012	1.17%	103.16	8,812.16	1.33%	470.75	35,503.89
2013	1.06%	110.69	10,466.65	1.81%	734.85	40,558.74

(Sources-Statistical tables relating to banks in India, 2008 to 2013, RBI , India)

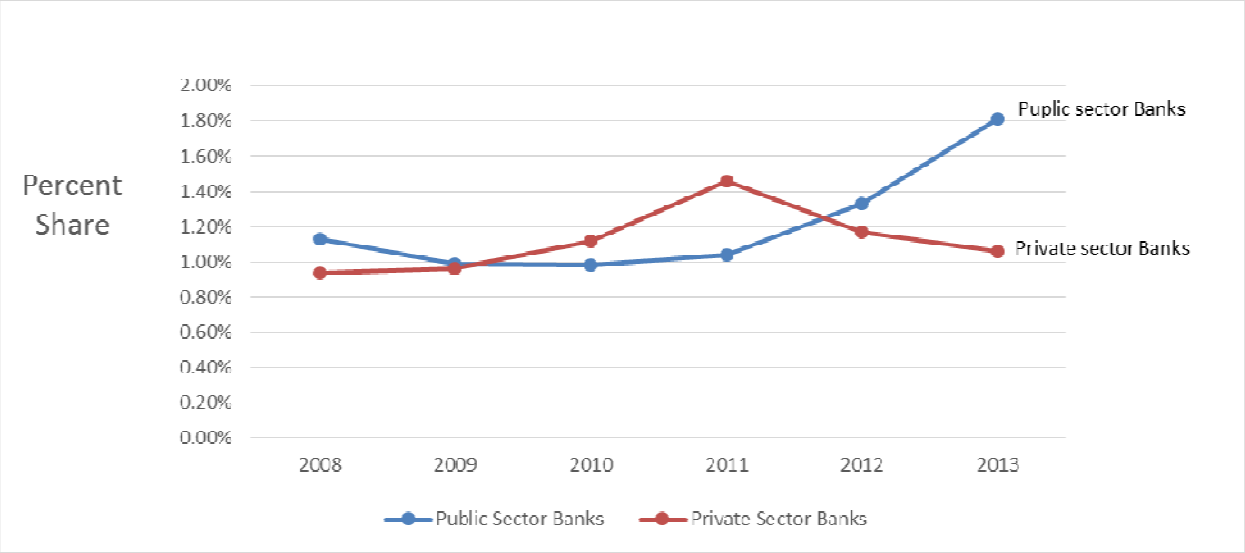

(Sources-Statistical tables relating to banks in India, 2008 to 2013, RBI , India)

It is clearly indicate from the table no-1.3 that both public sector and private sector banks has increasing trend for the doubtful advances, In case of private sector it has .94% in the year 2008, which increases to 1.06% by the end of the year 2013, On the other hand in case of public sector banks, it was 1.13% in year 2008 which increases to 1.81% by the end of the year 2013.

ISSN No. 2394-8426
Dec – 2015
Issue – I, Volume – V
Online Journal

Table No-1.4 Comparison of Loss advances between private and public sector banks.

	Private Sector Banks			Public Sector Banks		
Year	Percent Share	Loss Advances	Total Gross Advances	Percent Share	Loss Advances	Total Gross Advances
2008	0.26%	12.44	4,727.00	0.22%	36.72	16,960.51
2009	0.26%	13.45	5,200.77	0.18%	38.03	20,986.33
2010	0.37%	21.66	5,851.10	0.20%	49.28	25,124.39
2011	0.39%	28.39	7,329.53	0.18%	55.14	30,599.53
2012	0.33%	28.72	8,812.16	0.14%	50.37	35,503.89
2013	0.29%	30.69	10,466.65	0.14%	58.17	40,558.74

(Sources-Statistical tables relating to banks in India, 2008 to 2013, RBI , India)

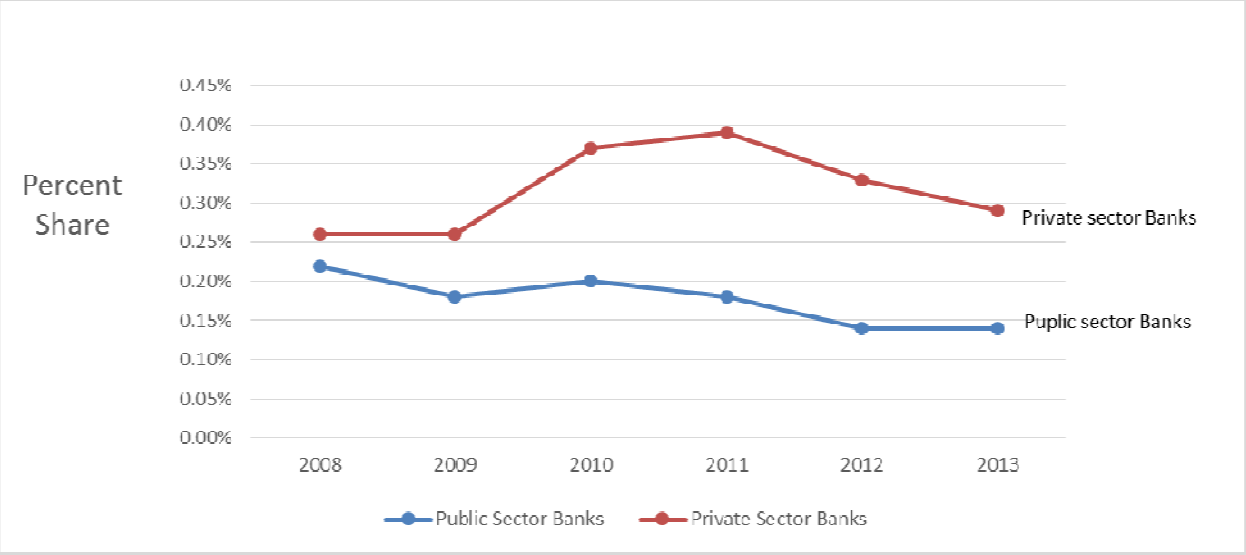

(Sources-Statistical tables relating to banks in India, 2008 to 2013, RBI , India)

From the table no-1.4 it is indicated that public sector banks have better performance for loss advances in comparison to private sectors. In case of private sector banks the percentage of loss advances to total gross advances was 0.26% in the year 2008, which was increased to 0.29%. On the other hand in case of public sector banks it was .22% in the year 2008, which was decreased to .14% that indicates better performance of public sector in comparison to private banks for the loss advances.

Table No-1.5 Comparison of Gross NPA advances between private and public sector banks.

	Private Sector Banks			Public Sector Banks		
Year	Percent Share	Gross NPAs	Total Gross Advances	Percent Share	Gross NPAs	Total Gross Advances
2008	2.75%	129.78	4,727.00	2.33%	396.00	16,960.51
2009	3.23%	168.90	5,200.77	2.10%	440.32	20,986.33
2010	2.97%	173.87	5,851.10	2.28%	572.93	25,124.39
2011	2.45%	179.75	7,329.53	2.32%	710.80	30,599.53
2012	2.08%	183.21	8,812.16	3.17%	1,124.89	35,503.89
2013	1.91%	199.92	10,466.65	3.84%	1,558.90	40,558.74

(Sources-Statistical tables relating to banks in India, 2008 to 2013, RBI, India)

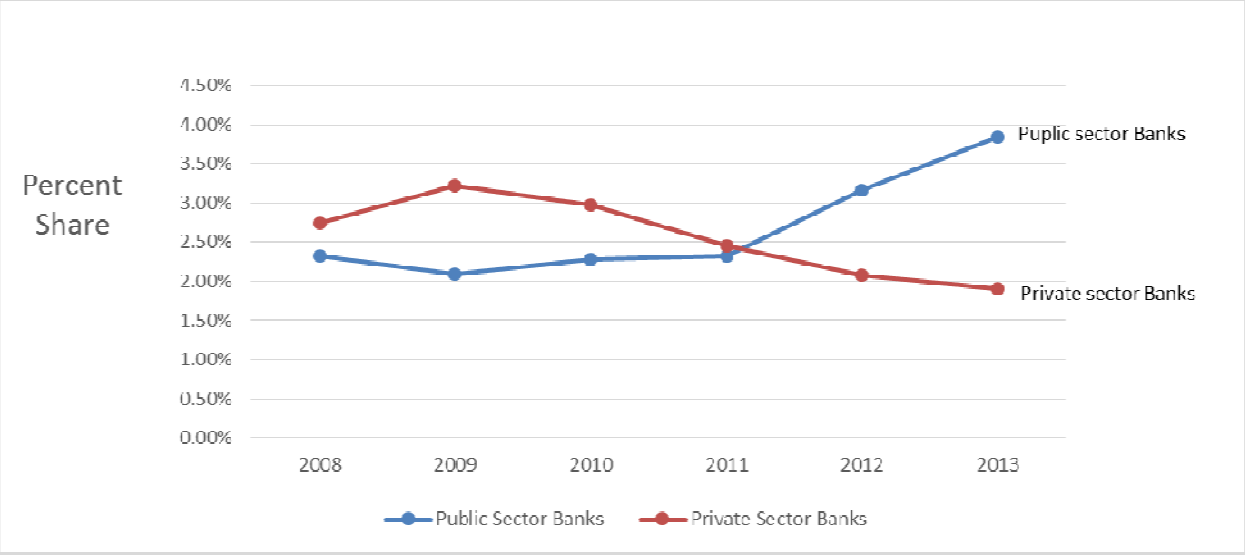

(Sources-Statistical tables relating to banks in India, 2008 to 2013, RBI , India)

The table no-1.5 indicates that the gross NPA of public sector banks and private sector banks. The above figures highlight that the private sector banks performance is better in comparison to public sector banks. In case of private sector banks the gross NPA was 2.75% in the year 2008, which were decreased by .84% by the end of the year 2013, on the other hand in case of public sector banks it was 2.33% in the year 2008, which was increased by 1.51% by the end of the year 2013.

From the analysis, we can summaries that private sector banks performing, better than public sector banks in handling the NPA. Now the question is how to set out such gross NPA. Though the problem of NPA is not very crucial in the both the sectors, but if there is NPA, how to manage and set out such losses.

After the globalization, there is liberalization of policies in the banking sector; the problem of NPA focused more attention. The committee formed for the banking reforms "Narasimham committee" recommended some steps to reduce in NPA. The following are the major steps taken by the Indian government-

(1) Debt Recovery Tribunals (DRT)

As per the recommendation of Narasimham committee report (I) 1991 for the setting up the special tribunals to reduce the time required for setting the cases. The debt recovery tribunals (DRT) enforce provision of the recovery of debt due to bank and financial institutions (RDDBFI) Act 1993.

According to the RBI Deputy Governor Shri R. Ghandhi mentioned in his speech (at "Workshop for Judges of DRATs and Presiding Officers of DRTs" conducted by CAFRAL at Leadership Development Academy, Larsen & Toubro Ltd., N H 4, Lonavala on Dec 29, 2014) that there are 33 DRTs and 5 DRATs functioning all over the country. The recent amendments to DRT Act vide the Enforcement of Security Interest and Recovery of Debts Laws (Amendment) Act, 2012 have been carried out to improve the functioning of the DRTs, to prescribe time frame for filing of pleadings, adjournments etc. and to give recognition and validity to the settlements / compromises entered into between banks and borrowers.

(2) Securitization Act :

This act is known for securitization and Reconstruction of financial Assets and enforcement of security interest Act 2002. Under this bank, it enables the banks to issues notices to defaulters who have to pay the debt within 60 days. This act empowers the banks to take over the possession of the assets and the management of the company.

(3) Lok Adalats :

The word "Lok" in hindi language means public and Adalat means court. It means the judiciary related to recover the loans from public. For the purpose of recovery of loans of small denominations and as per the guidelines issued by RBI (in 2001) they cover NPA upto Rs 5 lacs.

(4) Credit information Bureau:

When any loan is disbursed by any bank, it requires the track record of the borrower, in order to prevent the loan turning into NPA. If a borrower is a defaulter to any bank at any time, this information should be shared to all banks to avoid such default landings.

In India "Credit Information Bureau (India) Limited "or CIBIL is a Credit Information Company (CIC) founded in August 2000.

Its main function is to collects and maintains records of an individual's payments pertaining to loans and credit cards. After wards this records are submitted to CIBIL by member banks and credit institutions. Further this information is then used to create Credit Information Reports (CIR).

From the above few measures, it is clearly indicated that RBI has taken some measures for the NPA and how to set off or recover such losses.

Findings and Suggestions:

(1) The Banks should follow at least some business ethics for their business of loans and advances, especially when they are setting business targets for various Retail Loans.

Target pressures should not be as high as it leads to sourcing of inferior profile of customers. Targets set by the top authorities of banks should be rational, but these authorities seem to be ignoring the basic ethics and norms of business, especially in the case of Private Sector Banks.

(2) There should be proper business norms and policies. There are fewer loopholes in the case of Public Sector Banks as compared to their Private counterparts. In the case of Private Sector Banks, the following drawbacks have been observed -
   (a) The rate of interest should not be very high or very low; this affects the quality of loans.
   (b) Longer Tenure Loans should not be given on depreciating assets.
   (c) Cut throat competition should be avoided in the Banking Industry.
   (d) Customer stake should be high so that he will not tend towards defaulting as his margin money (down payment) would be more.

(3) In case of Private Sector Banks, there is need of discouraging the intermediaries or marketing channels in Banking - It has been observed that most of the Private Sector Banks opt for various channels for their Retail Loans, it increases the chances of miscommunication about the products. Therefore, it is suggested that there should be direct interaction with customers and banks.

(4) There should be proper credit processing and documentation of retail loans executed by banks, Public Sector Banks are maintaining it to a great extent , but Private Sector are lacking , therefore it is suggested that -
   (a) Credit Processing should not be outsourced.
   (b) It should be executed by Bank officials.
   (c) In case if processing is outsourced, then banks should be very cautious while appointing verification agencies and processing agencies.
   (d) The First Information Report ('FI') of customer should be carried out by authorized officials of banks.
   (e) Complete set of documents (with authentic source), profile of family and financial background must be verified by bank officials before the disbursement of loan, so that no fraud cases enter into the system.
   (f) Loan appraisal should be done strictly in adherence to the credit policy and not under any pressure of achieving the sales targets.

(5) There should be strict legal framework and penalties for the fraud cases. The government and judiciary should reframe the laws for defaulters, as according to the current laws, there is no serious punishment for financial crime in India.

(6) There is a need to improve the process and norms for recovery of delinquent retail loans in India.
   (a) Collection and recovery process should be more robust, but within the guidelines and instructions of the RBI and Supreme Court.
   (b) Collection agents should not be outsourced.

(7) There is a need to increase transparency and customer awareness about banking products and their attributes-
   (a) Customers should be educated at the time of loan sourcing about the consequences of defaulting in loan repayments. Many customers are not deliberate defaulters.

(b) They default in the payments because sometimes, they do not have the deposit money that is required by the bank. This information was not given to the customers at the time of sanctioning of the loans.

(8) There is a need to put efforts in the HR Department of Banks -

(a) Trainings should be given to Feet on Street ('FOS'), i.e. to executives and agents, who are sourcing the loans, so they can source better profiles for loans.

(b) The executives, agents, channels especially working for Private Banks should avoid the over commitments to customers, which they are not able to fulfill later on.

(9) The implementation and monitoring of DRT, Securitization Act, lok -adalt and CIBIL should at the state and national level to speed up the finalization of default cases.

Conclusion:

There is a need to watch continuously on the credit policies, documentation and the disbursal procedures of loans because lacking in this areas increases the chances of NPA and the measures taken by the government for the NPA, especially the debt recovery tribunals is successful to some extent and CIBIL is very useful for the generating the information regarding the borrowers.

References:

(1) Bloem & Goeter (2001), "The Macroeconomic Statistical treatment of nonperforming loans", discussed paper Statistics department of the IMF, December, 2001.

(2) B .N Swamy, (2001), "New completion, deregulation and emerging changes in Indian banking", Bank quest, the journal of Indian institute of bankers, 729 (3) pp.3-22.

(3) Rajeshwari Krishnan, "sarfaesi act 2002 as a tool for NPA Management", professional banker, Vol. 4 May 2002, pp.21-32.

(4) Das, Rituparna, managing the risk of Nonperforming assets in Small scale industries in India (June 2002) retrieve at SSRN: http://ssrn.com/abstract =1330798.

(5) Reddy, Prashanth K., "A comparative study of Nonperforming Assets in India in global context-similarities and dissimilarities, remedial measures" (2002). Retrieve at SSRN http://ssrn.com/abstract =361322.

(6) Datta Chaudhari, Tamal, Resolution Strategies for maximizing value of Nonperforming assets (NPA), (2005). Retrieve at SSRN: http://ssrn.com/abstract =871038.

(7) Pacha Malyadri and Sirisha (2011) "A comparative study of NPA in Indian banking industry" International journal of Economics practices and theories, Vol.1 No-2,oct.2011,e-ISSN 2247-7225

(8) C.Sivarami Reddy, Smt. V. kalavathi, Non performing assets in banks – Causes and remedies, Management of Non-performing assets in Banks and Financial Institutions, vol.1, Serial Publications, New Delhi , 2003, pg. 60 to 70.

(9) Bhatia, "Non-Performing Assets of Indian Public, Private and Foreign Sector Banks: An Empirical Assessment", ICFAI, Journal of Bank Management, Vol. 6, No. 3, 2007, pp. 7-28.

(10) Karunakar M., Vasuki K.and Saravanan S., "Are non - Performing Assets Gloomy or Greedy from Indian Perspective?" Research Journal of Social Sciences, Vol.3, 2008, pp.4-12.

(11) Ashok Khurana and Dr.Mandeep singh, NPA management: A study of new private Sector Banks in India, Indian Journal of Finance, September 2010, pp.174-185.
(12) Sandeep Aggarwal, Parul Mittal (2012) "Non - Performing Assets: Comparative Position of Public and Private Sector Banks in India", International Journal of Business and Management Tomorrow Vol. 2 No.1, pp 1-7.
(13) www.rbi.org
(14) Basic statistical reports and Annual reports ,RBI
(15) www.cibil.com
(16) www.rbi.org.in

Annexure No-1

List of Public sector banks for Schedule commercial banks in India

S. No	Public sector banks	Banks
1	SBI and its Associates	State Bank of India
		State Bank of Bikaner & Jaipur
		State Bank of Hyderabad
		State Bank of Mysore
		State Bank of Patiala
		State Bank of Travancore
2	Nationalized Bank	Allahabad Bank
		Andhra Bank
		Bank of Baroda
		Bank of India
		Bank of Maharashtra
		Canara Bank
		Central Bank of India
		Corporation Bank
		Dena Bank
		Indian Bank
		Indian Overseas Bank
		Oriental Bank of Commerce
		Punjab & Sind Bank
		Punjab National Bank
		Syndicate Bank
		UCO Bank
		Union Bank of India
		United Bank of India
		Vijaya Bank
		IDBI Bank Limited

(*Source*: Department of Banking Supervision, RBI.)

Note- The public sector banks for schedule commercial banks are consist of SBI &its associates and nationalized banks.

ISSN No. 2394-8426
Dec – 2015
Issue – I, Volume – V
Online Journal

Annexure No-2

List of Private sector banks for Schedule commercial banks in India

S. No	Private Sector Banks	
1	Old private sector banks	Catholic Syrian Bank Ltd.
		City Union Bank Ltd.
		Dhanlaxmi Bank Ltd.
		Federal Bank Ltd.
		ING Vysya Bank Ltd.
		Jammu & Kashmir Bank Ltd.
		Karnataka Bank Ltd.
		Karur Vysya Bank Ltd.
		Lakshmi Vilas Bank Ltd.
		Nainital Bank Ltd.
		Ratnakar Bank Ltd.
		South Indian Bank Ltd.
		Tamilnadu Mercantile Bank Ltd.
2	New private sector banks	Axis Bank Ltd.
		Development Credit Bank Ltd
		HDFC Bank Ltd.
		ICICI Bank Ltd.
		IndusInd Bank Ltd.
		Kotak Mahindra Bank Ltd.
		Yes Bank Ltd

(Source: Department of Banking Supervision, RBI.)

Note- The private sector banks consist of old private banks and new private banks.

Gurukul International Multidisciplinary Research Journal (GIMRJ)
with
International Impact Factor 2.254

ISSN No. 2394-8426
Dec – 2015
Issue – I, Volume – V
Online Journal

खेल और व्यायाम मे अभिप्रेरणा

प्रा. डॉ. आर. डी. चावके
शारिरिक शिक्षण, व क्रिडा विभाग प्रमुख,
आदर्श कला व वाणिज्य महाविद्यालय,
देसाईगंज (वडसा) जि. गडचिरोली.

प्रास्ताविक :—

अभिप्रेरणा व्यवहार को परिचालीत करणे वाली मानसिक शक्ती है! यह व्यक्ती समस्त मानसिक और शारिरीक शक्तीयोको संचालीत करती है! अभिप्रेरणा व्यक्ती को कार्य प्रारंभ करणे और करते रहणे के लिए आंतरिक उत्तेजना प्रदान करती है! मॅक्कडूगल ने अभिप्रेरणा को एक वृत्ती कहा है जो कार्य के संपादनमे सहयोग करती है! वो आगे कहते है की, अभिप्रेरणा व्यक्तीकी आंतरिक व मनोदैहीक दशा है! जो उसे कीसी कार्य को करणे के लिऐ विवश करती है! शेफर ने अभिप्रेरणा को एक प्रवृत्ती का एक प्रवृत्ती माना है जो आंतरिक शक्ती उत्पन्न करती है और कार्यका संपादन करणे मे सहाय्यक होती है! लॉगफिल्ड ने अभिप्रेरणा को एक आंतरिक आवश्यकता माना है जो उद्दीपन और लक्ष से प्रभावित होती है! अभिप्रेरणा का संबंध आवश्यकता से होता है! व्यक्ती की जितनी बडी आवश्यकता होगी अभिप्रेरणा उतनी ही तिव्र होगी! अभिप्रेरणा व्यक्ती की कार्यशिलता को बढाती है यह एक चालक का कार्य करती है जिससे प्रभावित होकर एक व्यक्ती क्रियाशील हो जाता है!

परिभाषाऐ (Definitinons) :-

गिलफोर्ड :— ''अभिप्रेरणा एक आंतरिक दशा है जो कार्य को प्रारंभ करणे और करते रहणे को प्रवृत्त करती है!''
(Motivation is an internal factor that tends to initiate and to sustain activity)

वूडवर्थ :— ''अभिप्रेरणा व्यक्ती की वह मनोदशा है जो किसी निश्चित उद्देश की पूर्ती के लिए एक निश्चित व्यवहार करणे को बाध्य करती है!''
(Motivaion is a state of the individual which desposes him for Certain behavior and seeking certain goals)

गुड :— ''किसी कार्य को प्रारंभ करणे, जारी रखने और नियमित करते रहणे की प्रक्रिया अभिप्रेरणा है!''

अभिप्रेरणा का महत्व (Importance of Motivation) :-

१. व्यवहार प्रारंभ करणे की शक्ती प्रदान करती है!
२. प्रवृत्तीयोंका निर्धारण करती है!
३. व्यवहार को निर्देशित करती है!
४. टांतकि और बाहय शक्तीयों को नियंत्रीत करती है!
५. अभिरुची को बनाये रखती है!
६. ध्यान केंद्रीत करणे मे सहाय्यता करती है!
७. लक्ष से विचलीत नही होणे देती!

८. एक लक्ष प्राप्ती के बाद दुसरे लक्ष की प्राप्ती मे सहाय्यता करती है!

९. स्मुह या समाज मे श्रेष्ठता स्थापीत करती है!

१०.चारित्रीक और सामाजिक गुणोके विकास मे सहाय्यक होती है!

अभिप्रेरणाकी विधियों : (Technique of Motivation):-

१. पुरस्कार और दंड (Reward and Punishment)
२. प्रशंशा और निंदा (Praise and Blame)
३. सफलता का अनुभव (Experience of Success)
४. प्रगती का ज्ञान (Knowledge of Progress)
५. प्रतियोगीता और सहयोग (Competition and Coorporation)
६. आकांक्षा स्तर (Level of Aspiration)
७. समुह कार्य (Group Activity)
८. लक्ष निर्धारण (Setting Goals)

खेलो मे अभिप्रेरणा (Motivation in Sports):

प्रत्येक खिलाडी या टिम का लक्ष विजय प्राप्त करणा होता है! खेल मे सफलता या विजय प्राप्त करणे के लिए शारिरीक क्षमता, खेल कौशल्य , अच्छा प्रशिक्षण और उत्साह आवश्यक होता है! पर मनोवैज्ञानिको ने अध्ययन मे पाया की खिलाडी की संवेगात्मक दशा और सकारात्मक अभिवृत्ती विजय दिलानेमे महत्वपूर्ण होती है! खिलाडी की मन: दशा यदी निराशापूर्ण है तो शारिरीक बल, प्रशिक्षण और खेल कौशल्य सफलता नही दिला सकता! मनोवैज्ञानिको ने मन: दशा का स्पष्ट करते हुए काहा की, खिलाडी पूर्ण आत्मविश्वास, दृढनिश्चय और जीत की भावनासे खेल मे सफल हो सकता है और यह गुण उसे जीत के लिए अभिप्रेरित करणे से ही आ सकते है ! इसलिए खेल मे विजय प्राप्त करणे के लिए अभिप्रेरणा एक आवश्यक कारक है! अभिप्रेरणा उत्साह आत्मविश्वास और कुछ कर दिखाने की लालसा दर्शाता है! अभिप्रेरणा खिलाडी को उत्तेजित करती है, उसकी समस्त शारिरीक और मानसिक शक्तीयों को केंद्रीत करणे मे सहाय्यता पाहेचाती है और लक्ष प्राप्त करणे के लिए बाध्य करती है!

प्रशिक्षकों को यह ज्ञात है की उनकी टिम की सफलता टिम को अभिप्रेरित करणे की कौशल्य पर निर्भर करती है! वह यह भी जानता है की कोणसा खिलाडी किस पध्दती से अभिप्रेरित होता है! वैयक्तिक भिन्नता के कारण प्रत्येक खिलाडी की मन: दशा अलग–अलग होती है इसीलिए अभिप्रेरित होणे की विधिया भी अलग – अलग होती है! कभी अभिप्रेरणा के कुछ कारक कुछ खिलाडियोंको अभिप्रेरित करते है और वे ही कारक दुसरे खिलाडीयों के लिए महत्वहीन होते है! इसलिए प्रशिक्षक की खिलाडीयों की मन– दशा और आवश्यकताओ को ध्यान मे रखकर अभिप्रेरणा की विधी का उपयोग करणा चाहीए!

उद्देश (Objectives) :

१. सर्वोत्कृष्ठ प्रदर्शन
२. पूरे खेल मे एक सा खेलने ही क्षमता!
३. सदैव एक सी गती बनाऐ रखना!
४. समय समय पर तेज प्रहार की क्षमता!
५. बहरी व्यवधानोसे अप्रामाणिक रहना!
६. मनसिक तनाव, भय या पराजय की भावना से मुक्त रहणा!
७. विरोधीयो द्वारा गलत खेलने पर भी अपने उपर नियंत्रण बनाये रखना!

खेल मनोविज्ञान की प्रकृति के संबंध मे निम्नलिखीत निष्कर्ष निकाले जा सकते है:

१. इसकी प्रकृति वैज्ञनिक है क्योंकी खेल व्यवहार का अध्ययन वैज्ञानिक रितिसे कीया जाता है!
२. खेल व्यवहार के अध्ययन के लिए मनोविज्ञान के नियमों और सिध्दांतो का उपयोग किया जाता है!
३. खिलाडी की समस्याका विश्लेषण वैज्ञानिक तरीके से किया जाता है!
४. खिलाडीयों के व्यवहार को प्रभावित करणे वाले कारको को नियंत्रीत कर व्यवहार मे परिवर्तन लाया जाता है!
५. खेल मनोविज्ञान मे अपनाई गई विधियॉ लचिली एंवम स्थिर है!
६. विज्ञान की तरह खेल मनोविज्ञान ने उपकरण एंवम मनौवैज्ञानिक परिक्षण उपयोग मे लाऐ जाते है!

संदर्भ सुचि :

1. Slovanko R. & Motivation in play, Games & Sports.
2. Sunil R. M.,1989, Psychology in Sports, Surjit Publication , Delhi.
3. Dubey L. N., Counseling Psychology (Hindi), Shikha Prakashn Jaipur
4. Llewellyn J. H. & Psychology of Coaching_Theory and,
5. Alderman R.S, 1974, Psychology in Sports, Philadelphia.

Gurukul International Multidisciplinary Research Journal (GIMRJ)
with
International Impact Factor 2.254

ISSN No. 2394-8426
Dec – 2015
Issue – I, Volume – V
Online Journal

Role Of Industrial Policies In The Economic Development Of India

Dr. Jaydeo P. Deshmukh,
Assistant Professor,
Adarsh Arts, Commerce and Science college,
Wadsa.

ABSTRACT

The government of India has been introducing industrial policy from time to time since independence. The purpose was always same, to improve the industrial sector, to increases the growth rate of the economy. But as the economic, political and legal conditions of a country changes, it is necessary to make reforms in the policies, so that we can improve our industrial sector, to better regulate and control them.

Keywords:

industrial policy, industries, investment, employment

1. INTRODUCTION:

In the post-World War II period India was probably the first non-communist developing country to have instituted a full-fledged industrial policy. The purpose of the policy was to co-ordinate investment decisions both in the public and the private sectors and to seize the 'commanding heights' of the economy by bringing certain strategic industries and firms under public ownership. This classical state-directed industrialization model held sway for three decades, from 1950-1980. The model began to erode in the 1980s. Following a serious external liquidity crisis in 1991 the model was fundamentally changed.

It was the change away from India's traditional industrial policy in 1991 towards liberalization, de-regulation, and market orientation that ushered in a new era of faster economic growth and one which promises greater prosperity for the Indian people. To fulfill its promise, further liberalization is required both in India's domestic economy and in its external economic relations (for example, further privatization, capital account liberalization, increasing foreign direct investment (FDI)).

From 1950 to 1980, India's development pattern was characterized by strong centralized planning, government ownership of basic and key industries, excessive regulation and control of private enterprise, trade protectionism (through tariff and non-tariff barriers), and a cautious and selective approach towards foreign capital. It was a quota, permit, and license regime guided and controlled by a bureaucracy trained in colonial style. This so-called inward-looking, import substitution strategy of economic development began to be widely questioned at the beginning of

1980s. Policy makers started realizing the drawbacks of this strategy, which inhibited competitiveness and efficiency and produced a much lower rate of growth than expected. A tilt towards economic liberalization started in 1985 when India's government announced a series of measures aimed at the deregulation and liberalization of industry. As a result of economic reforms of the last 20 years, India is presently one of world's fastest growing economies. In the last few years, it has emerged as a global economic power, the leading outsourcing destination, and a favorite of international investors. Indian industry has upgraded technology and product quality to a significant degree and met the challenge of openness after being protected for so long. This book traces the developments in different aspects of industrialization during India's post-Independence period. It explains the key reform measures undertaken for making Indian industry internationally competitive and examines the current issues pertaining to this vital sector of the Indian economy.

Industrial policy is a statement which defines the role of government in industrial development. The place of the public and private sectors in industrialisation of the country. The relative role of large and small industries.

The role of foreign capital etc. In brief, it is a statement of objectives to be achieved in the area of industrial development and the measures to be adopted towards achieving these objectives. The industrial policy thus formally indicates the spheres of activity of the public and the private sectors.

It lays down rules and procedures that would govern the growth and pattern of industrial activity. The industrial policy is neither fixed nor inflexible. It is amended, modified and redrafted according to the changed situations, requirements and perspectives of developments.

2. INDUSTRIAL POLICY IN INDIA'S PRESENT AND FUTURE:

Post- 1980 industrial policy changed form and became much more pragmatic. Basically instead of planning inputs and outputs for each firm and each industry, the government adopted indicative planning. However, it did not abandon instruments of industrial policy instruments such as very high tariffs by international standards and restrictions on portfolio and foreign direct investment. In the new circumstances, with the opportunity to exploit India's lead in the IT industry, as well as other structural challenges facing the economy, a further change in the industrial policy is called for. To meet the new challenges and opportunities, It should be a much more vigorous approach than the present one. Policy has not just been confined to upgrading the industrial structure and promoting its industrial.

3. OBJECTIVES OF STUDY:

The objective of this research paper is to take a look of the industrial policies of India since independence, and to analyze the current scenario of for industrial sector, to see the opportunities for the industries, as provided by the efforts of government of India.

4. RESEARCH METHODOLOGY:

This is a descriptive research paper based on secondary data. Data have been collected through various websites and publications of recent research papers available in different websites, Newspapers, Research Articles.

5. SOME OF THE OBJECTIVES OF INDUSTRIAL POLICY ARE AS FOLLOWS:

At the time of independence, India had an extremely underdeveloped and unbalanced industrial structure. Industries contributed less than one sixth part of national income.

The country did have some industries like cotton textiles, jute and sugar, but there were virtually no basic, heavy and capital goods industries on which programmes of future industrialization could be based.

Whatever major industries were there, they were largely concentrated in a few areas such as Bombay. Surat, Ahmedabad. Jameshedpur, Calcutta, Delhi etc. While the rest of the country remained industrially neglected.

Thus after independence, the government of India had to undertake effective measures to increase the tempo of industrialization. Correct regional imbalances in industrial development and rectify the distorted industrial structure through rapid development of capital goods industries.

6. ECONOMIC DEVELOPMENT OF INDIA

The economic development of India was dominated by socialist-influenced policies, state-owned sectors, and red tape & extensive regulations, collectively known as "License Raj". It led the country and its economy isolated from the world economy. However the scenario started changing from the mid-1980s, when India began opening up its market slowly through economic liberalization. The policy played a huge impact on the economic development of India.

The Indian economic development got a boost through its economic reform in 1991 and again through its renewal in the 2000s. Since then, the face of economic development of India has changed completely.

The economic reform of 1991 played a pivotal role in the economic development of India. Reaping its benefit, the growth of the country reached around 7.5% in the late 2000s. It is

also expected to double the average income within a decade. According to the analysts, if India can push more fundamental market reforms, it will be able to sustain the rate and can even achieve the government's target of 10% by 2011.

7. INDIA'S ECONOMIC DEVELOPMENT:

Role of States India is world's 12th largest economy and also the 4th largest in terms of purchasing power parity adjusted exchange rates (PPP). It is the 128th largest in the world on per capita basis and 118th by PPP. However, states have a major role to play in the economic development of India. There are few states which have higher annualized 1999-2008 growth rates comparing to others. The growth rates for the states like Gujarat (8.8%), Haryana (8.7%) and Delhi (7.4%) are considerably higher than other states like Bihar (5.1%), Uttar Pradesh (4.4%) and Madhya Pradesh (3.5%).

8. ECONOMIC DEVELOPMENT – THE DECISIVE FACTORS

The economic development of India largely depends upon a few factors, which prove to be decisive. According to the World Bank, for a better economic development, India needs to give due priorities in various issues like infrastructure, public sector reform, agricultural and rural development, reforms in lagging states, removal of labor regulations and HIV/AIDS.

Agriculture:

Agriculture, along with other allied sectors like fishing, forestry, and logging play a major role in the economic development in India. In 2005, these sectors accounted for almost 18.6% of the GDP. India holds the second position worldwide in terms of farm output. It also generated works for 60% of the total workforce. Though, currently seeing a steady decline of its share in the GDP, it is still the largest economic sector of the country. In India, a steady growth has been observed in the yields per unit area of all the crops since 1950. And the reason behind this is the fact that, special emphasis was given on agriculture in the five-year plans. In 1965, the country saw green revolution. Improvements came in the various areas like irrigation, technology, provision of agricultural credit, application of modern agricultural practices and subsidies. India has done considerably well in agriculture and allied sectors. The country is the world's largest producer of tea, coconut, cashew nuts, black pepper, turmeric, ginger and milk. India also has the largest cattle population in the world. It is world's second largest producer of sugar, rice, wheat and inland fish. It is in the third position in the list of tobacco producers in the world. India also produces 10% of the overall fruit production in the world, holding the first position in banana and sapota production.

ISSN No. 2394-8426
Dec – 2015
Issue – I, Volume – V
Online Journal

- **Industrial Output:**

India occupies 14th position in the world in industrial output. The manufacturing sector along with gas, electricity, quarrying and mining account for 27.5% of the country's GDP. It also employs 17% of total workers. The economic reforms of 1991 brought a number of foreign companies to the Indian market. As a result, it saw the privatization of several public sector industries. Expansion in the production of FMCG (Fast-moving Consumer Goods) started taking place. Indian companies started facing foreign competitions, including the cheap Chinese imports. However, they managed to handle it by cutting down costs, refurbishing management, banking on technology and low labor costs and concentrating on new products designing.

- **Services:**

In services output, India occupies 15th spot in the world. Around 23% of the total workforce in India works in service industry. This is also the sector which provides quick growth with a growth rate of 7.5% during 1991-2000 from 4.5% in 1951-80. With a substantial growth in IT sector, a number of foreign consumers showing interests in India's service exports as India has got low cost, educated, highly skilled workers in abundance. Besides this, ITES-BPO sector has also become a big source of employment for a number of youths.

- **Banking and Finance:**

Since liberalization, India has seen substantial banking reforms. On one hand, one could see the mergers of banks, competitiveness and reducing government interference, on the other hand one can also see the presence of several private and foreign players in the banking and insurance sectors. Currently the banking sector in India has got maturity in terms of supply, reach-even and product range. The Indian banks are also said to have clean, transparent and strong balance sheets comparing to their Asian counterparts.

- **Other:**

According to IMF World Economic Outlook April, 2015, India ranks seventh globally in terms of GDP at current prices and is expected to grow at 7.5 per cent in 2016. India's economy has witnessed a significant economic growth in the recent past, growing by 7.3 per cent in FY2015 as against 6.9 per cent in FY2014. The size of the Indian economy is estimated to be at Rs 129.57 trillion (US$ 2.01 trillion) for the year 2014 compared to Rs 118.23 trillion (US$ 1.84 trillion) in 2013.

The steps taken by the government in recent times have shown positive results as India's gross domestic product (GDP) at factor cost at constant (2011-12) prices 2014-15 is Rs 106.4 trillion (US$ 1.596 trillion), as against Rs 99.21 trillion (US$ 1.488 trillion) in 2013-14, registering a growth rate of 7.3 per cent. The economic activities which witnessed significant growth were 'financing, insurance, real estate and business services' at 11.5 per cent and 'trade, hotels, transport, communication services' at 10.7 per cent. According to a Goldman Sachs report released in September 2015, India could grow at a potential 8 per cent on average during from fiscal 2016 to 2020 powered by greater access to banking, technology adoption, urbanization and other structural reforms.

9. SOME OF THE ARGUMENTS MADE BY EMINENTS ON INDUSTRIAL POLICIES:

Most Asian countries that prospered used explicit industrial policies—and a rigged exchange rate—to build manufacturing prowess. Such policies went out of fashion in recent decades, but seem to have made a comeback in the entire ideological churn in the wake of the Western financial crisis.

World Bank chief economist Justin Lin says it is time to rethink development policy, with the state playing an important role even though "the market is the basic mechanism for effective resource allocation". There are clear signs that there has been a change in the attitude of the Indian government as well: Industrial policy is making a quiet comeback in India.

The contours of the new industrial policy seem quite different from the sort of policies followed by Nehruvian India and other Asian countries in their early stages of development. "The needs of building competitive enterprises and meeting WTO requirements need to be taken into account," Planning Commission member Arun Maira told me during a telephonic chat. This means the new industrial policy that is emerging will not have much of the old statist and protectionist policy mix: protection through high import tariffs, preferential access to bank funds, promotion of national champions and resource allocation by a government agency.

Yet, there is a clear belief that the country needs an explicit industrial strategy. The government will choose which industries need encouragement and design suitable policies. Physical and social infrastructure will also be developed, a process that should lower transaction costs and raise the rates of return on investment.

Maira gave me three key policy parameters that will be kept in mind in designing the new economic strategy —there should be a growth in quality jobs, the Indian economy should get

strategic depth in capital goods such as power and telecom equipment, and defence and security issues should be kept in mind.

There will be both technical and political economy challenges here. The technical challenge is to identify industries that need a helping hand, and one assumes that government agencies have an understanding of India's factor endowments and comparative advantages. The political economy challenge is perhaps even more complex. Comparative advantage rapidly changes in the modern economy and technology cycles are getting shorter. Policy will have to be flexible if India is not to stagnate.

A market economy has immense flexibility. Japan was a pioneer of successful industrial policy, but it lost the flexibility that it needed to fight its long economic stagnation. South Korea provides another lesson. Industrial policy there led to the formation of industrial conglomerates—the chaebol —and the gradual decline into crony capitalism.

What the Planning Commission has now set out to do is thus interesting but fraught with risks of regulatory capture and rent-seeking by favoured industrial groups. Maira says it is important that the focus of industrial policy remains on sectors rather than companies, in the attempts to forge closer collaboration between "productive sectors and policymakers".

The core goal of the emerging industrial policy is interesting: job creation. This column has often argued that the only path to truly inclusive growth is the creation of high-productivity jobs that will allow millions to escape poverty. This job creation has to be done by companies in modern sectors. The Asian experience tells us that no country can banish mass poverty unless it creates millions of new jobs a year in manufacturing and services. India needs around 10 million such new jobs every year. Maira told me that our current pattern of development has not created enough quality jobs and that this should be "the highest national imperative".

The current attempt to design a new industrial policy and development strategy should be an important part of the national economic debate, but it remains sadly ignored. Economic growth has already accelerated and public policy will have an important role to play in deciding down which path India goes in the future. Former Reserve Bank of India governor Y.V. Reddy made a very perceptive remark in his review of a book of essays in honour of Montek Singh Ahluwalia: "…the future…will be largely determined by political economy and on how to rather than what to do to improve the Indian economy."

10. ECONOMIC SURVEY: INDUSTRIAL POLICY MUST FOCUS ON INVESTMENT, REFORMS, AND INFRASTRUCTURE:

India needs to revive corporate sector investment, push critical reforms and remove infrastructural bottlenecks to boost industrial growth in the country, says the Economic Survey. "In view of the ongoing industrial slowdown, the policy focus now needs to target key growth drivers in the short term. One of the crucial drivers can be revival of the private corporate sector investment.

Current industrial sector downturn presents an opportunity to push ahead with critical reforms and removal of infrastructure bottlenecks.

Industrial policy needs to focus on labour-intensive and resource-based manufacturing in informal sector to rejuvenate small businesses.

In the medium term, challenge for the Indian manufacturing is to move from lower tech to higher tech sectors, from lower value-added to higher value added sectors and from lower productivity to higher productivity sectors.

The near term industrial outlook is conditional on continued improvements in the policy environment and quick return to peak investment rate.

Industrial output as measured by the index of industrial production (IIP) remained almost flat in 2013-14 and declined 0.1 per cent compared with an expansion of 1.1 per cent in 2012-13. The key reasons for poor performance have been contraction in mining activities and deceleration in manufacturing output. Manufacturing, which constitutes over 75 per cent of the index, contracted 0.8 per cent compared with 1.3 per cent growth previously. Similarly, the mining output during 2013-14 shrank 0.8 per cent compared with a decline of 2.3 per cent in 2012-13.

Considerable deceleration in investment particularly by the private corporate sector during 2011-12 and 2012-13 has led to the poor performance of these two sectors. During 2013-14, India had received FDI worth USD 36.4 billion. Out of this, the net FDI inflows were USD 21.6 billion. Further, the survey added that in order to boost manufacturing sector, the government has already announced setting up of 16 national investment and manufacturing zones (NIMZs). Of these, eight are along the Delhi Mumbai Industrial Corridor or DMIC.

11. CONCLUSION:

Government of India is doing many efforts to give a boost to the industrial sector. Industrial sector will be supported by the government policies for industrial sector. Reforms in

investment sector are supporting for this purpose. As the level investment improves that is helpful for both large and small scale industries. This will give rise to the level of employment, and therefore the income level will also increase. The credit ratings of standard & poor also give a positive sign for rising India. So, we can say that India is going towards a bright future that will have a high level of economic growth and development in terms of GDP, GNP, improved per capita income, better employment level etc.

12. REFERENCES:

1) Ahluwalia, I.J. Productivity and Growth in Indian Manufacturing, Oxford University Press, Delhi , 1991.
2) 2. Government of India Annual Report 2003-04, Ministry of Commerce and Industry. New Delhi.
3) 3. Government of India Handbook of Industrial Policy and Statistics (Various Issues), Office of Economic Adviser, Ministry of Commerce and Industry, New Delhi.
4) 4. Government of India Economic Survey 2004-05, Ministry of Finance, New Delhi
5) Pincus, Steven C.A. (2009) 1688: The First Modern Revolution, New Haven: Yale University Press.
6) Acemoglu, Daron (2003) "Why Not a Political Coase Theorem? Social Conflict, Commitment and Politics," Journal of Comparative Economics, 31, 620-652.
7) Acemoglu, Daron, Simon Johnson and James A. Robinson (2001) "The Colonial Origins of Comparative Development: An Empirical Investigation," American Economic Review, 91, 1369-1401.
8) Acemoglu, Daron, Simon Johnson and James A. Robinson (2005a) "The Rise of Europe: Atlantic Trade, Institutional Change, and Economic Growth," American Economic Review 95, 546-79.
9) Jose Mathew, Chapter IV: The New Phase of Planning: New Economic Policy of 1991, Development policies of India with special reference to new economic policy a Gandhian critique, August 12, 2010.
10) Kishore C. Dash, "India's International Monetary Fund Loans: Finessing Win-Set Negotiations within Domestic and International Politics," Asian Survey, Vol. 39, No. 6 (Nov. - Dec., 1999), pp. 884-907, University of California Press.
11) Seema Singh, "New Economic Policy in India: Some Implications for Employment and Labour Market," Indian Journal of Industrial Relations, Vol. 28, No. 4 (Apr., 1993), pp. 311-326.

नवनिर्माण की प्रेरक नारी

शोधकर्ता
इन्द्र कुमार शर्मा

मार्गदर्शक
डॉ. प्रभातकुमार दुबे

कृष्णकथा के प्राचीन आदर्शो को यथार्थ–वादी दृष्टि से नये रूप में प्रस्तुत किया है। सांस्कृतिक पूनर्जागरण, समाज–सुधार एवं राजनितिक परिवर्तनों से प्रभावित होकर कृष्ण वृत्त के प्रसंगों का उन्होंने समयनुकूल परिष्कार किया है। यह समयानुकूल परिष्कार किया है। यह समयानुकूल परिस्कार भारतेन्दु से आरंभ हुआ था। वैसे तो उनकी रचनाओं पर मध्ययुग की छाप है किन्तु कृष्ण को उन्होंने राष्ट्रध्दारक तथा राष्ट्र वत्सल भगवान के रूप में भी प्रतिष्ठित किया है। रत्नाकर जी ने भी प्राचीन परिपाटी का अनुगमन किया किन्तु उभयपक्षीय प्रेम के आदर्श रूप को प्रस्तुत करने में उन्होंने नवीनता प्रकट की। सत्यनारायण 'कविरत्न' ने 'भ्रमरदूत' में यशोदा को भारतमाता, ग्वालबोल को दुखी भारतवासी और श्रीकृष्ण को राष्ट्रव्दारक नेता माना है। डा. श्यामसुन्दरलाल दीक्षित ने श्याम संदेश' में कंस–वध के बाद जनता व्दारा मनाये गये मुक्ति–पर्व में कृष्ण को नंगो–पैरों जुलूस में भाग लेते दिखाया है और वे जन–नेता के रूप में प्रस्तुत किये गये है।

हरिऔध ने कृष्ण को लौकिक पुरूष के रूप में समाज–सेवा के लिए अग्रसर होते बताया है। पं. व्दारकाप्रसाद मिश्र ने 'कृष्णायना' में भारतीय जीवन की एकता और नये युग की राष्ट्रीय चेतना का पूर्णरूप में प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। कृष्ण एक राष्ट्रीय नेता के रूप में भारत को एक केंद्रीय सूत्र में बांधने के लिए तत्पर दिखायी देते है। कवि ने महाभारत के कृष्ण से प्रेरणा लेकर उनके राष्ट्र–निर्माता रूप की कल्पना की है। कृष्ण के प्रेम का विकास भी किया है और कृष्ण को गोपीजन–वल्लभ, धर्म संस्थापक एवं युग–प्रवर्तक महामानव के रूप में अंकित किया है। राधा–कृष्ण के प्रेम का विकास समाज की मर्यादा के अनुकूल ही किया है। कृष्ण चरित्र से सम्बन्ध गर्हित कथाओं को या तो बिल्कुल छोड़ दिया है या उनका रूपान्तर कर उन्हें समयानुकूल और जनोपयोगी बना दिया है। महाभारत और भागवत् में कृष्ण चरित्र में जो विषमता दिखायी देती है। राधा को कृष्ण की कान्ता–कामिनी मान कर उन्हें विष्णु पत्नी बताकर उनके सनातन रूप की रक्षा की है और उन्हें परकीया होने से भी बचा लिया है।

'कृष्णयान' के नायक कृष्ण के चरित्र में अवतारी महापुरूषो के गुणों को उद्यारित कर कवि ने उन्हें राष्ट्रीयता के प्रतिनिधि के रूप में प्रस्तुत किया है तभी तो आ. नन्ददुलारे वाजपेयी का कथन है कि कृष्णयान के कृष्ण राष्ट्रीयता के प्रतिनिधि है। 'कृष्णयान' और 'प्रियप्रवास' की राष्ट्रीयता के स्वरूपों में विभिन्नता है कारण रचनाओं के समय परिवेश अथवा परिवेश अथवा परिस्थितियॉ। साथ ही दोनों कवियों की रचनाओं में निहित उद्देश भी भिन्न हैं। हरिऔध ने कृष्ण को मानव के घरातल पर उतारा है और उनकी राधा तो पूर्णतः देशहित एवं जगहित के कार्य करती प्रतीत होती है जब वह कहती है–

प्यारे जीवे जगहित करें गेह चाहे व आँखें।

एक ओर हरिऔध जी की राधा है जिसने विश्वप्रेमिका एवं लोकसेविका का रूप धारण किया हुआ है। उनका हदय विशाल उदार एवं मानवीय प्रेम से पूरित है। वे तो पतितों, पीड़ितों उएवं असहायों की सेवा करती दिखाई गई है। पर मिश्र जी की राधा का स्वरूप परम्परागत अधिक है। उसमें कवि ने नवीनता का आंशिक रूप ही लाना चाहा है। वस्तुतः ऐसा होना स्वाभाविक भी है क्योंकि प्रत्येक कवि अपने पूर्वपर्ती

समान परम्परा क कवियों की दृष्टि से लाभान्वित हुआ करता है। कृष्णायान कथापर हरिऔध के इस प्रभाव को अस्वीकार नहीं किया जा सकता। यह दूसरी बात है कि प्रभाव आंशिक ही है। मुलत। दोनों के विषय–वर्णन एवं चरित्राकन में पृथकता छलकती है। यही कारण है कि 'प्रियप्रवास' की राधा लोक–सेविका एवं विश्व–प्रेमिका है और कृष्णायन की राधा श्रीकृष्ण की अनन्य प्रेमिका है। इसलिए कृष्ण अपने तथा राधा में अमेद स्थापित करते हुए कहते है–

हम दो एक, नाहिं कक्कू भदा कहत सकल निगमागम वेदा।
निबसति यथाक्षीर धवकाई, यथा हुतासन दाहकताई।।
वसत प्रिये तस तुम मोहि माहि, तुमहि विहाय मोरि गति नाहिं।

मथुरा–काण्ड में भी कृष्ण ने स्पष्टतः राधा और स्वयं को एक ही कहा है तथा व्देत भाव को भ्रांति की संज्ञा से अभिहित किया है–

"एकहि में और राधिका, दवेत भाव भव भ्रान्ति"

हम हरिऔध जी और मिश्र जी की इस तुलना से किसी की श्रेष्ठता ज्ञापित नहीं करना चाहते क्योंकि यह हमारा प्रतिपाद विषय नहीं है। मिश्रजी के कृष्णायन में सांस्कृतिक निरूपण अधिक हुआ है तथा उन्होंने सर्वत्र भारतीय संस्कृति एवं परम्परा की महता प्रतिपादित की हैं। कृष्णायन के कृष्ण राष्ट्र की एकता एवं उन्नति के लिए प्रयत्नशील दिखाई देते है।

'कृष्णायान' में कृष्ण का स्वरूप भी विकसित प्रतीत होता है। ये परम्परिकक हिन्दु अवतार केवल पौराणिक एवं काल्पनिक पात्र बनकर ही नहीं रहते वरन एक मानव की भांति जीवन में सेवा अथवा परहित की श्रेष्ठता ज्ञापित कर मानव–हित की सर्वोच्चता प्रदर्शित हैं।

'कृष्णायन' के कृष्ण का चारित्रिक आधार महाभारत एवं भागवत ग्रंथ ही है। कृष्ण–कथा के इन दोनों अक्षय स्त्रोतो में वर्णित दिव्य एवं अलौकिक घटनाओं मं अविश्वसनीयमा थी। साथ ही ये परिवर्तन कृष्ण के स्वरूप की लोक रंजनकारी कोटि से लोक मर्यादा विधायक कोटि में प्रतिष्ठित करने के लिए भी किए गए है, उदाहरणार्थ गोवर्धन प्रसंग, भीमासूर के अंतःपूर कामगार में बन्दी 600 कुमारिकाओं से कृष्ण का विवाह आदि। कृष्णायन में गीता काण्डक के कृष्ण तो गीता के कृष्ण के प्रतिरूप है – उसका उपदेश गीता का भावानुवाद–पात्र है। कृष्णायन में कृष्ण समस्त यहॉ भारतीय घटनाओं के सूत्रधार के रूप में चित्रित किये गये है। 'कृष्णायन' राजसूय में यज्ञ के पश्चात युग के सर्वाधिक महत्वपूर्ण महिमामय व्यक्ति की पूजा का प्रस्ताव रखा जाता है, तो बहुमत से कृष्ण की ही महानता प्रकट होती है। प्रकटतः केवल शिशुपाल इस मत का विरोध करता है किन्तु उसकी चल नहीं पाती। राष्ट्र वन्दनीय व्यक्ति की पूजा के प्रस्ताव के उत्तर में सहदेव कृष्ण का नाम प्रस्तावित करते हुए कहते हैं–

'श्री हरि अछत भुवन त्रय माहीं।
मम–मत अग्र पूज्य कोऊ नाहीं।
ये प्रभु पूर्ण ब्रम्ह अवतारी,
थनवसत महि जन–हित तनु धारी।
ठन कर कछुक अंश सूर पावत
वंदनीय भरि विश्व, कहावत।'

सहदेव के इस कथन में यद्यपि कृष्ण के आलौकिकत्व की और संकेत है, तथापि इससे कृष्ण का युग–वंदनीय, गुणनेता, का स्वरूप अवश्य ही स्पष्ट होता है। कृष्ण की दिव्य विभूति का कथन तो कवि की कृष्ण के ईश्वरत्व के प्रति गहन आस्था का ही परिचय है।

कृष्णायन में गोपीजन, वल्लम, भक्तवत्सल और असूर–संहारक कृष्ण आज के युग की धार्मिक, सामाजिक और राजनीतिक समास्याओं का समाधान करते हुऐ एक धर्म संस्थापक समाज सुधारक, राष्ट्रनायक के रूप में हमारे सामने आते हैं। इस ग्रंथ के रचयिता ने कृष्ण के परंम्परागत रूपों को ग्रहण करके भी देश काल की आवश्यकता के अनुसार उसमें संशोधन, परिमार्जना परिस्करण तथा विकास की अवतारणा की है।

कृष्णायन के कृष्ण देवकी के पुत्र तथा विष्णु के अवतार है। वे कारावास में वासुदेव देवकी को तथा सरोवर में अक्रूर को विष्णु के रूप में दर्शन हैं। वे मायापति है। इसी की सहायता से इन्द्र के प्रकोप को प्रभावहीन बनाते हैं तथा अक्रूर की बुध्दी को भ्रम में डालते हैं। उनके असूर–विनाशक कार्य अलौकिक शक्ति सम्पन्न होते के परिचायक हैं।

गोपीवल्लभ तथा राधावल्लभ रूप परम्परित है। गोपीवल्लभ कृष्ण में माधुर्य के स्थान पर दास्य तथा वात्सल्य भाव का समावेश करके कृष्ण चरित को देशकाल की मांग के अनुरूप उज्वल बना दिया है।

राधा–वल्लभ कृष्ण का चरित्र आध्यात्मिक स्तर पर हुआ है। उनके पारम्परिक अनुराग को विष्णुलक्ष्मी के प्रेम का रूप प्रदान किया है। रासलीला के अन्त में परमानन्द स्वरूप कृष्ण राधा से अपनी अभिन्नता का प्रतिपादन करके उससे माधुर्य कुंज लीला के उपरान्त उन दोनों के मिलन को भक्ति को पोषण करने को कहते हैं। कुंज लीला के उपरान्त उन दोनों के मिलन को भक्ति और भगवान की तथा कुरूक्षेत्र के स्नान काल में मुक्त जीव और भगवान की भेंट कहा है। राधा अपनी प्रेमभक्ति की दिव्य शक्ति के व्दारा देवकी के आग्रह पर उसे यशोदा की गोद में खेलते हुए कृष्ण का दर्शन तर करा देती है। उभय पक्ष में तुल्य अनुराग है अंततः कृष्ण का चरित्र अत्यन्त मानवीय हो गया है। आधुनिक युग में कृष्ण का यह नवीन रूप अपने में महान है।

श्री मैथिली शरण गुप्त ने 'व्दापर' में पौराणिक संस्कारों को आधुनिकता का रूप दिया है। नारी जागरण के रूप में विधृता का चिरित्र उभारा है और राष्ट्रीय चेतना के प्रतीक रूप में कृष्ण ने बांसुरीवादन न कर शंखनाद किया है। 'कंस–वध' को जन–क्रांन्ति का रूप दिया गया है। कृष्ण की क्रांति में मानवतावाद की स्थापना होती है। 'जयभारत' परम्परित दृष्टि को अपनाने पर भी कवि ने बौध्दिकता, श्रध्दा और विश्वास में समन्वय कर आध्यात्मिकता को श्रेय दिया है।

दिनकर जी के 'कुरूक्षेत्र' का प्रसंग महाभारत को हे किन्तु उसकी टूटन, ध्वंस महाभारत की अपेक्षा आज के संदर्भ में अधिक है। दिनकर जी ने इतिहास से ऐसा प्रसंग लिया है। जो उसे वर्तमान की यातना और समस्या से जोड़ सके। युध्दिष्ठिर और भीष्म के रूप में कवि का शंकाकुल हदय भाव और विचार बनकर संहार के विस्तार के मध्य असहाय–सा घूमता फिरा है। इसमें भारतीय संस्कृति का पूर्व परिचित मार्ग त्याग, सत्य और संवेननायमी मानवता का ही है। कृष्ण के संदेशो और उपदेशों को उचित वर्तमान जीवन–संदर्भो, विचारों, विज्ञान, कर्म आदि से जोडकर उन्हें नया अर्थदिया है।

पं. लक्ष्मीनारायण मिश्र को 'सेनापति कर्ण' काव्य–ग्रंथ में कृष्ण को एक सफल राजजीतिज्ञ, लोकरक्षक, राष्ट्रहितेषी और मानवता के उन्नायक के रूप में प्रस्तुत किया गया है। आधुनिक युग की आवश्यकताओं को देखते हुए की कृष्णचरित्र तथा 'सेनापती' 'कर्ण' के कथानक को सजाया–संवारा गया है।

दिनकर के 'रश्मिरथी' में भी कथानक महाभारत का है किन्तु इसमें सम्पूर्ण महाभारत की कथा कहने का कोई आग्रह नहीं। इसमें केवल कर्ण के चरित्र को आधुनिक मानवतावाद के प्रकाश में उध्दारित करने का सफल प्रयत्नह[ै]। कर्ण के माध्यम से कवि ने कलंकित, उपेक्षित मानवता की एकता को वाणी दी है। आज अभिजात्य वर्ग का अहंकार कोई महत्व नहीं रखता। आज का युग है भाग्य को चुनौती देने वाले

पौरूष का कर्ण के माध्यम से मानवता की स्थापना का सफल प्रयास किया गया है। आज के जीवन के अनेक प्रश्नों और संवेदनाओं की दृष्टियों और चिन्तम–पध्दतियों को मूल्यों और आकांक्षाओं को कर्ण और उसकी कथा के माध्यम से उद्घाटित किया गया है।

'रश्मिरथी' में दिनकर जी ते कृष्ण के परब्रम्ह रूप को प्रस्तुत किया है। कुरूसभा में जब दुर्योधन कृष्ण को बांधने के लिए तत्पर होता है तो कृष्ण गीता में कहे गये अपने गये अपने विराट रूप का उसे परिचय देते हुए कहते है।

यह देख, गगन मुफ में लय है,
यह देख, पवन चुक में लय है,
मुक में लय है संसार सफल
अयस्त्व फुलता है मुफ में।

श्री धर्मवीर भाडती का 'अन्धायुग' महाभारत के अस्त होते हुए सुर्य की अन्तिम धूमिल अंध किरणों की कथा नहीं है। उसके कण–कण में आज का इतिहास लक्षित है। इसमें कथा का प्रारम्भ महाभारत के अठराहवे दिन की संध्या से होता है और कुरूक्षेत्र में कृष्ण की मृत्यु के क्षण तक चलता है किन्तु इसमें पौराणिक कथा इतनी महत्वपूर्ण नहीं है जितना कि नया युगबोध। कवि ने इस क्रांति में आज के विसंगतीपूर्ण जीवन की पृष्ठभूमि में समान एवं मानव–मन में व्याप्त युध्दोत्तर कालीन कृष्ण निराशा, प्रतिशोध, रक्तपात, ध्वंस, कुरूपता, विकृति, अधःपतत, बर्बरता, विवके शून्यता, व्दन्द्व त्रास खण्डित परम्परा, जीर्ण–शीर्ण होती मर्यादाओं आदि का सफल चित्रण किया है।

'अन्धायुग' सन 1954 में लिखा गया था। जब विश्वशक्तियॉ दो राष्ट्री में बट चुकी थी। दिवनीय विश्वयुध्द की प्रकयकारिणी स्थिति अभी शेष थी और विश्व दुसरे महायुध्द की विभीषिक से त्रस्त था। जो दशा महाभारत के युध्द के पश्चात् थी लगभग वैसी ही अथवा उससे भी अधिक त्रस्त व्दितीय विश्व युध्द के बाद हो गयी थी। भय, पराजय, तिर्थकता और कुण्डा का वातावरण छाया हुआ था। 'अन्धायुग' महाभारत की कथा का परिवर्तन मात्र नहीं अपितु उसकी समग्र कथा प्रतीव बध्द है। कथा के जितने भी मर्म बिन्दु है, वे जहॉ एक और महाभारत कालीन सत्य को उद्घाटित करते है दूसरी और आधुनिक युग–बोध को भी व्यंतित करते है।

'अन्धायुग' में श्रीकृष्ण को भी नयी दृष्टि से परखा गया है। जो कृष्ण अब तक कवियों व्दारा परब्रम्ह के रूप में चित्रित होते आये है तथा जिन्हें केवल मर्यादित तथा सत्य के आग्रही रूप में ही चित्रित किया जाता रहा है, उस श्रीकृष्ण को 'अन्धायुग' में एक अलग ही रूप प्रदान किया गया है। 'अन्धायुग' के श्रीकृष्ण केवल प्रभु या परब्रम्ह ही नहीं अपितु देवत्व और दानवत्व की संधि–रेखा पर खड़े वे आधुनिक जटिल मानव भी है जो परिस्थितीयोंसे प्रेरित होकर सत्य की रक्षा करते है तो सत्य को त्यागने मे भी नहीं हिचकते यदि वे मर्यादा मानते है तो कभी अस मर्यादा को छोडने को भी तत्पर रहते है श्रीकृष्ण को साहित्य में प्रथम बार अमर्यादित रूप में चित्रीत किया गया है। और तब श्रीकृष्ण का व्यक्तित्व उस जटिल मानव के व्यक्तित्व के रूप में उभरता हैं जो पाप–पुण्य, सत्य–असत्य, मर्यादा–अमर्यादा के फुलोंपर घडी के पेंडुलम की भाती सदा हिलायमान रहता है। 'अन्धायुग' के कृष्ण सत्य–असत्य, मर्यादा–अमर्यादा के एकमात्र निर्णायक नही है। इनका निर्णय संशयग्रस्त मनुष्य कर भी नहीं सकता। मनुष्य क्या प्रभु भी नहीं कर सकते। इनकी निर्णायक तो परिस्थितीया ही है।

कवि के अन्तर्मन में गीता की कुछ पंक्तियॉ संभवतः बार–बार याद आ रहीं थीं जिनके गहरे प्रभाव में उस ने कृष्ण के चरित्र को सृष्टि की। गीता में जो कृष्ण का स्वरूप अंकित है वसही स्वरूप 'अन्धायुग' में भी उपस्थित कर दिया है। यह रूप परम्परा से चले आ रहे धर्म और कर्मकाण्ड की रेखाओं से बंधा नहीं है। कृष्ण कहते है–

अठराह दिनों के इस भीषण संग्राम में कोई नहीं केवल में ही मरा हूं करोड़ो बार
जितनी बार जो भी सैनिक धराशायी हुआ कोई नही था
वह मैं ही था
गिरता था घायल होकर रणभूमि में।

गीता के कृष्ण को यहां आधुनिक युग के अनुरूप बना दिया गया है। कृष्ण के उलझे हुए चरित्र को वर्तमान के अनुरूप संगीत देकर सुलफा देना कवि के गम्भीर चिन्तन को ही प्रकट करता हे। यहां श्रीकृष्ण स्वीकार करते है कि जीवन ओर मृत्यू, पाप और पुण्य सत्य और असत्य वे ही हैं उनका चरित्र एक जटिल व्यक्तित्व के रूप में उभड़ता है जो प्रभु की अपेक्षा आधुनिक जटिल मनुष्य का प्रतिनिधित्व अधिक करता है।

'अन्धायुग' के समस्त पायों के मध्यम एकमात्र केन्द्रबिन्दू श्रीकृष्ण ही हैं। इनकी प्रबुध्दता ओर सजलता ने संपूर्ण युग की व्याख्या की सीमा है। प्रत्येक व्यक्ति के मरने पर स्वयं 'मृत्यु' का आलिंगन किया है, फिर भी युग की आस्था और विश्वास को स्थिर रखनें में उसकी रक्षा करने में समर्थ है। यह इसलिए कि वे साहस, स्वतंत्रता सृजन और मानवमुल्यों के प्रतिक रूप है इस अंधे युग में भी वे भविष्य की संभावनाओं और मानव – मुल्यों की प्रतिष्ठापना में समर्थ है। वे कहते हैं–

मेरा दायित्व ही स्थिर रहेगा
हर मानव मन के इस वृत में जिसके सहारे वह
सभी परिस्थितियों का अतिक्रमण करते हुए
नुतन निर्माण करेगा पिछले ध्वंसी पर

कृष्ण का व्यक्तित्व विरोधी प्रवृत्तियो से युक्त हे। अंधकार से साथ प्रकाश और आसक्ति के साथ अनासक्ति भी उनमें विद्यमान हैं। जहां अन्य लोग अंधे पथभ्रष्ट और युध्दरत है वहां कृष्ण अनासक्त और तटस्थ है। जिनकी अनासक्ति भी समानान्तर विरोध में प्रकट है। वे कौरवो को अपनी सेना देने है और स्वयं पाण्डवों का साथ देते है। वे स्वयं निर्णय नहीं कर पाते कि किसका साथ दे। उन का यही संशय उन्हें आधुनिक संशयग्रस्त मानव का प्रतिनिधि बना देता है।

कृष्ण का चरित्र को धरातलो में ढलकर चलता है। एक और उनमें भावुक रहस्यवादिता है तो दुसरी ओर नितान्त धर्म निपेक्षता दार्शनिक, राजनीतिज्ञ और ईश्वर के रूप में चित्रित होते के उपरान्त भी पात्रों की विभिन्न प्रतिक्रियाएं होती है। बलराम उन्हें 'कुटबुध्दि कहते है।' गांधारी उनपर प्रभुता के दुरूप्योग का आरोप लगाती है और उन्हें वंचक तक कह देती है। 'अन्धायुग' के प्रारम्भ में ही कृष्ण को दिव्य आदर्शो की प्रतिमूर्ति मर्यादा रक्षक की संज्ञा दी गयी है। मर्यादा की उलझी हुई पतली डोरी को सुलझाने वाला एक मात्र अनासक्त निर्विकार और निर्लिप्त कृष्ण को ही कहा गया है। वास्तव में यहॉ कृष्ण का चरित्र सबसे अधिक रहस्यमयी प्रतीत होता है। अप्रत्यक्ष रूप से वे सब जगह विद्यमान है।

आधुनिकता और आधुनिक विचारधाराओं की भूमिका, विघटन और आन्तरिकता की खोज तथा आधुनिकता एवं समसामायिकता पर निखार करते हुए 'अन्धायुग' में पुराणकथा और युग–बोध के संघात से विकसित एवं सर्जनात्मक उन्मेष और संवेदना की नवीन भाषभूमि की प्रस्तुत किया गया है। 'अन्धायुग' को केवल परम्परागत मानदण्डों को आधार पर नहीं परखा जा सकता। 'अन्धायुग' में प्रतीक को प्रमुखता दी

गयी है। इसमें प्राचीन घटनाओं तथा मनःस्थितियों के साथ आधुनिक युग की विभिन्नता समान्तरता है। महाभारत के युध्द में अनास्था, अविश्वास और आचरण हीनता का भयंकर वातावरण बन गया था। उसमें 'आस्था' , विश्वास, आचरण और सृजन की चेतना श्रीकृष्ण के व्यक्तित्व से उद्भावित हुई।

डा. धर्मवीर भारती ने 'कनुप्रिया' में कृष्ण–कथा के स्थुल रूप को छोडकर भाव–बोध को अपनाया है। यहां कृष्ण के किशोर और ज्ञान–स्वरूप का स्मरण कराया गया है।भावत्मक स्तर पर कृष्ण के संम्पूर्ण जीवन का बौध्दीक विश्लेषण किया गया है। कनुप्रिया की कथा–ध्वनि में कृष्ण के प्रेमी और पुरूषोत्तम रूपो में प्राचीन और नवीन चेतना का अद्भुत संगम है। नर–लीला में वे राधा के प्रेमी थे तो पुरूषोत्तम रूप में वे समस्त सृष्टि का संचलन करते हैं। मानवीय और विराट रूपों में कृष्ण की प्रेम–भावना सर्वोपरि हैं।

'कनुप्रिया' राधा–कृष्ण' के परम्परागत प्रणय–प्रसंगो पर आधारित है जिसमें कथा प्रसंग, प्रतीक उपमान दार्शनिक, पृष्ठभूमि, वैष्णव महाभाव आदि परम्परागत है किन्तु इन पौराणिक मिथको, कवि समयों और राधा–कृष्ण के नवीन रूप में आधुनिक संदर्भो के अनुकूल अवतारणा की गयी है। रासिक शिरोमणि कृष्ण तथा कुटनीतिज्ञ कृष्ण–दोनों का ही कथानक में उल्लेख है। युध्द की कुटनीति के संचालन कृष्ण मन्मथ कियाकल्पों में भी पूर्णता निपुण है। वे इतिहास के सर्जक भी है, प्रेमी भी है, और जगत के कर्णधार भी है 'कानुप्रिया' में कनु अप्रत्यक्ष है तथापि में आधान्त उन्हीं के महत आदर्शो, युगोन्तर कारी सिन्धाक्ते, सशक्त जीवन–मुल्यों की परिव्याप्ति है। कृष्ण की मान्यताओं को टूटे क्षण, रीते धर के समान कवि ने असफल प्रामाणित किया है। कृष्ण के स्वधर्म, कर्म, दायित्व को संवेदनशीलता के अभाव में आधुनिक समस्याओं के निष्कृष्ट पर कोरे रंगे हुए निरर्थक आकर्षक शब्द घोषित किया है। उनके पाप–पुण्य, धर्माधर्म, करणीय–अंकरणीय, न्याय–दण्ड, क्षमाशील वाला युध्द असत्य प्रमाणित कर दिया गया है। उनके महान व्यक्तित्व को नकारा गया है किन्तु कृष्ण चरित्रकवि की अद्भूत सृष्टि है।

'कनुप्रिया' में कृष्ण को प्रेम अद्भूत दिखाया गया है तो वासना एषणा, शरीरजन्य इच्छाओं से सर्वथा परे लोकोत्तर आदर्शो पर टिका है। राधा के लिए कृष्ण सर्वस्व है जो शबरी में रास रचाते है, बांसुरी बजाकर राध और गोपियों को टेरते है तथा अंशत स्वीकार कर सम्पूर्ण बनकर लौटा देते है। कनुराधा को केवल राधा के लिए प्यार कर उसे ईश्वरत्व, निसत्वश आन्तरिक अर्थ, श्लीतल्व को नववधू की भांति पवित्र उनकी शक्ति है। वे लोकोत्तर पुरूष है जो विप्तीत और विरोधी परिस्थितियों में भी जीने में समर्थ है। उन्होंने सहज प्रेम के तन्मयकारी क्षणों को भी भोगा है। इसरूप से भिन्न उनका रूप है युग–व्याख्याता, दार्शनिक, युग–दृष्टा, राजनितिज्ञ और यूग प्रतिता का चडित्रगड एसी विषमताए दनके उदात्त, अलौकिक महानचरित्र की दयीतक है।

Gurukul International Multidisciplinary Research Journal (GIMRJ)
with
International Impact Factor 2.254

ISSN No. 2394-8426
Dec – 2015
Issue – I, Volume – V
Online Journal

चंद्रपूर जिल्हयाचे वन व्यवस्थापन व वनसंवर्धन

डॉ. सपना आर वेगीनवार

सरदार पटेल महाविद्यालय,चंद्रपूर

(Abstract) सारांश :–

मनुष्य अन्न, वस्त्र, निवारा या तिन मुलभूत गरजा भागविण्याकरीता वनांचा उपयोग करीत आलेला आहे निवारा ही गरज वनांपासून पुर्ण झालेले आहे. त्यामुळे इमारत बांधणी तसेच घरगुती कामे तसेच उद्योगात इंधन म्हणुन वनाची झालेली दिसून येते.

वृक्षापासून विविध आकर्षीत वस्तू बनविल्या जातात व त्यापासून लोकांना उत्पन्न प्राप्त होते त्यामुळे सुध्दा वृक्षतोड झालेली दिसते जंगलामध्ये विविध औषधी उपयुक्त झाडे आढळून येतात त्या वृक्षांचे पान, फुल, फळ, साल, यापासून आयुर्वेदिक औषधे तयार केली जातात याकरीता देखील वृक्षतोड केली जाते ही वृक्षतोड थांबवणे अतिशय गरजेचे आहे कारण दिवसेंदिवस वनाचे प्रमाण कमी होत चालेले आहे त्याचा परिणाम पर्यावरणावर होतांना दिसून येतो. 39 टक्के जंगल एकटया महाराष्ट्रात दिसून येतात त्यापैकी 20 टक्के जंगल चंद्रपूर जिल्हयातच आहे त्यामुळे वनविभागाला संरक्षण करणे गरजेचे आहे. त्याकरीता भारत सरकारने अनेक योजना राबविल्या आहे. नुकताच चंद्रपूर जिल्हा कारखाण्याच्या प्रदुषणामुळे वनाच्या –हासामुळे सर्वात प्रदुषीत भाग म्हणून जाहिर झालेला आहे. या भागातील प्रदुषण कमी व्हावे व विकास व्हावा याकरीता आपल्याला व्यवस्थापन व वनसंवर्धन करणे गरजेचे आहे.

Keyword (बीजशब्द) :–

वृक्षवल्ली, वनसंवर्धन, वनव्यवस्थापन, वनसंपत्ती.

Introduction (प्रस्तावना)

पृथ्वीवरील पंचमहाभुतामुळे जीवनचक्र अनादी काळापासून चालत आहे. सुर्यापासून प्रकाश व प्रकाश संश्लेषणामुळे पाणी व कार्बनडाय ऑक्साईड हा वायु एकत्र येऊन वनस्पतींची निर्मीती झाली आहे. नैसर्गिक देण असलेल्या सर्व वनस्पतींचे संरक्षण करणे हे मानवाचे कर्तव्य आहे.

वनसंवर्धन करणे काळाची गरज भासू लागली आहे कारण आधुनिकीकरणाच्या नावाखाली वनांवर मानवी हस्तक्षेपाच्या वाढत्या प्रमाणामुळे केवळ मानवच नव्हे तर सर्व सजीव धोक्यात आले आहे आणि या परिस्थीतीला मानवच जबाबदार आहे. मानव हा पर्यावरणाचा एक अविभाज्य घटक आहे आणि त्याने वनसंवर्धनाकरीता विश्वस्त म्हणून प्रामाणिकपणे कर्तव्य केल्यास पर्यावरणाचा समतोल सुरक्षित राहु शकतो. चंद्रपूर जिल्हयातच नव्हे तर राज्य, राष्ट्रीय व आंतरराष्ट्रीय पातळीवर सजिव जीवसृष्टीचे जीवन सुरक्षित ठेवू शकतो.

वनव्यवस्थापन व वनसंवर्धनाचा अर्थ पुढील प्रमाणे आहे

आधुनिकीकरणामुळे मानवाने स्वतःपुरताच विचार न करता भविष्यातील परिस्थीतीचा आढावा घेतला तर असे दिसुन येईल की, वृक्षतोड, जंगलतोड न थांबवल्यास कालांतराने जमीनीची धूप होऊन वाळवंट निर्माण होईल या करीता आजच्या युवकांनी आणि समाज व्यवस्थापकांनी भविष्याची गरज ओळखुन वनव्यवस्थापन किती गरजेचे आहे यावर विचार करावयास हवा व त्याकडे मंदगतीने वाटचाल सुरू असली तरी वनव्यवस्थापन हा एक देशा समोर मोठा प्रश्न आहे या दृष्टिने वाटचाल करणे गरजेचे झाले आहे.

सर्वप्रथम भारतात वनव्यवस्थापन सविस्तरपणे लॉर्ड डलहौसी यांनी 1855 साली लागू करण्यात आला. 1864 मध्ये सर डिट्रीज ब्रॅडीस या जर्मन वन शास्त्रज्ञांनी भारतात पहिले महानिरीक्षक म्हणून नियुक्त केले. वनव्यवस्थापनामध्ये सर्वप्रथम वनक्षेत्रांचे सीमांकन करून नकाशे काढण्यात आले त्यांनतर वनांचा सविस्तर अभ्यास करून नियोजन केले गेले. वनोपजांच्या निष्कर्षणाची व पुनरूत्पादनाचा पध्दतशीर कार्यक्रम तयार करून त्यानुसार शास्त्रोक्त व्यवस्थापन करण्यात आले.

वनात हवे असणारे वृक्ष व इतर वनस्पती समुहाचे उत्पादन करण्याचे व त्यांची निगा राखण्याचे शास्त्र म्हणजे वनस्पती विज्ञान व परिस्थिती विज्ञानशास्त्र होय. वनसंवर्धनशास्त्र हे वनातील एकुण वनस्पती समुदायाच्या पुनरूत्पादनाशी आणि वाढीशी संदर्भात असते जमिनीच्या कमाल उत्पादन क्षमतेचा वापर करून अखंड उत्पादन साधण्याच्या तत्वानुसार वनव्यवस्थापनाच्या हेतुनुसार वनस्याची निर्मीती करणे, निगाराखणे विकास करणे हा या मागचा उद्देश आहे.

चंद्रपूर जिल्हयाचा विचार केल्यास चंद्रपूर एकुण भौगोलिक क्षेत्राच्या 39: पेक्षा अधिक भाग जंगलांनी व्यापला असून महाराष्ट्रातील एकुण जंगला पैकी 20: जंगल हे या जिल्हयात आहे. विविध प्रकारच्या वन उत्पादनांनी समृध्द हा जिल्हा आहे. यात उत्तम प्रकारचे सागवान, बांबु, तेंदुपत्ता, मोहाची फुले हे येथील प्रमुख उत्पादने आहेत. तिथे विविध प्रकारच्या वनस्पती आढळतात त्या आयुर्वेदीक औषधांकरीता उपयोगी येतात उदा. बिजा, लाख, काथ, बांबु, गोंद, सहद, हिरडा.

विषयाचे महत्व :–

आधुनिक काळातील औद्योगिक क्रांतीमुळे चंद्रपूर जिल्हयातील जंगल तोडून मोठे मोठे उद्योगाची स्थापना करण्यात आली त्यामुळे प्रदुषण वाढले आज चंद्रपूर जिल्हा सर्वात प्रदुषित जिल्हा म्हणून ओळखला जातो चंद्रपूर जिल्हयाला वनव्यवस्थापन व वनसंर्वधनामुळे प्रदुषण कमी होण्यास मदत होईल वनांची जंगल तोड कमी करून वनसंवर्धनाला प्राधान्य दिल्यास प्रदुषण कमी होण्यास मदत होईल वनांपासून आपल्याला किती फायदे आहेत याची जाणीव अनेकांना नाही वन्यजमातीचे अस्तित्व धोक्यात येईल तसेच वनौषधी, लाकुड तसेच विविध उत्पादने वनांपासून प्राप्त होत असतात वृक्षतोडीमुळे

जागा ओस पडते पाउस पडल्यानंतर एका ठिकाणी न थांबता पाणी वाहुन जाते त्यामुळे पूर येतात, जमिनीची धूप होते जमीन ओसाड झाल्यास नापीकी होईल कालांतराने वाळवंटात रूपांतर होईल अश्या अनेक समस्यांना तोंड द्यावे लागेल वनाच्या –हासामुळे वन्यजिवांचे वास्तव्य नष्ट होत आहे आणि या सर्वांचा परिणाम लोकजीवनावर होत आहे यासाठी समाजामध्ये वनाचे महत्व मानने किती गरजेचे आहे यासाठी चंद्रपूर जिल्हयातील संयुक्त व्यवस्थापन समितीचा अभ्यास करण्याचे ठरविले.

उद्दिष्टे :–

1. चंद्रपूर जिल्हयाचा वनसंपत्तीची निगा राखणे.
2. चंद्रपूर जिल्हयाच्या वनांचे व्यवस्थापन करणे.
3. चंद्रपूर जिल्हयाचे वनसंवर्धन करणे.

संशोधन अभ्यास प्रकल्पाची गृहितके :–

1. वनव्यवस्थापनेचे महत्व लोकांना माहित नाही.
2. वनसंवर्धनाचे मार्ग लोकांना माहिती नाही.
3. वनांच्या योजना ग्रामीण लोकांपासून खूप दूर आहेत.
4. वनाच्या तोडीमुळे मानवी जीवन धोक्याचे आहे.

उपाययोजना :–

1. संयुक्त वनव्यवस्थापन अंतर्गत कार्यक्रमात सामान्य जनतेचा सहभाग, तसेच विशेषतः स्त्रीयांचा सहभाग करणे.
2. वना व्यतिरीक्त पर्यायी इंधनाचा वापर करण्यास जनजागृती करणे.
3. वनसंवर्धनाकरीता वेगवेगळया स्तरावर शाळेत, महाविद्यालय घरोघरी जाऊन वृक्षाचे महत्व पटवून देवून विद्यार्थ्यामध्ये सामान्य जनतेचा जनजागृती करणे.
4. वनक्षेत्रावरील अतिक्रमणास प्रतिबंध घालणे वनामधील अवैध चराईस प्रतिबंध घालणे वनामधील विशीष्ट राखीव क्षेत्रास चराईकरीता मंजूरी देणे.
5. वन्यपशुपक्षी संरक्षण करणे व त्यांच्यासाठी जंगलामध्ये पाणवठे बांधणे.
6. उत्कृष्ठ वनग्रामाना पुरस्कार प्रदान करणे.

शिफारसी:–

1. वनाखाली येणा–या जमिनीचे क्षेत्रफळ वाढविण्यासाठी सर्व पातळीवर प्रयत्न व्हावयास हवे. कमी प्रतिच्या जमिनीवर निलगीरी व सुभाभुळाची लागवड करावी.
2. वनमहोत्सव स्वयंसेवी संघटनानी राबवावी लोकांना वन्यप्राणी व वनाविषयी माहिती देवून ''वृक्षवल्ली आम्हा सोयरे वनचरे। पक्षी ही सुस्वरे आळविती. आपल्या जिवनासाठी वन किती गरजेचे आहे लोकांना महत्व पटवून देवून जनजागृती करण्यात यावी.
3. वन विभागाव्दारे रोपवाटीकेतून लोकांना रोपे विनामूल्य द्यावी रोपवाटीकेतील प्रत्येक झाडाचे महत्व पटवून द्यावे.
4. गावातील लोकांच्या सहकार्याने पडीत जमिनीवर तसेच खाजगी जागेवर वनीकरण करण्याला वनविभाग तसेच स्वयंसेवी संघटनेनी प्रोत्साहीत करावे.
5. पर्यावरणातील समतोल राखण्याकरीता वनाचे प्रमाण वाढविणे, वनचराई तसेच जंगलातील वृक्षतोडीवर नियंत्रण ठेवणे वृक्षतोड झाल्यास सक्त कारवाई करण्याचे निर्देश देण्यात यावे.
6. ग्रामीण जनता वनसंवर्धन व वनव्यवस्थापन करण्याकरीता प्रोत्साहीत होण्याकरीता महाराष्ट्र शासन निर्णय क्रमांक एफ. डी. एम. 2005 प्र. क्र. 313/फ2 दि. 23/11/2006 नुसार ''संत वनग्राम उत्कृष्ठ वन व्यवस्थापन समिती पुरस्कार ''वनविभाग महाराष्ट्र राजयाव्दारे राबविण्यात येत आहे. आपले ग्राम प्रदुषण मुक्त व वनराईने नटलेले कसे होईल याकरीता महाराष्ट्र शासनानी जिल्हास्तरीय, राजयस्तरीय पारितोषीके जाहिर केले आहेत यामुळेच ग्रामीण जनतेला प्रेरणा व प्रोत्साहन मिळेल.

वनव्यवस्थापन व वनसंवर्धनाची गरज ही केवळ चंद्रपूर जिल्हयातच मर्यादित नसून राज्यपातळीवर,राष्ट्रीय पातळीवर आज नितांत गरज आहे. जंगलतोडीमुळे पृथ्वीवरील तापमानामध्ये बदल झालेला आहे. ऋतुचक्रात सुध्दा बदल झालेला दिसतो जर आपण जंगल तोडीला थांबवले नाही तर भविष्यात देशातच नाही तर जगासमोर अनेक प्रश्न उद्‌भवतील त्यात आर्थिक, शारिरीक, सामाजिक, आरोग्य विषयक प्रश्न निर्माण होतील याकरीता या विषयाला महत्व देऊन वनांचे व्यवस्थापन व वनसंवर्धन करावयास हवे. जंगलतोडीस आळा घालण्यात यावा या विषयी कायदेशीर बाबींचा विचार करावा लागेल.

संदर्भ सुची :–

1. विश्वकोष क्रं. 11 पान नं 793
2. वनश्री आणि वनविज्ञान पुणे 1986 व. भ. दशपूत्रे
3. वनव्यवस्थापन मुंबई 1985 अ. म. मसलेकर
4- www.mahaforest.nic.in

Gurukul International Multidisciplinary Research Journal (GIMRJ)
with
International Impact Factor 2.254

ISSN No. 2394-8426
Dec – 2015
Issue – I, Volume – V
Online Journal

A survey on Distribution and Conservation of Grus Antigone Antigone (sarus crane) and its habitats in Vidarbha Region of Maharashtra

Dr. D. R.Gabhane
Samarth Mahavidyalaya Lakhani
Email- dr_gabhane@rediffmail.com
cell 9423640251

Abstract-

Sarus crane is the tallest flying bird belongs to the family of large birds. It lives in wetland areas in many parts of the world but the population of it becoming less and less day by day. In India its population is confined to Rajastan, Uttarpradesh, Gujrat, Haryana, Bihar and eastern part known as Vidarbha of Maharashtra specifically in Gondia and Chandrapur Districts. Being included in the Red list of IUCN, there is a urgent need to conserve this bird and it's habitat.

The present survey is carried out by the author since 2011 in eastern Vidarbha region of Maharashtra. The wetland area of this region was surveyed by the author. During the survey the wetland areas of the villages viz. ***Sringarbandh, Ghatetimani, Paraswada, Zilmili*** in Gondia district, and ***Junona*** lake and ***Lohora*** lake in Chandrapur district visited frequently, Saras crane was sited in ***Sringarbandh, Ghatetimani, Zilmily*** wetland area. The pair of Sarus crane at ***Sringarbandh*** was found dead in the year 2011. It was killed by an insecticide. Some of the habitat was disliked by Sarus crane due to unwanted hindrance of human being. The incident of egg and infants stealing was also recorded in this area. These factors created an urge to protect the Sarus crane and it's habitat as an immediate requirement to protect and conserve this beautiful bird. The author conducted a survey cum study in this area.

The present paper is based on this survey and deals with the habit and habitats of the Sarus crane, it's distribution, significance of the bird, threats to this bird and suggest a strategic planning for the conservation of Sarus crane.

Keywords :-

Insecticides, Sarus crane, ***Junona*** lake and ***Lohora Sringarbandh, Ghatetimani,***

Introduction –

Sarus crane (Grus antigone antigone) is flying iconic species of freshwater ecosystem near close proximity to humans. It is basically a wetland bird and prefers nesting in a marshy land. a fully mature Sarus crane is 4 to 5 ft. in height and during flight it spreads wings to 8ft. long. Both the sexes are similar but male is slightly larger than female.

There are 9000 species of birds of which 1250 species of birds found in India. Sarus belongs to the family of large birds with long legs and a long neck. They live in marshy area in many parts of the world. South America and Antarctica are the only continents with no cranes. Most cranes that live in the Northern hemisphere migrate south each far from nesting grounds in the North. More species of cranes live in Africa, Asia and Europe than in North America. Their population is more than 1000 in India and Australia, but less than 1500 in Bangladesh, Nepal and Pakistan. Their breeding occurs in Cambodia, Myanmar, Vietnam also. There are about 15 species of cranes. According to detailed survey of status of sarus crane undertaken by Prakash Gole, sponsored by Ministry of Environment and Forests, Govt. India, it has lost its hold over most of its earlier distribution range. Gole (1989) stated in the report on the status and Ecological requirement of Sarus crane that its area of distribution may be redrawn between Porbandar to Hissar in the west, passing through Pilibhit in north to Gorakhpur in the east. In India it includes plains of Northern, North western and Western India and Western half of Nepal Tarai. It is most common in U.P. Rajasthan, Gurat and Haryana and less in Bhihar & M.P.Sarus crane Grus antigone antigone once had its distribution range form the Himalayan foothills to the Godavari plain in the south.

Today their distribution is fragmented (Vyas Rakesh,2002). The population of Indian Sarus (G.Antigone) is 8000 to 10000, Eastern Sarus (G.sharpii) is 500 to 1500 and Australian Sarus (G.gillis) is less the 500. The Sarus crane is a large bird requiring huge area for foraging and brooding.

Discussion :-

Distribution of Saras crane in Maharashtra:-

Maharashtra, one of the vast states of India, formed on 1st May 1960. It has rich animal and plant biodiversity. There are near about 581 species of birds in the state. Vidarbha is the Eastern part of Maharashtra is also rich of plant & animal biodiversity.

Out of 11 districts of Vidarbha ,Sarus crane prominently notified in Gondia and Chandrapur districts. The habitat of bird is generally located in wetland area and paddy field of this region of these districts.

Significance of Saras crane :-

Sarus crane has religious importance in epic Ramayana. It is an ecologically significant bird and feeds on the pests of crops. So it help to the farmers so it is a friend of farmers. But the mark of civilization has pushed this bird to the margin of existence. The bird is endangered due

to destruction of its habitat by the encroachment of wetland area, pollution, hunting, use of insecticides and pesticides in the crop fields. The eggs of Sarus crane are stolen to make medicine to cure cattle eye diseases.

Threats to Sarus crane:-

The local people and farmers do no know the importance of this bird. The eggs of the Sarus crane stolen and consume by local people, their poaching of this bird of meet, there is lack of food for cranes, use of insecticides and pesticides for agriculture responsible for the threats to this bird. Destruction of their breeding area (i.e. nest) is the chief threat to this bird. The bird is include in schedule – IV according to wildlife (Protection) act, 1972 and classified as Vulnerable and included in Red Data List of International Union Conservation of Nature (IUCN). According to D.Rajshekhar and others (2008), there is need to create awareness amongst the local people for the conservation of wetland area through environment education, outreach programmes targeting the village communities & other stackholders of ecosystem. The conservation of wetlands and their management is crucial factor for the survival of Sarus crane. Due to this, the distribution of this bird is restricted. Their population is less and remarkably decreasing. So there is immediate need to conserve Sarus crane and its habitat for its healthy survival. Therefore the present survey is undertaken to study distribution & conservation of Sarus crane and its habited in Vidarbha region of Maharashtra.

Material and Method

For the present work, the sites of Sarus crane located in eastern Vidarbha region of Maharashrta(Gondia,Chndrapur and Bhandara district are visited and preliminary information is collected by interviewing the local people. The related literature is also surveyed through published work and INTERNET. Special help is taken from NGO's working in this region. The help and guidance is taken from concerning department of Government wherever necessary. The observations are noted with the help of photography and data is collected by actual visit to the sites of the bird. The objectives of the present survey are as follows.

1) To study distribution and the habitats of Sarus crane in Vidarbha region of Maharashrta specially eastern part.
2) To study the ecological significance of Sarus crane.
3) To suggest strategic planning for conservation of Sarus crane and its habitat.

Result :-

From the above survey the following observations are pointed out :-

1. Breeding of Sarus crane mainly in the month of July to August.
2. The nest of the bird is located near the wetland area and paddy fields.
3. The bird easily become family to the local people but very sensitive to small disturbance to its habitats.
4. There is regular breeding at Ghatetimani village in Gondia District 10 years. The village now is known as ***Sarus Gram***.
5. The bird also located at the Zilmili lake , Parsawada, Sringarbandh**,** (Gondia District) and Junona lake (Chandrapur District)

Conclusions :-

From the above survey conducted it can be concluded that sarus crane is restricted to the eastern part of the vidhrbha region Maharashtra. The bird is in need of strategic planning of conservation regarding present status and its habitats. Also there is need of conservation and rejuvenation of its past or left habitats of Sarus crane. The awakening amongst the local people of this region regarding conservation of the bird is a need for the survival of it. The farmers nearest to the habitats of Sarus crane should be given special financial assistance for the conservation of the bird. Appointment of ***Sarus doot orSarus Mitra or Sarus Palak*** may be helpful for the conservation of the bird. For this task NGO's working in this field, government agencies, environmentalist and researchers can be easily contribute towards the conservation plan.

Acknowledgement :-

The author is verymuch thankful to Mr. Mukund Dhurve, Mr. Sanjay Akare, of ***Gondia Nisarg Mandal*** and Mr. Manish Rajankar, of Bhandara Nature club (presently working on wetland areas of Gondia and Bhandara district) for their kind co- operation. He also thankful to Mr. Anil Nayar of WTI (Goregoan) and Dr.C.J.Khune and Dr. Nagpurkar of M.B.Patel College Sakoli for their helpful and informative co-operation.

References :-

1) The World Book Encyclopedia, Vol. 4 – World book Inc. Chicago 1999 P.No.1117
2) Dhurve Mukund and etals- Status of Sarus Crane (Grus antigone antigone) in Maharashtra. Newsletter for Birdwatchers P.No. 81-82.
3) Grewal, Bikram (2000) : Birds of the India Subcontinent. Local Colour Limited, Hongkong, P.43
4) Gole Prakash (1989): Status of ecological requirements of sarus crane phase – II. Project Report sponsored by Ministry of environment and forests, Govt. of India.
5) Kaur Jatinder, nair Anil ; Chaudhary B. C : Conservation of the Vulnerable Sarus crane Grus antigone antigone in Kota, Rajashtan, India : a case study of community involvement (2008) Cambridge Journals online vol.42 No.3.
6) Mukharjee, Aeshita; Soni, V.C.; Borad C.K.; Parasharya B.M.(2000): Nest and Eggs of Sarus crane (Grus Antigone Antigone LINN) Zoo's print Journal 15(12) : P. 375-385.
7) Paliwal, G.T, Bhandarkar S.V, Bhandarkar, W.R. – Insecticides Killing Th Thereatened Sarus crane In Eastern Vidarbha, Maharashtra : A Case Study. Indian Streams Research Journal P.No 1-5.
8) Rajasekar, D ; Sharma Jitendra; Yogalaxmi J : Participatory wild life conservation in keshopur Chahamb community Reserve(India's first) in Punjab – Past, Present and Future Management Strategies. Proceedings of Tall 2007 : The 12the World lake Conference p. 1247-1253-

   Vyas Rakesh (2002) : Status of Sarus Crane Grus Antigone Antigone in Rajasthan and its Ecological Requirements. Zoo's Print Journal 17(2) 691-695
9) www.bird.in
10) http://len.wikipedia.org/wiki/saruscrane.

! # !
!$ %
& !' & % (

गोषवारा –

फार पुर्वीपासूनच पती पत्नीला जीवनरथाची दोन चाके संबोधण्यात येत आहे आणि ते आजही खरे आहे. पतीने घराची आर्थिक बाजू सांभाळावीत स्त्रीने काटकसरीने व गरजेनुसार पैशाचा (अर्थाचा) उपयोग करावा. त्याकरीता पतीला साथ देणारी गृहिणी शिक्षित असेल, तिला अर्थाचा कुठे,केंव्हा व कसा उपयोग करावा हयाचे ज्ञान असल्यास त्या ज्ञानाच्या आधारे ती पैसा व गरजांचे योग्य समायोजन साधू शकेल हे ज्ञान तिला गृहअर्थशास्त्राचा माध्यमातून प्राप्त होवू शकते कारण गृहअर्थशास्त्राचा मुख्य हेतू सुखी, समृध्द कौटूंबिक जीवनाची निर्मिती करणे हा आहे. अशा समृध्द, सुखी कुटुंबातून चांगल्या व्यक्ती निर्माण होत असतात. पर्यायाने देशाचा विकास चांगला होत असतो. राष्ट्र निर्मितीचा मूलभूत पाया म्हणजेच कुटुंब होय.

बीजशब्द –

तांत्रिक युग सर्वांगिण विकास, जीवनमूल्य, व्यवस्थापन, सर्वेक्षण, व्यक्तिमत्व, सृजनात्मक, स्वयंरोजगार

प्रस्तावना –

फार पूर्वीपासूनच पती पत्नीला जीवनरथाची दोन चाके असे संबोधण्यात येत आहे आणि ते आजही बऱ्याच प्रमाणात अंशी खरे आहे. पतीने घरातील आर्थिक बाजू सांभाळावी तर स्त्रीने काटकसरीने व गरजेनुसार त्याचा उपयोग करावा असेच चालत आले आहे. जसजशी विज्ञानाची प्रगती होत गेली तसतशी देशाची औदयोगिक प्रगती पण होत गेली त्यामुळे ग्रामिण भागातून बऱ्याचशा जनतेचे स्थलांतर होवून नागरीकरण होवू लागले. औद्योगिकरणामूळे नविन नविन वस्तूचे उत्पादन होवू लागले. आकर्षक जाहिरातींच्या माध्यमातून त्या वस्तूची माहिती जनसामान्यांपर्यंत पोहचू लागली आहे. विज्ञानाच्या प्रगतीबरोबरच तंत्रज्ञानही प्रगत होत आहे. पूर्वी जाहिरात बघून ती वस्तू दुकानात जावून खरेदी होत असे. आज जाहिरात बघीतल्यावर तंत्रज्ञानाच्या सहाय्याने वेगवेगळ्या तांत्रिक sites वर जावून त्या वस्तूची इतंभूत माहिती मिळविल्या जाते व तेथूनच घरपोच मागविल्या जाते. तेथेच पैसे पण भरल्या जातात. हे पैसे online transfer करण्याकरीता विविध प्लॅस्टीक मनी कार्डांचा वापर केल्या जात असतो. पण हे सर्व करीत असताना कींवा विविध नविन नविन वस्तूच्या खरेदीकरीता स्वत:ची आर्थिक स्थिती चांगली असणे गरजेचे आहे. एकट्या व्यक्तीच्या मिळकतीत ते शक्य होणे कठीणच असते अशावेळी पतीला साथ देणारी गृहिणी शिक्षित असेल तिला पैसा हया साधनाचा कसा कुठे व केंव्हा उपयोग करावा हयाचे ज्ञान असल्यास त्या ज्ञानाच्या आधारावर ती योग्य असे पैसा व गरजांचे समायोजन साधेल.

पण हे समायोजन साधण्याचे ज्ञान गृहिणीला शास्त्रोक्त पध्दतीने प्राप्त झाल्यास त्याचा उपयोग ती जास्त योग्य प्रकारे करु शकेल.

आजच्या या तांत्रिक युगात फक्त आर्थिक प्रगती चांगली होवून चालत नाही. कारण पैशाच्या सहाय्याने विविध गरजांच्या पूर्ततेमुळे चांगल्या आरोग्याची प्राप्ती होईलच असे नाही. जागतीक आरोग्य संघटनेने (WHO) ने आरोग्याची व्याख्या करताना

म्हटले आहे की, ""आरोग्य म्हणजे रोगाचा अभाव नव्हे तर शारिरीक, मानसिक, भावनिक, सामाजिक, आर्थिक विकास म्हणजे आरोग्य होय " WHO ने एवढया व्यापक प्रमाणात आरोग्याचा अर्थ स्पष्ट केला आहे. पैसा मिळाला म्हणजेच सर्वकाही नाही तर व्यक्तीचा सर्वांगिण विकास होणे कमप्राप्त आहे.

"जिच्याहाती पाळण्याची दोरी ती जगाला उध्दारी " असे म्हटल्या आते. कुटुंबातील जगाला उध्दारणारी स्त्री जर शिकलेली असेल तिला, सर्वांगीण विकास म्हणजे काय? त्याची काय आवश्यकता आहे? व्यक्तीमत्व विकासात त्याचे महत्व काय? या सर्वांगिण विकासात कोणकोणत्या विकासांचा समावेश होतो? तो विकास कसा साधावा? त्या करीता काय केले पाहिजे. याबाबतचे विस्तृत ज्ञान असल्यास नक्कीच ती त्या ज्ञानाचा उपयोग कुटुंबातील व्यक्तीच्या विकासाकरीता करून घेईल.

वरील सर्व प्रश्नांची उत्तरे गृहिणीला गृहअर्थशास्त्राचा शिक्षणाच्या माध्यमातून प्राप्त होतात. गृहिणी ही सुगृहिणी बनते कारण गृहअर्थशास्त्राचा मूख्य हेतू समृध्द कौटुंबिक जीवनाची निर्मिती करणे हा आहे. अशा समृध्द कुटुंबातूनच चांगल्या व्यक्ती, नागरीक निर्माण होत असतात. चांगल्या समाजाची रचना तयार होत असते. पर्यायाने देशाचा विकास चांगला होत असतो. राष्ट्रनिर्मितीचा मूलभूत पाया म्हणजे कुटुंब होय.

उद्दीष्ट्ये –

१) सुखी समृध्दी जीवनाची प्राप्त करणे.

२) विकसित राष्ट्राच्या निर्मितीकरीता सहकार्य करणे.

३) कुटुंबातील व्यक्तींचा सर्वांगिण विकास करणे.

४) संपन्न व्यक्तिमत्वाचा विकसित करणे.

गृहितके –

१) गृहअर्थशास्त्र संपन्न व्यक्तिमत्व निर्माण करण्यात सहकार्य करते.

२) गृहअर्थशास्त्राचा विकसित राष्ट्राच्या निर्मितीत सहभाग असतो.

३) गृहअर्थशास्त्राच्या शिक्षणाच्या माध्यमातून विकसित कुटुंबाची निर्मिती होते.

१) उत्तम कुटुंबाच्या निर्मितीत गृहअर्थशास्त्राचे योगदान –

विचार आणि कृतीला चांगल्या जीवनमूल्यांची साथ मिळाली तर स्वत: जवळीळ उपलब्ध साधनांचे योग्य व्यवस्थापन करुन सुखी समाधानी जीवनाची प्राप्ती करुन घेता येते. या व्यवस्थापनात वेगवेगळया आधुनिक तंत्रज्ञानाचा उपयोग करून साधनांची बचतही करता येत असते.

२) कुटुंबातील सदस्यांचे स्वास्थ्य निरोगी ठेवण्यात योगदान –

आरोग्य व अन्नाचा सहसंबंध आहे. कमी पैशात आहारद्वारे योग्य पोषक घटकांची प्राप्ती कशी करावी. हे पोषक घटक काय? त्यांचा आपल्या शरीराला कसा व काय उपयोग होतो. जीवनाच्या विविध अवस्थांमध्ये त्याची आवश्यकता किती? कुपोषण कसे टाळावे. परिणामी सुदृढ आरोग्य ठेवण्याकरीता गृहअर्थशास्त्रात उपयोगात येणाऱ्या विविध पध्दती व तंत्रज्ञानाचा मदत होत असते.

गृहिणी तर जवळपास सर्वच स्त्रीया बनतात पण सुगृहिणी बनण्यास गृहअर्थशास्त्र मदत करीत असते. आधुनिक तंत्रज्ञानाच्या मदतीने आहार विषय सर्वेक्षण केल्याने त्या सर्वेक्षणाचा लोकांचा आहार विषयक दर्जा वाढविण्यास मदत होते.

३) कुटुंबातील बालकांचा विकास साधने –

आजची लहान मुले ही उदयाचे जबाबदार नागरीक आहेत. या लहान मुलांवर चांगले संस्कार कसे करावेत, लहानमुले जास्तीत जास्त वेळ आपल्या आईबरोबर घालवीतात. त्यामुळे मुलांच्या जडणघडणीत आईचाच मोलाचा वाटा असतो व तिला याविषयीच माहिती, ज्ञान असल्यास ती मुलांमध्ये एक चांगला व्यक्तिमत्व विकसित करू शकेल. व हे ज्ञान तिला गृहअर्थशास्त्राच्या शिक्षणातून प्राप्त होते.

४) स्वयंरोजगार निर्मितीत सहकार्य –

जसजसे विज्ञान प्रगत होत आहे तसतसे नविनशोध लागून नविन तंत्रज्ञान विकसित होत आहे. सर्वच क्षेत्र नविन तंत्रज्ञानाने व्यापलेले आहे. नविन तंत्रज्ञानमुळे आंतरराष्ट्रीय बाजारपेठेत भारताने आपली निर्यात वाढवीली आहे. त्यामुळे दोन देशातले व्यापारी संबंध समृध्द होण्यात मदत होतच आहे. गृहअर्थशास्त्रामार्फत विद्यार्थीनीं विविध कलां आत्मसात करतात. हया कलांचा उपयोग करताना आधुनिक तंत्रज्ञान उपयोगात आणल्यास सृजनात्मक कार्य करता येईल व त्यामधून ती तिच्या कुटुंबाला आनंद देवू शकेल. गृहअर्थशास्त्र विद्यार्थीनींमध्ये आत्मविश्वास निर्माण करते. त्या आत्मविश्वासामार्फत स्त्रिया बाजारपेठेत स्वत:च्या सृजनात्मक वस्तु आणू शकतात गृहअर्थशास्त्रामार्फत आहारशास्त्र, बालकांचा विकास या सोबतच वस्त्रशास्त्राविषयी माहिती दिल्या जाते स्वयंरोजगार कसा निर्माण करायचा हयाचेही ज्ञान गृहअर्थशास्त्रामार्फत प्राप्त होत असते.

नविन तंत्रज्ञानाचा उपयोग करून विद्यार्थीनी आहारविषयीची नवीन माहिती ग्रामिण लोकांपर्यंत पोहचवू शकते. परिणामी लोकांचा आरोग्याचा दर्जा सुधारतो नविन तंत्रज्ञान कसे, का उपयोगात आणावेत हयादृष्टीने त्यांची मनोवृत्ती विकसित करता येते एकंदरीत जाणिव जागृतीचे कार्य गृहअर्थशास्त्राच्या गृहिणी करतात.

आधुनिक तांत्रिक युगात समृध्द जीवन जगण्यासाठी संपन्न व्यक्तीमत्व असणे गरजेचे आहे व हे संपन्न व्यक्तिमत्व घडविण्यात गृहअर्थशास्त्र मोलाचे सहकार्य करीत असते.

निष्कर्ष –

गृहिणी जवळ जर नविन नविन तंत्र हाताळण्याचे ज्ञान असेल त्यांना त्याची ओळख असेल तर ती गृहिणी या आधुनिक तांत्रिक साधनांचा उपयोग करून स्वत:चे व आपल्या कुटुंबाचे आरोग्य चांगले ठेवण्यास पर्यायाने सुखी, समृध्द, संपन्न जीवन आपल्या कुटुंबाला प्राप्त करून देवू शकते. व हे ज्ञान तिला गृहअर्थशास्त्राच्या शिक्षणातून प्राप्त होते.

संदर्भ सूची –

१) आहार व पोषण – सरल लेले
२) आहार व आरोग्य – त्रिवेणी फरकाडे
३) सामाजिक संशोधन – पु. ल. भांडारकर

Gurukul International Multidisciplinary Research Journal (GIMRJ)
with
International Impact Factor 2.254

ISSN No. 2394-8426
Dec – 2015
Issue – I, Volume – V
Online Journal

Isolation and Characterization of Bacteriocin of Lactobacillus sp. From Dairy product

Atul T. Sirsat, Dr. P. M. Tumane, Durgesh Wasnik

Post Graduation Teaching Department of Microbiology, R.T.M.N.U, Nagpur.

Abstract:

Bacteriocins are family of antimicrobial peptides. These substances have increasing interest. Their proteinaceous nature implies their putative degradation in the gastro-intestinal tract of man and animals. This suggests that some Bacteriocin-producing LAB or purified Bacteriocin could be used as natural preservative in food industry (Atrihet al., 2001).

The sole purpose of the project is to isolate lactic acid bacteria, mainly lactobacilli sepsis from curd and raw milk samples, followed by the identification of the isolated species by RAPD, Biochemical examination and microscopic examination then extraction of the Bacteriocin by ammonium precipitation method and test antibacterial activity against some test organisms *Escherichia coli*, *Pseudomonas aeruginosa* and *Staphylococcus aurous* which is collected from P.G department of microbiology R.T.M.N.U, Nagpur and comparison with standard antibiotics.

Keywords :- Bacteriocins, lactobacilli sepsis, antibacterial, etc

• Introduction:

Lactic acid bacteria are Gram-positive, non-sporulating microaerophilic bacteria whose main fermentation product from carbohydrate is lactate. Lactic acid bacteria (LAB) are non pathogenic to human and their antimicrobial peptides (bacteriocins) have been used as food biopreservative. Bacteriocins are ribosomally synthesized antimicrobial peptides produced by microoorganisms belonging to different eubacterial taxonomic branches (Oscáriz *et al*., 2001). LAB specially Lactobacillus sepsis are having the probiotic properties, e.g. reduction or prevention of gastrointestinal disorders, including inflammatory bowel disease, alleviation of lactose intolerance, lowering of serum cholesterol levels, and stimulation of the immune system and control of tumour growth. Some probiotic claims may be associated with the production of antimicrobial peptides (bacteriocins).

As we enter in the new millennium, people are aware that for spending a healthy life style diet play a major role in preventing disease and promoting health. (Soomroet al., 2002). Therefore, functional foods, designer foods, phamafoods andnutraceuticals are synonyms for foods with ingredients that can prevent and treat disease. A probiotic may also be a functional food, but more specifically it is a live microbial feed supplement that beneficially affects the host beyond correction for traditional nutrient deficiencies by improving its intestinal balance. Hence, it may be considered a functional of the special property of containing live, beneficial microorganisms. Bacteriocins are ribosomally synthesized antimicrobial peptides produced by microoorganisms belonging to different eubacterial taxonomic branches (Oscáriz *et al*., 2001).

• Materials and Methods:

Collection of samples

The raw milk and crude sample was collected in sterilized container and stored at 4°C till further use.

Collection of microorganisms

Pure cultures of all test microorganisms *Staphylococcus aurous Escherichia coli,* and *Pseudomonas aeuroginosa* were collected from P. G. T. D. of Microbiology, RTMNU, Nagpur.

Maintenances of microorganisms

All test microorganism used during this study was maintained at 4ºC on proper media. Bacterial cultures were maintained on nutrient agar slant.

Media preparation

Nutrient agar, nutrient broth, **Man, Rogosa and Sharpe** (MRS) agar and de Man, Rogosa and Sharpe (MRS) broth, used for bacterial growth were prepared according to the methods recommended by **Harrigan and McCance (1976)** and **Harrigan (1998)**. The pH of media was adjusted by using 0.1N NaOH and 0.1N HCl.

Screening the isolates by RAPD

Random amplified polymorphic DNA (RAPD) is a PCR based technique for identifying genetic variation. It involves the use of a single arbitrary primer in a PCR reaction, resulting in the amplification of many discrete DNA products.

Extraction of Bacteriocin

The Ammonium precipitation method successfully extracted bacteriocin by LAB. Bacteriocin preparation obtained from isolated strain was tested for antimicrobial activity against test microorganisms *Staphylococcus aurous Escherichia coli,* and *Pseudomonas aeuroginosa.* by agar well diffusion method.

- **Results:**

In this study Lactobacillus sp. isolated from different unpasteurized milk and crud samples were characterized and identified on the basis of morphological and biochemical characteristics.

Characterization (Identification):-

- **Molecular Method**

RAPD (Random Amplification Polymerase DNA)

Prepare isolates by peaking isolated colonies from the MRS medium which is selective for Lactobacillus .sp. Inoculation of colonies on the basis of morphology and incubated it at 37°C for 48 h. the 20 slant was prepared by streaking plate method and 12 was selected for further possess. The RAPD result shown in figure-1 and table no-1

- **Morphological Characteristics**

Gram Staining

Morphological examinations to characterize the isolates on the basis of cell arrangement as well as cell shape were performed by gram staining.

The purple colored gram positive short rod shaped bacteria seen in Microscopes under oil immersion lenses.

Motility Test

Motility test was performed by hanging drop method for isolates of LAB.

The LAB are non-motile

As per morphology gram positive short rod and non motile bacteria was identified as *lactobacillus* spp.

- **Biochemical characteristics**

IMViC TEST:- The IMViC test result showed in table no 2.

Sugar fermentation:-

If the test is positive colour of the medium changes from green to yellow indicating the acid formation and air bubbles in Durham's tube indicating gas production. As the colour of the medium is green it indicates the negative results. In glucose slightly acidic condition is observed. Lactose, sucrose, mannitol test is negative. The results showed in table no-3.

- **Extraction and antibacterial activity of Bacteriocin**

The Ammonium precipitation method successfully extracted bacteriocin by LAB. Bacteriocin preparation obtained from isolated strain was tested for antimicrobial activity against test microorganisms *Staphylococcus aurous Escherichia coli,* and *Pseudomonas aeuroginosa.* by agar well diffusion method.

The plates are incubated at 37^0C for 24 hrs and the zone of inhibition is recorded as shown in table no -4

- **Tables**

Table no 1 : Nano-Drop reading for quantification of DNA yield and purity of isolated DNA from Lactobacillus bacterial isolates using Standardized phenol-chloroform protocol (CTAB protocol).

Sr.No.	Sample ID	DNA Concentration (ng/ul)	Absorbance Ratio (260°/280°)
1	LB-1	1055.8	1.88
2	LB-2	1140.2	1.8
3	LB-3	1221.2	1.92
4	LB-4	256.5	1.8
5	LB-5	2114.6	1.81
6	LB-6	858.4	1.89
7	LB-7	986.6	1.94
8	LB-8	1090	1.79
9	LB-9	171.4	1.86
10	LB-10	162.4	1.82
11	LB-11	1455.4	1.9
12	LB-12	2615.3	1.99

Table no 2 : IMViC Test

Sr. No	Isolates	Indole Production	MR test	VP test	Citrate utilization	H2S Production	Urea utilization
1	LAB	-	-	-	-	+	-
2	LAB	-	-	+	-	+	-

Table no 3: Sugar Fermentation

No.	Culture Name	Glu	Suc	Lac	Mal	Man
1	LAB-1	+	-	-	-	-
2	LAB-2	+	-	-	+	-

Table no-4:- Zone of inhibition due to bacteriocin extracted from *lactobacillus sp.*

Sr no	Organism	Zone in mm
1.	*Staphylococcus aureus*	23
2.	*Escherichia coli*	19
3.	*Pseudomonas aeuroginosa*	21

- **Figure**

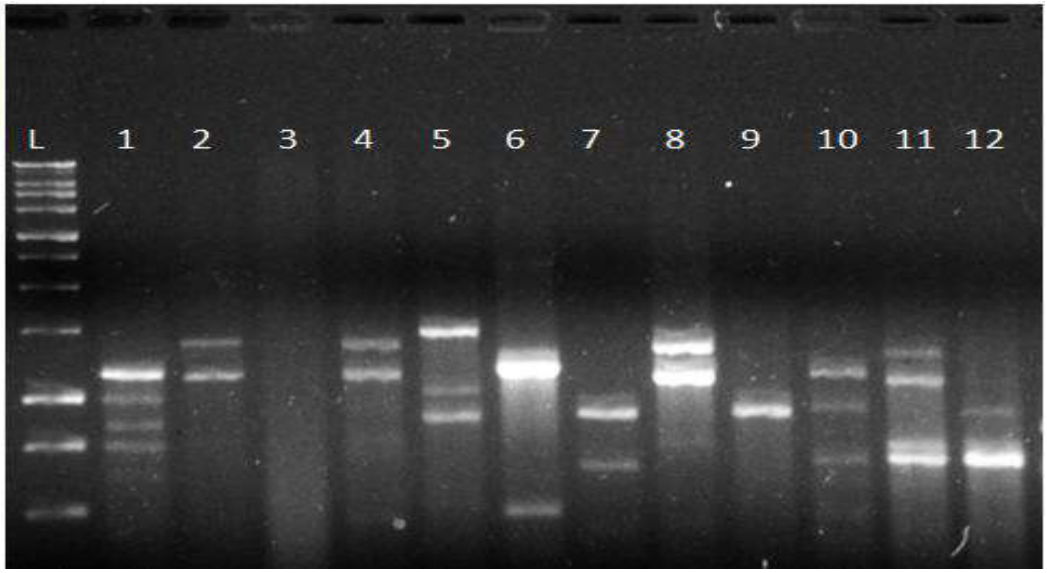

Fig-1:- RAPD variants pattern of Lactobacillus bacterial isolates with universal primer, Lane 1; 1 kb DNA Ladder size marker, lane 2- 13 isolated

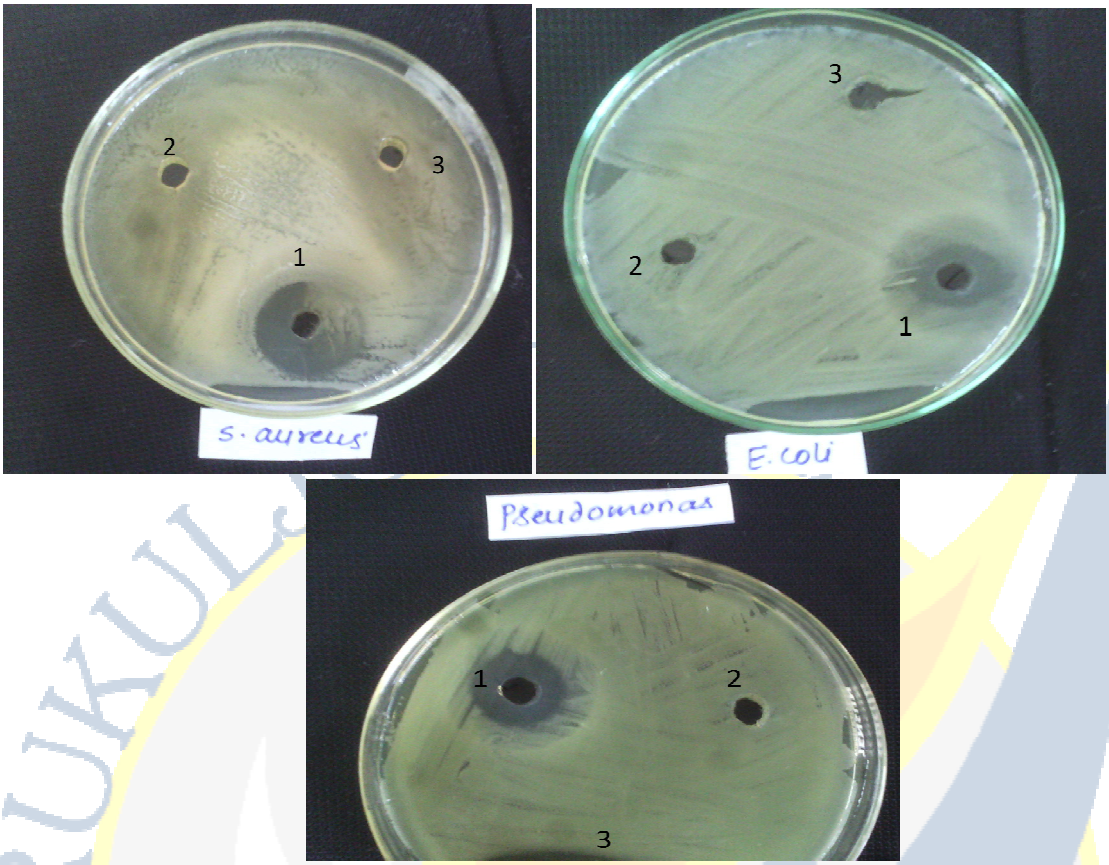

Fig-2: Zone of inhibition of *Staphylococcus aurous Escherichia coli,* and *Pseudomonas aeuroginosa* due to Bacteriocin extracted from *lactobacillus* sp.

- **Discussion**

In the present study, *Lactobacillus* sp. was isolated from unpasteurized raw milk and curd samples for the production of bacteriocin. Antibacterial property of isolated lactobacillus species was checked against test microorganisms, *Staphylococcus aureus, Escherichia coli, and Pseudomonas aeruginosa.*This result shows similarity to the results of Asma Ansari (2012), in that they studied production and antimicrobial spectrum of bacteriocin from *Bacillus subtilis KIBGE IB – 17.22*

These results were similar with Mohan kumar *et.al*. (2011) who isolated the 100 Lactic acid Bacillus strains for their antimicrobial properties from raw cattle milk. In our isolates showed considerable zone of growth inhibition of all test microorganisms. This results supports with the results of Arokiyamary *et.al*, (2011) in that they isolated the bacteriocin producing lactobacillus species from traditional milk products and checked the antimicrobial activity against common pathogens.The similar results were shown by Shafei *et.al*., (2000) who reported the 100 lactic acid bacterial strains producing bacteriocins from traditional fermented foods.

- **Conclusions**

Successfully isolate the strains of LAB from unpasteurized raw milk and curd. Identification of selected bacteriocin-producing LAB based on physiological, biochemical , Microscopic examination and RAPD Bacteriocin activity of Lactobacillus .spp showed significant antibacterial activities against indicator strains which were *Escherichia coli*, *Pseudomonas aeruginosa* and *Staphylococcus aurous and* compared with the standard antibiotics Bacteriocin is food biopreservative but we can used as an alternative for antibacterial agents.

- **REFERENCES**

Ansari A, Aman A, Siddiqui NN, Iqbal S, Shah AQ, Bacteriocin (BAC – IB 17): Screening, isolation and production from *Bacillus subtilis KIBGE IB – 17*, Pakistan Journal of Pharmaceutical Sciences, 25 (1), 2012, 195-201.

Arokiyamary, A., and Shivkumar, P.K., (2011), Antibacterial activity of bacteriocin producing Lactobacillus sp., isolated from traditional milk products. Current Botany, 2(3):5 – 8.

Atrih, A., N. Rekhif, A.J.G. Moir, A. Lebrihi and G. Lefebvre. 2001. Mode of action, purification and amino acid sequence of plantaricin C19, an anti-*Listeria* bacteriocin produced by *Lactobacillus plantarum* C19. **Int. J. Food Microbiol.**

Balla, E., L.M.T. Dicks, M. Du Toit, M.J.V. Der Merwe and W.H. Holzapfel. 2000. Characterization and cloning of the genes encoding enterocin 1071A and enterocin 1071B, two antibacterial peptides produced by *Enterococcusfaecalis* BFE 1071.**Appl. Environ. Microbiol.**66: 1298-1304.

Cleveland, J., T.J. Montville, I.F. Nes and M.L. Chikindas. 2001. Bacteriocins: safe, natural antibacterial s for food preservation. **Int. J. Food Microbiol.** 71: 1-20.

Collins, J.K., G. Thornton and G.O. Sullivan. 1998. Selection of probiotic strains for human application. **Int. dairy J.** 8: 487-490.

Donohue, D.C. and S. Salminen. 1996. Safety of probiotic bacteria. **Asia Pacific J.Clin.Nutr.**5: 25-28.

Folli, C., I. Ramazzina, P. Arcidiaco, M. Stoppini and R. Berni. 2003. Purification of bacteriocin AS-48 from an Enterococcus faecium strain and analysis of the gene cluster involved in its production. **FEMS Microbiol.Lett.** 221: 143-149.

Gusils, C., J. Palacios, S. Gonzalez and G. Oliver. 1999. Lectin-like protein fractions in lactic acid bacteria isolated from chickens. **Biol. Pharm Bull.** 22: 11-15.

Hyronimus, B., C.L. Marrec, A.H. Sassi and A. Deschamps. 2000. Acid and bile tolerance of spore-forming lactic acid bacteria. **Int. J. Food Microbiol.** 61: 193-197.

Ivanova, I., P. Kabadjova, A. Pantev, S. Danova and X. Dousset. 2000. Detection, purification and partial characterization of a novel bacteriocin substance produced by *Lactococcus lactis* subsp. *lactis* B14 isolated from Boza-Bulgarian traditional cereal beverage. **Biocatalysis** 41: 47-53.

Jay, J.M. 1982. Antibacterial properties of diacetyl.**Appl. Environ. Microbiol.** 44: 525-532.

Kruger, N.J. 2002. The Bradford method of protein quantification, pp 15-21. In J.W. Walker (ed.). **The Protein Protocols Handbook,** 2nd ed. Humana Press Inc., Totowa, New Jercy.

Leistner, L. and L.G.M. Gorris. 1995. Food preservation by hurdle technology. **Trends Food Sci. Technol.** 64: 41-46.

Mohankumar, A., Murugalantha, N., (2011). *Characterization and antibacterial activity of bacteriocin*

producing Lactobacillus isolated from raw cattle milk sample. Int. J. Biology. 3 (3).

Marteau P, Pochart P, Flourie B, Pellier P, Santos L, Desjeux JF, Rambaud JC., (1990) Effect of chronic ingestion of a fermented dairy product containing *Lactobacillus acidophilus* and *Bifidobacterium bifidus* on metabolic activities of the colonic flora. *Am J Clin Nutr* 52: 685-88.

Shafei, H.A., Abd-EI-Sabour, H., Ibrahim, N., Mustafa, Y.A. (2000).Some important fermented foods of mid-Asia, the Middle East and Africa.Microbiol Research, 154 (4).321-331.

Scheinbach, S. 1998. Probiotics: functionality and commercial status. **Biotechnol. Advances** 16: 581-608.

Schleifer KH and Kilpper–Balz R, (1984) Transfer of *Streptococcus faecalis* and S*treptococcus faecium* to the genus *Enterococcus* nom. rev. as *Enterococcus faecalis* comb. nov. and *Enterococcus faecium* comb. nov. International Journal of Systematic Bacteriology 34, 31–34.

Smith, H.W. 1965. The development of the flora of the alimentary tract in young animal. **J. pathol.Bacteriol.**90: 495-513

Soomro, A.H. and Masud, T. (2008) Partial characterization of bacteriocin produced by *Lactobacillus acidophilus* J1 isolated from fermented milk product dahi Pakistan. Australian Journal of Dairy Technology 63(1)8-14.

Soomro, A.H., Masud, T. and Anwaar, K. (2002) Role of Lactic Acid Bacteria (LAB) in Food Preservation and Human Health – A Review Pakistan Journal of Nutrition 1(1): 20-24.

Tararico, T.L. and W.J. Dobrogosz. 1989. Chemical characterization of an antibacterial substance produced by *Lactobacillus reuteri*. **Antimicrob.Agent Chemother.**33: 674-679.

Todorov, D., M. Vaz-Velho and P. Gibbs. 2004. Comparison of two methods for purification of plantaricin ST31, a bacteriocin produced by *Lactobacillus plantarum* ST31. **Brazillian J. Microbiol.** 35: 157-160.

Van Belkum, M.J. and M.E. Stiles. 2000. Nonlantibiotic antibacterial pepetides from lactic acid bacteria. **Nat. Pro. Rep**. 17: 323-335.

Wu, C.W., L.J. Yin and S.T. Jiang. 2004. Purification and characterization of bacteriocin from *Pediococcus pentosaceus* ACCEL. **J. Agric. Food Chem.** 52: 1164-1151.

Zendo, T., M. Fukao, K. Ueda, T. Higuchi, J. Nakayama and K. Sonomoto. 2003. Identification of lantibiotic nisin Q, a new natural nisin variant produced by *Lactococcus lactis* 61-14 isolated from a river in Japan. **Biosci.Biotechnol.Biochem.**67: 1616-1619.

Gurukul International Multidisciplinary Research Journal (GIMRJ)
with
International Impact Factor 2.254

ISSN No. 2394-8426
Dec – 2015
Issue – I, Volume – V
Online Journal

Current Status And Position Of Indian Women

Prashant T. Nargude

Abstract

Change in attitude of society towards women is a must without which nothing a possible in women empowerment. Since ancient society we can see so many problems faced women's like Sati pratha, Keshopenpratha etcetera. And now Domestic Violence is major problem in present society. Violence against women is an obstacle to the achievement of the objectives of equality, development and peace. We have to must fight the violence against women. A strict law to be passed to punish those women who are filing a false complaint against husband or relatives by misusing of Domestic Violence Act so that there will be fair justice to all in any case which attempts against women.

KEY WORDS:

FIR: First Information Report, **BBC:** British Broad Casting Corporation.

Introduction:

Government of India has been strictly prohibited to show documentary film regarding Nirbhaya case. But **BBC** has showed that video on their official website. We should to it have not tolerated. A woman constitutes almost one of the populations of any country. But they enjoy inferior status than man. During vedic and Rig vedic period, they had status. In this period matriarchal system was there. Now we can see major issue like domestic violence against women in India. The term used to describe this exploding problem of violence within our homes is 'Domestic Violence'. This violence is towards someone who we are in a relationship with, be it a wife, husband, son, daughter, mother, father, grandparent or any other family member. This violence has a tendency to explode in various forms such as physical, sexual or emotional. 'Domestic Violence' includes harms or injuries which endangers women's health, safety or well being, whether mental or physical.

The abusive behavior may become more frequent and severe. It is divided into 5 heads. First is Verbal abuse: like name calling, threatening, intimidating. Second is Emotional abuse: criticizing constantly, displaying extreme jealousy, publicly humiliating, isolating the partner,

domination. Third is financial abuse: controlling the money, concealing joint assets, keeping the other impoverished, using partner's money without consent.

In present society so many acts and organizations make for women and stop exploitation of women. Encouraging NGO's by providing them financial inventiveness to participate actively in women empowerment programme. Support from Women themselves, the Govt. NGO's, civil society to protect against domestic violence and women crimes or other issues. Second issue we have to focus on poverty and women: India's poverty has been affecting adversely on women as female members in the family denied education. Health care nutritional food & good sanitation. It directly affects the future of women. Girl children are discriminated in the matter feeding. Studies have those girls in rural areas take 1355 k/day in the group of 13 to 15 1291 k/day in the age group of 16 to 18 which is much below the recommended level.

Objectives:

1. To show the kinds of Domestic violence against women.

2. To know the current position of women in Indian society.

Research method:

The present research paper is dependent secondary data like articles, books, research papers, journals and internet etc.

DOMESTIC VIOLENCE AGAINST WOMEN:

Domestic violence: In our society violence is bursting. Violence against women has been clearly defined as a form of discrimination in numerous documents. The world human rights conference in Vienna, first recognized gender – based violence as a human rights violation in 1993.**Sexual Harassments:**Women also faces marital rape is forcible intercourse without women's willingness. Such acts generally ends up in violence sometimes results to organ mutilation and painful experience.**Mental Harassments:**In offices for not favouring bosses with sexual pleasure often causing mental torture and harassments. Mental harassment also results too many other internal deceases and cause fatigue mentally harassed women generally feel as if they are in captivity.**Physical Harassments:**Violence against women is not a new phenomenon. Women have to bear the burns of domestic, public, physical as well as emotional and mental violence against them, which affects her status in the society at the larger extent.

CURRENT POSITION OF WOMEN IN INDIAN SOCIETY:

Women Education:

Literacy rate of male 27.16% and female 08.06% - 1951.Increased up to 82.14% and 65.46% - 2011. For the first time country witnessed a faster growth in female literacy. Still around 35% are out of the reach of education. The most notable thing that comes across in the 2011 census is the sharp rise in literacy of female over male. It means that during the last decade the govt. has taken seriously women empowerment via education.

Women and political participation:

After independence women got a right to vote and reservation in local – self govt. state and central govt. but the question is can she take an independent decision while working. The decisions are taken by somebody else may be her husband or party workers or relatives. Similarly, women from upper class representing the women who do not know the problems of women in villages, remote areas and backward class classes. They have focused on urban middle class women's problems.

Gender issues in India:

Gender means the way society distinguishes men and women and assign them social roles. As soon as the child is born the society starts the process of gendering. Gender inequality makes women inferior. It blocked women's participation in social, political and economic activities. In India we find that girls and women are suffering from high mortality rates and vast differences in education level.

Crime against women:

Crimes against women occur every minute, every day and throughout the year. Several crimes go unreported. Rape is the fastest growing crime in India. As many as 18 women are assaulted in some from or the other every hour. Over the last few months causes of rape made it to the headlines with alarming frequencies. In many cases police are police reluctant to file a proper **FIR**& adopt a most unsympathetic attitude against compliment.

Conclusion:

Change in attitude of society towards women is a must without which nothing a possible in women empowerment. Since ancient society we can see so many problems faced women's like Sati pratha, Keshopenpratha etcetera. And now Domestic Violence is major problem in present society. Violence against women is an obstacle to the achievement of the objectives of equality, development and peace. We have to must fight the violence against women. A strict law to be passed to punish those women who are filing a false complaint against husband or relatives by

misusing of Domestic Violence Act so that there will be fair justice to all in any case which attempts against women.

References:

1. Platform for Action and Beijing Declaration, Published by the United Nation Department of Public Information, 4-15 Sept. 1995. Page no. 73, 75.

2. Kanade (Dhoke), M. And Sangshetti, R., "Domestic Violence against Women in India", Ideal Criticism, April 2013. Page no. 16, 17.

3. Bhosale, S., "Domestic Violence in Marriage in India", Ideal Criticism, April 2013. Page no. 40.

4. Gadavii, V., "Empirical Investigation for Women: Domestic Violence in India", Ideal Criticism, April 2013. Page no. 46.

5. Bawdhankar, R., "Domestic Violence- Initiation of women Exploitation", Ideal Criticism April 2013. Page no. 77, 78, 79 & 80.

6. Saoudagar A.H., Domestic Violence- Initiation of women Exploitation", Ideal Criticism April 2013.Page no. 62, 63 and 64.

Gurukul International Multidisciplinary Research Journal (GIMRJ)
with
International Impact Factor 2.254

ISSN No. 2394-8426
Dec – 2015
Issue – I, Volume – V
Online Journal

Inventory Management –A profit making concept

By Aparna S. Chorghade (Ph D student) under guidance of Dr. Prakash N. Somalkar

Abstract:

Inventory is an idle resource of any kind, provided that such resource has economic value.

This term is used in both the fronts, household and industrial as well. Industries employ special manpower to look after the organization's inventory which they hold; concept of 'Zero inventory' is registered for gain. The study of inventory management is by-enlarge study if operation management at micro level.

An item which attracts cost is coupled other hidden aspects. There are techniques which have a control over inventory as prior to acquiring and once it is acquired.

New computer based packages are available in the market to control the system based inventories. VMI concept is used to maximize the profit. JIT concept is also helpful for minimization of inventory. For inventory valuation an accounting inventory turnover ratio is introduced in the organization so as to know the status of the concern.

All this, if managed properly may lead to maximization of profit in the concern.

KEYWORDS:-

Zero inventory, Zeroing down, (IM-MM-LM-SCM-OM),inventory types, Inventory carrying cost, under stocking cost, overstocking cost, controlling of inventory during manufacturing and during utilization, ABC analysis, EOQ,JIT, Vendor managed inventory, Inventory turnover ratio,

Introduction:

'Inventory is an idle resource of any kind, provided that, such resource has economic value'.

Managing the resources is the ultimate aim of the management, and when it comes to resource that attracts economic value which needs more concern and concentration to monitor. Although the word 'Inventory management' is used in industry, it has got utility in domestic household front also.

Anything managed by particular house with respect to the resources is better inventory management. Even house hold daily routine items management at home, is also can be said as inventory management.

Any goods used either for domestic or industrial purpose, which is lying idle, until it gets consumed, is idle resource for that household or organization, provided wealth is spend while acquiring the same. Hence the word 'Inventory Management' is gaining popularity in modern days,. Since it is directly coupled with profit, if managed appropriately.

Industry earns huge profit, provided, that are able to manage their inventory precisely well. Since Inventory is accounted in asset in balance sheet, inventory always accounted with cost .Its money consumed to produce a material by manufacturer. In financial reporting also the Inventory factor is indicated in current asset, means by churning of current financial activities (like current asset & current liability), the present position of that particular organization can be find out. Given such important, Industries employ special manpower to look after inventory they hold. The management science of such important factor can be said as "INVENTORY MANAGEMENT"

Now a days, industries are aiming for 'Zero Inventory' to registered more gain. In short, organization are planning to take lean intake and want to produce more by getting feed at regular interval whenever need of inward flow of material is essential. Since the stock available at any level of any type is covered under Inventory.

Inventory with zeroing down elaboration:

Inventory management is part of Materials management, and Materials Management comes under Logistic Management, Logistics Management comes under Supply Chain Management & Supply Chain Management comes under Operations Management. Thus, the study of Inventory management is by-enlarge study of Operations Management at Micro level.

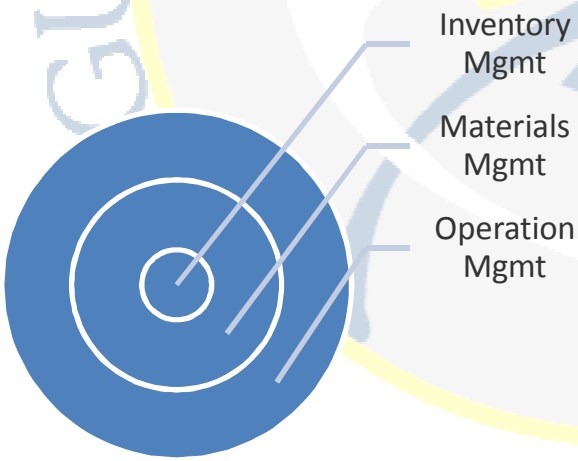

Figure illustration will show more precisely:

Inventory Types:

1. **Raw Material**: Available in production bay to produce any component.
2. **Brought-out spares**: Spares indented to vendors to complete assembly.

3. **WIP (Work In progress):** Job mounted in machineries or in workshop.
4. **Consumables**: Items required as supporting material for main output.
5. **Spares**: Ready assembly lying in bay to get attached to main product.
6. **Finished Good**: saleable material either in go-down or in show room.
7. **Inventory with Vendor**: ordered parts kept undelivered by vendor.
8. **Packing material**: Things required keeping these items in proper way.
9. Any other material lying idle this has got economic value.

Cost coupled with Inventory:

1. **Cost incurred to acquire the items**: - Ordering & purchasing of items for industry attracts cost.
2. **Inventory Carrying Cost**: - Cost incurred to maintain inventory.
3. **Under stocking cost**:- Particular level is required to maintain for many items ,if the stock of such items comes below which may cost halt of production and further hampering the line product, the loss is Under stocking cost.
4. **Overstocking cost**:- Material stocked with huge quantities, assuming that it may get consumed, in due course of time, but the volume / space required to keep such inventory for continues protection until it get completely consumed, attracts heavy cost.

Controlling the Inventory:

Industries have developed many techniques to take control over inventory as detailed:-

A) Controlling of inventory during manufacturing-prior to acquiring.

B) Controlling inventory during utilization-post acquiring scenario.

A) **Prior to acquiring**: During process, materials get produced at several stages of manufacturing. Industry prefers lean manufacturing to suit their exact requirements. Variety reduction, Value analysis & Value Engineering, Preferred Number series & bar-coding, EOQ & JUST-IN- TIME are few techniques for Controlling of inventory during manufacturing.

B)**Once acquired**: Since material is produced & ready for fitment of for sale, the stock of such material attract carrying cost , which is very high up to 25% of item cost . Since this consumes heavy cost, industry tends to minimize it after acquiring. The techniques used to keep under control are ABC analysis, XYZ classification, VED, SDE, GOLF, FSN, and SOS.

In today world, there are many computer based packages available in the market, to suit according to industrial requirements for inventory control. Manufacturing resource planning & Material Requirement planning which are very complex & meticulous exercise, are programmed

in system and inventory at all levels are getting controlled by the system. In early days those area were planned by various departments and every department was having 'say' during processing of the same causing enormous pilling of manual requirement , but now when computerized system is available one can get result at every stage ,at every level by calculating pegged requirement simultaneously.

As industries prefer lean production, they want to control inventory further and beyond their actual & physical control, by keeping eye on inventories lying with suppliers, inventory lying with customers, scrap & surplus inventory. To maximize the profit 'Vendor Managed Inventory' word has became popular in today's industries. The 'VMI' concept is advising vendor to maintain sufficient inventory (stock) at vendor's warehouse, which is actually going to be utilized by purchaser in near future by calculating needs & requirements of other industries. Thus, by off-loading of inventory to supplier the purchaser earns maximum profit, asking supplier to supply material moment before it get utilized. This concept is called 'JUST IN TIME (JIT)'.

The Most important aspect of any inventory is valuation & accounting. 'Inventory Turnover Ratio' is one of the aspects to gauge the status of inventory in any organization. The ratio provides the organization where they stand & what need to be corrected. In simple words it can be put up as number of times the stock flushed out as well as come in, is calculated through this.

We conclude that, if the stock or inventory managed well can reap high profit, saving national and organizational wastes.

Reference:-

1. Advanced Supply Chain Management: IIMM, Mumbai
2. Business Strategy & World Class Practice: IIMM, Mumbai
3. https://en.wikipedia.org/wiki/Inventory
4. www.clearlyinventory.com/inventory-basics
5. *https://getcarta.com/*

Gurukul International Multidisciplinary Research Journal (GIMRJ)
with
International Impact Factor 2.254

ISSN No. 2394-8426
Dec – 2015
Issue – I, Volume – V
Online Journal

इतिहासाची साधने

डॉ. सौ. वीरा पवन मांडवकर
इंदिरा महाविद्यालय, कळंब, जि. यवतमाळ, महाराष्ट्र
भ्रमणध्वनी ९४०३०१४८८५

गोषवारा :

भविष्य योग्यप्रकारे व्यतीत करण्यासाठी भूतकाळाचा अभ्यास करून त्यामधून बोध घेऊन वर्तमानकाळात त्यानुसार योजना आखून पावले टाकल्याने समाजाला निश्चितच फायदा होतो. इतिहासात ज्या चुका झाल्या त्या सुधारून मानव आपली प्रगती साधू शकतो. त्याचप्रमाणे आपला प्रेरणादायी इतिहास पाहून नवीन पिढीला मार्गदर्शन मिळू शकते; पण यासाठी योग्यप्रकारे इतिहासाचे ज्ञान होणे आवश्यक आहे. हा इतिहास माहिती करून घेण्याची अनेक साधने आहेत. त्यात मुख्यत: पुरातत्वीय साधने आणि पुराभिलेखीय साधने यांचा समावेश होतो. काळाच्या ओघात अनेक गोष्टी गडप झाल्या असतील तरीही जे काही अवशेष उत्खननात सापडले, त्यांच्या आधारे इतिहासाचा अभ्यास करता येतो. म्हणूनच प्राचीन काळात लिहिल्या गेलेले लिखाण, रामायण, महाभारत यांसारखे ग्रंथ, बौद्ध वाङ्मय, जैन वाङ्मय, परकीय पर्यटकांनी कलेले लिखाण, उद्ध्वस्त गावे, प्रचंड किल्ले, लेणी, मंदिरे, बौद्धस्तूप, नाणी, शिलालेख, स्थापत्य अवशेष, समुद्रतळातील अवशेष ही सगळी इतिहासाची साधने अत्यंत महत्वाची आहेत.

बीजशब्द :

इतिहास, साधने, अवशेष, लिखाण, पुरावे, राज्ये, ताम्रपट

पुराभिलेखीय साधने :

वेदकाळापासून १२व्या शतकापर्यंत रचली गेलेली ग्रंथसंपदा याचा प्राचीन भारताच्या इतिहासाच्या साधनात उल्लेख करावा लागेल. यात वेदकालीन वाङ्मय, कालिदास, भास, भवभुतींच्या नाटकापर्यंत सर्वच वाङ्मयीन लिखाणाचा समावेश होतो. यातसुद्धा दोन प्रकार आहेत. पहिला प्रकार म्हणजे भारतीय लेखकांनी लिहिलेल्या ग्रंथांचा आणि दुसरा प्रकार म्हणजे परकीयांच्या लेखनाचा होय.

अ. प्राचीन भारतीयांचे लिखाण :

'ऋग्वेद' हा ग्रंथ म्हणजे प्राचीन भारताच्या इतिहासाचे प्राचीनतम साधन आहे. इ.स. पूर्व १५०० या काळातील आर्य संस्कृतीची कल्पना करण्यासाठी उपयुक्त आहे. तत्कालीन सामाजिक, राजकीय, आर्थिक, धार्मिक जीवनाचे यथार्थ चित्रण ऋग्वेदातील ऋचांच्या आधारे उभे करता येते. ऋग्वेदाप्रमाणे इतर अनेक ग्रंथातून आपण प्राचीन भारताचा इतिहास समजून घेऊ शकतो.

१. वैदिक वाङ्मय :

ऋग्वेद, यजुर्वेद, अथर्ववेद, सामवेद यातुन वेदकाळातील समाजाच्या वाटचालीचा पुढचा टप्पा ध्यानी येतो. याला उत्तरवेदकाळ म्हणतात. उपनिषदे, ब्राम्हणे, आरण्यके या ग्रंथांतून अनेक मौलिक माहिती मिळते.

२. रामायण व महाभारत :

वेदकालीन समाजाची वाटचाल कालांतराने प्रगत अशा समाजात झाली. या महाकाव्यांचा रचनाकाळ साधारणत: इ.स. पूर्व १८०० ते १००० वर्षे मानला जातो. रामचरित्र वाचण्याच्या सोबतच तत्कालीन समाजाचे चालीरीतींचे वर्णाश्रम, विवाह, पद्धतीचे, कुटुंबसंस्थेचे, रूढी परंपरांचे अप्रत्यक्ष चित्रण यात आढळते. त्याचप्रमाणे 'महाभारत युद्धाच्या निमित्ताने अनेक टोळी राज्यांचे उल्लेख येतात. महाभारतात उल्लेखलेल्या राजघराण्यांचे टोळी राज्यांचे संदर्भ बौद्धकाळापर्यंत आपल्याला आढळतात. म्हणूनच 'महाभारत' हे नुसतेच महाकाव्य नसून लोकोतिहासाच्या स्वरुपात समाजमनात जागविलेला एक इतिहास आहे.'[१]

३. श्रुती आणि स्मृती ग्रंथ :

मनुस्मृती, याज्ञवल्क्य स्मृती, नारदस्मृती, विष्णुस्मृती, पाराशर स्मृती हे स्मृतिग्रंथ इतिहासाच्या अभ्यासासाठी अत्यंत महत्त्वाचे मानले जातात.

४. पुराणे :

प्राचीन भारतीय इतिहासाचे स्पष्ट निर्देश जाणून घेण्यासाठी पुराणांचा अभ्यास महत्त्वाचा ठरतो. भारतीय वाङ्मयाच्या इतिहासात अठरा पुराणे आहेत. त्यापैकी मस्त्यपुराण, वायुपुराण, विष्णूपुराण, भागवत पुराण, ब्रम्हांडपुराण ही महत्त्वाची आहेत. नंद मौर्य राजघराण्यापासून अगदी गुप्त साम्राज्याच्या कालखंडापर्यंतच्या नोंदी पुराणात आढळतात. म्हणून पुराणांकडे विश्वसनीय साधन म्हणून पाहिले जाते.

५. बौद्ध वाङ्मय :

बौद्धवाङ्मयातील 'महापरिनिर्वाणसूत्र' हा ग्रंथ राजकीय व सामाजिक संदर्भाच्या दृष्टीने महत्त्वाचा आहे. सिद्धार्थ गौतम बुद्धांच्या महापरिनिर्वाणप्रसंगी तत्कालीन भारतवर्षातील विविध राजे, गणराजे, महाजनपदे, राज्यपद्धती यांची सविस्तर माहिती मिळते. त्याचप्रमाणे जातक कथा, दीपवंश, महावंश, ही बौद्ध महाकाव्ये, विनयपिटक, सूत्तपिटक, अभिधम्मपिटक हे पिटकग्रंथ, दिव्यावदान, अशोकावदान यांसारखे ग्रंथ इतिहासाच्या अभ्यासासाठी अतिशय उपयुक्त मानण्यात येतात. 'जातककथा म्हणजे गौतमबुद्धाच्या पूर्वजन्मीच्या काल्पनिक कथा असल्या तरी त्यात बुद्धपूर्वकालीन समाजाचे सुंदर चित्र रेखाटले आहे.'[२]

६. जैन वाङ्मय :

जैन वाङ्मयातील महत्त्वाचे ग्रंथ म्हणजे कल्पसूत्र, जैनआगमग्रंथ, जैनभगवतीसूत्र, परिशिष्टपर्व, निरयावलीसूत्र, आवश्यकसूत्र आदी जैन वाङ्मयातील महत्त्वाचे ग्रंथ आहेत.

७. चरित्र ग्रंथ :

अश्वघोषाचे 'बुद्धचरित्र' हा सर्वात प्राचीन चरित्रग्रंथ यातून बुद्धाच्या चरित्राविषयी अधिकृत माहिती उपलब्ध होते. बाणभट्टाने लिहिलेल्या 'हर्षचरित्र' यातून हर्षवर्धनाच्या राज्यकारभाराची, कार्यकर्तृत्वाची अधिकृत आणि विश्वसनीय माहिती मिळते. वाक्पती लिखित कनोजच्या यशोधर्माचे चरित्र, बिल्हणलिखित चालुक्य नृपती, विक्रमांकदेवचरित्र आदी चरित्रे इतिहास अभ्यासाच्या दृष्टीने महत्त्वाची आहेत.

८. बखर वाङ्मय :

बखरवाङ्मयातूनही इतिहासाविषयी बरीच माहिती मिळते. बरेचदा बखरीचे लेखक हे तत्कालीन असतात. त्यामुळे त्यांच्या लिखाणातील काळाची माहिती विश्वसनीय असू शकते. अर्थात कधी कधी स्वामिभक्तीच्या अतिरेकामुळे बखरवाङ्मयात अतिरंजीतपणा येऊ शकतो. तरीही काही प्रमाणात सत्यासत्यता पटवण्यासाठी बखरवाङ्मयाचा आधार घेण्यास हरकत नसते.

'सभासदाची बखर याचा लेखनकाल इ.स. १६९४ ते १६९७ हा असून ती शिवकालात लिहिलेली असल्याने या बखरीला महत्त्वाचे स्थान मिळाले आहे. बखर संक्षिप्त आहे, पण शिवकालीन असल्यामुळे अभ्यासास महत्त्वपूर्ण मानण्यात आली आहे.'[३] रघुनाथशास्त्री दात्ये यांची शालिवाहन चरित्र, राक्षसतागडीची बखर, खंडोबल्लाळ यांचे शिवदिग्वीजय, अमात्य रघुनाथपंत हणमंते यांचा राज्यव्यवहासकोश, रघुनाथ यादव चित्रे यांची चित्रगुप्ताची बखर या सगळ्या महत्त्वाच्या बखरी आहेत.

९. नाटक, कथा, कादंबरी :

या वाङ्मयप्रकारांनीसुद्धा इतिहास अभ्यासकांना बरेच साह्य केलेले ओहे. जातककथा, पंचतंत्राच्या कथा, इसापनीतीच्या कथा, बाणभट्टांची कादंबरी या सर्वांमध्ये कल्पनाविलास असला तरीही त्याला वास्तवाचा आधार आहे; त्यामुळे त्यातून अनेक इतिहासपुरक घटनांचा उलगडा होतो. त्यातही नाटके म्हणजे वाङ्मयप्रकार असूनही इतिहासाच्या दृष्टीने महत्त्वाचा आहे. कारण तत्कालीन नाटकांची कथानकं ही प्रत्यक्ष घडलेल्या घटनांवर आधारित असत. मौर्यकालीन इतिहास सांगणारे विशाखादत्तचे मुद्राराक्षस, गुप्तकाळातले देविचंद्रगुप्तम्, महाकवी कालिदासाचे मालविकाग्निमित्रम्, विक्रमोर्वशीय ही राजकीय नाटके हे सर्व वाङ्मय भारतीयांच्या ऐतिहासिक ज्ञानात मोलाची भर घालणारे आहे. कौटिल्याचे अर्थशास्त्र, वात्सायनाचे कामसूत्र हे शास्त्रीय ग्रंथ, पाणिनीचे व्याकरणावरील ग्रंथ हे मोलाचे ऐतिहासिक पुरावेच होत.

ब. परकीयांचे लिखाण :

भारतीय लिखाणासोबतच परकीयांनी लिहिलेले साहित्यही अभ्यासकांसाठी उपयुक्त आहे. शास्त्रशुद्ध पद्धतीने इतिहास लेखनाची परंपरा ग्रीसमध्ये होती. 'हिरोडॉट्स' हा ग्रीस इतिहास परंपरेचा प्रणेता म्हणून ओळखला जातो. डायोडोरस, जस्टीन, एरियन, प्लुटार्क यांनी ग्रीसचा इतिहास लिहिताना त्यात भारतीय इतिहासाचे महत्त्वपूर्ण संदर्भ दिले आहेत. त्यातून भारतीय इतिहासावर बराच प्रकाश पडतो. इसवीसनाच्या चवथ्या शतकापासून ग्रीकांचे भारतीयांशी संबंध आले. त्याचप्रमाणे पर्शियन, इराणी या काळात यांचासुद्धा भारतीयांशी संबंध आला आणि त्यांनी आपले अनुभव लिहून ठेवले आहे. त्याचप्रमाणे परकीयांनी प्रवासकाळी केलेली वर्णने यातून विश्वसनीय माहिती मिळते. यात मेगॅस्थनीसचा 'इंडिका' हा ग्रंथ अनेक मौलिक माहिती देतो. कारण मेगॅस्थनीस हा ग्रीक वकील राजदूत होता. पाटलीपुत्र नगरीची राजव्यवस्था, वैभव हे या ग्रंथामधून आले आहे. दुसरा महत्त्वाचा ग्रंथ म्हणजे 'पेरिप्लस ऑफ दि युरेथ्रियन सी' हा आहे. सातवाहन साम्राज्याविषयी यात बरीच माहिती मिळते. या ग्रथांचा लेखक इ.स. पूर्व पहिल्या शतकात भारतात येऊन गेला. गुप्तकाळात फाहियान हा चीनी अभ्यासक भारतात आला. चिनी बौद्ध अभ्यासक तातांगसियुकी या ग्रंथात ह्युएनत्संगने अनेक माहिती पुरवली आहे. तत्कालीन शिक्षणपद्धती, परीक्षापद्धती, प्रवेश आणि शिक्षणप्रेमासंबंधी विस्तृत माहिती मिळते.

पुरातत्वीय साधने :

याला भौतिक किंवा अलिखित साधने म्हणूनही ओळखण्यात येते. पुरातन काळात वापरल्या गेलेल्या असंख्य वस्तू किंवा गोष्टी जसे किल्ले, मंदिर, लेण्या, मूर्ती, शिल्पे, नाणी, मातीची भांडी, खापरे या सर्वांना इतिहासाची पुरातत्वीय साधने म्हणून संबोधण्यात येते. इ.स.पूर्व २५०० वर्षांपासून ते इ.स. १२–१३ व्या शतकापर्यंतच्या प्राचीन काळाविषयी माहिती देणारी असंख्य पुरातत्वीय साधने आतापर्यंत उपलब्ध झाली आहेत.

पुरातत्वीय साधनांचे सुद्धा अनेक प्रकार आहेत.

१. उत्खनन अवशेष :

उत्खननाद्वारे जमिनीत काळाच्या ओघात गडप झालेला इतिहास उलगडून पाहिल्या जाऊ शकतो. उत्खननात बहुतांश वेळा सापडल्या जाणाऱ्या गोष्टी म्हणजे अस्थी अवशेष, मातीची भांडी, दागदागिने, धान्याचे कण, बांधकामाचे अवशेष सापडतात. ज्यातून अनेकदा रासायनिक प्रक्रिया करून ते अवशेष किती हजार वार्षापूर्वीचे आहेत, भांडी किंवा खापरांची जाडी, रंग, त्यावरचे पॉलिश यातूनही या वस्तू कुठल्या कालखंडातल्या आहेत, हे लक्षात येते. हडप्पा व मोहेंजोदडो उत्खननातून सिंधू संस्कृतीचा पूर्ण अभ्यास करण्यात आला. तक्षशिला, नालंदा, नागार्जुनकोंडा, कपिलवस्तू, महाराष्ट्रातील नेवासा, पैठण, भोकरदन या ठिकाणी सातवाहनकालीन अवशेष उत्खननातून प्राप्त झाले.

२. शिलालेख आणि ताम्रपट :

सर्वात प्राचीनतम शिलालेखरूपी पुरावा म्हणजे अशोकाचे शिलालेख आहेत. त्याचप्रमाणे बोझागकाई येथील शिलालेखही पुरातन आहेत. त्यात ऋग्वेदकालीन देवदेवतांचा उल्लेख आहे. तो शिलालेख आर्यांचे मूळ वसतिस्थान मध्य आशिया होते, हे सिद्ध करणारा पुरावा मानला जातो. अशोकाच्या शिलालेखांतूनही सम्राट अशोकाविषयी खूप माहिती मिळते.

गुप्त कालखंडातील समुद्रगुप्ताच्या राजकवी हरिसेनने समुद्रगुप्ताच्या दक्षिण आणि उत्तर दिग्विजयाची प्रशस्ती लिहिलेला अलाहाबादचा प्रशस्ती लेख महत्त्वाचा आहे. दिग्विजयाची सारी बारीकसारीक माहिती, जिंकलेली राज्ये, त्या राज्यावर राज्य करणारे घटक हे सर्व तपशील या शिलालेखात आढळतात. सातवाहन काळातील नाणेघाटचा शिलालेख, पितळखोऱ्याच्या लेण्यातील शिलालेख, राष्ट्रकुट काळातील कंधारचा शिलालेख, यादव काळातील अर्धापूरचा शिलालेख, आंबेजोगाईतील खोलेश्वराचा शिलालेख हे सर्व महत्त्वपूर्ण घटनांचे साक्षीदार असलेले शिलालेख आहेत. ताम्रपटांमध्ये साधारणपणे निरनिराळ्या राजांच्या काळात त्यांनी दिलेल्या दानाचा उल्लेख असतो. दान देण्याचा काळ, प्रसंग, राजाची भेट, भेटीचे प्रयोजन म्हणून एखादी घटना यांचा उल्लेख असतो.

३. नाणी :

आर्थिक व्यवहाराचे प्रमुख साधन म्हणून नाण्यांचा उल्लेख पूर्वापार चालत आला आहे. नाण्यांवर सुद्धा बरीच महत्त्वपूर्ण माहिती असते. त्यावरून राजाचा उल्लेख, काळाचा निर्देश, धर्माचे प्रतिक अशा अनेक गोष्टींचा उलगडा होतो. नंदमौर्य काळातील नाणी, गुप्तकालीन नाण, सातवाहन काळातील नाणी अनेकदा वेगवेगळ्या ठिकाणी सापडली आहेत. त्यावरून भारताच्या इतिहास संशोधनास बरेच साह्य होते.

४. शिल्पावशेष व मूर्तीअवशेष :

कलेवरसुद्धा कालखंडाचा प्रभाव पडत असतो आणि वेगवेगळ्या राजांच्या काळातील व धर्म, विचारसरणी यांचाही कलेवर प्रभाव पडतो. त्यामुळे प्राचीन शिल्पांवरूनही त्या त्या कालखंडाचा अदमास लावता येतो. गुप्त कला, गांधार कला, मथुरा कला, परंपरा अशा अनेक कलाप्रकारांनी भारताचे कलाक्षेत्र प्रसिद्ध आहे. प्राचीन शिल्पांचा, मूर्तीचा अभ्यास करून मूर्तीवरील केशभूषा, वेशभूषा, अलंकार निरनिराळ्या देवदेवतांच्या मूर्ती यांतून भूतकालीन विचारसरणीची दिशा स्पष्ट होऊ शकते.

५. स्थापत्य अवशेष :

उत्खननातून सापडलेल्या गतकाळातील बांधकामांच्या अवशेषांवरून इतिहासासंबंधी सखोल माहिती मिळते. किल्ले, गढ्या, घरे, राजवाडे, मंदिरे, लेण्या, विहिरी, सार्वजनिक स्थळे यांतून तत्कालीन बांधकामपद्धती तंत्र, लोकांचे राहणीमान, धर्मसंकल्पना, युद्धतंत्र यांविषयी निश्चित चित्र रेखाटता येते. हडप्पा, मोहेंजोदडो उत्खननात सापडलेली शहरे, घरांचे चौथरे, मोठमोठाल्या इमारती, सार्वजनिक स्नानगृहे, धान्य कोठारे या अवशेषांवरून सिंधू संस्कृतीचा सखोल अभ्यास करता आला. सांची, सारनाथ, कपिलवस्तू, लुंबिनी या ठिकाणचे स्तूप, उदयगिरी, खंडगिरी किंवा अजिंठा वेरुळ येथील लेण्या, गुप्तकाळापासून चालुक्यापर्यंतची मंदिरे, आग्रा, दिल्ली, देवगिरी, कंधार येथील किल्ले या सर्वांचे अवशेष म्हणजे तत्कालीन स्थापत्यतंत्राचा पुरावाच आहे.

६. समुद्रतळातील अवशेष :

आधुनिक काळात साधारणत: १९८० पासून नवीन तंत्रज्ञानाने आता समुद्रतळातील संशोधन करणे सोपे झाले आहे. समुद्रात बांधकाम अवशेष, अस्थी अवशेष सापडतात. महाभारतकालीन द्वारकेजवळच्या समुद्रात सापडल्याचा दावा करण्यात येतो. यावरून समुद्रतळाचा अभ्यास इतिहासासाठी महत्त्वाचा असतो, हे लक्षात येते.

एकंदरीत यावरून हे लक्षात येते की इतिहासाचा अभ्यास करण्यासाठी आपल्याला इतिहासाच्या पाऊलखुणांवर चालावे लागते. या पाऊलखुणांचा अभ्यास म्हणजेच इतिहास जाणून घेण्याची एक संधी असते.

निष्कर्ष :

१. पुरातत्वीय साधने आणि पुराभिलेखीय साधने अशा दोन प्रकारची ऐतिहासिक साधने अभ्यासण्यात येतात.
२. ग्रांथिक स्वरूपातील निर्मितीपासून म्हणजेच १२व्या शतकापासूनची ग्रंथसंपदा इतिहास अध्ययनासाठी उपयुक्त ठरते.

३. प्राचीन भारतीयांचे लिखाण जसे रामायण महाभारतासारखे ग्रंथ, वेद, पुराणे, श्रुती स्मृतिग्रंथ या ग्रंथांना धार्मिक दृष्टीने महत्त्वाचे मानण्यात येते. त्याबरोबरच त्यांचा ऐतिहासिक माहिती मिळविण्याकरिताही खूप उपयोग होतो.

४. विविध संप्रदायांशी निगडित साहित्यही तत्कालीन माहिती मिळविण्यासाठी उपयुक्त ठरते. यात बौद्ध संप्रदाय, जैन संप्रदाय याचा सामाजिक राजकीय संदर्भाच्या दृष्टीने खूप उपयोग होतो.

५. पर्यटनाच्या किंवा अध्ययनाच्या हेतूने भारतात आलेल्या परकीय पर्यटकांच्या लिखाणातून बरीच विश्वासनीय माहिती मिळू शकते.

६. पुरातत्वीय साधनांत उत्खनन अवशेष, शिलालेख आणि ताम्रपट, नाणी, शिल्प, लेण्या स्थापत्य अवशेष यांचा समावेश होतो.

संदर्भ :

१. देव, डॉ. प्रभाकर, इतिहासाची साधने, 'प्राचीन भारत', विद्या प्रकाशन, नागपूर, प्रथमावृत्ती, १९९५, पृ. २४

२. दीक्षित, ना. सी., प्राचीन भारतीय इतिहासाची साधने, 'भारताचा इतिहास – १ प्रारंभापासून ते इ.स. १६२६', पिंपळापुरे अॅंड कं. पब्लिशर्स, नागपूर, दुसरी आवृत्ती, २००४, पृ. ४८

३. आठल्ये, डॉ. विभा, मराठ्यांच्या इतिहासाची साधने, 'मराठ्यांचा इतिहास: आरंभापासून १७०७ पर्यंत', अंशुल प्रकाशन, प्रथमावृत्ती, २०००, नागपूर, पृ. १२

संदर्भग्रंथ :

१. देशपांडे , अ. ना., 'प्राचीन मराठी वाङ्मयाचा इतिहास' – भाग १ उत्तरार्ध

२. गायकवाड, सरदेसाई, 'ऐतिहासिक कागदपत्रे व स्थळे यांचा अभ्यास

3- राजवाडे, वि. का., मराठ्यांच्या इतिहासाची साधने खंड –८

Gurukul International Multidisciplinary Research Journal (GIMRJ)
with
International Impact Factor 2.254

ISSN No. 2394-8426
Dec – 2015
Issue – I, Volume – V
Online Journal

The Forest Industries Produce Bamboo: Role in Pulp & Paper Industries

Guide
Dr. Prakash N. Somalkar
Ph.D. Guide

Researcher
Nagsen J. Shambharkar
Ph.D. Scholar

Paper is an essential commodity, required for communication, literary pursuit, packaging and a variety of other applications. The per capita consumption of paper in India is around 6.5 kg/annum, which is extremely low compared to the world average of 45.6 kg. Demand for ral and industrial varieties as well as newsprint will continue to grow with the increases in population, improvement living standards, literacy rates and industrialization of the country. At present, are an estimated 660 pulp and paper mills with a total installed capacity of around 8.2 million TPA with a capacity utilization of about 76%. The aggregate installed capacity by 2010 for paper and papered board is expected to reach 10.3 ::million tones. Wood contributes 35% about of the total paper production and producing one tone of paper 2.5-2.75 tonne of oven dried wood is required.

Growth of paper industry in India has been constrained due to high cost of production caused by inadequate availability and high cost of raw materials, pour cost and concentration of mills in particular area. Government has taken r<eral policy measures to remove the bottlenecks of availability of raw materials infrastructure development. For example to overcome short supply of raw materials, duty on pulp and waste paper and wood logs/chips has been reduced.

Bamboo is regarded as a major resource that meets the need of common people and also as a poverty alleviator due to its multi-purpose uses. As a result of this, bamboo resources are of great importance in the rural socio-economy of several tropical countries. The availability of raw material is now one of the major basic problems of paper industries as the large paper mills are mainly based on conventional raw material i.e., bamboo and hardwoods. The shortage of raw material was recorded 4.94 million tonnes in 2000. Of 28 forest wood-based paper mills, 20 paper and board mills are using bamboo and reed as raw material. In all 1.6 million tonnes of bamboo is used along with 4.0 million tonnes hardwood to produce 1.4 million tonnes of pulp annually.

Role of bamboo in the paper industry

In earlier days, usages of bamboo in furnish to produce paper and board was more than 70 per cent. However, there is a drastic shift today in usage of bamboo by paper mills reducing its usage from 70 to 10 per cent per annum. Presently, 17 paper mills use 15.58 lac tones per annum of bamboo. To compensate the bamboo usage, mills are promoting more wood based plantations.

Pulp & Paper mills wood requirement

The Indian Pulp and Paper industry produces nearly 1.4 million tones of pulp annually from wood based raw material. The aggregate installed capacity by 2010 for paper and paperboard is expected to reach 10.3 million tones. The raw material wise use pattern of Indian paper mills is: agriculture residues (36%), hardwood (30%), waste paper (26%) and bamboo (8%).

Accordingly the bamboo requirement will be 2.5 million tones to produce O."-million tones of pulp and hardwood requirement will be 7.72 million tones produce 3.09 million tones of pulp by! 2010. The projected demand by 2010 will I lead to short fall of 5.52 million tons for which additional raw material requirement! is projected. The present wood requirement of pulp and paper companies is given in Table 1.

Table 1

Bamboo and wood requirement of the paper industry

Sr. No.	Company	Bamboo (MT)	Wood (MT)	Total (MT)
	ITC Limited, PSPD, Bern	80000	320000	400000
	Tamil Nadu News Print Ltd., Karur	0	90000	90000
	Century Pulp and Paper, Lalkua.	60000	240000	300000
	JK Corp Ltd., Raigada	50000	350000	400000
	JK Corp Central Pulp and Paper Mill, Songhad	80000	70000	150000
	Orient Paper Mills Ltd., Amlai	117000	94000	211000
	Star Paper Mills Ltd., Saharanpur	100000	130000	230000
	Mysore Paper Mills Ltd. Bhadravathi	30000	183600	213600
	Sirpur Paper Mills Ltd., Sirpur	1000	230000	240000
	BILT, Ballarpur	200000	200000	400000
	BILT, Sewa	40000	220000	260000

	BILT, Yamunagar	46000	193000	239000
	BILT, Chowdwar	16000	70000	86000
	BILT, AP Rayon's, Kamlapur	0	380000	380000
	Seshasayee Paper and Boards Ltd., Erode.	0	200388	200388
	Andhra Pradesh Paper Mills Ltd., Rajahmundry	40000	330000	370000
	West Coast Paper Mills Ltd., Dandali	0	400000	400000
	Hindustan News Print Ltd., Kottayam	189000	150000	339000
	Hindustan News Print Ltd., Naogaon	250000	0	250000
	Hindustan News Print Ltd., Kachar	250000	0	250000
	Total	1558000	3850988	5408988

Causes of Shortage:-

- The major hurdle in cultivation of Bamboo from seeds has been the poor availability of planting material. Most of economically important bamboo species bear seeds only 2 to 3 time in a century and seeds viability is only for a short period.
- Existing use of rhizome as planting material is not only insufficient and costly but in most of the clump forming bamboos, is leading to relocation rather than development of the resource.
- Over-exploitation of the existing forests threatened the very existences of important genetic resources of economically important species.
- Low awareness of conservation practice is gradually leading to the decrease in production and supply of bamboo.
- Lack of mechanization in harvesting making it a cumbersome and inefficient practices leads to losses.
- Lack of appropriate storage and warehousing infrastructure. After harvest bamboo is required to be transported safely and stored properly in warehouses near the villages, which is lacking at present.

Conclusion

Bamboo contributes as a source of long fiber in the pulp and paper furnish. The physical and chemical characteristic of bamboo as a raw material varied form species to species. The raw material having low lignin content reduces chemical consumption and pollution load during puping and bleaching whereas high holocellulose content result in more productivity Anatomical characters like fiber morphology is one of the important

character which playa very imporantant role on the structure and proprieties of the end products like paper and textile. The ratio of length and wall thickness affects the flexibility and collapsibility of fiber, which inturen reduces the energy requirement during beating. There is need to fill up the gap between demand and supply by raising quality bamboo.

Reference:-

1. Bhargava M. P. (1942). Bamboo for pulp and paper manufacture. Part I-II for bull.,129
2. Sing, M. M. S. K. purkyastha, P. P. Bhola, Krishan Lal and Swaran Singh (1976) Fiber morphology and pulp sheet properties of Indian bamboos. Indian Foresters, 102 (9) : 579-595.
3. S. P. Singh % Sanjay Naithani the India foresters "Bamboo raw material for pulp & paper Industries.

Gurukul International Multidisciplinary Research Journal (GIMRJ)
with
International Impact Factor 2.254

ISSN No. 2394-8426
Dec – 2015
Issue – I, Volume – V
Online Journal

''पाणलोट क्षेत्र विकासातून पर्यावरण विकासाकडे''

प्रा. एस. एम. कोल्हापूरे,
अर्थशास्त्र विभाग,
विलिंग्डन महाविद्यालय, सांगली.

प्रा. डॉ. एस. एस. अंभोरे,
प्राचार्य,
पंडित जवाहरलाल नेहरू महाविद्यालय,
औरंगाबाद.

प्रत्येक प्रदेशाची सांस्कृतिक जडणघडण आणि इतिहास यांच्याशी त्या भागातील नैसर्गिक परिस्थिती व पर्यावरण यांचा थेट परस्पर संबंध असतो. पर्यावरणच त्याभागातील संस्कृती घडविण्यास हातभार लावत असतो. निसर्गामध्ये उपलब्ध असलेल्या संसाधनांचा उपयोग करुन मानव आदिम काळापासून उदरनिर्वाह करत आलेला आहे. मानवाच्या उत्पत्ती व उत्क्रांतीच्या काळापासून मानव निसर्गाच्या सानिध्यात आपले जीवन जगत होता. नंतरच्या काळात सामाजीक भावनेचा उगम झाला व तो कुटुंब करुन समूहाने राहू लागला. मानवाची वैचारीक प्रगती जसजशी होत गेली तसतसा तो भौतिक सुखाकडे आकर्षीला गेला व त्यानुसार तो बौधिकतेच्या जोरावर प्रगती करत गेला. वैचारीक बदल, भौतिक प्रगती, संशोधन यामुळे मानवाची उदरनिर्वाहाची भूख शमली व त्याची भौतिक भूख जास्त जोमाने जोर धरु लागली. यातूनच तो जंगल, पाणी, हवा, जमीन, खनिजे, या नैसर्गिक संपत्तीचा अतिरीक्त उपयोग करुन तो आपली हाव भागविण्याचा प्रयत्न करत आहे.

मानवाने औद्योगिक क्रांतीनंतर मोठ्याप्रमाणात भौतिक व संशोधनात्मक प्रगती केली व याच जोरावर तो चंद्रावर जाऊन आला. तसेच तो विविध ग्रहांवरती मानव विरहित उपग्रह, यान पाठवित आहे. मानवाने केलेला हा भौतिक विकास वाखनण्याजोगा व प्रशंसनीय आहे. परंतु या प्रगतीचा नैसर्गिक संपत्तीवर अतिरीक्त भार पडून नैसर्गिक समतोल ढासळत आहे. इमारतीसाठी, इंधनासाठी, कागद निर्मितीसाठी व घरातील फर्निचर्ससाठी लाकूडतोड मोठयाप्रमाणात केली जात आहे. याचा परिणाम नैसर्गिक समतोलावर होत आहे. औद्यागिक क्रांतीमुळे पर्यावरणातील कार्बनी संयुगांचे प्रमाण वाढून 'ग्रीन हाऊस परिणाम' व त्यामुळे जागतिक तापमान वाढ होत आहे. या तापमान वाढीमुळे नैसर्गिक चक्र ढासळत आहे. परिणामी चक्रीवादळे, भूकंप, त्सुनामी, दुष्काळ, अतिवृष्टी, बर्फवृष्टी यासारख्या नैसर्गिक आपत्ती घडण्याचे प्रमाण वाढत आहे.

विकास व पर्यावरण प्रदूषण समस्याः

जगातील प्रत्येक देश जलद आर्थिक विकास साध्य करण्यासाठी प्रयत्नशील आहे. त्यासाठी प्रत्येक देशाने नियोजनाचा अवलंब केला आहे. नियोजनाच्या माध्यमातून राष्ट्रातील उपलब्ध साधन संपत्तीचा पुरेपुर वापर करुन नियोजित विकास साध्य करण्याचा प्रयत्न करीत आहेत. सनातनवादी अर्थतज्ज्ञांच्या मते राष्ट्रीय उत्पन्न व दरडोई उत्पन्नातील वाढ म्हणजे विकास होय. तर आधुनिक अर्थतज्ज्ञांच्या मते राष्ट्रीय उत्पन्न वाढीबरोबरच रोजगार वाढ, दारिद्र्यात घट तसेच पर्यावरणीय समतोल यांचा समावेश विकासामध्ये होतो. विकास साध्य करण्यासाठी व आपल्या गरजा पूर्ण करण्यासाठी मानव पर्यावरणामध्ये उपलब्ध असलेल्या घटकांचा अतिरिक्त उपयोग करुन स्वतःची हाव पूर्ण करण्याचा प्रयत्न करत आहे. निसर्गामध्ये उपलब्ध असलेली खनिजे, पाणी, जंगले, जमिन, हवा यांचा अतिरिक्त वापर करत आहे. यातूनच पर्यावरणाची मोठी हानी होत आहे व अनेक समस्या निर्माण होत आहेत.

आपल्या सभोवतालचा निसर्ग म्हणजेच पर्यावरण. हवा, पाणी, वनस्पती, पशुपक्षी, जीवजंतू, मनूष्यप्रणी हे सर्व पर्यावरणाचे घटक आहेत. पर्यावरणामध्ये आपल्या सभोवताली असलेले वातावरण यामध्ये सर्व सजीव व निर्जिव घटकांचा समावेश होतो. या सर्व घटकांचा प्रभाव मानवी जीवनावर होत असतो.

मानवाच्या उत्क्रांतीपासून पर्यावरणीय प्रदूषणाची समस्या दिसून येते. सर्वसामान्य जनतेचा असा समज झालेला आहे की, पर्यावरणीय प्रदूषणाची समस्या अलिकडील काळामध्ये औद्योगिकीकरणाच्या प्रक्रियेची देणगी आहे. परंतु प्राचीन काळीही प्रदूषण होतेच. याचा संदर्भ त्याकाळी लिहिलेल्या विविध ग्रंथांमधून मिळतो. महर्शि सुश्रुत यांच्या 'सुश्रुत संहिता' या ग्रंथामध्ये 'दूषितजल लक्ष्मणम्' हा विभाग आहे. यामध्ये जलप्रदूषण कसे होते, ते कसे ओळखावे व त्याचे परिणाम काय होतात याविषयी सांगीतले आहे. तसेच दूषित झालेले पाणी शुध्द कसे करावे याविषयी उल्लेख आहेत. पाणी प्रदूषण व त्याचे दुष्परिणाम, हवा प्रदूषणाचे पक्षी, प्राणी व मानव यांवर कोणते परिणाम होतात याविषयी विवेचन केले आहे. यावरुन प्रदूषण ही आधुनिक युगाची देण नसून प्राचीन काळापासून प्रदूषण होत आलेले आहे. परंतु याची तीव्रता आधुनिक युगामध्ये वाढली आहे.

प्रसिध्द शास्त्रज्ञ आईनस्टाईन म्हणतो की, ''या जगात अमर्याद व अनंत अशा दोनच गोष्टी आहेत. एक म्हणजे अफाट विश्व व दुसरे म्हणजे विनाकारण अहंकारी बनत चाललेल्या मानवाचे अज्ञान'' या अहंकारामुळेच मनुष्याने आज निसर्गाचा ऱ्हास मोठया प्रमाणात घडवून आणला आहे. मानवाने आपल्या अहंकारी कृतीने आपल्याबरोबरच पर्यावरणातील प्रत्येक घटकास दूषित केले आहे.

पृथ्वीवरील मानवाच्या संख्येमध्ये भरमसाठ वाढ होत आहे. लोकसंख्येतील या वाढीमुळे त्यांच्या वाढत्या गरजा पूर्ण करण्यासाठी पर्यावरणातील घटकांचा अतिरिक्त वापर होत आहे. मानव संख्या व गरजा जितक्या जास्त असतील तितक्या अधिक प्रमाणात पर्यावरणाचा वापर होऊन पर्यावरणाचा ऱ्हास होईल. मानवाच्या अतिरिक्त हस्तक्षेपामुळे पर्यावरणातील वेगवेगळया घटकांवर प्रतिकूल परिणाम होत आहे. जंगल, पाणी, हवा व माती या घटकांवर मानवी विकासात्मक प्रक्रियांचा प्रतिकूल परिणाम होऊन हानी मोठयाप्रमाणात होत आहे. त्याचप्रमाणे रोजगारासाठी शहरांकडे धाव घेणारी जनता व त्यांच्या वाढत्या समस्या, त्यामुळे शहरांमध्ये फोफावत असलेल्या घाणेरडया लोकवस्त्या व त्यामुळे होणारे प्रदूषण या भयंकर चक्रामध्ये आजचा मानव अडकला आहे. यामुळे मानवाने आजतागायत केलेली तथाकथित प्रगती खरोखरच प्रगती आहे की त्याने स्वतःच्या पायावर स्वतः कुऱ्हाड मारुन घेतली आहे? 'जगा आणि जगू द्या' हा निसर्ग नियम मानवानेच मोडीत काढला आहे.

मानवाच्या विकास साध्य करण्याच्या क्रियांमुळे औद्यागिकरणाचे प्रमाण वाढले व यामुळे वस्तूंची निर्मिती मुबलक प्रमाणात करण्यात येऊ लागली. परिणामी कार्बन डाय ऑक्साइड, क्लुरोफ्लुरो कार्बन यासारख्या विषारी वायुंचे उत्सर्जन जास्त प्रमाणात होऊ लागले. यातुनच वायुप्रदूषणाच्या प्रमाणात वाढ झाली. तसेच स्वयंचलित वाहने व घरगुती इंधनामधून निघणारा धूर, किरणोत्सर्ग यामुळेही हवा प्रदूषीत होते. खते, कीटकनाशके, घरगुती व औद्योगिक कचरा व किरणोत्सर्ग यामुळे भूमिप्रदूषण होत आहे. घरगुती व औद्योगिक सांडपाणी, कचरा, खनिज तेले, उष्णता, किरणोत्सर्जन यामुळे जलप्रदूषणामध्ये वाढ होत आहे. अलिकडील काळात शहीरकरण व औद्यागिकरणामध्ये मोठया प्रमाणात वाढ झाल्यामुळे जलप्रदूषणामध्ये झपाट्याने वाढ झाली आहे. तसेच स्वयंचलीत प्रवासी वाहने व करमणुकीच्या साधनांमुळे ध्वनी प्रदूषण होत आहे. हे

सर्व परिणाम मानवाच्या विकास नितीचे आहेत. थोडक्यात पर्यावरणीय ऱ्हासाचे मूळ मानवी कृतीमध्ये दिसून येते.

पाणलोट क्षेत्र विकास व पर्यावरणीय सुदृढता:

पर्यावरणाची सुदृढता कशी ठरवायची? या प्रश्नाचे निश्चित असे उत्तर देता येणार नाही, परंतु ज्या पर्यावरणातील सर्व घटकांचा समतोल व्यवस्थित राखला गेला असेल, ज्यातील निसर्गचक्रे अबाधितपणे चालू असतील, ज्यात प्राणीमात्रांना निसर्ग नियमाप्रमाणे प्राप्त आयुष्याची हमी असेल, जिथे वृक्षवल्ली सहज व सुदृढपणे वाढू शकतील यास पर्यावरणाची सुदृढता म्हणता येईल.

पाणलोट ही एक भौगोलिक सीमा असते. सर्वसाधारणपणे एखाद्या नदीला ज्या–ज्या भूप्रदेशावरुन पाण्याचा पुरवठा होतो, ते क्षेत्र पाणलोट क्षेत्र म्हणून ओळखले जाते. हे क्षेत्र असे असते जे पावसाचे पाणी नदीला मिळण्यास मदत करते. थोडक्यात डोंगरमाथा ते मुख्य पाण्याच्या प्रवाहापर्यंतचा भाग पाणलोट क्षेत्रांतर्गत येतो. या क्षेत्राचा विकास म्हणजेच संवर्धन करण्यासाठी वेगवेगळे उपक्रम राबविले जातात. भारतामध्ये पाणलोट क्षेत्र विकासासाठी नियोजन काळामध्ये अवर्षण प्रवण क्षेत्र कार्यक्रम, वाळवंटी क्षेत्र विकास कार्यक्रम, कोरडवाहू क्षेत्रासाठी राष्ट्रीय पाणलोट क्षेत्र विकास कार्यक्रम, एकात्मिक पाणलोट क्षेत्र विकास कार्यक्रम, सर्वंकष पाणलोट क्षेत्र विकास कार्यक्रम, इंडो–जर्मन पाणलोट क्षेत्र विकास कार्यक्रम, तसेच रोजगार हमी योजनेच्या माध्यमातून अनेक उपाय योजिले जातात. पाणलोट क्षेत्र विकासा अंतर्गत मृद् व जलसंधारणाची कामे केली जातात. या अंतर्गत समतल पातळीत जैविक बांध, खस गवताची लागवड, वनीकरण व कुरण विकास, सिमेंट नाला बांध, मातीचे नाला बांध भूमिगत बंधारा, शेततळी, नाला सरळीकरण, समतल सलग चर, गॅबियन स्ट्रक्चर यासारखे उपचार केले जातात. या कामांचे उद्देश– पावसाळयात नदी नाल्यामधून जाणारे पाणी योग्य ठिकाणी अडविणे व जमिनीत मुरविणे, पूर नियंत्रण करुन जमिनीचे नुकसान थांबविणे, जमिनीची धूप थांबवून नदी नाल्यामधून वाहून जाणारे गाळाचे प्रमाण कमी करणे, भूगर्भातील पाण्याची पातळी वाढविणे व उपलब्ध पाण्याचा वापर पिकपध्दतीनुसार करुन उन्हाळयामध्ये पिण्याचे पाणी कायमस्वरुपी निर्माण होईल अशी व्यवस्था निर्माण करणे, पाण्याच्या उपलब्धतेप्रमाणे पीक पध्दतीचे नियोजन करणे, पाणलोट क्षेत्रातील लागवड योग्य जमीन लागवडीखाली आणणे, वनीकरण व कुरण क्षेत्र

वाढविणे आणि त्यायोगे जमिनीवरुन वाहणाऱ्या पाणी आणि मातीस प्रतिबंध करणे, जमीन पाणथळ व क्षारयुक्त होऊ नये यासाठी संरक्षणात्मक व नियंत्रणात्मक कामे करणे, पाणलोट क्षेत्रातील पर्यावरणाचा समतोल राखणे आणि पाणलोट क्षेत्रातील लोकांचा आर्थिक विकास साधून त्यांचे जिवनमान उंचावणे, इ. उद्देश समोर ठेऊन पाणलोट क्षेत्र विकासांतर्गत मृद् व जल संधारणाची कामे केली जातात.

ज्याठिकाणी अशी कामे पूर्ण झालेली आहेत तेथील पर्यावरणावर अनुकूल प्रभाव पडलेला आहे. पाणलोट क्षेत्र विकास कामांमुळे तेथिल सिंचन क्षेत्रामध्ये वाढ झालेली आहे, पिकाखालील क्षेत्रामध्ये वाढ झालेली आहे, विहिरींच्या पाणी पातळीमध्ये वाढ झालेली आहे. तसेच वनीकरण व कुरण विकासाच्या कामांमुळे तेथिल वनीकरणामध्ये वाढ होऊन जनावरांना चाऱ्याची उपलब्धता झाली आहे. पाण्याच्या उपलब्धतेमुळे पिण्याच्या पाण्याचा प्रश्न सुटला आहे. सिंचनातील वाढीमुळे, जमिन उत्पादकतेतील वाढीमुळे व लागवडीखालील क्षेत्रातील वाढीमुळे अन्नधान्य विषयक समस्या सुटण्यास मदत होते. यासारख्या अनुकूल परिणामामुळे पर्यावरणीय समतोल राखण्यास मदत होते. तसेच जैवविविधता टिकून राहते.

जर पाणलोट क्षेत्र विकासाच्या उपक्रमांची योग्य रितीने अंमलबजावणी केली तर पाच ''ज'' चा विकास होईल. म्हणजेच जल, जमिन, जंगल, जनावर व जनता. यापैकी पहिले तीन घटक पुरवठा घटक आहेत पर पुढील घटक मागणी बाजूचे घटक आहेत. जल व जमिनीचा विकास झाला तर जंगालांचा विकास होईल. जल, जमीन व जंगलांचा विकास झाला तर जनावरांचा विकास होईल आणि या चार घटकांच्या विकासामुळे जनतेचा विकास होईल. या पाच ''ज''च्या विकासाबरोबरच पुढील ''एफ''ची उपलब्धता होईल. हे ''एफ'' म्हणजे Food, Fodder, Fuel, Fruit, Fiber, Flesh, Fertile, Operation Flood and Flood Control. थोडक्यात पाणलोट क्षेत्राच्या विकासामुळे स्थानिक पर्यावरणाचा आणि जनतेचा विकास होईल. यासाठी पाणलोट क्षेत्राचे योग्य व्यवस्थापन होणे गरजेचे आहे.

जमिनीची होणारी प्रचंड धूप, पर्जन्यमानाचा असमतोलपणा व अनिश्चितता, त्यामुळे अवर्षण प्रवण क्षेत्रामध्ये होणारी वाढ, पाण्याचा अयोग्य वापर, वाढती लोकसंख्या, वृक्षतोड, पर्यावरणीय प्रदूषणात वाढ, जमिनीची घटती उत्पादकता इत्यादी व अशा कारणांमुळे पाणलोट क्षेत्र विकास कार्यक्रम राबविणे ही काळाची गरज आहे.

पृथ्वीवरील सजीवास जिवंत राहण्यासाठी अन्न, हवा व पाणी आवश्यक असते. या अभावी सजीव सृष्टीचे अस्तित्व शून्य आहे. पाण्यावरती मानवी जीवन व मानवाचा विकास अवलंबून आहे. तसेच निसर्गातील झाडे, जमीन, खनिजे यावर मानवी जीवन आधारित आहे. मानवाने केलेल्या अतोनात पर्यावरणीय संहारामुळे पर्यावरणीय समतोल बिघडला आहे. मानवाने आपल्या कृतीने निसर्गातील प्रत्येक घटकास दूषित केले आहे. पर्यावरणीय समतोल राखावयाचा असेल तर झाडांची लागवड व जोपासणा केली पाहिजे. हवा शुध्दीकरण करणे, पावसाचे प्रमाण वाढविणे, पाणी शुध्दीकरण करणे, पाणी जमिनीत मुरविणे, जमिनीची धूप थांबविणे पर्यायाने पर्यावरणीय समतोल पुन:प्रस्थापित करण्यासाठी झाडे लावून जगविणे आवश्यक आहे. पाणलोट क्षेत्र विकासांतर्गत वेगवेगळी झाडे लावून त्यांचे संवर्धन केले जाते. म्हणजेच पाणलोट क्षेत्र विकास हा एक पर्यावरण संतुलन राखण्याचा महत्वपूर्ण उपक्रम आहे. यामुळे पाणलोट क्षेत्र विकास हा कार्यक्रम आहे जो नैसर्गिक संतुलित राखण्यासाठी उपयुक्त आहे.

आपणच निर्माण केलेले हे प्रदूषणाचे भूत आपणच नष्ट करावयास हवे. त्यासाठी पंचमहाभूतांची शुध्दी अतिशय आवश्यक आहे. प्रत्येक व्यक्तिने स्वतः पर्यावरणाच्या विकासास हातभार लावला पाहिजे आणि पर्यावरणीय समस्या दूर करण्याची जबाबदारी उचलली पाहीजे. ही प्रत्येक व्यक्तीची नैतीक जबाबदारी आहे. तरच मानव समाजाचा विकास होईल. नाहीतर केलेले सर्व विकासात्मक प्रयत्न फोल ठरतील.

संदर्भ:

1. महाराष्ट्र जल व सिंचन आयोग अहवाल, महाराष्ट्र शासन, जून 1999.
2. कृषी दैनंदिनी 2008, मराठवाडा कृषी विद्यापीठ, परभणी.
3. तांबटकर न.ल. (जुलै 1993), ''पाणलोट क्षेत्र विकासाची गरज का?'', महाराष्ट्र सिंचन विकास, पाटबंधारे संशोधन व विकास संचलनालय, पुणे.
4. ''हमारा पर्यावरण'' भारतीय पर्यावरण समिती, दिल्ली.

Gurukul International Multidisciplinary Research Journal (GIMRJ)
with
International Impact Factor 2.254

ISSN No. 2394-8426
Dec – 2015
Issue – I, Volume – V
Online Journal

प्रेमचंद युगीन हिन्दी उपन्यास

शारदा साहेबराव शेळके
संशोधक विद्यार्थिनी
मो. 9764961940

प्रेमचंद युगीन हिन्दी उपन्यासकारों में 'प्रेमचंद' अपनी महान प्रतिभा का कारण युग प्रवर्तक के रूप मे जाने जाते है। वस्तुतः सही अर्थो मे उन्होने ही हिन्दी उपन्यास शिल्प का विकास किया। उनके उपन्यासों मे पहली बार सामान्य जनता की समस्याओ की कलात्मक अभिव्यक्ति की गई थी और जनजीवन का प्रामाणिक एवं वास्तविक चित्र पाठकों को देखना सुलभ हुआ था। अपने महान 'उपन्यासो के कारण वे वास्तव में 'उपन्यास सम्राट' की पदवी पाने के अधिकारी सिद्ध हुए।

प्रेमचंद के उपन्यास राष्ट्रीय आंदोलन कृषक, समस्या, मानवतावाद, भारतीय संस्कृति, शोषण, विधवा विवाह, अनमोल विवाह, दहेज प्रथा, आदि विविध विषयो से सम्बन्धित है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने प्रेमचन्द का मूल्यांकन करते हुए लिखा है – "प्रेमचंद शताब्दियों से पददलित, अपमानित और अपेक्षित कृषकों की आवाज थे। अगर आप उत्तर भारत की समस्त जनता के आचार–विचार, भाषा–भाव, रहन–सहन, आशा–आकांक्षा, दुःख–सुख और सुझबुझ जानना चाहते है, तो प्रेमचन्द से उत्तम परिचायक आपको नहीं मिल सकता।" प्रेमचंद के प्रमुख उपन्यासो मे है – सेवासदन, प्रेमाश्रम, रंगभुमी, कायाकल्प, निर्माला, गबन, कर्मभुमि और गोदान, मंगलसुत्र (अपुर्ण)

प्रेमचन्द ने हिन्दी कथा साहित्य को 'मोरंजन' के स्तर से उपर उठाकर जीवन के साथ जोडने का काम किया। वस्तुतः 'सेवासदन' के प्रकाशन के साथ ही हिन्दी उपन्यास को नई दिशा प्राप्त हो गई। इस उपन्यास में उन्होंने विवाह से जुडी समस्याओं–दहेज प्रथा, कुलीनता का प्रश्न, पत्नी का स्थान आदि को उठाया है, किन्तु इन्हे प्रस्तुत करने का ढंग पर्ववर्ती उपन्यासों से एकदम अलग है। 'निर्मला' मे उन्होने दहेज प्रथा और अनमेल विवाह की समस्या को प्रस्तुत किया है। कृषक जीवन की समस्याओ का यथार्थ चित्रण उन्होंने 'गोदान' मे किया है जो उनका सर्वश्रेष्ठ उपन्यास कहा जाता है। ग्रामीण जीवन का ऐसा यथार्थ एवं प्रामाणिक चित्रण इस उपन्यास मे हुआ है कि इसे सर्वत्र संरक्षना प्राप्त हुई है। समाज में व्याप्त छुआछुत एवं साम्प्रादायिकता की समस्या को भी उन्होंने अपने उपन्यासो में अभिव्यक्ति दी है।

"इस युग के उपन्यासों की सबसे प्रमुख और सामान्य विशेषता उनका घटना प्रधान होना है। यानी ये उपन्यास घटना चमत्कार का प्रदर्शन कर या तो मात्र मनोरंजन करना चाहते है या कोई उपदेश देना चाहते है।... घटना–चमत्कार पर आधारित रहनेवाला उपन्यास जीवन–यथार्थ की चिन्ता कम करता है। इसमे घटना पात्रो की योजना चारित्रिक विशेषताओं मानसिक सत्यो की निगूठताओं, सामाजिक परिवेश के साथ सम्बन्धो के चित्रण के लिए नही होती, घटनाएँ भी गहन जीवन संदर्भो और पात्रों की पारस्परिक क्रिया

प्रतिक्रियाओ से प्रभावित नही होती।... प्रेमचंद उपन्यासों की घटनाएँ देश–काल; पात्र के जटिल यथार्थ को समझे बिना उन्हे चित्रित किये बिना नियोजित होती चली है।"[1]

इस प्रकार प्रेमचंद के उपन्यास जीवन के विविध पहलुओं से जुडे हुए है। वे हिन्दी के सर्वाधिक लोकप्रिय उपन्यासकार माने जाते है। विषयवस्तु एवं शिल्प दोनों ही दृष्टियों से प्रेमचंद के समकक्ष हिन्दी का कोई अन्य उपन्यासकार खडा नही किया जा सकता। प्रेमचंद के उपन्यासों में विषय की विविधता एवं व्यापकता के साथ–साथ चरित्रो का स्वभाविक विकास दिखाया गया है। उनके उपन्यासो मे राजनीतिक समस्याओ का निरूपण भी किया गया है। उनके उपन्यासो से राजनीतिक समस्याओं का निरूपन भी किया गया है; 'रंगभुमि' मे शासक वर्ग के अत्याचारों का चित्रण है तो 'कर्मभुमि' में स्वतंत्रता संग्राम की एक झलक है। गबन मे उन्होंने स्त्रियों के आभूषण प्रेम के दुष्परिणामों का चित्रण किया है तो 'कायाकल्प', 'पूवर्जन्म' से सम्बन्धित है। प्रेमचंद के उपन्यासो की एक प्रमूख विशेषता है – आदर्शोन्मुखी यथार्थवाद, जिसके कारण वे पाठको में अति लोकप्रिय हुए है। भाषा का प्रयोग मे वे अपने समकालीन सभी उपन्यासकारों से श्रेष्ठ है और इस दृष्टि से वे एक मानदण्ड बन गए है। अपनी इन विशेषताओ के कारण ही वे हिदी उपन्यास मे एक नए युग का सुत्रपात कर सकने मे सफल हुए है।

प्रेमचंद के समकालीन उपन्यासकारो में जयशंकर प्रसाद, विश्वम्भरनाथ श्रीवास्तव, पाण्डेय बेचन शर्मा उग्र, वृन्दावन लाल वर्मा, भगवतीप्रसाद वाजपेयी, जी.पी श्रीवास्तव आदि प्रमुख है। प्रसाद जी बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे। उन्होंने काव्य, नाटक आदि क्षेत्रों में सफलता पाने के साथ–साथ उपन्यासों की रचना करके भी ख्याति अर्जित की। उन्होंने कंकाल (1929 ई.) तथा तितली (1934 ई.) नामक दो उपन्यासों की रचना की है। 'इरावती' नाक एक अधुरा उपन्यास भी उन्होंने लिखा है जिस वे अपनी अकाल मृत्यू के कारण पूरा नही कर सके।

'कंकाल' मे प्रसाद जी ने व्यक्ति की स्वतंत्रता का समर्थन किया है जबकि 'तितली' के द्वारा उन्होने प्रेम के आदर्श स्वरूप की व्याख्या की है तथा ही इसमें ग्रामीण समस्याओं का भी चित्रण किया गया है। प्रसाद के उपन्यासो में नाटकीयता अधिक है साथ ही भाषा का अलंकृत प्रयोग भी है। चरित्रांकन अपना सुक्ष्म नही है जितना प्रेमचन्द के उपन्यासो में दिखाई पडता है।

"हिन्दी साहित्य में उपन्यास का वास्तविक स्वरूप पहले–पहल प्रेमचंद के उपन्यासो में दिखाई पडता है या उपन्यासों का वास्तविक विकास प्रेमचंद से ही माना जाता है। इसके पीछे का सत्य यह है कि प्रेमचंद युग के हिन्दी उपन्यासो में विषय और उद्देश्य की दृष्टि से कुछ वैविध्य भले ही रहा है। लेकीन वे सभी उपन्यास कही न कही वास्तविक गरिमा प्राप्त करने मे असमर्थ है।"[2]

विश्वम्भरनाथ शर्मा कौशिक (1891–1946) को प्रसिद्ध उपन्यास हैं 'भिखारिणी' और मां। भिखारिणी उपन्यास मे उन्होंने 'अन्तजार्तीय विवाह' की समस्या को कथानक का आधार बनाया है तथा 'मां' उपन्यास में उन्होंने मध्यमवर्गीय परिवार का चित्रण करते हुए वेश्यालयों के वातावरण को प्रस्तुत किया है।

प्रेमचंद युगीन उपन्यासकारों में आचार्य चतुरसेन शास्त्री एक प्रतिभा सम्पन्न उपन्यासकार थे। उन्होने इतिहास पुराण से कथानकों का चयन करने के साथ–साथ काल्पनिक पात्रोंद्वारा सामाजिक समस्याओ का उद्घाटन करने वाले उपन्यास भी लिखे। वैशाली की नगरवधु वसं रक्षाम; सोमनाथ, आलमगीर, सोना और खुन, रक्त की प्यास, आत्मदाह, अमर अभिलाषा मन्दिर की नर्तकी, नरमेध, अपराजिता, आदि उनके प्रसिद्ध उपन्यास है।

'उग्र' जी के उपन्यासों मे सामाजिक बुराइयों का पर्दाफाश किया गया है। समाज की यथार्थ एवं नम्न तस्वीर उनके उपन्यासो में उपलब्ध होती है। वे हिन्दी के प्रथम विवादास्पद उपन्यासकार कहे जा सकते है, क्योकी उनके उपन्यासो में एक उस वर्ग का चित्रण है जो पतित वर्ग यथा–वैश्या वर्ग। उनकी सपाट बयानी अधकचरे नवयुवकों की रूचि को विकृत करने के दोष से बच नही पाई है। उग्र जी के कुछ प्रसिद्ध उपन्यास है –

चन्द हसीनो के खतूत, दिल्ली का दलाल, बुछआ की बेटी, शराबी, सरकार, तुम्हारा आंखो मे, जीजा जी, फागुण के दिन, ऋषभरण जैन 'उग्र' की परम्परा को विकसित करने वाले उपन्यासकार कहे जा सकते है। उनके उपन्यास की विषयावस्तु उग्र जी की भांति व्यभिचार, वेश्यालय, मंदिरालय, रोमांस, तक सीमित है। उनके प्रमुख उपन्यास है– दिल्ली का व्यभिचार, दुराचार के अड्डे, वेश्यापुत्र, चम्पाकली, मास्टर साहब, मयखाना, चांदनी रात और गदर।

प्रताप नारायण श्रीवास्तव के उपन्यास 'आदर्शवाद' परम्परा के उपन्यास कहे जा सकते है। विदा, विजय, विकास, वसर्जन, बेकसी का मजार, आदि उनके प्रसिद्ध उपन्यास है। अन्तिम उपन्यास मे उन्होने आखिरी मुगल बादशाह बहादुरशाह जफर के चरित्र को (1857 ई.) की क्रांति के परिप्रेक्ष्य मे उजागर करने का प्रयास किया है।

वृन्दावनलाल वर्मा हिन्दी के सर्वश्रेष्ठ ऐतिहासिक उपन्यास माने जाते है। गढ़ कुण्डार, विहार की पद, मिनी, झांसी की रानी, मृगनयनी, टूटे कांटे, माधव जी सिन्धिया, आदि उपन्यासो मे उन्होने ऐतिहासिक पात्रो को चरित्र नायक के रूप मे प्रस्तुत किया। संगम, लगन, प्रत्यागत, कुण्डली चक्र, उनके सामाजिक उपन्यास है।

"साहित्यकार का लक्ष्य केवल महफिल सजाना और मनोरंजन का सामान जुटाना नही है, वह देशभक्ति और राजनिती कि पिछे चलनेवाली सच्चाई भी नही, बल्कि उनके आगे मशाल दिखाती हुई चलनेवाली सच्चाई है।... हम साहित्य को केवल मनोरंजन और विलासिता की वस्तु नही समझते है। हमारी कसौटी पर वह साहित्य खरा उतरेगा, जिसमे उच्च चिंतन हो स्वाधीनता का भाव हो सौंदर्य का सार हो; सृजन की आत्मा हो, जीवन की सच्चाईयो का प्रकाश हो।"[3]

प्रसिद्ध कवि सुर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' ने भी कुछ उपन्यास लिखे जिनमे से प्रमुख है – अप्सरा, अलका, निरूपमा, प्रभावती, कुल्भी भाट। निराला के उपन्यासो में भावुकता एवं काव्यात्मकता का समावेश

हुआ है। इनमे नारी समस्याओ का निरूपण प्रमुख रूप से हुआ है तथा शिल्प की दृष्टि से कोई नवीनता नहीं है।

संक्षेप मे प्रेमचंद युगीन उपन्यास मे विषय वैविध्य एवं शिल्पगत नवीनता दिखाई पडती है। उपन्यासकारो ने एक ओर तो सामाजिक समस्याओं का अपने उपन्यासों का विषय बनाया दुसरी और ऐतिहासिक कथानको पर नवीन दृष्टि से विचार करते हुए मनोरंजन एवं सुरूचिपूर्ण उपन्यासो की रचना की इस समय तक हिन्दी उपन्यास क्षेत्र व्यापक हो गया था और वह मानवीय सम्बन्धो को उजागर करने वाला एक महत्त्वपुर्ण दस्तावेज बन गया था। राजनीतिक, सामाजिक, ऐतिहासिक और मनोवैज्ञानिक उपन्यासो की रचना से उपन्यास का क्षितिज इस काल मे अत्यंत विस्तृत हो गया। विषय व्यापकता के अतिरिक्त अब चरित्र–चित्रण मे भी उपन्यासकार अधिक कुशल हो गए। मानव सुक्ष्म अंकन करने में वे निष्णात हो गए। घटना संयोजन भी अब अधिक कुशलता से किया जाने लगा तथा अनावश्यक विस्तार से मुक्ति पा ली गई। प्रेमचंद के रूप में हिन्दी साहित्य मे एक ऐसे महान कलाकारने अपना योगदान किया, जिसने कालजयी रचनाएं देकर साहित्य की गरिमा बढाई। निश्चित रूप से हिन्दी उपन्यास के विकास का द्वितीय चरण 'प्रेमचंद' जैसे महान उपन्यासकार के कारण महत्त्वपूर्ण बन गया है।

संदर्भ :

1) रामदरश मिश्र, हिन्दी उपन्यास एक अतर्याज्ञा, पृष्ठ–17.
2) वही, पृष्ठ 15.
3) प्रेमचंद साहित्य का उद्देश्य, पृष्ठ 12 और 16.

Gurukul International Multidisciplinary Research Journal (GIMRJ)
with
International Impact Factor 2.254

ISSN No. 2394-8426
Dec – 2015
Issue – I, Volume – V
Online Journal

Networked Youth of Kolkata: A Sociological Investigation of Changing Relationship

Deepika Singh
PhD Scholar,
Department of Sociology,
University of Calcutta)

ABSTRACT

The diffusion of information and communication technologies (hereafter ICTs) into Indian society has increased at an exponential rate in recent years and become an integral part of Indian youth culture. This ICTs change the way young people perceive, interact and maintain interpersonal relationship with each other. This paper attempted to explore young people usages of ICTs in managing and maintaining friendship and peer relationship in their everyday lives in Kolkata. The data presented in the study was collected by using qualitative methodology. In-depth interview has been conducted among 15 young people of Kolkata within the age group of 18-20 years. The pertinent findings of the study are a) ICTs act as a medium for constant updating, coordinating and exchanging of information within peer group among Kolkata's youth. b) Most of them are mostly connected through ICTs but the spontaneity of face to face connection is waning. c) For young people of Kolkata, the give and take of friendship is cocooned around abbreviated text, instant messaging and Facebook posts, likes and comments. d) This '**always connected**' status provided by ICTs makes the identity of Kolkata's youth more fluid and they are constantly negotiating their identities, i.e., who are they, how they are and with whom they are in peer group. ICTs creates a discursive space and generate multiple, controlled and imaginative identity. The ICTs are viewed as essential medium to stay connected as friend and foster peer relationship but simultaneously socially constructing toward less intimate and opaque relationships. To conclude, ICTs are not creating any dichotomy of good or evil, it changes the way young people are interacting within peer group and developing a new identity in "always on and/connected" world.

INTRODUCTION

Social life in India is changing rapidly with growing use of Information and Communication Technologies (hereafter ICTs). Many realm of social life are being reorganised in different ways by the spread of computers, internet, smart phone, IPods and similar ICTs. The ICTs are defining the business, politics, movements, education, participation and communication. Even the personal life, ranging from family to friendship to intimate relationships are being affected by these ICTs as all kinds of social interactions are mediated by technology.

ICT as a new phenomenon evokes conflicting reactions involved hopes and fears, excitement and uncertainty. On the one hand, ICTs provide youth with new opportunities to surf internet, play digital game and always to stay in touch with friends. On the other hand, it gives less intimate relationship, an illusion of connectivity, loneliness and addiction especially to online games and social networking sites (hereafter SNS). Knowledge is still scarce about why and how ICT, a modern way of communicating and exploring identity, would impact youth development. This study examines the young people usage of ICTs in managing and maintaining friendship and interpersonal relationship in their everyday in Kolkata.

ARE YOU MY BUDDY? : Importance of Peer Group in Life of Young People

"Are you my buddy?" seems to be most important question among youth, and creating and maintaining peer and friendship relationships are one of the core developmental task. In adolescence, the dependency on parental relationship decreases while peer and friendship relationship become more intensive, important and time consuming (Schneider, 2000). Both in past and present young people are pervaded by ideas, values, norms, attitude and social practices of peer network that strongly influence young people in their everyday lives. In this period of adolescence, young people moves toward autonomy and independence from their parents and transfer their allegiance increasingly to peer groups. (Helve and Bynner, 2007)

But the peer relation and friendship do not replace familial relationship both are important and serve different functions in transition from childhood to adolescence: parents provide guidance, critique and unquestioned love, while with friends youth seek and share novel experiences and disclose secrets. (Shipman, Zeman and Stegall, 2001)

Peer relationships are important for optimal development and mental health of young people. Popularity and good peer relations predict positive emotional, cognitive and social development, and poor relations form a risk for mental health problems. (Gauze, Bukowski, Aquan-Assee and Sippola, 1996; Parker and Asher, 1987) Rejection by peer in adolescence can predict depression, withdrawal, and aggression and anti social behaviour. (Hymel, Vaillancourt, Mcdougall and Renshaw, 2002)

Thus this study mainly focuses on a relatively new phenomenon in life of young people, that of ICT, and examines the role of ICTs on changing pattern of communication in young people's peer and friendship relations.

GOOD OR EVIL: The Dichotomy in Existing Literature

The question of how the internet and other new communication technologies like smart phones, SNS, Instant messaging (hereafter IM), and text are affecting the social lives of youth is hotly debated. There are two main rival hypothesis in existing English literature: the first claims that Internet and other new communicative technology culture fosters more isolation and disconnection among youth, while the second claims that these new technologies create a hyper connectivity that widens and will potentially evolutionalize social interactions.(Brignall, 2005)

Understanding this phenomenon is important, as Internet and new communicative technologies continue to expand their strong roots in society, especially in youth culture. As Brignall (2005) suggests face to face interaction among youth shrinks due to the fact that relationships are increasingly conducted through smart phone, text, IM, and SNS, therefore ability to develop and maintain social skill and relationship, even in peer group, are affected and weakened. Nonetheless, the evolution of the digital age and the social interactions that occur through these various new communicative technology forms, no doubt, have created wider network and increased methods of connectivity. (Wellman, 2002) If both of these are happening at same time, the question of what is the effects of these changes on social relationships and identities become very complex.

However, the dichotomous hypothesis of good or evil has been increasingly challenged on a conceptual, analytical and methodological level. (Orgad, 2007) Online relationships are

contextualised by offline relationship – that is face to face relationships are no longer independent of our digital space. Where on one hand the new communicative technology is limited in terms of intimacy and meaningfulness, on other hand it creates wider networks and allow for pre-existing relationship to grow. The ICTs do not create any dichotomy of good or evil, it simply changes the way young people perceive, interact, and maintain interpersonal relationship with each other.

RESEARCH METHODOLOGY

The research aimed to explore ICT usage among youth of Kolkata in relation to their peer group. The term youth are used to refer to the respondents aged between 18-20 years, as definition of 'a youth' by the UN (United Nations) between 15 – 24 years.

A non probability purposive sample was generated through snowballing. A total of 15 young people of Kolkata aged between 18-20 years have taken in depth interview for the study. Respondents are all college going youths and sample includes some variety by gender and class. Respondents belong to upper middle and middle class. Particularly this class stratum is chosen because they have better accession to new ICTs. The study is based upon qualitative data gathered from 15 young people of Kolkata by conducting in-depth interviews. The study is exploratory in nature, rather than rigorous hypothesis testing.

RESULT

Intensify Individual Identity

No matter where young people's are or what they are doing, they find a way to do what they really feel like doing. ICTs enable youth to enter into world of almost unlimited complexity. It strengthens their control over what will be part of their own biographies and everyday lives. ICT empowers them to choose what to pay attention to, what to perceive and who to be in connection with. Most of the respondents claim that ICTs give them freedom to choose to which friends they want to be connected.

> *I am connected to my friends always through IM and Facebook. But the number of friends is large and it is hard to communicate with everyone at a time. They are in my list of friends but I communicate with them on basis of my priority and necessity. (**Misti,** 19 years old)*

The Very Well Connected

Not only young people choose what movies they will watch according to their individual preference, youth can also be in mediated contact with someone they prefer even if they are not currently physically accessible. ICT functions as facilitators of social interaction between friends and within peer group. The nurturing and strengthening of friendship is one of the key aspects of the respondents' ICT usage.

Majority of the respondents believe that ICT platforms like IM, SNS are most useful for complementing current peer relationships, not creating new ones. ICTs are used, first and foremost, to communicate in more efficient ways without any barrier of space and time with existing friends and aquitances.

Anhit brings his own smart phone to college and when he gets bored, he can hardly resist the temptation to go on Facebook and to check IM. He just check who is online and potential to

chat, to plan and to share his feelings with the present friend. In case of Anhit, he is physically unavailable to his friends but ICTs give him chance to be connected with his friends always and everywhere.

> *I am mostly on Facebook and Whats App. I just surf like that, to see who are there present online. It gives me a satisfaction of connection. It feels great to be always 'in touch' with friends. (Anhit, 18 years old)*

Different ICTs Serves Different Functions

ICTs	Functions
IM (Whats app, Hike, Viber, Line, We Chat)	Widely used to stay in touch with friends, to plan hangouts, to chat, to share photo and videos. In a word to stay connected.
Text Messaging	To talk with friends on private issues and to tell things those are difficult to say on phone or face to face.
SNS (Facebook)	Mostly used to be updated with friends activity; to enhance status in peer group; to share photos and videos and to show popularity through number of likes.
Phone Call	Mostly used in emergency and urgency.

The above chart shows that young people use different ICTs to serve different functions. Most of the respondents use IM to stay connected with their friends. Always exchanges text, photos, jokes to remain alive in peer group.

> *I basically use IM to poke my friends. Hello1 what are you doing? It is just an informal chat, to stay connected. It gives a pleasure of connectivity. Without IM I feel lonely. I am so habituated to my IM alerts that after every minute I just take out my phone check, is anyone there. (Saikat, 20 years old)*

Most of the respondents use text messaging to talk about some private issues, to clear misunderstanding and to tell things which are difficult to reveal in phone or in face to face interactions.

Riya said that she takes help of text to clear a misunderstanding with her best friend.

> *We (Riya and her best friend) have some problem with an incident related to our college cultural programme. It is quite irritating but I texted my friend several times just to sort out the misunderstanding. But if I call it lasts to a disaster, both of us burst out with our emotions. It is clean and safe to handle such things via text. Here we get opportunity to think, write, edit and rewrite which makes things in control. (Riya, 19 years old)*

Similarly Almon said that he proposes her classmate through text.

I text one of my classmate and tell her that I have a soft corner for her. I propose her through text. We meet everyday in college but it is hard for me to tell her in front. I am tensed of her reaction. Rather it is hard for me to tolerate her rejection in front of her. We feel less in text, it is easy to ignore text. (Almon, 20 years old)

Facebook (SNS) is used to strengthen the relationship by sharing memories, pictures, comments and 'likes'. Likes matter much for young people they create their identity on its basis. Exchanging likes in peer group means exchanging love and liking for each other in peer group. Facebook comments and likes give a new boost in life and add spices in friendship. Today the friendship is cocooned around Facebook comments and likes.

I get offended if my close friends not 'like' my status, comment, photos, sharing on Facebook. It is just meaningless to do so. When close friends 'like' the sharing it gives a new boost to upload more. (Riya, 19 years old)

Most of the respondents use phone calls in emergency and urgency. They use phone calls to avoid interruptions in important discourse.

I start chatting with my friend on IM for exam routine, importance and syllabus but the net (internet) connection was so poor and we are unable to coordinate properly. At last I have to switch to phone call for clear discussion. (Rishita, 18 years old)

Connected Disconnected

Youth today are more connected to their peer group with ICTs. But the ICTs are changing the way young people interact; it is straining the interpersonal relationship. Data reveals that young people choose to devote large portions of their time to connecting with peers online but they are more isolated than ever before in their offline lives. Young people maintain their peer relationship through ICTs which leads to emotional disconnection, mental fatigue and anxiety. Respondents feels disconnected and isolated the moment they give up their online connection through ICTs. Young people feel restless and all time connectivity becomes their necessity.

I am always connected to my friends through IM and SNS but I feel lonely. I always feel to text to my friends. I exchange 1000 of texts per day; still I miss the intimacy, closeness and touch with my friends. The online connectivity only provides the illusion of companionship, where nobody cares for each other. And the most interesting fact is that we (who are connected through ICTs) know that well but still we are there. (Shamoli, 20 years old)

Lost of Spontaneity

The irony of time is that young people have more friends and they know more about their activities and interests ever before by spending less intimate time with each other. For today's young people, the give and take of friendship seems to conducted increasingly in the abbreviated snatches of texts, IM, Facebook posts, likes and comments. The young people connect with their friends where facial expression, gestures and emotions have no role to play.

Data revealed that young people tries to manipulate and manage their relationship with their friends. They always tried to text on SNS and IM because phone calls are unmanageable for them.

It is better to text, a phone call reveal too much. In text we communicate exact, nothing more or less. Phone call is much more spontaneous, it is hard to hide anything on phone call. (Preeti, 18 years old)

Just like Preeti other young people also think the same. Today's youth avoid spontaneous and intimate conversation. They give up conversation for mere connections. It seems impossible for them to talk face to face and they try to avoid it most of time.

OMG (Oh MY God) the first word I uttered when my friends decided for an offline hangout. It is not cool for me. Either I just ignore it or suggest to hangout on Facebook which is much more convenient and time saving for all. (Ricky, 19 years old)

Young digital natives are very good with tech skills but they are weak with the face to face intimate human contact skills.

Fluid, Controlled and Imaginative Identity

'Always connected' status provided by ICTs make the identity of young people much more fluid. The notion of fluid identity is that young people are constantly negotiating their identities i.e. who they are, how they are and with whom they are in the peer group. The ICTs facilitates this fluid identity, as it is universal in youth cultural contexts, as a medium for constant updating, coordination, information access and documentation within peer group. At the same time ICT is an important medium for social networking, the enhancement of peer group and exchange between friends which is vital for process of identity construction. The ICTs help to deal with the management of countless loose, close or intimate peer relationship and to coordinate activities in peer group. The ICTs make it possible for young people to flow in different identity with various friends in peer group.

Most of the respondents stated that they play multiple identities at same time with variety of friends.

We (youth of Kolkata) are not only involved in multitasking but also engaged in multiple identity. At a time, I am connected with my parents, friends, teachers, relatives and so on. Even in peer group I have stratum of friends listed as intimate, close and normal friends. I have different identities for each of them and I have to play multiple identities at a time. I switch to multiple identities. (Saikat, 20 years old)

Not only, young people have fluid multiple identities, but they also control and modify their identities. Youth tried their best to control their identity to show a particular status and personality. The ICT gives them golden opportunity to do it in a easy way. It is tough to control and manipulate identity in face to face conversation but it becomes quite easy when they communicate through ICTs. For young people identity becomes a 'project' that they have to work on: ICT culture offered young people multiple possibilities to construct and fashion their own identity in creative and diverse way.

I never give pictures on SNS of any ordinary place. I always try to upload pretty pictures both selfie and pictures with friend. The photo reveals the status and personality. It confirms the higher position in peer group and among friends. (Kalpana, 20 years old)

CONCLUSION

Research findings confirm neither the most positive nor the most negative conclusions. Based on data gathered it is not accurate to say that these youth are so glued to their screens that they do not value personal, face to face, 'deep' relations with friends. It is however accurate to assert that respondents use a wide variety of ICTs, mainly to sustain relationship and also to build a wide networks of 'friends' that range from friend they barely know to their most intimate connections. They still value face to face connections, which is perceived as more intimate, personal and 'real' and find them more satisfying and meaningful.

Respondents use ICTs for quick, routine communication, to always stay in touch. Although it might seem them superficial but they see it more as a substitute for no communication due to distance and busy schedule/. These ICTs make it easier to maintain connections across time and space. It is much more convenient and easy for young people to stay connected through ICTs than in person. Furthermore, the respondents are associated with different ICTs with different kind of connections and sometime with different kind of friends in their everyday life, therefore having multiple fluid identities.

Respondents were obvious to the superficiality of ICT communication through text messages, IM of posts on Facebook walls. They realize both the artificiality and the superficiality is become part of everyday communication in their peer group. In case of young people using ICTs is just a part of life to maintain relationship.

Research provides confirmation of what sociologists often argue: that context and circumstances matter. Respondents stated that how to create and maintain friendship is determined by geographic distance, expense, how much time one has, peer pressure, convenient availability of communicative means and most importantly, the importance of friend in one's life.

Sample of the study spend a lot of time using various ICTs – confirming the widespread perception of this demographic (the particular age group studied) as highly 'wired'. For young people the friendship is also get wired and it get tangled within abbreviated texts, posts, comments and 'likes'. This more superficial, less intimate and calculated method of communication actually undermines the capacity for deeper, more meaningful connection and probably needs to be further examined deeply.

The impact of ICTs on friendship and peer relationship is complex and multidimensional. It is not black and white, good or bad, right or wrong – it is much more complicated. The ICTs provides a combination of wider network of friendship which is managed and maintained by artificiality and superficiality. ICTs are simultaneously socially constructing toward less intimate and opaque relationship. To conclude, ICTs are not creating any dichotomy of good or evil, it changes the way young people interacting within peer group and developing a new identity in 'always on and/connected' world.

Research has some limitations due to the small sample size and time constraint. While the sample for the study included some diversity by class and gender, it was still limited by the homogeneity of the sample and did not display concrete differences across these diversities. A real understanding of such complicated issue requires mixed methodology and probably a more longitudinal study for better understanding.

BIBLIOGRAPHY

- Baym, Nancy K. (2010) Personal connections in the digital age. Cambridge: Polity Press.
- boyd, danah (2008) Taken Out of Context: American Teen Sociality in Networked Publics. PhD. paper. University of California-Berkeley, School of Information.
- Brignall, Thomas W. (2005). "The Impact of Internet Communications on Social Interaction." *Sociological Spectrum.* 25: 335-348.
- Castells, Manuel (2000) The Rise of the Network Society, The Information Age: Economy, Society and Culture. Cambridge, MA; Oxford, UK: Blackwell.
- Coget, Jean-Francois, et al. (2002) "The Internet, Social Networks and Loneliness" *IT & Society.* 1(1): 180-201.
- Gauze G., Bukowski, W.M., Aquan – Assee, J., and Sippola, L.K. (1996) Interaction between family environment and friendship and association with self perceived well being during early adolescence. *Child development* (32) : 2201- 2216
- Hymel, S., Vaillancourt, T., Mc Dougall, P., and Renshaw, P.D. (2002) Peer acceptance and rejection in adulthood In P.K.H Smith and Craig H.Hart (Eds), Blackwell handbook of childhood social development (pp 265 – 284) Oxford: Blackwell Publishers
- Kiesler, S. – Siegel, J. & McGuire, T. (1984) Social Psychological Aspects of Computer Mediated Communication. *American Psychologist*, Vol. 39 (10), 1123–1134.
- Lenhart, Amanda.(2009) Adults and Social Network Sites. Pew Internet and Social Life Study http://www.pewinternet.org/Reports/2009/Adults-and-Social-Network-Websites.aspx
- Lenhart, Amanda, Paul Hitlin and Mary Madden.(2005) "Teens and Technology." Pew Internet and Social Life Project http://www.pewinternet.org/Reports/2005/Teens-and-Technology.aspx
- Livingstone, S. & Helsper, E. (2010) Balancing Opportunities and Risks in Teenagers' Use of the Internet: The Role of Online Skills and Internet Self-efficacy. *New Media Society*, Vol. 12 (2), 309–329.
- Nie, Norman H. and D. S. Hillygus.(2002) "The Impact of Internet Use on Sociability: Time Diary Findings." *IT & Society* 1(1): 1-20.
- Organ, Shani (2007) The Interrelation between online and offline: Questions, Issuses and implication, IT & Society, 1(1), 515.
- Parker, J.G., and Asher, S.R. (1987) peer relations and late personal adjustments: Are low accepted children at risk? *Psychological Bulletin*, (102), 357 – 389.
- Schneider, B.H. (2002). Friends and Enemies Peer Relations in Childhood London: Arnold.
- Shipman, K.L., Zeman, J.L., and Stegall, S. (2001). Regulating Emotionally Expressive Behavior: Implications of Goals and Social Patterns from Middle Childhood To Adolescence. *Child Study Journal* (31), 249 – 267.
- Tapscott, Don (1998) Growing up digital: The rise of the Net Generation. New York: McGraw Hill.
- Wellman, B. (2002). The Networked Nature of Community Online and Offline. *IT & Society.* 1(1), 151 – 165.
- Valkenburg, P. – Schouten, A. & Jochen, P. (2005) Adolescents' Identity Experiments on the Internet. New Media & Society, Vol. 7 (3), 383–402.

Gurukul International Multidisciplinary Research Journal (GIMRJ)
with
International Impact Factor 2.254

ISSN No. 2394-8426
Dec – 2015
Issue – I, Volume – V
Online Journal

Social Determinants of Emotional Intelligence and its influence on Learning Outcomes - A study

Ramdas Banoth
Govt High School Nethaji
Ramavaram
Kothagudem
Khammam
Telangana
507118

ABSTRACT:

In spite of the concerted efforts, learning is still an elusive concept. The concept of learning has been exclusively studied by psychologists who first believed that learning is individual and is influenced by several psychological aspects. Later they believed that intelligence is the dominant psychological trait that influences learning. Since then to the first half of the present century cognitive aspects have assumed the supreme place and intelligence has been considered as an individual trait until Edward Lee Thorndike's Multiple Intelligence theory where he introduced the concept of social intelligence which has given scope to see intelligence as not only an ability to perform a given task but individuals ability to deal with physical and social environment. Once people identified the limitations in the concept of intelligence, they started looking at other aspects of intelligence, more predominantly the non-cognitive aspects of intelligence which gave rise to Howard Gardner's Multiple intelligence theory which speculated about the potential importance to successful every day adaptation of what he described as separate intelligences, a kind of abilities which are required to understand and establish social relations.-

Key Words:

Emotional intelligence,Learnig outcomes,social dermainants

INTRODUCTION:

Learning remains an elusive concept, in spite of concerted efforts in understanding the concept of learning and more particularly the process of learning. Learning has been viewed differently by different people. Sociologists viewed learning as a process that takes place as a result of individual's interaction with the physical and social environment in which s/he lives, and tries to acquire the knowledge based on the social goals and expectations. Miller and Dollard (1941) at Yale University published Social Learning and Imitation (1941: Preface), they began their work with the simple, but profound, statement that, "Human behaviour is learned; precisely that behaviour which is widely felt to characterize man as a rational being, or as a member of a particular nation or class, is acquired rather than innate(1941:1)." Darwin in his theory of evolution has given prominent place to social learning, as the organisms learn to adapt to the changing environment through their continuous interaction with the social and physical environment.

Of late the concept of learning has been exclusively studied and dominated by the psychologists, where they tried to understand learning from the psychological perspectives of the individuals rather than the sociological aspects. They strongly believed that learning is influenced by several psychological traits within the individual

like thinking, reasoning, attention, retention, memory, attitudes, interests and intelligence.

In the process of understanding the concept of learning and its process, several theories of learning have been put forward by different psychologists. The cognitive field theories proposed by Gestalts, Kurt lewin, Tolman, Piaget, Bruner and Ausubel viewed learning as an organization of experiences into cognitive structures, in contradiction to their counterparts who emphasized that learning is simply a connection between stimulus and response as propounded by S-R theories.

In course of time, psychologists believed intelligence as the dominant psychological trait which influences the learning of the individual and tried to categorize the individuals as slow, average and above average learners on the basis of the IQ of the individuals, and an individual who learns faster is considered to be more intelligent than other members of his peer group.

A pioneering contribution by Alfred Binet at the beginning of the 19th century to identify the high percent of student dropouts and failures in school on the request of the ministry of public instruction in Paris has led to the development of an intelligence test consisting of more complex mental functions including judgments, reasoning, memory and arithmetic. Based on the performance of these tests, he identified the reasons for failures and dropouts which led to the development of several intelligence tests consisting of cognitive tasks this in turn led to the development of intelligent Quotient or IQ by William Stern.

Since then to the first half of the 20th century, cognitive aspects of intelligence have assumed supreme place and intelligence was considered as an individual trait, until Edward Lee Thorndike's (1932) multi factor theory of intelligence, where he introduced the concept of Social Intelligence. Thus, Thorndike's tripartite theory of intelligence included cognition, behaviour and social intelligence, which he defined it as "the ability to understand and get along with others, later Weschler (1943) defined intelligence as "the aggregate or global capacity of the individual to act purposefully, to think rationally and to deal effectively with the environment". These concepts give us a scope to see intelligence as not only an individual's internal ability to perform a given task, but also the individual's ability to deal with physical and social environment.

Once people identified the limitations in the concept of intelligence, they started looking at other aspects of intelligence, more predominantly, the non-cognitive aspects of intelligence.

In this lineage, in recent past, Howard Gardner (1983) has speculated about the potential importance to successful everyday adaptation of what he has described as separate intelligences, a kind of abilities which are required to understand and establish social relations. Similarly, Greenspan (1981) outlined a theory specific to intellectual disability that emphasized the importance of social competencies, over and above considerations of IQ and Adaptive behaviour. All these ideas share to some extent the notion, intrinsic to our culture, that social competencies, including control of emotions, can be important to successful activities of daily living.

However, since 1980's, there has been growing research in psychology concerned with the normative interaction of emotion and thought (Brower, 1981; Clark & Fiske, 1982; Isen, Shalker, Clark & Karp, 1978), the relationship between cognition and

emotion had been a matter of interest in epistemology since ancient times, stoic philosophers of ancient Greek states declared the supremacy of reason over emotion (Described in Payne, 1986; Solomon, 2000). The European Sentimentalist movement's idea was that there existed innate, pure emotional knowledge (Reddy, 2001). The Romantic Movements emphasized on emotional expression in the arts (Solomon, 2000). The political turmoil of the 1960's and the public discussion it elicited on the proper balance between feeling and thought (Mayer, Salovey & Caruso 2000a). Debates on the relative importance and rationality of emotion and cognition were carried on in modern psychology (e.g. Leeper, 1948, Young, 1943).

After a century of extensive study on intelligence and psychometric Endeavour, it has been clearly established that the utility of IQ tests notwithstanding, being skilled in ways other than those tapped by IQ tests does influence important life outcomes. It is now widely accepted that, although psychometric tests of cognitive abilities generally provide the best available predictors of a diverse range of real-life outcomes, even the most reliable of such tests account for only 25 percent of variance in educational achievement and work place settings (Gottfredson, 1997; Neisser et al., 1996; Schmidt & Hunter, 1998;). This degree of predictive validity has considerable practical value, particularly for employment or work training (Schmidt & Hunter, 1998); But it is clear, nonetheless that, at school, at work, and in other respects it must be influenced by traits and behaviours besides the cognitive abilities measured by IQ-type tests. These influences normally include personal motivation, persistence, interests, conscientiousness, back ground knowledge, learning styles, parental attitudes, peer influences, teaching and training practices.

These new dimensions of the study of intelligence have given rise to a very popular theory called Emotional Intelligence (EI). The concept of Emotional Intelligence is very new and started with the research work taken up by Salovey and Mayer (1990) which gained momentum and got popularized with the work of Daniel Goleman (1995) through his book "Emotional Intelligence – why it can matter more than IQ?. Goleman emphasized that Emotional Intelligence is the best predictor of success of an individual which contributes to 80% and rest 20% he attributes to IQ and other aspects such as luck etc.

NEED AND IMPORTANC OF THE STUDY:

The concept of Emotional Intelligence (EI) has generated broad interest both in lay (Goleman 1995) and Scientific fields (Mayer & Salovey 2005; Sternberg, 2002). Goleman in his book Emotional Intelligence – why it can matter more than IQ" claimed Emotional Intelligence as "powerful" at times "more powerful" than IQ in predicting success in life. As a result of the growing acknowledgement of professionals for the importance and relevance of emotions to outcomes, the research gained momentum. The fast growing popularity of Emotional Intelligence in diverse fields such as management, organizations and work place performance soon attracted the attention of the Educationists.

OBJECTIVES OF THE STUDY:

The present research has the following Objectives.

They are:

- To study the Emotional Intelligence of +2 students.

- To study the different social factors that determines Emotional Intelligence of +2 students.

HYPOTHESIS OF THE STUDY:

Based on the objectives mentioned above the researcher formulated the following hypothesis.

- The Emotional Intelligence of +2 students is very high.
- There is no significant difference in Emotional Intelligence of +2 students on the basis of their Gender.
- There is no significant difference in Emotional Intelligence of +2 students belonging to different Castes.
- There is no significant difference in Emotional Intelligence of +2 students belonging to different Religions.

METHOD OF RESEARCH AND PROCEDURE OF THE STUDY:

Problem under investigation is to study the "Social determinants of Emotional Intelligence and its influence on Learning Outcomes", Descriptive survey research is conducted in two districts of Telangana region of Andhra Pradesh. In order to test the hypothesis, the investigation was planned and carried out in three phases. In the first phase the researcher reviewed the related literature and the previous researches already done in Emotional Intelligence and Learning out comes. Besides the review of related literature in order to measure Emotional Intelligence of +2 students the researcher developed and standardized the tool (Emotional Intelligence Test) to carry out the present study. In the second phase, the researcher collected the required data by administering the tool on a sample of 1237 +2 students studying in different colleges in two districts of telangana region of Andhra Pradesh. In the third Phase, the collected data is analyzed by using appropriate statistical techniques, and the obtained results are analyzed and interpreted, to establish two level relationships between social factors and Emotional Intelligence and Emotional Intelligence and Learning outcomes.

SAMPLE TAKEN FOR THE STUDY:

Population:

The population is defined as the aggregate or totality of objects or individuals regarding which inferences are to be made in a sampling study.

The population taken for the present study constitutes the +2 students studying in different colleges in Telengana region. The state of Andhra Pradesh has been geographically divided into three regions, namely Coastal Andhra, Rayalasema and Telangana. The coastal region of Andhra Pradesh consists of 9 districts; Rayalaseema consists of 4 districts and Telangana consists of 10 districts. There are 3365 junior colleges in the state of Andhra Pradesh and the total number of +2 students enrolled in these 23 districts of Andhra Pradesh is approximately 6, 18,150. Hence it is assumed that on an average there are approximately 184 students enrolled in each college.

There are 1146 junior colleges in 10 districts of Telangana region, and approximately 2, 10,864 students enrolled in them. Out of these 10 districts two districts are randomly selected which constitutes the population of the present study.

Sample:

A sample is a relatively small number of individuals or measures of individuals, objects, or events selected and analyzed in order to find out something about the entire population from which it was selected. From amongst available sampling techniques stratified random sampling technique is used to draw out the sample for the present study.

A stratified random sampling is the process where the population is divided into smaller homogenous groups or strata by some characteristics and from each of these strata smaller homogenous groups are drawn at random a pre-determine number of units. This technique requires one to select units at random from each stratum in proportion to its actual size in the population.

Out of 10 districts in Telangana region 2 districts namely **Warangal** and **Nalgonda** districts are randomly selected as sample for the present study. There are 342 +2 colleges in these two districts of Telangana region; the researcher has stratified the sample as Gender, type of management of college and branch of study. There are approximately 62,928 +2 students enrolled in these 342 colleges. Out of these 62,928 students 1237 students are selected from 16 colleges as sample for the present study

ADMINISTRATION OF THE TOOL:

The Emotional Intelligence Test (EIT) and the Social profile (Both developed by the researcher) were administered to the sample selected for the present study. The researcher personally contacted the principals of all the colleges selected for the study and obtained permission in advance to administer the EIT. On the day of administration of the test all the students were made to sit comfortably in a separate room and instructions were given thoroughly to the students, the purpose of the study was clearly explained and confidence was created by assuring them that their responses will be kept strictly confidential, and then the students were asked to complete the social profile and were assured help when ever required. Then the EIT test containing 52 questions were given asking them to fill in the right responses on the response sheet given. The students were instructed not to hurry up in giving the responses as there was no time limit, but were asked to complete the test as fast as possible.

STATISTICAL TREATMENT:

In addition to the general descriptive statistical analysis, t-test and F-tests were computed to find out the social determinants of Emotional Intelligence. To find out the relation between Emotional Intelligence and learning outcomes and components of Emotional Intelligence and Learning outcomes Pearson Product Movement correlation was computed.

5.3 ANALYSIS AND INTERPRETATION OF THE DATA

Analysis of the data means studying the tabulated material in order to determine inherent facts or meanings. It involves breaking down existing intricate factors into simpler parts and putting them together in new arrangements for the purpose of interpretation. Data analysis is considered to be the significant step in any research where the researcher finds the direction to test the hypotheses formulated which leads to certain conclusions and generalizations. In a way, researcher can find the genuine direction for the study undertaken.

In the light of the objectives formulated and hypotheses framed, the analysis of the Data has been undertaken. Based on the suggestions given by experts in statistics and education the following efforts were made to analyze the data.

- Each Objective is presented with Mean, Median, Standard Deviations, and Standard Error of the Mean, Skewness and Kurtosis so as to know the distribution of the test scores pertaining to different variables.
- The present study is one where the independent variables are discrete (social determinants) and the dependent variable (emotional Intelligence) is continuous. The most appropriate statistical test would, therefore, be t-test or analysis of variance (F-ratio test) based on the number of independent variables.
- The relation between Emotional Intelligence and Learning outcomes has been computed using Pearson Product Movement correlation.

5.4 ANALYSIS OF THE EMOTIONAL INTELLIGENCE TEST RESULTS

5.4.1. OBJECTIVE: To study the Emotional Intelligence of +2 Students

In view of the objectives formulated, the researcher would like to study the Emotional Intelligence of +2 students. Based on the scores obtained in the Emotional Intelligence test, the researcher has categorized the students into five groups as very poor, Poor, Average, High and Very high Emotionally Intelligent. The following table shows the frequency and percentage of the +2 students in each of these five categories.

Table 5.11

Frequency and percentage of Students in each category of Emotional Intelligence

	Category / Values	Very Low	Low	Average	High	Very High	Total
Emotional Intelligence Test	Count	04	48	188	517	480	1237
	Percent	.3	3.9	15.2	41.8	38.8	100

The above table shows the frequencies and Percentages of +2 students in each category of Emotional Intelligence on the basis of the scores obtained in Emotional Intelligence Test. Four (0.3%) Students fall in very low category, 48 (3.9%) students fall in low category, one hundred and eighty eight students (15.2%) fall under average category, five hundred and seventeen students (41.8%) fall under high category and four hundred and eighty (38.8%) students fall under very high category. From the above table it shows that very few students come under very low category and more students fall under high category. This has been graphically represented below.

fig.14: Graphical representation of EIT scores.

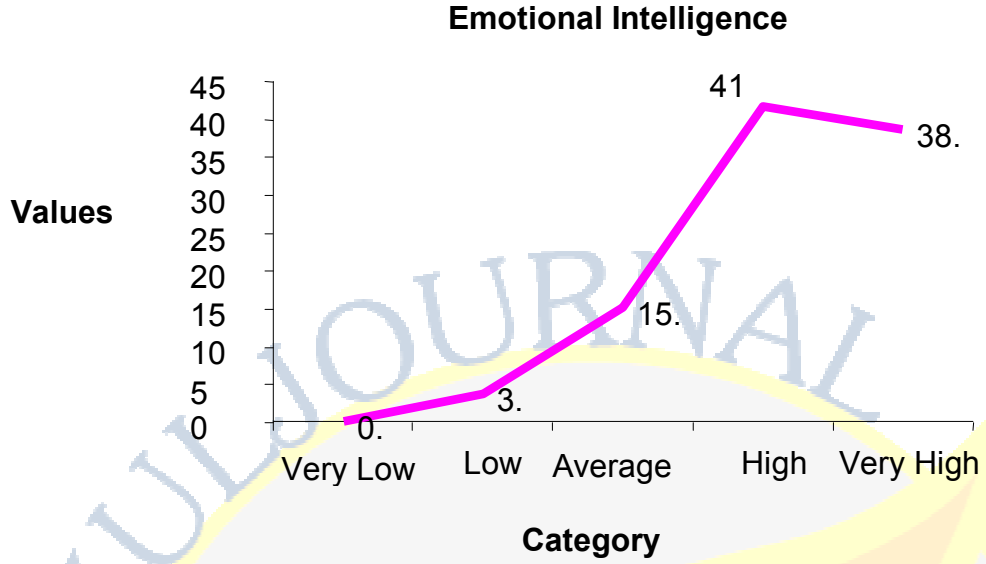

Hypothesis: The Emotional Intelligence of +2 students is very high

Table 5.12

Nature of Distribution of EIT Scores of +2 students

Emotional Intelligence Test	N	Mean	Median	Mode	S.D.	S.E.	Skew	Kurt
	1237	81.51	83.00	87.00	10.816	.308	-.910	-.741

The above table 5.12 shows the Descriptive statistics of the scores on Emotional Intelligence Test of +2 Students. The Mean score of +2 students on Emotional Intelligence test is 81.51, median score is 83.00 and the Mode is 87.00. There is a slight difference in the Mean, Median and Mode of the Scores. The standard Deviation of the score is 10.816 and the Standard Error of the Mean is .308, the skewness of the score is -.908 which shows that the distribution is negatively skewed, the Kurtosis is -.741, which shows that the distribution is leptokurtic.

The mean score of +2 students on Emotional Intelligence is 81.51 which fall under high category of Emotional Intelligence. So, it can be said that the Emotional Intelligence of +2 Students is high. Hence the Hypothesis which states that the Emotional Intelligence of +2 Students is very high stands accepted.

So it can be concluded that Emotional Intelligence of +2 students is high.

5.4.2. OBJECTIVE: To study the difference in Emotional Intelligence of +2 students on the basis of their Gender.

Table: 5.13

Distribution of EIT scores with respect to gender.

Category	N	Mean	Median	S.D	S.E	Skew.	Kurtosis
Boys	561	80.07	82.00	11.29	.476	-.936	.838
Girls	676	82.70	85.00	10.28	.395	-.847	.443

Table 5.13 shows the nature of distribution of Emotional Intelligence Test scores of +2 boys and girls. The size of the sample is 1237 out of which 561 are boys and 676 are girls.

The mean and the median scores of boys are 80.07 and 82.00 respectively with a slight difference. The standard deviation is 11.29 with a standard error of the mean .476, the skewness of the score is -.936 which shows that the distribution is negatively skewed, the kurtosis of the distribution is .838 which is more than the normal distribution (Ku for normal distribution is .263). Hence it is slightly platykurtic.

The mean and the median scores of girls are 82.70 and 85.00 respectively which shows a slight difference. The standard deviation of the score is 10.28 with a standard error of the mean of 0.395, the skewness of the distribution is -0.847 which shows that the distribution is negatively skewed, and the distribution is almost mesokurtic with a score of .443 which is near to the kurtosis score of normal distribution which is .263.

It is observed that the mean scores of boys and girls differ with regard to Emotional Intelligence. The girls mean score is higher than that of boys showing girls are more Emotionally Intelligent than that of boys. The standard deviation and SE of girls is less than that of the boys which shows consistency in scores than that of boys and the distribution is less skewed and mesokurtic in girls.

Fig.15: Graphical representation of Mean and standard deviation scores pertaining to gender

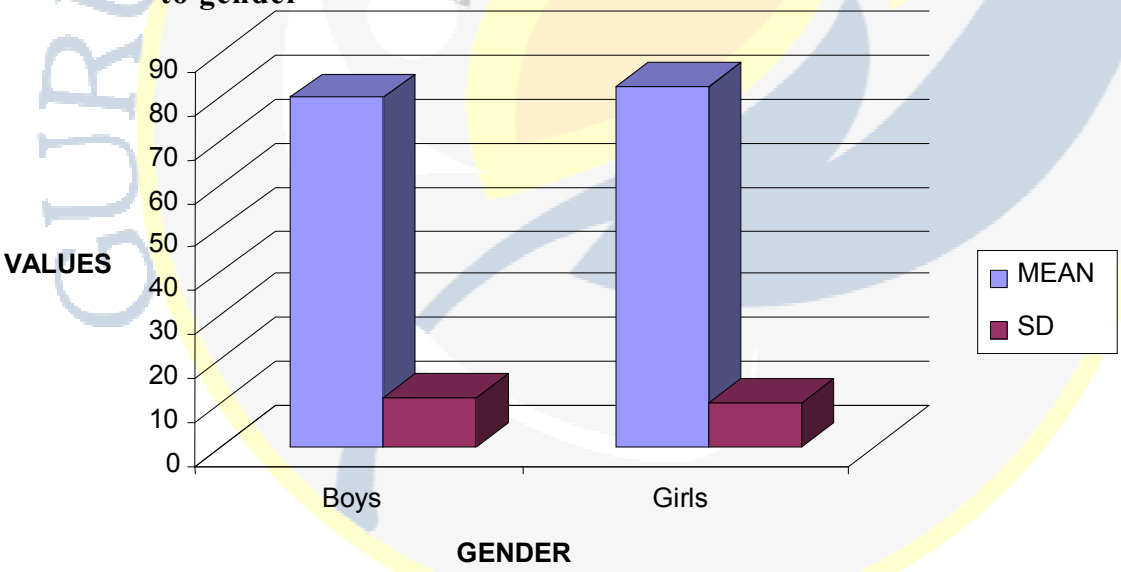

To see, whether the apparent differences in their mean scores is statistically significant, the researcher would like to test the hypothesis

Hypothesis: There is no significant difference in Emotional Intelligence of +2 students on the basis of their Gender.

Table: 5.14
Analysis of Variance pertaining to Gender

Source of Variance	Sum of Squares	Degrees of freedom	Mean square	F - ratio	t-ratio	Significance
Between Groups	2105.111	1	2105.111	18.245*	4.28	significant
Within groups	142492	1235	115.378			

*significant at 0.05 and 0.01 level

Table 5.14 shows the analysis of variance between groups and within the groups of gender. The mean square values for both the source of variance are 2105.111 and 115.387 respectively. The F-ratio is 18.245 which is significant at 0.05 and 0.01 levels and indicates the role of gender on the Emotional Intelligence of +2 students. The null hypothesis which states that there is no significant difference in Emotional Intelligence of +2 students on the basis of their Gender, stands rejected

The obtained results are in line with the findings of studies reported by Petrides and Andrian Funham (2000) who studied gender differences in measured self estimated trait of Emotional Intelligence, which reveals that females score higher than males in social skills factor of measured trait of Emotional Intelligence. Carroch and Bajar (2001) found that females are more emotionally intelligent than males. There exists a significant difference between boys and girls in over all Emotional Intelligence test scores. The researcher would also like to find out whether there exists any difference in different components of Emotional Intelligence between boys and girls.

Table: 5.15
Analysis of variance pertaining to different components of EI with respect to gender

Category of EI	Source of Variance	Sum of Squares	Df	Mean square	F	Significance
Self Awareness	Between Groups	101.304	1	101.304	20.793*	Significant
	Within Groups	6016.834	1235	4.872		
Self Regulation	Between Groups	172.481	1	172.481	20.723*	Significant
	Within Groups	10279.10	1235	8.323		
Motivation	Between Groups	72.212	1	72.212	10.096*	Significant
	Within Groups	8833.439	1235	7.153		
Empathy	Between Groups	33.963	1	33.963	3.581	Insignificant

	Within Groups	11712.111	1235	9.483		
Social Skills	Between Groups	68.989	1	68.989	7.157*	Significant
	Within Groups	11904.964	1235	9.64		

*significant at 0.05 and 0.01 level

Table 5.15 shows the analysis of variance between and within groups of different components of Emotional Intelligence. The F-ratio for self awareness is 20.793, self regulation is 20.723, motivation is 10.096 and social skills is 7.157 which shows that these values are significant at both 0.05 and 0.01 levels of significance indicating a significant difference in self awareness, self regulation, motivation and social skills among boys and girls. The F-ratio for Empathy is 3.581 which is slightly lesser than the table value at 0.05 level of significance and hence it is not significant at both the levels of significance.

5.4.3 OBJECTIVE: To study the difference in Emotional Intelligence of +2 students belonging to different castes

Table 5.16

Distribution of EIT scores pertaining to caste

Category	N	Mean	Median	S.D	SE	Skew	Kurt
SC	405	80.92	83.00	10.724	0.533	-0.877	0.643
ST	88	82.53	85.00	10.040	1.070	-1.127	1.601
BC	593	81.52	84.00	11.268	0.463	-0.957	0.821
FC	151	82.42	84.00	9.606	0.782	-0.517	-0.505

Table 5.16 showing the nature of distribution of Emotional Intelligence Test scores of +2 students belonging to different castes. The descriptive statistics show that the mean and the median scores of SC students are 80.92 and 83.00 and that of ST students are 82.53 and 85and for the BC students are 81.52 and 84 and that of FC students are 82.42 and 84.00 respectively, which shows a slight difference between the mean and the median scores among all categories on the Emotional Intelligence Test. The standard deviation and standard error of the means are 10.724 and 0.533 for SC students, 10.040 and 1.070 for ST students, 11.268 and .463 for BC students and 9.606 and .782 for FC students. The skewness of the distribution for all the different categories shows that it is negatively skewed and the peakedness of the distribution for SC, ST, and BC students is platykurtic and for FC students is leptokurtic.

The mean score of ST and FC students are higher than the mean scores of SC and BC students, which show that the ST and FC students are having higher Emotional Intelligence than the other two castes. The standard deviation of BC students is higher and that of FC students which has been graphically represented

Fig.16: Graphical representation of mean and standard deviation scores pertaining to caste

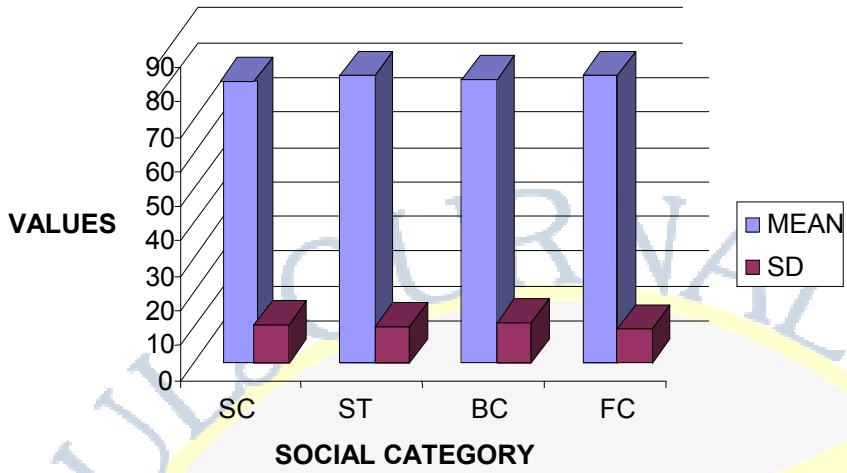

To see, whether the apparent differences in their mean scores on Emotional Intelligence Test are statistically significant, the researcher would like to test the hypothesis

Hypothesis: There is no significant difference in Emotional Intelligence of +2 students belonging to different castes

Table: 5.17
Analysis of Variance pertaining to caste

Source of Variance	Sum of Squares	Degrees of freedom	Mean square	F - ratio	Significance
Between Groups	361.379	3	120.460	1.030	Insignificant
Within groups	144235.8	1233	116.980		

Table 5.17 presents the analysis of variance between groups and within the groups of different castes. The mean square values for all the sources of variance are 120.460 and 116.980 respectively. The F-ratio is 1.030 which is not significant at any level. Hence the students belonging to different castes do not differ significantly in their mean scores on Emotional Intelligence test. The Null hypothesis therefore is retained.

The obtained results are in a way different as compared to other studies taken up to see the role of caste on academic achievement. In a study taken up by Naidu (1995) on the influence of caste on academic achievement of V class students, he found that there is a significant influence of caste on the academic achievement of the students.

Further, the researcher would like to see whether there exists any difference in the components of Emotional Intelligence of +2 students belonging to different castes.

Table: 5.18

Analysis of variance pertaining to different components of EI with respect to caste

Category of EI	Source of Variance	Sum of Squares	Df	Mean square	F	Significance
Self Awareness	Between Groups	22.812	3	7.604	1.538	Insignificant
	Within Groups	6095.326	1233	4.943		
Self Regulation	Between Groups	1.9	3	0.663	0.075	Insignificant
	Within Groups	10449.687	1233	8.475		
Motivation	Between Groups	30.734	3	10.245	1.423	Insignificant
	Within Groups	8874.917	1233	7.198		
Empathy	Between Groups	27.996	3	9.332	0.982	Insignificant
	Within Groups	11718.079	1233	9.504		
Social Skills	Between Groups	32.356	3	10.785	1.114	Insignificant
	Within Groups	11941.953	1233	9.685		

Table 5.18 shows the analysis of variance of different components of Emotional Intelligence pertaining to caste. The F-ratios are 1.538 for self awareness 0 .075 for self regulation, 1.423 for motivation, .982 for empathy and 1.114 for social skills. The values obtained are significant neither at 0.05 nor at 0.01 levels. Hence there exists no significant difference in different components of Emotional Intelligence pertaining to caste.

5.4.4 OBJECTIVE: To study the difference in Emotional Intelligence of +2 students belonging to different religions

Table 5.19

Distribution of EIT scores with respect to Religion

Category	N	Mean	Median	S.D	SE	Skew	Kurt
Hindu	1109	81.37	83.00	10.992	.330	-.914	.736
Muslim	36	82.42	82.50	8.660	1.443	-.501	-.559
Christian	92	82.80	84.50	9.315	.971	-.703	-.169

Table 5.19 shows the descriptive statistics pertaining to religion. The mean and the median scores of Hindu students is 81.37 and 83.00 which shown a slight difference between the mean and the median scores. The mean score of 81.37 indicates that they come under high category of Emotional Intelligence. The standard deviation is 10.992 and standard error of the mean is .330 with a skewness of -.914 which shows that the distribution is negatively skewed, and the kurtosis is 0.736 which shows that the distribution is platykurtic.

The mean and the median scores of Muslim students are 82.42 and 82.50 which shows that there is a negligible difference between the mean and the median scores, which shows that the scores are concentrated at the centre, mean score of 82.42 shows that the Muslim students' Emotional Intelligence is high, the standard deviation is 8.660 and standard error of the mean is 1.443 and the skewness of the distribution is -0.501 which shows that the distribution is fairly negatively skewed, the kurtosis is -0.559 which shows that the curve is leptokurtic.

The mean and the median scores of the Christian students are 82.80 and 84.50 and there is a slight difference between the mean and the median scores. The 82.80 average score of Emotional Intelligence indicates that these students come under the category of High Emotional Intelligence. The standard deviation and the standard error of the scores are 9.315 and .971 respectively. The skewness of the score is -.703 which shows the negative skewness and -0.169 score of kurtosis shows that it is lesser than the kurtosis of a normal distribution and hence the distribution is leptokurtic.

The mean score of Christian and Muslim students is almost the same and higher than that of the Hindu students, indicating a higher Emotional Intelligence among Christians and Muslims. The standard deviation score of Muslims students is smaller which shows that the scores are consistent.

Fig.17: Graphical representation of the Mean and standard deviation scores pertaining to religion.

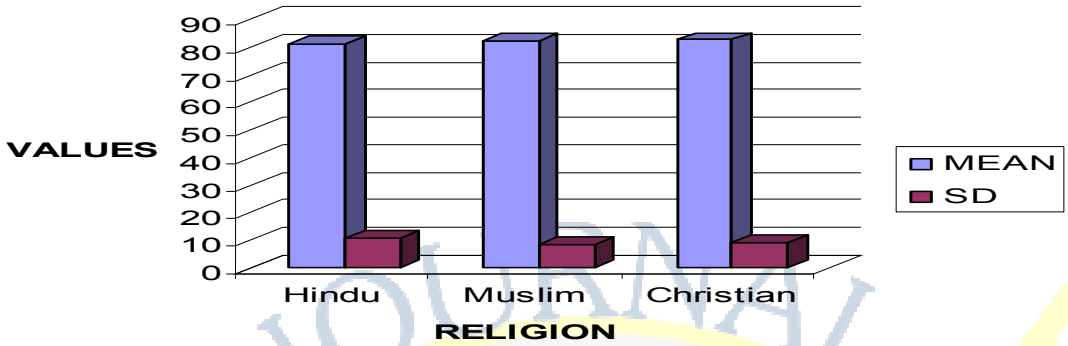

To see, whether the apparent differences in their mean scores of Emotional Intelligence Test is statistically significant, the researcher would like to test the hypothesis.

CONCLUSION:

Present study has been conducted with three major objectives to see two levels of relationships between three major variables. The three major objectives of the study were:

1. To study the EI of +2 students
2. To study the different social factors that determines EI of +2 students.
3. To study the relationship between EI and Learning out comes of +2 students.

The first dimension of study was to find out the social determinants of Emotional Intelligence to see the relationship between two major variables namely, social determinants and emotional intelligence. The second dimension of the study was to know the relationship between two major variables, namely Emotional Intelligence and Learning outcomes. In these two level relationship studies Emotional Intelligence acted as common variables with different roles.

The major findings of the study are:

a. Emotional intelligence of +2 students is high.
b. No significant difference in Emotional Intelligence due to social category.
c. No significant relationship between Emotional Intelligence and Learning outcomes.

Empirical evidence generated from the study has very clearly shown the fact that almost 80% of respondents were having high emotional intelligence (4.18% high and 38.8% very high Emotional Intelligence). Further, empirical evidence on the first dimension of relationship i.e., social determinants of emotional intelligence has demonstrated that no social category, except gender, has caused difference in emotional intelligence.

Further, findings of the study have indicated that there is no significant relationship between Emotional Intelligence and Learning outcomes.

'What is' need not necessarily 'what it should be' or 'what it ought to be'. At the same time 'what is', in certain cares, need to 'what it should be' or 'what it ought to be'. In the present study, there are two major findings that are to be considered as 'ought to be'. The EI 0f +2 is high and social categories did not cause (except gender) any significant difference in EI of +2 students. There are positive values, to be promoted in and through education. Therefore, 'what is' in this regard is necessarily 'what ought to be'. At the same time, the study has come out in clear terms and shown that the 'relationship of no significant relationship' between EI and Learning outcomes. In this case, 'what is' need not necessarily 'what ought to be'. Non existence of significant relationship between EI& Learning out comes 'where it should be', indicates, in indirect way, the systemic problem with schooling process. Future studies may address this problems

BIBLIOGRAPHY:

Abrol D.N. (1997). *A study of achievement motivation in relation to intelligence, vocational interests, achievement, sex and socio-economic status.* Delhi University: Ph.D thesis.

Abraham, R. (1999); Emotional Intelligence in organizations: a conceptualization. Genetic, social and General Psychology monographs 209-224.

Agarwal.S, & Raj.P. (2002). Relation between self esteem and school performance - a behavioural modification approach. *Behavioural Scientist* , 90-107.

Ahuliwalia, S.P., & Shyam D. (1975). A study of relationship between socio-economic status and Academic Achievement of high School Students. *Journal of educational Research and extension. 1-5.*

Ajay Kumar Bhimrao Paril, (2006). Emotional Intelligence among student teachers in relation to sex, faculty and Academic Achievement, *Edutracks*.

Aki, O. (2006). Is emotional intelligence or mental intelligence more important in language learning. *Journal of Applied Sciences* , 60-70.

Amirtha, M. Kadhiravan, S. (2006); Influence of personality on the Emotional Intelligence of Teachers. *Edutracks*.

ISSN No. 2394-8426
Dec – 2015
Issue – I, Volume – V
Online Journal

WOMEN'S EMPOWERMENT

Er. Rekha Phad (Gitte)

Women's empowerment is one subject that has been endlessly discussed and debated in numerous forums ,especially in a plethora of conferences, seminars, workshops as well as in the electronic print media and also in large number of publications . Now a days, are a women really empowered or not ? Obviously in my opinion answer of this question is 'No', because still women are disempowered specially in India. This is happened not only with uneducated women but also with educated women. We think that educated women are empowered but this is not happened with all educated women.

Empowerment or disempowerment of every child more so of girl, begins at birth and depends on the parents the child is born to. In the case of girl, if they welcome to her birth and she receives all the love and care they can give. She begins her life with empowerment. If there is congenial atmosphere at home and she gets adequate nourishment and rest, she is on the road to empowerment but she is born in to a family in which she is unwanted because she is girl, as happens so often in India, she starts her life with disempowerment. Cascading negative effect during the vital, formative years of her life, a time when in fact she needs all support and help she can get. In India, unfortunately a large number of women belong to this disempowered category.

Empowerment depends on education. Some girls may or may not get proper education means they can't take education up to 12th class or up to graduation before that she get married. Post marriage life will not be her it becomes her in-laws life means as per rule made by her in-laws she has to live with them. She starts her life with disempowerment post marriage. This situation happens mostly in rural areas in India. Literate rate of people in India is not much. Illiterature is more in India. Even though people are illiterate, they know importance of education, they think that we couldn't get education because of money but we can teach to children. Some people make difference between girl and boy about education. Means some parents spend money for their son's education but not for girl. Up to getting job to their son they teach to him, but this is not happen with daughter. Why this happens?. Few years ago, people in society thought that "our son will nourish to us in our old hood, daughter is not our property, she becomes

another's property. She will not of us". Why people thought like this I don't get it. Though Both son and daughter are their own children, they should get same right for everything. Because of society, parent's thinking regarding education women are disempowered. Daughter doesn't get same opportunities as son gets.

Every child girl or boy is born with wings of soar in life, but if no one teaches them how to fly, they remain to grounded. A boy somehow or other manages to learn that he is supposed to be self-reliant, but girl may or may not be learn same lesson. In case she does, she remains dependent on or influenced by her immediate family members or her circle of friends, unless by her own efforts, she manages to break free. In most cases, the girl grows up, attuned to disempowerment at times knowing that her wings have been clipped because she is girl. Such girls invariably become helpless and unable to take decisions.

Marriage is one of the reasons for disempowerment. Woman an educated as well as economically independent then also she has to marry forcefully or with that guy which is chosen by her family members even a she is educated and economically independent, once she got married, she has to become dependent and she goes in custody like as birds in cage. In marriage ceremony, girl's parents have to give lot of dowry to boy's family, at that time no one takes girl's opinion about dowry. Not only dowry with that jewelry, expensive gifts, furniture etc. are given by girl's parents to boy's family. At some places groom demands for bike or another expensive things. These things are happened with many educated girls also. Even though she don't want all these things then also her parents are given because they hope that, there should not be mental cruelty, physical harassment with our daughter in her in-laws, she will get lot of happiness in her in-law. In girl's wedding she is supposed to be subordinate that's why there is no value for her opinion. There is one custom in wedding that is "Kanya daan" in which bride is formally given-away to groom by girl's parents, represents an educated woman, but still disempowered as she was a commodity. This custom implies that husband to be is hereafter her "protector" and she is in his "custody". In my opinion why there is no "purush daan" applied to men.

Post marriage, woman starts her married life by mentally preparing. She thinks that, "I should not be do mistake in every situation, if I do mistake then it affects on my parents nourishment". In each and every home, if daughter in-law did mistake then her in-laws blame to her parents, her parents are insulted by her in-laws, then she can't stop her emotions, she cry and become nervous. There is no

right to emote her feelings. She has to accept all commands given by her in-laws. If woman is pregnant, then she succumbs to pressure to go for sex determination of foetus, although it is illegal under compulsion. If foetus is female, she could even be forced in to an abortion.

Educated woman has lot of ambitions, she has wish to achieving something in her carrier, but she has to accept her husband's or her in-laws "commands". She also agrees to change herself. Her in-laws don't fulfill her wishes. They don't think about her carrier. They don't give permission for further studies and for job. They think that our daughter in-law should not go anywhere. She should do only work in home. Her work is cooking, cleaning house, washing cloths and utensils, nourishing to children other than this she can't do anything. In such family, women are supposed to be subordinate and men behave disrespectfully with women. Even though women can't participate in any discussion regarding family.

All these things happening with women only why not with men? Women are quite, they don't say anything and don't take any action. Why this happen? Because women also think that we are" women" that's why we have no right to say something. We should be quite and should tolerate all these things. There is no option, we can't do anything. If we take any action then it will affect on our parent's nourishment, our behavior and our future. A woman fear to future and depends on others. They are not self dependent. That's why now also women are disempowered.

Gurukul International Multidisciplinary Research Journal (GIMRJ)
with
International Impact Factor 2.254

ISSN No. 2394-8426
Dec – 2015
Issue – I, Volume – V
Online Journal

उदयोग आणि आर्थिक विकास

प्रा. डॉ. सुनिल जि. नरांजे
ज्नता महाविदयालय, चंद्रपूर
वाणिज्य विभाग प्रमुख

अनिल देवराव कुंभलकर
चिंतामणी महाविदयालया, घुग्घुस
ता. जि. चंद्रपूर

प्रस्तावना :–

औधोगिकीकरण म्हणजे आर्थिक विकास होय, असे मानले जाते. देशाची आर्थिक प्रगती निरनिराळया घटकांवर अवलंबुन असते. त्यापैकी औधोगिकीकरण हा एक महत्त्वाचा घटक आहे. आर्थिक विकासाच्या प्रक्रियेत औधोगिकीकरणाला इतके महत्व आहे की, औधोगिकीकरण्याच्या वेगावर आर्थिक विकासाची गती निश्चित केली जाते. किंबहुना एखादया देशाचा आर्थिक विकास आजमावण्यासाठीचा एक प्रमुख मापदंड म्हणूनही औद्योगिकीकरणाचा उल्लेख करता येईल प्रस्तुत प्रकरणात आपण उद्योग, औद्योगिकीकरण व आर्थिक विकास समजून उद्योगांमुळे देशाचा आर्थिक विकास कसा घडून येतो याचा अभ्यास करणे हे या पेपर' चा उद्देश आहे.

उद्योग म्हणजे काय ? (What is meant by Industry?)

विशिष्ट उत्पादकांमार्फत चालविला जाणारा कारखाना किंवा उत्पादन व्यवस्था म्हणजे उद्योगसंस्था होय. व्यवसायाची मालकी व नियंत्रण एखाद्या व्यक्तीकडे किंवा व्यक्तिसमुहाकडे असल्यास त्या व्यवसायाला उद्योगसंस्था असे संबोधले जाते. यावरुन असे म्हणता येईल की, एखादा कारखाना किंवा एखादी गिरणी म्हणजे उद्योगसंस्था होय. एक विशिष्ट साखर कारखाना म्हणजे उद्योगसंस्था होय. तसेच अनेक साखर कारखाने म्हणजेच साखर उद्योंग होय. उद्योग म्हणजे काय ते अभ्यासतांना औद्योगिकीरणाचा अर्थ ही लक्षात घेणे आवश्यक ठरते. औद्योगिकीकरणाची माहिती पुढील प्रमाणे आहे.

औधौगिकीकरणाचा अर्थ

'' औधौगिकीकरण म्हणजे एक व्यापक स्वरूपाची संकल्पना आहे. औधौगिकीकरण म्हणजे नेमके काय ते सांगणे तसे कठीन आहे. बऱ्याचदा उत्पादन क्षेत्रात सुधारणा घडवुण उत्पादन वाढविणे म्हणजे औधौगिकीकरण एवढया संकुचीत अर्थाने ही संज्ञा वापरली जाते. तसेच उत्पादन क्षेत्रात अधिकाधिक भांडवलाचा वापर करणे म्हणजे औधैगिकीकरण होय तसेच नव्या तंत्रज्ञानाचा स्वीकार,नवीन उद्योगाची शास्त्रशुध्द व्यवस्थापन इत्यादी बांबीचा समावेश औधौगिकीकरणात करता येईल.

औधौगिकीकरणात खालील घटकांचा समावेष होतो.

1) आधुनीक यंत्रे व तंत्रज्ञानाचा स्विकार करणे

2) व्यवस्थापनाच्या आधुनिक व शास्त्रीय पध्दतीचा वापर करणे

3) आधुनिक प्रकारच्या उद्योगसंस्था सुरू करणे.

4) भांडवलाचा योग्य प्रमाणात वापर करून उत्पादन घटकांची उत्पादन क्षमता वाढविणे.

5) नव्या बाजारपेठांमध्ये प्रवेश मिळविणे.

6) उत्पादन प्रक्रियेत वापरल्या जाणा–या घटकांची पर्याप्त वापर करणे.

7) उत्पादन पध्दतीत बदल करून उत्पादन खर्चात घट करणे.

8) उद्योगाचे वाजवीकरण, स्थानियीकरण व विषेशीकरण करणे.

9) कच्चा माल इंधन,उत्पादक सामुग्री यामध्ये परिस्थीतीनुसार बदल करणे.

10) उत्पादण,प्रकिया,विकीव्यवस्था,व्यवस्थापन इत्यादीमध्ये सुधारणा करणे.

भांडवल आणि आधुनिक तंत्रज्ञान हे औधौगिकीकरणाचे प्रमुख निर्धारक घटक आहे. शास्त्रीय शोध व संशोधनातून उत्पादनाचे नवे तंत्र विकसित केले जाते. थोडक्यात औधौगिकीकरण ही एक व्यापक स्वरूपाची संकल्पना आहे. औधौगिकीकरण ही क्लिष्ट व दिर्घकाळापर्यंत चालनारी प्रकिया आहे.

आर्थिक विकास म्हणजे काय?

उद्योगधंदयाचा आर्थिक विकासाची असलेला सबंध लक्षात घेण्यापूर्वी 'आर्थिक विकास' म्हणजे काय ते समवुण घेऊ. दशाच्या वास्तव राष्ट्रीय उत्पन्नातीत वाढ म्हणजे आर्थिक विकास होय. आर्थिक विकासाची प्रकिया दिर्घकालीन स्वरूपाची असते.उद्योग, शेती, व्यापार,सेवा क्षेत्र इत्यादींच्या वाढीव्दारे आर्थिक विकासाचा वेग वाढवीला जातो.याबरोबरच देशातील गरिबी दुर करणे,बेकारी कमी करणे,उत्पन्न वाटपातील असमतोल दुर करणे,लोकांचे जीवनमान उंचावणे इ.बाबी आर्थिक विकासात अभिप्रेत असतात.

आर्थिक विकासाचा संख्यात्मक व गुणाकार असे,दोन्ही पैलु असतात.उत्पन्न,उत्पादन,रोजगार,गुंतवणुक आदींमध्ये संख्यात्मक वाढ होण्याबरोबरच दारीद्र,बेकारी आर्थिक विषमता, प्रादेशिक विशमता इत्यादी बाबीवर नियंत्रण ठेवणे महत्वाचे असते.तसेच देषातील उपलब्ध साधनसामुग्री पूर्ण कार्यक्षमतेने वापरणे व त्याव्दारे देशाची उत्पादणक्षमता वाढविणे आर्थिक विकासात अभिप्रेत असते. सर्व भुप्रदेश किंवा राज्ये तसेच अर्थव्यवस्थेची सर्व क्षेत्रे यांचा समग्र आर्थिक विकास प्रामुख्याने अभिप्रेत असतो.

उदयोगधंदे व आर्थिक विकास

अर्थव्यवस्था कोणत्याही प्रकारची असो देशाचा आर्थिक विकास औधौगिकीकरणावर अवलंबुण असतो. देशाचे औधौगिकीकरण किती प्रमाणात झाले,यावर आर्थिक विकास गती अवलंबुण असते.औधोगिकरनाच्या टप्प्यावरून देशाला आर्थिक विकासाचा विषिष्ट दर्जा प्राप्त होतो अर्थव्यवस्थेत शेती, उदयोगधंदे व सेवा क्षेत्र ही प्रमुख क्षेत्रे असतात. देशाच्या आर्थिक विकासाबरोबर शेतीतील घटुन उदयोगधंदे व सेवा व्यासायातील लोकसंख्या वाढते.देषाच्या राष्ट्रीय उत्पन्नात उदयोगधंदे व कारखानदारी क्षेत्राचा हिस्सा अधिक असेल तर आर्थिक विकास झाला असे म्हटले जाते.

राष्ट्रीय उत्पन्नात औधौगिक क्षेत्राचा वाटा वाढल्यास त्या देशातील लोकांचे दरडोई उत्पन्न वाढते आणि देशाचा आर्थिक विकास घडुन येतो.

आर्थिक विकासातील उदयोगधंद्याची भुमिका

उद्योगांमुळे आर्थिक विकासाचे लक्ष गाठने शक्य होते निरनिराळे उदयोगधंदे निघाल्यास रोजगार वाढतो.दरडोई उत्पन्नात वाढ होते.त्यामुळे देशाचा आर्थिक विकास होऊ लागतो.ज्या देशात उद्योगांची संख्या जास्त असेल त्या देशाचा आर्थिक विकास वेगाने होतो. देशाच्या आर्थिक विकासातील उदयोगधंद्याची भुमिका पुढीलप्रमाणे स्पष्ट करता येईल.

1) शेती विकासाला चालना :– उदयोगांमुळे शेतीला चालना मिळते. शेतीतून उदयोगांकरीता कच्चा माल उपलब्ध होतो त्यामुळे देशाचा आर्थिक विकास होण्यास मदत मिळते.

2) साधनसंपत्तीचा वापर :– ज्या देशात विपुल नैसर्गिक साधनसंपत्ती उपलब्ध आहे अश्या भागात उदयोगांची संख्याजास्त असुन देशात नविन उदयोग निर्माण होत असतात.तसेच या नविन उदयोगामुळे देशाचा आर्थिक विकासाला वेग मिळतो.

3) विकास प्रक्रियेला चालना :– उदयोगधंद्यामुळे देशाच्या विकास प्रक्रियेला चालना मिळते देशात निरनिराळया वस्तु सेवांचे उत्पादन वाढविण्यासाठी उद्योगधंदयाचा विकास आवष्यक असतो. या विकासातुन देशाच्या आर्थिक प्रगतीचे चित्र निर्माण करणे शक्य होते.

4) राष्ट्रीय उत्पन्नात वाढ :– राष्ट्रीय उत्पन्नाच्या आकडेवारीवरून देशाच्या आर्थिक विकासाची कल्पना येते राष्ट्रीय उत्पन्नात वाढ झाल्यास दरडोई उत्पन्न वाढते.

5) समतोल आर्थिक विकास :– देशातील संपुर्ण भागात कमी जास्त प्रमाणात उदयोगांची निर्मिती केल्यामुळे संपूर्ण देषात उदयोग निर्माण होईल देशातील सर्व भागातील लोकांना रोजगार मिळेल व साधनसंपतीचे पूरेपूर वापर होऊन देशाचा समतोल आर्थिक विकास घडुन येईल.

6) निर्यातीत वाढ :–उद्योगधंदे व विदेशी व्यापार यामध्ये निकटचा संबध आहे उद्योगधंद्यामुळे विदेशी व्यापार यामध्ये वाढुन आर्थिक विकासाला चालना मिळेल. देशाचा वेगाणे विकास होण्यास सुरूवात होते.

7) रोजगार निर्मिती :– भारतासारख्या अतिरिक्त लोकसंख्या असलेल्या देशात जलद विकास होण्याकरीता उदयोगांचा विकास होणे आवश्यक असते. उद्योगांचा विकासामुळे देशातील जनतेला रोजगार मिळेल.त्यांच्या राहणीमानाचा दर्जा सुधारेल व देशाचा आर्थिक विकास होईल.

8) दारीद्रय निर्मुलन :– भारतात असंख्य लोक आजही दारीद्रय रेषेखाली जिवण जगत आहे.देशातील अनेक जनता शेतीवर अवलंबुन आहे. भारतात जलद आर्थिक विकास साध्य होण्याकरीता देशातील उदयोगांचा विकास घडुन येणे आवश्यक आहे.

9) स्वयंपूर्णता व स्वालंबन :– जागतीकीकरणाचा या युगात कोणत्याही देशाची अर्थव्यवस्था स्वावलंबी व स्वतंत्र असु शकत नाही. प्रत्येक देशाची अर्थव्यवस्था ही जागतीक अर्थव्यवस्थेचा एक घटक असते.विदेषी

वस्तुंवर अवलंबुन राहुन देषातील उदयोगांचा विकास व आर्थिक विकास कधीच साध्य होत नाही याकरीता देशाला स्वयंपुर्णता व स्वालंबन होणे आवश्यक असते.

10) लोकसंख्यावाढीला नियंत्रण :–

देशात उद्योगांचा विकासाबरोबरच शिक्षणाचा विकास,राहणीमाणाचा,दर्जाचा विकास,सांस्कृतिक प्रगती, स्त्रियांना समान दर्जा,विभक्त कुंटुब पध्दती आरोग्य सुविधांचा विकास होऊ लागतो. त्यामुळे देशातील लोकसंख्या वाढ या भिषन प्रश्नावर तोडगा काडणे शक्य होते. तसेच यातुन देशाचा आर्थिक विकास वेगाने घडवुण आणने शक्य होते.

याशिवाय इतरही अनेक कारणांमुळे उद्योगधंदे महत्त्वाचे ठरतात. उद्योगधंद्याच्या विकासाद्वारे राष्ट्रीय उत्पन्न व दरडोई वाढविता येते. औद्योगिक विकासामुळे देशाचा विकास जलद गतीने होते. नवनविन उद्योग नव्याने सुरु होण्यास मदत मिळते.

शारांश

आर्थिक विकास साधण्याकरिता आर्थिक घटकांमध्ये गती मिळणे आवश्यक असते. देशात विकास घडवून आणन्याकरिता भांडवलाची आवश्यकता असते. हे या भांडवलाचा जोरावर नवनविन उद्योगांची निर्मिती देशात होत असते नविन उद्योग लागल्यामुळे देशात नवनविन वस्तू खेरदी करण्याकरिता ग्राहक तयार असतो. याद्वारे अनेक उद्योग निर्माण होतात. या स्थितीत नवनविन रोजगार उत्पन्न होतात. हळुहळु देशाच्या विकास होण्यास सुरुवात होते.

भांडवल आणि आधुनिक तंत्रज्ञान हे औद्योगिकीकरणाचे प्रमुख निर्धारक घटक आहे. नव्या तंत्राचा अवलंब करुन उत्पादनाच्या प्रत्येक टप्प्यात भांडवलाची अधिक मात्रा वापरली जाते. त्यामुळे जलद उद्योगांची निर्मिती होउ लागते व आर्थिक विकास घडायला सुरुवात होते.

सदर्भ सुची

1. प्रा. रायखेलकर ए. आर. आणि डॉ. दामजी बी.एच 'औद्योगिक अर्थशास्त्र' शशिकांत पिंपळापूरे, विद्या बुक पब्लिशर्स, औरंगपूरा. औरंगाबाद – जुन 2005 पुष्ठ क्र. 01 ते 05
2. प्रा. इंदुरकर ' भातरीय अर्थव्यवस्था ' विद्या प्रकाशन, रुईकर पथ महाल, नागपूर
3. औद्योगिक निती 2005, भारत सरकार नवी दिल्ली.
4. en.wikipedia.org/wikk./industry
5. प्रा. खांडवे म. अ., 'औद्योगिक भुगोल, कॉन्टीनेन्टल प्रकाशन, विजयनगर , पूणे.

Gurukul International Multidisciplinary Research Journal (GIMRJ)
with
International Impact Factor 2.254

ISSN No. 2394-8426
Dec – 2015
Issue – I, Volume – V
Online Journal

विपणन पर्यावरण–एक जटिल समस्या

प्रा.राजेश सुधाकर डोंगरे
गुरूकुल कला, वाणिज्य व विज्ञान महाविद्यालय, नांदा

गोषवारा :–

व्यवहारामध्ये पर्यावरण म्हणजे निसर्ग किंवा नैसर्गीक घटक असा मर्यादित अर्थ घेतला जातो. वस्तुत: पर्यावरणही एक व्यापक संकल्पना आहे. सभोवतालच्या परिस्थितीचा व घटकांचा एकत्रित संच म्हणजे पर्यावरण होय. आपल्या सभोवती अनेक घटक आढळतात. हे सर्व घटक कधी स्थिर असतात. तर कधी बदलते असतात. व्यवहारातील सर्व बाबींवर या घटकाचा काहीना–काही प्रमाणात परिणाम होतच असतो. विपणन पर्यावरण ही संज्ञा विपणन कार्यावर प्रभाव टाकणा–या घटकांशी संबंधीत आहे. वस्तुत: पर्यावरण ही सर्वत्रिक व सर्वव्यापी बाब आहे. या पर्यावरणचा विपणनासह व्यवसायाच्या विविध क्रियावर परिणाम होत असतो.

बिजशब्द :–

नैसर्गीक घटक, पर्यावरण, विपणन क्रिया, विपणन पर्यावरण

प्रस्तावना :–

विपणन ही उत्पादनाला उत्पन्नामध्ये परिवर्तीत करणारी अत्यंत महत्वाची अशी प्रक्रिया होय. ही प्रक्रिया पार पाडल्याशिवाय उत्पादनाचे म्हणजे उत्पादीत वस्तुचे पैशामध्ये रूपांतर होणार नाही. या करीता विपणनाच्या सर्व क्रिया पार पाडाव्याच लागतील या सर्व क्रिया पार पाडीत असतांना विपणन कार्यावर परिणाम करणाऱ्या सभोवतालच्या घटकांना व परिस्थितीला एकत्रित पणे व्यावसायीक पर्यावरण असे म्हणतात. बाजारपेठेत सभोवताली पर्यावरणाचे विविध घटक आढळतात. विपणन शास्त्रातही विपणन पर्यावरणाची संकल्पना जुनी असली तरी तिची व्याप्ती,तिव्रता व प्रभावक्षेत्र दिवसेंदिवस वाढतच आहे. त्यामुळे विपणनाचे कार्य किंवा प्रक्रिया ही बरेचदा, गुतागुंतीची जटिल अशी बनत जाते. यातुनच विपणन कार्यात बरेचदा अडचणी निर्माण होतात. या विपणन पर्यावरणाचा किंवा त्यातुन निर्माण होणाऱ्या समस्येचा आधिच अंदाज लागल्यास सावधगीरी बाळगता येते किंवा आलेल्या समस्यांचे तातडीने निराकरण ही करता येते.

विपणन पर्यावरणाचे घटक

विपणन पर्यावरणाचे प्रामुख्याने दोन घटक सांगता येतात.

१) अंतर्गत घटक/अंतर्गत पर्यावरण २) बाह्य घटक/बाह्य पर्यावरण

१) अंतर्गत पर्यावरण :–

विपणनाच्या अंतर्गत पर्यावरणमध्ये उत्पादन संस्थाच्या अंतर्गत असणाऱ्या विविध घटकांचा समावेश होतो. यात प्रामुख्याने मुल्य पध्दती, व्यवस्थापन संरचना, अंतर्गत सत्तासंबंध, मानवी संसाधने आणि उत्पादन प्रमंडळाची लौकीक प्रतिमा इत्यादी घटकांचा समावेश होतो. या सर्व घटकांचा विपणनाच्या विभिन्न क्रियांवर व व्यवस्थापकीय कार्यावर परिणाम होत असतो. हे परिणाम बरेचदा दुरगामी स्वरूपाचे देखील असु शकतात. यातुनच उत्पादन संस्थाच्या अस्तितत्वाचा देखील प्रश्न निर्माण होत असतो. त्यामुळे अशा घटकांचा शोध किंवा पुर्ण कल्पनाही हानी भयापासुन सावध होण्यास साह्यभुत ठरत असते. हे सर्व घटक अंतर्गत स्वरूपाचे असल्यामुळे हे नियंत्रण योग्य असतात, म्हणजेच यावर ताबडतोब नियंत्रण घालता येते.

२) बाह्य पर्यावरण :–

विपणनाच्या बाह्य पर्यावरणामध्ये ढोबळमानाने दोन भाग पडतात त्याला अर्थशास्त्रीय भाषेत सुक्ष्म व स्थल असे म्हटले जाते. सुक्ष्म मध्ये विपणन क्रियेमध्ये प्रत्यक्ष सहभागी असणाऱ्या घटकांचा समावेश होतो. जसे–पुरवठादार, विपणन मध्यरथ स्पर्धक, ग्राहक आणि शेवटचा ग्राहकसमुह, म्हणजेच संपुर्ण जनता होय. यात सर्व जनता संबोधण्याचे कारण असे की, ही संपुर्ण जनता म्हणजेच ग्राहकांचा एक मोठा समुदाय असतो. यातविविध संस्कृती, धर्म, सण, उत्सव या सर्वचा समावेश 'जनता' या संकल्पनेत होतो.म्हणुन पर्यावरणीय घटकामध्ये जनता हा सर्वात महत्वाचा घटक मानला जातो.

स्थुल पर्यावरणही एक व्यापक सज्ञा असुन व्यापक स्तरावर आणि दुरगामी असे परिणाम करणारे हे घटक असल्यामुळे यावर नियंत्रण ठेवने जरा अवघडच कार्य असते. त्यामुळे यावर उपाययोजना म्हणुन समुपदेशन हे सर्वात यशस्वी साधन असले तरी काही वेळेला सक्तीची उपाययोजना ही आवश्यक ठरते.

लोकसंख्या विषयक पर्यावरण

लोकसंख्या विषयक पर्यावरणामध्ये लोकसंख्या वाढीचादर, वयोगट, लिंगभेद, सरासरी आयुर्मान, कुटुंब नियोजन कार्यक्रम, रोजगारीचे स्तर व स्वरूप, साक्षरता, भाषा, धर्माचा यात समावेश होतो. या सर्वाचा सामुहिक असा प्रभाव विपणनाच्या विविध क्रियांवर पडत असतो. याचे

जर प्रतिकुल परिणाम विपणनावर पडायला लागले तर त्याची वेगळीच कल्पना आल्यास तातडीच्या उपाययोजना शक्य होतील.

सामाजीक पर्यावरण :–

सामाजिक पर्यावरण हे एक आगळे–वेगळे पर्यावरण असते. तरी त्याचा ही विपणन क्रियांवर सखोल असा परिणाम होत असतो. प्रत्येकच व्यक्ती हा समाजनिष्ठ असतो. त्याचीही काही सामाजीक मुल्ये असतात. एक विशिष्ट अशी संरचना व विचारसरणी असते. समाजानी बांधुन दिलेले काही नियम असतात. त्यालाच आपण परंपरा असे म्हणतो. या परंपरा वाईट जरी असल्यातरी त्या सहजासहजी मोडता येत नाहीत. यातुन विपणनावर बरेच अनिष्ठ परिणाम होतात. वर्षानुवर्षाच्या प्रयत्नानंतर सामाजिक पर्यावरणावर काही अंशी नियंत्रण घातले गेले हे मात्र मान्य करावेच लागेल.

आर्थीक पर्यावरण :–

अर्थव्यवस्थेमध्ये स्वरूप, विकासदर, राष्ट्रीय उत्पन्न, दरडोई निर्देशांक, राष्ट्रीय उत्पन्नाचे वितरण इत्यादी घटक महत्व पुर्ण असतात. आर्थिक परिस्थीती इत्यादी बाबींचा विपणनावर प्रभाव पडत असतो. या शिवाय अधिकोषण, व्याजदर, कर्जपुरवठा, चलननियंत्रण, विदेशीकर्ज व त्यावरील बंधने याचाही विपणन कार्यावर परिणाम होत असतो. आर्थिक पर्यावरणाचा विपणन कार्यावर प्रत्यक्ष व्यापक व दिर्घकाळ असा प्रभाव पडत असतो. विपणनही मुळातच आर्थिक क्रिया असल्यामुळे आर्थिक पर्यावरणाचा विपणनावर होणारा परिणाम हा बरेचदा निर्णायक स्वरूपाचाही असतो.

नैसर्गिक पर्यावरण :–

नैसर्गिक पर्यावरणहा नियंत्रणाच्या पुर्णत: बाहेरचा म्हणजेच ज्यावर नियंत्रण घालता येत नाही म्हणजेच अनियंत्रित असा घटक असल्यामुळे विपणन पर्यावरणमध्ये या घटकाला सर्वात महत्वाचे स्थान आहे. हवामान, पर्जन्यमान, भुपृष्ठाची रचना, स्तर जमिनीची सुपीकता, तापमान, प्रादेशिक वैशिष्ट्ये, भुगर्भातील घडामोडी, नैसगिक संसाधने हे सर्व पर्यावरणीय घटक होय. या घटकांचा मुलगामी तसाच दुरगामी असा परिणाम होत असतो. मुलगामी यासाठी की बाजारपेठेतील मागणी ग्राहंकांच्या आवडी–निवडी, गरजा, मानसिकता यावर नैसर्गीक पर्यावरणाचा थेट प्रभाव पडतो. हा प्रभावच मुलगामी स्वरूपाचा प्रभाव होय. जर नैसर्गिक आपत्तीमुळे बाजारपेठेसमोर काही संकटे निर्माण होतात. त्यावर मात करणे फार कठीण गोष्ट आहे. त्यातुन निर्माण होणारे परिणाम हे दुरगामी स्वरूपाचे असतात.

या शिवाय सांस्कृतीक पर्यावरण, तंत्रज्ञानविषयक पर्यावरण कायदेविषयक पर्यावरण, राजकीय पर्यावरण, आंतरराष्ट्रीय पर्यावरण, बाजारपेठेविषयक पर्यावरण यांचा परिणाम हा घातकच असला

तरी हे नियंत्रण योग्य असल्यामुळे यावर वेळीच नियंत्रण घालुन प्रतिकुल परिणामापासुन सावधगिरी बाळगता येते.

निष्कर्ष :–

विपणन पर्यावरणाचा व्यवसायावर होणारा परिणाम हा त्या पर्यावरणाच्या स्वरूपावर अवलंबुन असतो. हे स्वरूप साधारणत: स्थिर, बदलते, एकजिनसी, बहुजिनसी आणि गतिमान पर्यावरणाचे असते. या सर्व स्वरूपाचे एकत्रीकरण करून त्यातुन निघणारा जो परिणाम असतो. त्यावर अधिक योग्य रितिने नियंत्रण घालता येते. कारण वेगवेगळ्या स्वरूपाला नियंत्रण घालणे अधिक क्लिष्ठ असल्यामुळे एकत्रित नियंत्रण घालणे अधिक सोयीचे असते. या पर्यावरणाचा आधीच शोध लागल्यास ते अधिक सोईचे असते, हा शोध घेण्यासाठी औद्योगीक हेरगीरी हा फार महत्वाचा मार्ग होय. अशारितीने विपणन पर्यावरणाची माहिती मिळवुन ती अद्यावत होत गेल्यास विपणन पर्यावरणाचे विश्लेषन अधिक परिणामीकरता येते.

संदर्भ :– १) विपणन व्यवस्थापणाची तत्वे व प्रणाली :–डॉ. प्रकाश एन. सोमलकर, सर साहित्य केंद्र, नागपुर

२) विपणन व्यवस्थापन :–डॉ. प्रभाकर देशमुख , विद्या प्रकाशन नागपुर

३) Inaustrial Marketing :-Cherunilam Francis Himalaya Publication

Gurukul International Multidisciplinary Research Journal (GIMRJ)
with
International Impact Factor 2.254

ISSN No. 2394-8426
Dec – 2015
Issue – I, Volume – V
Online Journal

दलित आत्मकथनांचे प्रेरणास्थान डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर

संशोधक
प्रा. संजय केशवराव लाटेलवार
श्री शिवाजी कला, वाणिज्य व विज्ञान महाविद्यालय, राजुरा, जि. चंद्रपूर

मार्गदर्शक
डॉ. इसादास भडके
एफ.ई.एस. गर्ल्स कॉलेज, चंद्रपूर

दलित साहित्याचे प्रेरणास्थान डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर हे आहेत. आंबेडकरवाद हीच दलित साहित्याची प्रेरणा आहे. दलित आत्मकथनं हा दलित साहित्याचा प्रगल्भ आणि संपन्न आविष्कार आहे. त्यामुळे डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर हीच दलित आत्मकथनांची प्रेरणा आहे. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांच्या प्रेरणेमुळेच दलित समाजाचे आत्मभान जागृत झाले हे सर्वमान्य आहे. प्रस्थापित जातीव्यवस्थेविरूद्ध आवाज उचलण्याची हिम्मत दलित आत्मकथनकारांना आली. तत्पूर्वी दलित समाज मूका होता. मूकनायक जागा झाल्यानंतर मुकसमाज बोलू लागला. आत्मकथनातून आपली जगण्याची कैफियत मांडू लागला. दया पवार लिहितात, "बलुत्यात आंबेडकरवाद नाही, अस बोलल्या जातं. प्रत्येक पात्राच्या तोंडी बाबासाहेब असे म्हणाले, बाबासाहेब तसं म्हणाले, अशी पात्रे त्यांच्या मगदुराप्रमाणे बोलू लागली असती म्हणजे त्यांना आंबेडकरवादाचा साक्षात्कार झाला असता. आंबेडकरवाद त्यांच्या शब्दातून, प्रतिमातून व्यक्त होतो. नुसत्या सांगितलेल्या तत्त्वज्ञानातून होत नाही. प्रत्यक्ष कृतीतून साक्षात्कार होणे महत्वाचे आहे."[१]

दलित आत्मकथनात पाहिजे त्या प्रमाणात डॉ. आंबेडकरांचे प्रेरणास्थान दृग्गोचर होत नाही. अशी टिका करण्यात येते. त्याला लक्ष्मण माने यांनी दिलेले उत्तर बोलके आहे. ते म्हणतात, "'उपरा' हे चळवळीला आलेले यश आहे. मी चळवळीत वाढलो. चळवळीनं मला मोठं यश दिलं. फुले, आंबेडकर, शाहू महाराज, भाऊराव पाटील यांच्या विचारांनी आयुष्य घडविल्या गेलं."[२]

प्र. ई. सोनकांबळेच्या 'आठवणीचे पक्षी'वर आरोप केल्या जातो की नायक 'जयभीम' सुद्धा म्हणत नाही. भीत—भीत प्रल्हाद हा नायक जयभीम करतो. यावर भाष्य करताना डॉ. आरती कुसरे—कुलकर्णी म्हणतात, "खरे म्हणजे ही टिका बरोबर नाही.

सोनकांबळे जेव्हा 'आठवणीचे पक्षी' मधून आपले दु:ख मांडतो तेव्हा त्यामागे आंबेडकरी विचार, दलित चळवळीचा परिणाम आणि सामाजिक जाणीव या गोष्टी असतात. प्रल्हाद भीत—भीत 'जयभीम' करतो तो इथल्या समाजव्यवस्थेने त्याच्या मनात जो न्युनगंड निर्माण केला त्याचे प्रतीक आहे."[३]

शरणकुमार लिंबाळे यांनी 'अक्करमाशी'त जेव्हा दु:ख मांडतात तेव्हा त्यांना बुद्धाची आठवण येते. सर्व अशांतीचं करण दु:ख आहे हे बुद्धानी सांगितलं. याची जाणीव शरणकुमार लिंबाळेंना येते. आणि पुढे ते आंबेडकरी प्रेरणा सिद्ध करतात. ते म्हणतात, "मी नमस्कार म्हणायचेच सोडलो, जयभीम म्हणू लागलो. मी आंबेडकर म्हणायचं सोडलं बाबासाहेब म्हणू लागलो. माझ्या तरूणाईला अर्थ मिळाला. रक्त शरीरभर लाव्हासारखं उसळायचं. विचार अराजक शांततेत भडकत राहायचं. बाबासाहेबाचा पुतळा पाहिला की सातजन्माच्या आईला भेटल्यागत व्हायचं. अन्याय अत्याचाराच्या बातम्यानं जळायचं. अस्वस्थ व्हायचं."[४]

दलित आत्मकथनाचे स्वरूप आणि वैशिष्ट्ये मांडताना डॉ. वासुदेव मुलाटे लिहितात, "सर्व आत्मकथनांच्यामधून एखाद दुसरा अपवाद वगळला तर या ना त्या स्वरूपात डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांचे, त्यांच्या विचारांचे, कार्याचे कृतज्ञापूर्वक उल्लेख येतात. किंबहुना त्यांच्या विचारांची प्रेरणाच या लेखनाच्या मागे असलेली दिसते."[५]

दलित साहित्याने आधुनिक मराठी साहित्यविश्वात जाणिवेचा एक नवा प्रवाह आणला. दलित आत्मकथने दलित साहित्य निर्मितीचा मौलिक असा अविष्कार आहे. दलित आत्मकथनातील समाजविषयक जाणिवा स्पष्ट करताना प्रा. माधुरी पाटील म्हणतात, "आमची दलित आत्मकथने ही आंबेडकरी विचार चळवळीशी निगडित आहेत. त्याचा प्रत्यक्षाप्रत्य प्रभाव त्यावर आहे. आपले जीवनानुभव परखडपणे आणि विमुक्तपणे मांडणे हा आरंभप्रभावच त्याचे द्योतक आहे. आत्मजाणीव ही आंबेडकरी प्रेरणा आहे. ती सर्व दलित आत्मकथांतून प्रकट झाली."[६]

नवदोत्तर आंबेडकरी स्वकथनाचे बदलते स्वरूप मांडताना प्रा. अशोक इंगळे म्हणतात, झालेली ही स्वकथने पहिल्या पिढीतील सर्वार्थाने भिन्न आहेत. आंबेडकरी

लेखकांनी कवितेनंतर स्वकथनामधून आपले जीवनानुभव आविष्कृत केलेले आहेत. खरे तर ही स्वकथने आंबेडकरी साहित्याचे एक सांस्कृतिक संचित ठरली आहेत."[७]

अस्पृश्यतेची जाणीव डॉ. आंबेडकरांनी दिलेल्या आत्मजाणीवेमुळे दलितांमध्ये आली. या जाणिवेचे प्रतिबिंब दलित आत्मकथनात उमटले याची जाणीव डॉ. गजानन बनसोड करून देतात. "डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांनी 'गावगावकी' आणि 'हाडकी हाडवळ' सोडून द्या! आणि 'शहरांकडे चला' असा आदेश दिला. अनेक दलित कुटुंबांनी शहराकडे धाव घेतली. गावात त्यांच्यावर कशाप्रकारे जुलुम, अन्याय, अत्याचार होतात ही कल्पना डॉ. आंबेडकरांना होती. म्हणून संपूर्ण दलितांमध्ये आत्मसन्मानाची ज्योत चेतवली. गावगाड्यातील अनेक प्रसंगात अस्पृश्यतेमुळे झालेल्या जाचाचे वर्णन आत्मकथनात येते."[८]

दलित स्वकथने ही आलेल्या अनभवातून, चिंतनातून निर्माण झालेली आहेत. यातील सामाजिक जाणिवेचा ओतप्रोत आलेख डॉ. मिलिंद भिलपवार याप्रमाणे मांडतात, "दलित आत्मकथनांनी दलित साहित्याला 'वास्तव' करण्यात मोलाची मदत केली. हे साहित्य म्हणजे आपला काळा इतिहास आहे की, जो माणसाणेच माणसावर लादला. काळ बदलला आणि दलित जाणीव कमी होत आहे. महात्मा फुले, डॉ. आंबेडकर यांच्या प्रेरणेने, शिकवणीमुळे समाज बदलत आहे."[९]

स्त्रियांच्या आत्मकथनांवर दृष्टिक्षेप टाकताना डॉ. विलास तायडे स्पष्ट करतात, "आंबेडकर चळवळीतून दलित स्त्री लेखिका झाली. आंबेडकरी प्रेरणेतून ती लिहू लागली व स्वत:च्या अनुभवातून ती व्यक्त होऊ लागली आहे, यात शंका नाही."[१०]

दलित आत्मकथनातून प्रगल्भ सामाजिक जाणिवा प्रकट करताना दलित आत्मकथनकारांनी 'आत्मकथन' हा शब्द रचनाबंद स्वीकारला याची नोंद प्रा. श्यामराव जाधव घेताना लिहितात, "डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांनी दिलेल्या प्रेरणेमुळे तळागळातील समाजात चेतना निर्माण झाली. ह्या समाजाने परंपरेने चालत आलेल्या जातीय विषमतेमुळे माणसांना पशूहुनही वाईट जीवन जगावे लागले याचे भान आले. पांढरपेशा सवर्ण समाजाच्या अनुभवाच्या कक्षेबाहेर असलेले विदारक अनुभव तशाच जळत्या भाषेत मांडावे

असे दलित लेखकाला वाटू लागले आणि आंबेडकरी प्रेरणेतून त्यांनी आत्मकथनाचा रचनादीप स्वीकारला."[११]

दलित आत्मकथनातील वास्तव मांडताना डॉ. राजकुमार खर्चे दलित आत्मकथनामागील प्रेरणेचा सुतोवाच करताना म्हणतात, "डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांच्या 'शिका' या शिकवणुकीने भारावून गेलेल्या आणि आंबेडकरावादाचा ज्यांच्यावर विलक्षण प्रभाव होता, अशा समाजाने स्वत: अशिक्षित परंतु सुसंस्कारीत असण्याने आपल्या मुला—मुलींना महाविद्यालयीन शिक्षण घेण्यास प्रोत्साहन दिले. मिलिंदमध्ये बहुसंख्य विद्यार्थी दलितातील, भूमीहीन समाजातील, आईबाप मोलमजुरी करणारे म्हणजे दास्याच्या चिखलात रूतून बसलेले. ही मुले जेव्हा गावी जात होती तेव्हा तेथील दैन्य, दास्य, उपेक्षा, जातिभेद पाहून दुभंगत."[१२] यातून प्र. ई. सोनकांबळे यांच्यासारखे 'आठवणीचे पक्षी' हे आत्मकथन आकाराला आले.

'मिटलेली कवाडे', 'रात्रदिन आम्हा', 'माझी मी', 'मी वनवासी', 'मरणकळा', 'मला उध्वस्त व्हायचंय' यासारख्या स्त्रियांच्या दलित आत्मकथनांचा वेध घेताना प्रा. सारिका पाचराऊत आंबेडकरी प्रेरणेविषयी लिहितात, "डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांच्या वैचारिक कृतिमधून दलित स्त्रीला अस्मिता व आत्मभान लाभले. ती उभी राहिली. आपल्या व्यथा, वेदना मांडू लागली. लिहू लागली. दलित साहित्यात तिने आपले एक वेगळे भावविश्व निर्माण केले जिथे माणसाला माणूसपण नाकारले तिथे स्त्रीआणि दलित स्त्री आत्मकथन वाचल्यावर जाणवते."[१३]

दलित आत्मकथनातील वास्तवातील जाणीव करून देतांना प्रा. एस. आर. गाडगे दलित आत्मकथनाच्या वाटचालीचा मागोवा घेताना म्हणतात, "फुले—आंबेडकरांच्या विचारामुळे दलित माणसाला आत्मभान लाभले. त्यातून वर्णात्मक व्यवस्था, जातिव्यवस्था यांनी नाकारले असले तरी इतरांप्रमाणे बरोबरीने जगण्याचा मलाही अधिकार आहे. ती आत्मभान प्राप्त झालेली स्थिती दलित साहित्यात प्रतिबिंबित झालेली आहे. आत्मकथेस आत्मशोधाची प्रक्रिया, नकार आणि विद्रोहाकडे वळते. आत्मकथेतील आत्मभाव 'स्व'चा

शोध, समानतेची वागणूक, जाणीव, विषमतेचा धिक्कार हेच दलित साहित्याचे आदिकारण आहे."[१४]

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांच्या शैक्षणिक क्रांतीचा परिणाम दलित समाजावर झाला आणि ह्याचे प्रतिबिंब दलित आत्मकथनात उमटले. असा निष्कर्ष काढतात. प्रा. विनोद इंगळे म्हणतात, "डॉ. आंबेडकरांच्या क्रांतिविचाराणे प्रेरित होऊन दलित समाजातील शैक्षणिक पहाट साहित्याला कारणीभूत ठरली व आपल्या उजेडाच्या गीताने तिने शतकानुशतकांचे बहिरेपण मोडीत काढले. समाजाचे विषम जगणे तिने नाकारले. दलित आत्मकथने त्याच पहाटेचा वास्तव आविष्कार मानावे लागतात."[१५]

दलित स्त्रियांच्या आत्मकथनाविषयी डॉ. बी. टी. अंभोरे आपले मत मांडतात, "दलित आत्मकथनाच्या मागे डॉ. आंबेडकरांची प्रेरणा होती. त्यातुनच दलितांच्या जगावेगळ्या जगण्याचे असंख्य प्रश्न उलगडले. समग्र दलित शोषितांच्या जगण्याचे, स्त्रियांच्या विदारक वास्तव समोर आले."[१६]

दलितांची आत्मकथने वेदनेचे वाङ्मय असून तो सांस्कृतिक दस्ताऐवज आहे. ते अनुभवाचं रसायन आहे ही प्रतिक्रिया नोंदवतांना डॉ. प्रतिभा आवंडकर म्हणतात, "आत्मकथा हा दलित साहित्यातील अनुभूतीचा सर्वात समृद्ध भाग म्हणावा लागेल. त्यातून दलित जीवनाचे भोग, त्याची दाहकता मनाला अस्वस्थ करणारी असते. स्वत: कथा कथन करणरा आपले आजवरचे जीवन कसे कसे घडत गेले, त्याविषयीच्या आठवणी तो सांगत असतो. तद्वतच डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांच्या तत्त्वज्ञानाने व चळवळीने, त्यांच्या सांस्कृतिक, शैक्षणिक, सामाजिक जीवनात कसा बदल झाला, हे सत्य पाहण्याचाही त्याचा प्रयत्न असतो. दलित साहित्यातील आत्मकथा म्हणजे दलितांच्या वेदनेंचे आलेख आहेत."[१७]

दलित आत्मकथने लिहिण्यामागील प्रेरणा ही डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांची आहे. दलित साहित्य बाबासाहेबांच्या विचारातून साकार होऊ लागले. त्याचे प्रतिबिंब दलित आत्मकथनातून सिद्ध होऊ लागले. दलित आत्मकथनातून व्यक्त झालेल्या अनुभवांना डॉ. आंबेडकरांच्या विचारांनी लिहिते केले. समाजमन जागृत झाले आणि ते जागृत मन

शब्दामधून प्रकट होऊ लागले. स्वत:बद्दल साहित्यात दलित कधी बोललाच नाही. तो काव्यातून विद्रोहाच्या पातळीवरून व्यक्त होतांना अनुभवाचे गाठोडे रिक्त करू लागला. माणूस म्हणून जगण्यास डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांच्या चळवळीमुळें बळ मिळाले. ते बळ जिवंत अनुभवातून, आत्मकथनातून पटलावर आणले. आत्मकथाकाराच्या मांडणीला आणि अनुभवाला जी वैचारिकता प्राप्त होते त्यामागे डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांच्या प्रेरणेचे सूत्र आहे. दलितांची आत्मकथने अधिक अंतर्मूख व आत्मशोधक असून बाबासाहेबांमुळे आत्मभान आले याचे प्रतीक आहे. त्यामुळे शिकलेल्यांनी आपल्या वेदना व्यक्त करण्यासाठी आत्मकथन लिहिण्याचा मार्ग निवडला. दलित आत्मकथनांचे निराळेपण हे डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांच्या विचारामुळे प्रतीत होते.

संदर्भ सूची :

१) पवार दया, 'बलुतं' एक झाडा झडती', अस्मितादर्श, दिवाळी अंक, औरंगाबाद, १९८३, पृ. १६

२) माने लक्ष्मण, 'उपरा', 'चेहरा मोहरा' (प्रस्तावना) ग्रंथाली प्रकाशन, मुंबई, प्र.आ. १९८०, पृ. ०२

३) कुसरे—कुलकर्णी आरती, 'दलित स्वकथने : साहित्यरूप', विजय प्रकाशन, नागपूर, प्र.आ. १९९१, पृ. १९

४) लिंबाळे शरणकुमार, उ.नि.पृ. ७१

५) मुबाटे वासुदेव, उ.नि.पृ. ७२

६) पाटील माधुरी, 'दलित आत्मकथातील समाजविषयक जाणिवा' (लेख), दलित आत्मकथने : चिंतन आणि चर्चा' (संपा. रविंद्र केदार/गोपाल ढोके) अथर्व पब्लिकेशन, धुळे, प्र.आ. २०१३, पृ. १४

७) इंगळे अशोक, तत्रैव, पृ. ३०—३१

८) बनसोड गजानन, तत्रैव, पृ. ४१

९) भिलपवार मिलिंद, तत्रैव, पृ. ४६

१०) तायडे विलास, तत्रैव, पृ. ६३

११) जाधव श्यामराव, तत्रैव, पृ. ७१

१२) खर्चे राजकुमार, तत्रैव, पृ. ७५

१३) पाचराऊत सारिका, तत्रैव, पृ. ११३

१४) गाडगे एस.आर., तत्रैव, पृ. १४३

१५) इंगळे विनोद, तत्रैव, पृ. १४९

१६) अंभोरे बी.टी., तत्रैव, पृ. १५६

१७) आवंडकर प्रतिभा, तत्रैव, पृ. १६४

Gurukul International Multidisciplinary Research Journal (GIMRJ)
with
International Impact Factor 2.254

ISSN No. 2394-8426
Dec – 2015
Issue – I, Volume – V
Online Journal

विश्वजाणीवेचा कवी अरूण काळे

संशोधक
प्रा. रंजीत वानखेडे
जनता महाविद्यालय, चंद्रपूर

मार्गदर्शक
डॉ. इसादास भडके
एफ.ई.एस. गर्ल्स कॉलेज, चंद्रपूर

कवी अरूण काळे यांच्या काव्यात विश्वजाणीव जागतिकीकरणाच्या पार्श्वभूमीवर प्रकर्षाने वृद्धिगत झालेली आहे. 'विश्वाची माझे घर' या भावनेनी ओतप्रोत असलेली ही कविता आहे. नवीन माहितीच्या युगामुळे संपूर्ण जग एवं खेडे झालेले आहे. 'वापरा आणि फेका' या नवीन आदर्शाप्रमाणे आजचे स्वरूप जागतिक पातळीवर आहे. दलित शोषित 'ग्लोबलचं गावकूस' झालेले आहे. जगण्याची शैली बदलली असून माणूस कृत्रिम जगत आहे. गरीब गरीब होत आहे, श्रीमंत श्रीमंत होत आहे. मुखवट्याचे जग आकाराला आलेले आहे. मानवता वेशीवर टांगल्या जाऊन विषमता आपले साम्राज्य निर्माण करीत आहे. या साऱ्यांचे चित्रण कवी अरूण काळे यांच्या कवितेत आविष्कृत होते. 'रॉकगार्डन' या कवितासंग्रहातील कवितांबद्दल बाबुराव बागूल म्हणतात, "पृथ्वीच्या जन्मकहाणीची यात येते ही गोष्ट मानवी समाजाच्या इतिहासाकडे पाहण्याच्या कवीचा दृष्टिकोन किती विशाल आहे हे स्पष्ट होते. ही गोष्ट मराठी कवितेत क्वचित आढळते. हेगेल आणि डार्विन यांनी माणसाबद्दल जी मते मांडली, त्या मतांशी नाते जोडण्याचा प्रयत्न कवी करताना दिसतो. ही विश्वात्मकता दलित कवितेत कां आढळते? तर जातिवास्तवाने आणि वर्णवर्चस्ववादाने दलित जीवनाला काही दिलेले नाही. दिले फक्त दु:ख, दैन्य आणि दास्य; परंतु युरोपात उदित झालेल्या तत्त्वज्ञानाने व राजकारणाने दलित जीवन मुक्त करण्यात मदतच केली आहे. म्हणून दलित कवितेत भारतीय पुराणाबद्दल आणि पौराणिक पुरूषांबद्दल किंचितसेही ममत्त्व दिसत नाही."[१] परंतु अब्राहम लिंकन, जेफर्सन, मार्टिन ल्यूयर लिंग (जू.), मार्क्स, लेनिन, वॉल्टेअर, नेल्सन मंडेला या सर्व आणि इतरही थोर मानवतावाद्यांबद्दल आत्यंतिक आदर असतो. इतका मोठा आदर मराठी कवितेत आता आणि पूर्वीही कुणी व्यक्त केलेला नाही. दलित कविता ही शंभर टक्के भारतीय कविता असूनही हिच्याएवढे विश्वाव्यापकत्व परपुष्ट मराठी कवितेत आढळत नाही. अरूण काळे यांच्या कवितेतील हे विश्वव्यापकत्व कविता संग्रहाच्या नावापासून व कवितामधूनही आपणाला दिसते.

बोन्साय केलेल्या मानवी जगाचे चित्र कवी 'रॉकगार्डन' मध्ये विश्वात्मक पातळीवर रेखाटतात. 'नेल्सन मंडेला' या कवितेतून अरूण काळे विश्वात्मक जाणिवा व्यक्त करताना म्हणतात,

"तुला देताहेत 'गार्ड ऑफ ऑनर'!
या उध्वस्त प्रकाशशबाका, कवडसे
आणि किरण
तुझ्या पूर्ण स्वातंत्र्याला
कुणी पूर्ण थोपवू शकत नाही
'केप ऑफ गुडहोपला'
वळसा घालून जाताना
कुठलाही विचार तुला ओलांडून
जाऊ शकत नाही
माणसाच्या मुक्तीचे गाणे तुझ्याशिवाय

पूर्ण होऊ शकत नाही”[२]

तथागताचे स्मित हास्य ही कवितेतील जागतिक जाणीव कवीने मांडली आहे. ‘भूक : एक सार्वत्रिक उद्‌भव’ या कवितेत कवी अरूण काळे भूकेचे व्यापकत्व प्रतीत करताना म्हणतात,

“पृथ्वीच्या उदयापासून उगवलेली
भूक...
तमाम जीवजिवाणूंना
पोटात लक्ष केंद्रित करायला लावणारी भूक
भूक आदिम सत्य भूक”[३]

मानवी जीवन कसं गोलगोल झाले हे कवी अरूण काळे ‘वल्डकप फुटबॉल’ या कवितेतून जागतिक संदर्भ देत जीवनावर भाष्य करतात,

“वल्डकप फुटबॉल
लाईव्ह प्रक्षेपण आणि
देखणी हिरवळ
‘पेलेची’ चर्चा
वलयांकित ‘मॅराडोना’
प्रेक्षकांचा हैदोस
आम्हीही होतो फुटबॉल,
कधी काळी आणि
खेळतो आज फुटबॉल
घरातल्या घरात”[४]

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांची उजेड पसरवण्याची प्रेरणा ही कवीच्या विश्वजाणिवेला आविष्कृत करणारी आहे. “कवीनी नेल्सन मंडेलांना लोकसम्राट पद बहाल करून मंडेला जोहान्सबर्गच्या सोन्यापेक्षाही तेजस्वी असल्याचे म्हटले आहे. इथे कवीच्या संवेदनशीलतेची कक्षा किती रूंदावलेली आहे हे स्पष्ट होते. अश्रूबरोबरच भाकर खात वाढलेला अरूण काळे सारखा एक कवी अश्रूंचे अनेक रंगही ओळखतो. त्यांची डागडुगी करून अश्रूंना घासून पुसून घ्यायला तयार होतो; परंतु कवीची एक अटही आहे. ती म्हणजे ते आज माणसांसाठी जगले पाहिजेत, एवढी प्रभावी कविता मराठी साटस्वतात अभावनेच मिळेल. यावरून कवीचे जाणीवविश्व किती समृद्ध आहे, याचा अंदाज येतो.”[५] असे डॉ. सिद्धोधन म्हणतात. यावरून कवीच्या विश्वजाणीचे स्वरूप लक्षात येते.

‘सायरनचे शहर’ यात कवीला दंगलीत उध्वस्त होत असलेल्या मानवी जीवनाची झालेली वाताहत अस्वस्थ करणारी आहे. जग हे मूलतत्त्ववादी विरूद्ध विज्ञानवादी आहे. धर्म, जात, लिंग, वर्ग, वंश यांच्या अदकारातून दंगली निर्माण होतात. याला संपूर्ण जग अपवाद नाही. धर्म ही जागतिक संकल्पना असून ती सर्वत्र कार्यरत आहे. ‘सायरनचे शहर’ प्रातिनिधिक स्वरूपाचे आहे. दंगलीत माणूस बेचिराख होतो हे जागतिक सत्य आहे. याचा लेखाजोखा कवीचे काव्य मांडते. कवी रक्ताचा संबंध सम्राट अशोकांच्या कलिंग युद्धाशी जोडतात. माणसाचे व्यापकत्व मांडताना ‘माणूस एक नैसर्गिक प्रतिक्रिया’ या कवितेत माणूस चांगले आणि वाईटही करणारा आहे असे सांगतात,

“तू म्हणतोस प्रेम म्हणजे ईश्वर
तू प्रेमाला ठोकरलय द्वेषाला क्रुसावर

गॉलथानच्या टेकड्यावर
तू घोडे विकून निर्धास्त झोपणारा
तू ठणठणाऱ्या ठिणग्या ठेरणारा
वातावरणाला भोक पाडून आलम
जीवांची कबर खोदणारा
कबुतरांच्या पंखावर बसून
हैड्रोजन, व्यक्तिअरला वात देणारा"[६]

कवी अरूण काळे वंशवादाला आपल्या कवितेतून व्यक्त करतात. 'त्यांच्यासाठी प्रार्थना करू या!' या कवितेतून वैश्विक जाणिवेचा परिचय घडवतात,

"रॉडनी किंग
तू म्हणजे देव नाहीस, धर्म नाहीस
जात किंवा पक्ष नाहीस
तुझा प्लस पॉईंट म्हणजे तू असतो काळा
आणि तुच्छतेचे कारण वंशवाद भिरकावलेला
कचऱ्याच्या पेटीत
कायदा उभा राहाते तुझ्या बाजूनं"[७]

द्वेषातून दंगली माजतात. ती दंगल कुठलीही असो. संपूर्ण जगात धर्माच्या नावाने लपंडाव सुरू आहे. तो गळून सारे प्रेमभावाने वागले पाहिजे असा आशावाद कवी 'छळछावणी' या कवितेतून करतात,

"आता द्वेषाचे मनसुबे कुरवाळू नका
आता वेड्या आशेवर जगू नका
ह्या प्रेमवृक्षाचे जेरूसलेम हेच आहे
त्यांचा देश हा तुमचा देश आहे"[८]

'इतिहासाची हरवलेली पाने' या कवितेतून कवी अरूण काळे जागतिक इतिहासाचा हवाला देत म्हणतात,

"इतिहास जगभर असतो
अन् असतात गुलामांचे
अन् दु:ख वेदनांचे उल्लेख
अन् असतात त्यासाठी बळी गेलेले
अन् खून झालेले महामानव"[९]

'नंतर आलेले लोक' हा काव्यसंग्रहातून विश्वजाणिवा प्रगल्भपणे आविष्कृत झालेला आहेत. जागतिकीकरणाच्या दुनियेत माणूस जागतिक पातळीवर भरडल्या जात आहे. याची तीव्र जाणीव करून देणाऱ्या कविता आकाराला आलेल्या आहेत. या कवितांचे प्रत्यय जागतिक स्वरूपाचे आहे. "आजच्या कविता हा एकूणच मराठी कवितेच्या महत्त्वाचा टप्पा आहे. भारतीय कवितेतील नवे वळण आहे. आजतरी या कवितेच्या पुढे इतर कोणती कविता असू शकेल असे वाटत नाही. 'नंतर आलेल्या लोक' सारख्या कविता पुन्हा निर्माण होतील, याबद्दल काही भविष्य वर्तवता येत नाही. पुढची दहा—पंधरा वर्ष वाट पाहावी लागेल. एकविसाव्या शतकाच्या पहिल्या दशकावर अरूणच्या कवितेचे साम्राज्य आहे.

पावशतकभर ती झळकतच राहील आणि इतिहासात तिला मरण नाही. कोणत्याही काळात ती काळाच्या कसोटीवर उतरली आहे. बदलत्या युगाच्या जाणिवा एवढ्या ताकदीने आजपर्यंत मराठी कवितेने मांडलेल्या नाहीत, हेही आवर्जून नोंदविण्यासारखे आहे."[१०]

नंतर आलेल्या लोकांनी माणूस शोधला नाही. जागतिकीकरणाच्या नावावर 'ग्लोबल' संस्कृती लादल्या गेली. सारे जग जवळ आले अशा वल्गना करू लागले. म्हणून कवी मार्मिकपणे उपरोधिक भाष्य करतात,

"तुझी वैश्विक आढी
ट्रेडमार्कची दाढी
चिंतनाची गुणगुण
श्रद्धेची तुणतुण
तुझी तिथ्या गाडी
तू झोकतोस भाडी
भक्तीची भावाची
निसर्गाची, माणसाची
अन् क्रांतीचीही"[११]

उधारीकरणाची सायबर खिंड झालेली असून 'जसं विचारलं जातं नाव—गाव वेश्येला एकांतात' तसं स्वरूप आले. माणूसच एक भंगार झालेला आहे. इंटरनेट आले. प्रचंड क्रांती झाली. पण माणूस आपले अस्तित्व गमावून बसत आहे. या साऱ्यांचा लेखाजोखा कवी अरूण काळे मांडतात तेव्हा सलगपणे वैश्विक जाणिवा प्रकट होतात. 'प्रेमाचं होऊ द्या जागतिकीकरण' या कवितेत कवी म्हणतात,

"नातेवाईकांनी फोन आणि क्रेडिट कार्डची चौकशी केली
प्रत्यक्ष भेटण्याआधी दोघांनी घेतला घटस्फोट इंटरनेटवर"[१२]

कवीने 'नाती संपली म्हणजे...' या कवितेतून माणसं माणसांपासून दूर चालली हे कवीने ध्वनीत करून माहिती तंत्रज्ञानाच्या युगाचे असंवेदनशीलता स्पष्ट करतात,

"हे ज्ञान—विज्ञान—तंत्रज्ञान निर्माण करील
पिकासो, हुसेन, बॅडमन, गावस्कर
पेले, ओवेन्स, मायकेल किंवा रफी
एकत्र किंवा अलग—अलग
हे ज्ञान विज्ञान तंत्रज्ञान निर्माण करीण
आदर्श गुलाम, इसाप, स्पार्टाकस,
किंवा सिदनाक
हे ज्ञान—विज्ञान—तंत्रज्ञान नष्ट करतयं
मातृत्वाला, निर्मितीच्या अजोड आनंदाला
हे सर्वगुण संपन्न आदर्श पुतळे किंवा उमी
केव्हाही येतील स्क्रॅपमध्ये"[१३]

जागतिक पातळीवर जागतिकीकरणाने 'ग्लोबलचं गावकूस' झालेले आहे. हे विषद करताना कवी अरूण काळे म्हणतात,

"झुलू खेड्यात वाहतं झुळुझुळु

विश्वचषकाचं उरलेलं पाणी"[१४]

'मल्टीलुटालुटीचा शिंग लपालपा' या काव्यातून कवीने जागतिकीकरणाचे वाभाडे काढले असून या वातावरणात माणूस कसा न्हाऊन निघत आहे याचे शब्दांकन केलेले आहे. यात तुबड्यांची कोंडी झाली आणि समूह अस्ताव्यस्त झाले. "अरूण काळे यांच्या सर्वच कविता संवेदनशील वाचकाला आवाहक वाटतात. भाषा आणि प्रतिमांच्या माध्यमातून अरूण काळे यांनी वाचकांशी केलेला संवाद बहुत्माला आहे. कवी वैश्विकभाव जोपासणारी कविता लिहीत असल्याने ही कविता वाचकांच्या वैश्विक जाणिवा विकसित करताना दिसते. अरूण काळे आत्मयतेपेक्षा व्यापकदृष्टीने जगाकडे पाहतो. त्यामुळे त्याच्या कवितेतून वैश्विक भावना ग्रंथित होते."[१५] असे प्रा. नंदकुमार मोरे म्हणतात.

'ग्लोबलचं गावकूस' हा कवितासंग्रह शीर्षकावरूनच विश्व जाणिवेचे संकेत देणारा आहे. कवी अरूण काहै 'ग्लोबनचं गावकूस' या काव्यसंग्रहातील 'स्वत:बद्दल' म्हणतात, "मी ज्या कवितेशी नाते सांगतो ती जगभर सर्वात जास्त लिहिली वाचली जाणारी कविता आहे. ही कविता माणसांच्या नात्यामधील जटीलता, विसंवाद, अंतर्विरोध यांची संगती लावण्याचा प्रयत्न करीत आहे. मुळात माझें जगणं एका कार्यकर्त्याचं जगणं असल्यामुळं माझी कविताही त्या जगण्याचा भाग आहे. केवळ जन्मामुळे वाट्याला येणाऱ्या उपेक्षांमागची कारण नष्ट व्हावीत असं जगताना वाटतं, तसेच माझ्या कवितेलाही वाटतं." असं जे कवी अरूण काळे म्हणतात त्यातून त्यांना विश्वजाणिवेशी निगडित आहे.

कवी अरूण काळे यांच्या कवितेतले जागतिक संदर्भ विश्वात्मकतेशी जोडलेले आहेत. 'प्रसन्न काळं देखणेपण' या कवितेत यांचा प्रत्यय येतो,

"बुद्धाच्या जनरेटरची
बिनागॅप जनरेशन
मांडवातील फुलांच्या जाळाला
सॅल्युट मारून
दिव्यत्वाची प्रचिती दावून
व्हिटॅमिनची पानं चावून
मॅक्शिमम पदरसा पाहून
मायकोचा डोस घेऊन
पॉल सबला भाताच्या अवनात
लढली होची, नाची चिन्ह
गवतांच्या टोप्यात
फिडेल—चे स्वरांची लिपी लॅटीन
पाल्लो इलो मिरची झटका कठीण"[१६]

'खाऊजा' संस्कृतीमुळे जगात प्रचंड बदल होत आहेत. याचा बरा—वाईट परिणाम तळागाळातल्या घटकांना सोसावा लागत आहे. ग्लोबलाईजेशनमुळे त्यात भर पडली. झगमगाटात या साऱ्या घटकांकडे दुर्लक्ष होत आहे. हा सदंर्भ जागतिक उलादालीशी आहे. या साऱ्यांचे मर्म कवीला कळले आणि त्याचे अधोरेखण कवी व्यापक जाणिवेने करतात. 'ग्लोबल खेड्याचे ग्लोबल येडे' यात मिष्किलपणे कवी लिहितात,

"वर्गविहीन, शोषणरहित, माणसाचं
जागतिकीकरण हाणून पाडून आता

विषमतेच्या साम्राज्याला दिलं नाव ग्लोबलगाव
महानघराचं गाव करून येड्यात काढलं की राव"[१७]

'बौद्ध गया विचार आहे' या कवितेतून कवी अरूण काळे विचारांचे अनन्यसाधारणत्व व्यक्त करतात,

"बौद्ध गया एक स्थळ नाही
गाव नाही की इलाखा नाही
बौद्ध गया एक विचार आहे
अंतिम"[१८]

जागतिकीकरणामुळे झपाट्याने बदल होत आहेत. माणूस आणि संगणक यांचा खेळ सुरू आहे. एकप्रकारे संघर्षच सुरू आहे. शहराचा विस्तार झपाट्याने सुरू आहे. हे कवी मांडतात,

"ऑक्ओपसारखा झाला शहराचा विस्तार
रस्ते चौपदरी झाले, माणसं एकपदरी
सुंदर वाहतूक बेटं झाली आणि
लोकं राहू लागले आपआपल्या बेटावर
कुठं हरवलं हे शहर?
मोहोंजोदडोसारखं खणूनही सापडणार नाही?"[१९]

कवी अरूण काळे नव्या युगाची कविता घेऊन वाटचाल केलेली आहे. अरूण काळे यांनी जागतिक विचारसरणी जोपासली. युग प्रवर्तक जाणिवा कवी व्यक्त करतात. जागतिक पातळीवर इतिहास काळापासून वर्तमानापर्यंत वेगवेगळ्या ठिकाणी घुसखोरी करून स्थानिकांना, मूळ निवासींना एक तर दीन, दास, गुलाम केले किंवा त्यांना त्यांच्याच भूमीत हद्दपार केले. याविषयी कवी अरूण काळे यांची कविता बोलते. त्यांच्या कवितेला चौफेर दृष्टी लाभली. तिनही काळाचा वेध घेत विश्वात्मक जाणिवांची पखरण करणारी कविता अरूण काळे यांची आहे.

संदर्भ सूची :

१) काळे अरूण, 'रॉकगार्डन', उ.नि.पृ. ५७
१) तत्रैव, पृ. ७७
३) तत्रैव, पृ. ८२
४) कटारे मोतीराम/अहिरे गंगाधर (संपा.), उ.नि.पृ. १२२
५) काळे अरूण, 'सायरनचे शहर', उ.नि.पृ. १८
६) तत्रैव, पृ. २८
७) तत्रैव, पृ. ५८
८) तत्रैव, पृ. ६२
९) तत्रैव, पृ.४४
१०) तत्रैव, पृ. १४
११) तत्रैव, पृ. ३९
१२) तत्रैव, पृ. ४३
१३) तत्रैव, पृ. ७६
१४) कटारे मोतीराम/अहिरे गंगाधर (संपा.), उ.नि.पृ. १५२

१५) काळे अरूण, 'ग्लोबलचं गावकूस', उ.नि.पृ. १०
१६) तत्रैव, पृ. २९
१७) काळे अरूण, 'सायरनचे शहर', उ.नि.पृ. ०२
१८) काळे अरूण, 'रॉकगार्डन', उ.नि.पृ. ४४
१९) तत्रैव, पृ. ५५

Gurukul International Multidisciplinary Research Journal (GIMRJ)
with
International Impact Factor 2.254

ISSN No. 2394-8426
Dec – 2015
Issue – I, Volume – V
Online Journal

Indian Cultural Ethos In Nissim Ezekiel's Poetry

Dr. A.V.DHOTE
HoD,Dept. of English,
S.P.College,Chandrapur

Abstract:

Every writer tries to assert his national identity in one way or another. This is true of the most of the writer of the common wealth countries. They used English language as an instrument to express their national aspiration or to describe their peculiar culture. While discussing the Indian ethos in the poetry of Nissim Ezekiel, it is imperative to keep in the mind that here is a writer who has declared his intentions to be rooted in India. This Indianess may take several forms and shapes, and may appear in work of art in diverse ways, obvious and subtle-but it is quality which is unmistakably present in the finest works of all Indian writers, whether they write in their mother tongue or in English. Modern India is a synthesis of many cultural cross currents and modern India, in Mulk Raj Anand's words, is conscious of 'the double burden on my shoulders, the Alps of the European tradition and the Himalaya of my Indian Past…" [1]

Key Words:

Indian Cultural Ethos, Multiculturalism, Indianess, Cultural identity.

Introduction:

Like all commonwealth poets, Nissim Ezekiel has been consciously Indian in his sensibility. He is a great Indian poet writing in English without losing his national identity. Most of his poems give expression to his love of the soil in quite unequivocal terms. He affirms that he is very much an Indian and that his roots lie deep Indian. "I am not a Hindu and my background makes me a neutral outsider, circumstances and destiny relates me to India. In other country I am foreigner, in India. I am Indian''. Though Ezikel has not inherited the great classical tradition of Indian, of Vedas and Upanishads but to the extent he has availed himself to the composite culture of India to which he belongs. Nissim Ezekiel is also fully aware of the necessity of local knowledge to make the poetry authentic and live. The poet clearly knows and accepts that, "All my writing comes out of staying here. I am happy to be unhappy here rather than somewhere else. If I stay anywhere else, I will only be unhappy. Here, at least the unhappiness makes sense, unhappiness leads to critical perceptions."[2]**.** Perhaps this is one of the reasons why Ezekiel is graded as one of the most important poets of the second half of the 20th Century. According to Dr. Shaila Mahan, Ezekiel falls into a category of the poets who have stayed back in India. She divides the Indian poets writing in English into three broad categories: "Indian English poets may be divided into three groups. The first group comprises of poets who, after having lived for some years particularly during their formative years in the west, have returned to India. Ezekiel belongs to this category. The second category consists of those poets who have settled abroad. They have made their home in the west. In the last group come those poets who have never lived abroad for any substantial period."[3]

One cannot dwell into ethos of India sans involvement into the Indian scene. Nissim Ezekiel has essentially involved into the Indian scene. Makarand Paranjape regards that, "Nissim's poetry is no esoteric exercise with words, or an avenue of unrestrained emotional catharsis. Poetry to him is a communicative act, a discipline. This has made Nissim the most readable and consistent of the modern Indian English poets."[4]

The poem "Background Casually'' expresses Ezikiel's total commitment to India to Bombay and to poetry. As he is totally committee to his chosen profession so also he is committed to the country of his choice and to the city Bombay which he has made his home. He has become part and parcel of India. He has proud of his Indian environment. 'Background casually' epitomizes the consciousness of living in an imperfect, unromantic India, which characterizes the new poetry. Ironically, Ezekiel sees himself within the ambiguous perspectives of the inside–outsider. His Jewish–westernized – Indian background makes him a natural–outsider. He has expressed

unhappiness with his environment, without wanting to abandon or being liberated from it. However we find Ezekiel making an attempt especially in his later poetry, to understand India's past, its culture and relate himself to India.

Ezikiel kept his commitment by depicting life faithfully the finds it in the city of Bombay. His poetry acted as a mirror for reflecting life as it is actually lived in India Bombay is realistically and feelingly depicted in number of his poems.

Ezikiel is essentially a poet with a well marked Indian sensibility. His first hand knowledge of the Indian scene and his feelingly rendered it in a number of poems. In India is a well known poem of Ezekiel in this poem his treatment Indian life is characterized by down to earth realism. In 'The Song' the poet attracts our mind towards the Indian city life. The poet himself is a city dweller, dirty and misery, the exploitation and corruption which he witnessed everywhere in a city like Bombay.

In the very first part of the poetry, the poverty the squalor, the heart & ugliness of an Indian city is vividified.

"Always in the sun's eye"
Here among the beggars
Hawkers, Pavement, Sleepers

Suffer the place and time"

The second part of the poem talks about the secular state and the way religions live in India and particularly in Bombay which is the heart of India. The Poet wants to tell us that the Indian Roman Catholic,Anglo Indian and the Islamic peoples are earnest in their prayers but in a true sense they don't follow their religions. The following lines clear the idea.

''The Inglue-Indian gentlemen
Drank whisky is some Jewish den
With Muslims slowly creeping in
Before or after prayers''

The third party of the poem is characteristically blunt retire on the how status of women in India. They are treated as minor citizen while the men under western influence do what they please. The discriminatory treatment of the sexes is clearly brought out in the following lines in the celebration of the 31st Dec. party the Indian women.

"The wives of India sit apart
They don't to drink they do not talk
Of Coerce they do not kiss"

But the Indian men are quiet easily enjoy the party, dance, drinking and flirting also. The flirting is a luring which is allowed only to Indian men and not to women.

The last section of the poem provides and ironic contrast to the earliest remark of someone i.e. '' The atmosphere corrupt and looks at our wooden wives.'' The conflict of cultures is brilliantly and ironically depicted in the last movement where the English boss tries to seduce his Indian secretary and finds her blouse a happy hunting ground in contrast to the standard of Indian morality. The lines from the last action are suggestive. They suggest that the Indian secretary thinks that the English man will offer here all the attraction of Western culture. But lasts what she gets are his boorish lust which he tries to force on her.

In this way the whole poem is a presentation of pseudo-modern Indians leading fashionable lives in cities. The delineation of artificial and snobbery of the English boss and the Indian lady. The poem is ironic and truely representatives of certain class in Indian. It also gives in a vital sense of the Indian milieu, its traditions and cultures.

How truly Ezekiel describes the day to day domestic scene of average Indian couple in the poem 'To a Certain Lady': Then, absences and quarrels, indifference Sucking like a leech upon the flesh, Crude acceptance of the need for one another, Tasteless encounters in the dark, daily Companionship with neither love nor hate (CP, p.29) And again in a typical Indian English, he narrates the anguish of the husband troubled by the wife in the poem 'Song to be Shouted Out, from Songs for Nandu Bhende': Shout at me, woman! Pull me up for this and that. You're right and I'm wrong. This is not an excuse, It's only a song. It's good for my soul To be shouted at. Shout at me, woman! What else are wives for? (CP, p.242) In the simplest of language, he presents the attitude of the Indian female in the poem 'In India': The wives of India sit apart, They do not drink, They do not talk, Of course, they do not kiss. (CP, p.133) As far as material and content are concerned Ezekiel's poems are full of Indianess. A typical Indian atmosphere is found to prevail in the poems of Ezekiel. The Indian society, the Indian relationship between society and nature surprise the reader with their freshness of approach and observation. The persona's quarrel at the soap about the defective soap being given by the shop keeper is all hilariously Indian: Now small crowd is collecting And shop man is much bigger than me, And I am not caring too much For small defect in well-known brand soap. So I'm saying Alright OK Alright OK This time I will take But not next time. (CP, p.269) . The suffering of average Indian middle class is mentioned in the poem 'Occasion' wherein the typist is 'without a face or figure': The typist says goodnight, A south-Indian middle-aged balding man Without a face or figure. His name: Ramanathan or Krishnaswamy. (CP, p.277) Suffering from the humilities of everyday life many Indians everyday speaks the following language: I tell you, we should have left This country twenty years ago. Now it's too late. There's no future for us. (CP, p.277)

The poem 'At the Hotel' presents the hidden motives of average Indian: Our motives were concealed but clear, Not coffee but the Cuban dancer took us there, The naked Cuban dancer. On the dot she came and shook her breasts All over us and dropped The thin transparent skirt she wore. Was it not this for which we came? The noise, the smoke, the smell of flesh we relished Secretly and wanted more, We drank our coffee swiftly When the Cuban dancer left the floor, The naked Cuban dancer. (CP, p.112) 'Entertainment' shows an authentic Indian ness. It is a faithful description of a monkey-show which one can witness in any street corner of India. The reactions of the audiences are tellingly noted. They have an intuitive fore-knowledge of the time to pay: Anticipating time for payment The crowd dissolves, Some, in shame, part With the smallest coin they have, The show moves on. (CP, p.193) 195 And if it does not, the monkey and its master will have to starve to death. A usual roadside diversion provides the poet with an opportunity to offer his reflections on Indian social life at the meanest.

Another poem 'Nigh of the Scorpion' by Nissim Ezekiel with an Indian sensibility presents the whole picture of the rural area in India. The poem shows great love and affections of the Indian illiterate farmer for the poets mother their helpful nature, their superstitious beliefs are also presented in contrast with the scientific and sceptic way of treatment of the poets father.

'Night of the Scorpion' is regarded as one of the poems from rural background. According to M.K.Naik, "Night of the Scorpion' is generally taken to be an ironic presentation of the contrast between popular superstition and skeptical rationalism."[5] The poet successfully catches the belief system of various people in this poem. Very few Indian writers of English are successful in conveying indigenous speech rhythm, tone, colloquial nuances in English especially in the speech of peasants and petty merchants which figure in their works. The sentence structure deftly reflects the Indian experience and ethos: With every movement that the scorpion made His poison moved in mother's blood, they said. May he sit still they said. May the sins of your previous birth. Be burned away tonight, they said. May your suffering decrease The misfortunes of your next birth, they said. May the sum of evil Balanced in this unreal world Against the sum of good Become diminished by your pain. (CP, p.130) M.K.Naik finds out four distinct treatments to the poem in terms of the attitudes expressed: "Four distinct attitudes to these allied problems are sharply differentiated in the poem ('Night of the Scorpion'). The first is traditional, popular Indian (Hindu-Buddhist) view of it, which is a curious mixture of metaphysics, faith and superstition. Diametrically opposed to this view is that represented by the father, "skeptic, and rationalist." For him a scorpion bite is just a case for the employment of experimental medicine, "powder, mixture, herb and hybrid". He even pours a little paraffin on the bitten toe and puts a match on it."[6] The last stanza of 'Night of the Scorpion' is the very culmination of the sense

of sacrifice and vicarious suffering of the mother for her children: My mother only said Thank God the scorpion picked on me And spared my children. (CP, p.130) . These lines have rich cultural undertones typical of the orient and remotely typical of Hinduism. According to Shirish Chindhade, "… 'Night of the Scorpion' is obliquely about redemption of children achieved vicariously through the suffering of a scorpion stung mother…. A simply narrative poem in which the force of the superstition and age old beliefs is pitted against the modern skeptical temperament."[7]

The poet also creates an authentic flavor of India by his use of Indian English, Pidgin English or Babu English as it is often called. This is clearly seen in poems like 'Very Indian Poems in Indian English' and 'Goodbye Party for Miss Pushpa T.S.' where the syntactical peculiarities of Indian English- particularly the use of present continuous tense for simple present- is indicative of the thought processes of Indians. According to Shakuntala Bharvani, "in these poems Ezekiel has moulded the language so as to bring out the true sound and texture of the language as it is used by Indians."[8] In his more recent verse Ezekiel has tried to create an Indian flavor by the use of common Hindi words. Guru, Ashram, Burkha, Chapatti, pan, mantra are a few of Indian words the poet has used to create an illusion of real life as it is lived in India. He reflects the Indian way of life both through the use of vernacular words and imagery drawn from the common scenes and sights of India. A vast panorama of Indian humanity is presented. His poetry is a vast gallery of portraits representative of the various Indian professions and ways of life; we meet the railway clerk, house maid, professor, guru, office worker, society girl in his poems. The language of Indian writing in English is the natural product of interaction between English and native language and native cultures.

Ezekiel not only tried to describe Indian culture but he has made good use of Babu Angrezi or Indian English. The poem 'The Very Indian Poem in Indian English' tries to depict the characteristic Indian attitude in Swadeshi Angrezi. It is a common Indian mistake to use the present continuous tenses in place of the simple present Ezekiel exploits this national trait also in the poem ' Good Bye Party for Miss PushpaT.S.' . In the poem "Very Indian Poem In Indian English''. The poet has not only reflected what many Indian thinks but the way of their thinking is also reflected. Through the speaker the poet suggested in the 1st stanza that now- a- day's people are not following Mahatma Gandhi, the Indian ancient glory is stained by the people. The new generation is going alter 'fashion and foreign things'. The Indian speaker of the poem is accepting Ram Rajya and beueres in the national integration. His typical Indian hatred for wines and love of a 'lovely drink', 'lassi' shows an Indian attitude towards drinking.

In the poem 'Irani Restaurant' and 'Instruction' the poet shows us the nature, condition of the Indian of the Indian hotel and the instruction written in it. He found his Indianess in one of the Bhupen Khakar's Paintings of Irani Restaurant.

Various Indian poets house tried to express their Indianess in their own genuine way. But Ezekiel's relationship can be better understood from the following lines. Inspite of the poverty ,the squalor, the heat ,the ugliness in Indian he says

"I cannot leave the island

I was born here and belong.

As others choose to give themselves

In some remote and backward place

My backward place is where I am that is in Indian''

Conclusion:

Ezekiel was undoubtedly the first major figure in Indian English poetry who found a resonant, authentic Indian voice. This would not have been possible without his essential commitment to the place of his birth. Thus of all the countless Indian poets writing in English, Ezekiel is the one who best represents the national identity

and who best express the national aspirations and culture. It is a rare achievement indeed and it entitles home to the rank of the greatest Indian poet writing in English.

Work Cited:

(1) Naik, M.K. "The Indianness of Indian Poetry in English," Indian Poetry in English. ed. H.M.Prasad. Aurangabad: Parimal Prakashan, 1983, p. 33

(2) In an interview with Saleem Peeradina, Nissim Ezekiel Remembered. ed. Havovi Anklesaria. New Delhi: Sahitya Akademi, 2008, p. 48

(3) Mahan, Shaila. The Poetry of Nissim Ezekiel. Jaipur: Classic Publications, 2001, p. 44

(4) Paranjape, Makarand. 'A Poetry of Proportions: Nissim Ezekiel's Quest for the Exact Name', Nissim Ezekiel Remembered. ed. Havovi Anklesaria. New Delhi: Sahitya Akademi, 2008, p. 415-16.

(5) Naik, M.K. 'The Tale in the Sting: An Analysis of Ezekiel's "Night of the Scorpion" ', Dimensions of Indian English Literature. New Delhi: Sterling Publishers Private Limited, 1984. p. 35.

(6) Naik, M.K. 'The Tale in the Sting: An Analysis of Ezekiel's 'Night of the Scorpion', Dimensions of Indian English Literature. New Delhi: Sterling Publishers Private Limited, 1984. p. 35-6

(7) Chindhade, Shirish. Five Indian English Poets. New Delhi: Atlantic Publishers and Distributors, 2001, p. 36.

(8) Bharvani, Shakuntala. Nissim Ezekiel. New Delhi: Sahitya Akademi, p. 83

Gurukul International Multidisciplinary Research Journal (GIMRJ)
with
International Impact Factor 2.254

ISSN No. 2394-8426
Dec – 2015
Issue – I, Volume – V
Online Journal

आंतरराष्ट्रीय संबंध आणि परराष्ट्रीय धोरण

प्रा. सौ. बैजू प्रकाश सोमलकर
राज्य शास्त्र विभाग प्रमुख,
राजे धर्मराव कला वाणिज्य
महाविद्यालय, आलापल्ली
जि गडचिरोलि

गोषवारा :

जागतिकीकरणाच्या पार्श्वभूमीवर राजकारणाचे स्वरूपही बदलत चालले आहे. पूर्वी राजनयाला असलेले स्थान आज कितीतरी पटीने वाढले आहे आंतरराष्ट्रीय संबंधात मधुरता राखण्याबरोबरच परराष्ट्रीय धोरणांची आखणी करून आर्थिक समीकरणे देखील जुळवावी लागतात. यालाच आर्थिक राजकारण म्हणता येईल, आर्थिक विकास आणि समृद्धी साध्य करण्याकरिता आजच्या युगात राष्ट्रांना एकमेकांवर अवलंबून राहणे अनिवार्य झालेले आहे. प्रसंगी तडजोडही स्वीकारावी लागते. राजनीतीचे हे बदलते स्वरूप अंगीकारतांना भारतीय राजकारणाला अनेक आव्हाने स्वीकारावी लागतात.

महत्वाचे शब्द :

जागीतीकीकरण, आंतरराष्ट्रीय संबंध, परराष्ट्रीय धोरण, आर्थिक राजनीती, आर्थिक विकास

प्रस्तावना :

सतत मिळविलेली महिती, वळण, गाठीभेटी, चर्चा इत्यादी साधनांनी अंतरराष्ट्रीय संबंधाचे व्यवहार किना व्यवस्थापन म्हणजे राजनय. या व्यवस्थापनाकरिता संस्थेने, राष्ट्राने आपला अधिकृत प्रतिनिधी किंवा संस्था यांच्या द्वारा परदेशात प्रतिनिधित्व करण्याची राजकीय प्रथा म्हणजेही राजनय किंवा राजनीती असे सामान्यपणे म्हणता येईल. राजकीय माहितीचे संकलन करून ते आपल्या देशाला कळविणे, परदेशाशी वाटाघाटी करणे आणि आपल्या देशाचे परराष्ट्रीय धोरण निश्चित करण्यासाठी मदत करणे ही राजनयाची सामान्य उद्दिष्टे म्हणता येतील.

परराष्ट्रीय धोरण कार्यवाहीत आणण्याचे एक महत्वाचे साधन म्हणजे राजनय किंवा राजनीती होय. राजनीतीचा हेतू, बळाचा प्रत्यक्ष वापर टाळणे व वाटाघाटीच्या मार्गाने किमान किंमत देऊन जास्तीतजास्त राष्ट्रीय हितसंबंध सध्या करणे हा असतो. मर्यादित अर्थाने राजनीती म्हणजे परराष्ट्रीय वकील आणि त्यांचे कनिष्ट सहाय्यक यांच्याकडून होत असलेले कामकाज होय. राजनैतिक साधने किंवा राजनैतिक यंत्रणा या वाक्प्रचारात हा मर्यादित अर्थ अभिप्रेत आहे. परंतु विस्तृत अर्थाने राजनीती म्हणजे परराष्ट्रीय धोरणाच्या कार्याहीसाठी अवलंबिलेली तंत्रे आणि साधने होत.

राजनीतीचा इतिहास:

व्हिएन्ना परिषद (१८१५) ते पहिले महायुद्ध (१९१४) हा शंभर वर्षाचा कालखंड राजनीतीच्या इतिहासात सुवर्ण युग मानला जातो. अभिजात राजनीतीच्या या पर्वाविषयी इतिहासकारांनी खूप गौरवाने लिहिले आहे. अर्थात एक गोष्ट ध्यानात यावयास हवी की, युरोपच्या सत्तावैभवाचा आणि साम्राज्यवादी समृद्धीचा तो कालखंड होता. आणि त्या राजकीय वातावरणाचे प्रतिबंब तत्कालीन राजनितीमध्ये आले होते. राजनितीमुळे काहि ते वातावरण निर्माण झाले नव्हते. राजनीती राजकारणाचे स्वरूप ठरवीत नाही तर राजकारण राजनीतीचे स्वरूप ठरविते.

राजनीतीची वैशिष्टे :

अभिजात राजनीतीचे पहिले वैशिष्टे म्हणजे, राजनैतिक अधिकाऱ्यांची निवड समाजाती उच्चभ्रू वर्गातून होत असे. त्यांचे वर्गीय हितसंबंध आणि सांस्कृतिक पातळी समान असल्याने, त्यांच्या राजनैतिक शैलीत आणि दृष्टीकोनात एकजिनसीपणा होता.

अभिजात राजनीतीचे दुसरे प्रमुख वैशिष्ट्य म्हणजे गुप्तता होय. तत्कालीन राज्ये लोकतंत्र स्वरुपाची नव्हती, त्यामुळे राजनैतिक व्यवसायांचे लोकमतासमोर प्रत्यक्षाप्रत्यक्ष समर्थन करण्याचे उत्तरदायित्व शासंसंस्थेवर नसल्याने गुप्ततेच्या आवरणाखाली अनैतिक राजकीय सौदेबाजी करणे, असे राजनीतीचे स्वरूप बनले होते.

पहिल्या महायुद्धानंतर पारंपारिक, अभिजात राजनीतीचे पर्व मागे पडून आधुनिक राजनीतीचे पर्व सुरु झाले. आंतरराष्ट्रीय करार प्रकट असावेत आणि त्यासंबंधीच्या वाटाघाटीही प्रकट असाव्यात, हे तत्व काटेकोरपणे जरी नाही, तरी सर्वसाधारणपणे पालन करण्याबद्दलचा आग्रह अमेरिकन राष्ट्राध्यक्ष वुड्रो विल्सन यांनी धरला. तथाकथित राजनीतीमध्येही गुप्तता काहि प्रमाणात अपरिहार्य असते हे खरे; प्रत्येक राष्ट्राने आपली विदेश नीती लोकांनुवर्ती ठेवणे म्हणजे आंतरराष्ट्रीय शांततेची खरी हमी आहे. आणि ती तशी लोकानुवर्ती ठेवण्यासाठी राजनीतीवरील गुप्ततेचे आवरण दूर करणे आवश्यक आहे असा राष्ट्राध्यक्ष विल्सन यांचा युक्तिवाद होता व तो आधुनिक काळात बहुतांशी मान्यता पावला असल्याचे दिसते. राजनीतीच्या पारंपारिक स्वरुपात आमुलाग्र बदल घडवून आणणाऱ्या तीन प्रमुख प्रेरणा निर्देशिता येतील:

१) लोकसत्ताक शासन संस्था
२) आधुनिक तंत्रविज्ञान
३) आर्थिक परस्परावलंबन

लोकसत्ताक शासन पद्धतीमध्ये शासनाचे सर्व व्यवहार आणि निर्णय जाणून घेण्याचा व त्या निर्णयावर प्रत्यक्षाप्रत्यक्ष प्रभाव टाकण्याचा अधिकार लोकांना असतो. लोकमताच्या या निकषातून राजनैतिक व्यवहारही मुक्त नसतात. प्रकट आणि लोकानुवर्ती राजनीती हा उदारमतवादी लोकशाही विचारप्रणालीचा आंततराष्ट्रीय विस्तार होय. काहि अभ्यासकांच्या मते राजनीतीच्या लोकशाहीकरणाने

राजनीतीची परिणामकारकता कमी झाली आहे. कारण आपले निर्णय आणि कृती यांची विधीमंडळात आणि विधिमंडळाबाहेर प्रकट चिकित्सा होण्याच्या भीतीमुळे राजनैतिक प्रतीनिधीनींचा कल चाकोरीबद्ध काम करण्याकडे होतो;पण याहीपेक्षा महत्वाची गोष्ट अशी, की एखाद्या प्रश्नावर घेतलेली भूमिका प्रकट झाल्याने तिला चिकटून राहणे, हा त्या राष्ट्राच्या प्रतिष्ठेचा प्रश्न बनतो.त्या भूमिकेभोवती राष्ट्रीय लोकमत केंद्रित झाल्यास वाजवी तडजोडही अशक्य होते. अर्थात दुसऱ्या बाजूने असेही म्हणता येईल, की लोकविवेकावरील श्रद्धा जोपासण्यासाठी द्यावी लागणारी ही किंमत होय.

आधुनिक काळात प्रगत तंत्रविज्ञानामुळे दळणवळण कमालीचे गतिमान झाले आहे. मंदगती दळणवळणाच्या काळात परराष्ट्रमंत्रालयास सक्रीय राष्ट्रातील घडामोडीबाबत वृत्तांत मिळण्याचे 'राजदूत' हेच एकमेव साधन होते. त्याचप्रमाणे जलदगतीने घडणाऱ्या एखाद्या घटनेबाबत जसे, राजदूताची नेमणूक झालेल्या देशात अंतर्गत क्रांती होऊन नवीन शासन प्रस्थापित होते, त्याप्रमाणे कोणता अधिकृत प्रतिसाद द्यायला पाहिजे याच्या सूचना विनाविलंब राजदूतास पोहोचविणे परराष्ट्रमंत्रालयास अशक्य होते. साहजीकच अशा परिस्थितीत महत्वाचे निर्णय घेण्याचे स्वातंत्र्य राजदूतास मिळू शकत असे. राजदूताच्या अशा स्वायत्ततेस आणि उपक्रमशीलतेस आधुनिक काळात फारसा वाव राहिलेला नाही.

दळणवळणाप्रमाणे वाहतुकीच्या साधनांमध्येही गतिमानता आणि सुरक्षितता आल्याने आंतरराष्ट्रीय वाटाघाटीसाठी शासनप्रमुखांनी समक्ष भेटण्याची प्रथा शिखरपरिषदांच्या रुपाने मोठ्या प्रमाणात रूढ झाली आहे. अर्थात अशा शिखर परिषदा भरण्याच्या अगोदर कित्येक महिने त्यांची जी पूर्वतयारी जसे, एखादया वादग्रस्त प्रश्नावरील उभयमान्य तडजोडीची संभाव्यता अजमावणे,तडजोडीची विविध पर्यायी रूपे निश्चित करणे ई. उभायपक्षांमध्ये चालू असते. तिचे श्रेय राजनैतिक प्रतिनिधींना द्यायला हवे.

राजनीतीपुढील आव्हाने :

विकसित देश मंदीच्या चक्रातून सुटण्यासाठी नवीन बाजारपेठांच्या शोधात होते. त्याचवेळी तिसऱ्या जगातील देशांची भांडवली विकासाची मॉडेल्स संकटात सापडली होती. हे देश पाश्चिमात्य सावकारांच्या कर्जाच्या विळख्यात पूर्णपणे अडकले होते. त्यामुळे विकसित देशांना तिसऱ्या जगातील देशांचा हात पिरगाळणे सोपे होते. त्यांना त्या देशांनी त्यांच्या अर्थव्यवस्था पाश्चिमात्य भांडवलासाठी खुल्या करण्यास भाग पाडणे शक्य होते. याच सुमारास सोविएत युनियनच्या साम्राज्यवादी गटाचा अस्त झाला होता. चीनमध्ये सुद्धा भांद्वलशाहीची पुनर्स्थापना भांडवलदारांना जगाच्या कानाकोपऱ्यात भांडवल गुंतवणूक करायला कसलीच भीती अथवा स्पर्धा उरली नाही. परिणामी विसाव्या शतकाच्या शेवटच्या दशकात साम्राज्यवादी देशाकडून तिसऱ्या जगाकडे भांडवलाचा प्रचंड ओघ चालू झाला.

आर्थिक विकास आणि समृद्धी साध्य करण्यासाठी आधुनिक काळात राष्ट्रांना परस्परावलंबनाखेरीज दुसरा पर्याय उरलेला नाही. अर्थात एखादे राष्ट्र ज्याप्रमाणात परकीय माल, बाजारपेठा, भांडवल आणि तंत्रज्ञान यासाठी इतर राष्ट्रांवर अवलंबून असते. त्याप्रमाणात ते परकीय दबावाचे लक्ष्य होण्याची संभाव्यता

वाढते. या राष्ट्रास वरील गोष्टी नाकारण्याची धमकी देवून अगर त्या राष्ट्राशी असलेल्या आयात-निर्यात व्यापारात चलन दर, जकाती यांच्याव्दारा हेतुपुरस्सर बदल करून त्यांच्या परराष्ट्र धोरणावर दवाब आणता येतो. हा बदल राजकीय उद्दिष्टासाठी असू शकतो किंवा आर्थिक उद्दिष्टासाठीही असू शकतो. विद्दमान राजनीतीची साधने आणि उद्दिष्टे काहि प्रमाणात पूर्वीप्रमाणे आजही राजकीय स्वरुपाची असली, तरी त्यांच्या बरोबरीने आणि कदाचित त्यांच्यापेक्षाही जास्त महत्व आर्थिक साधनांना व उद्दिष्टांना प्राप्त झाले आहे. विद्दमान राजनीतीचा आशय फार मोठ्या प्रमाणात आर्थिक स्वरूपाचा झाला आहे. या आर्थिक राजनीतीच्या क्लिष्ट जबाबदाऱ्या पार पाडण्यास विशेषज्ञांचा मोठा ताफा राजनीतीच्या क्षेत्रात ठळकपणे वावरू लागला आहे. आंतरराष्ट्रीय नाणे व्यवहार, आंतरराष्ट्रीय कर्ज व्यवहार, औद्योगिक भांडवलाची आंतरराष्ट्रीय गुंतवणूक,आयात-निर्यात व्यापार आणि औद्योगिक तंत्रज्ञानाचे आंतरराष्ट्रीय हस्तांतरण, ही विद्दमान राजनीतीची आव्हानाची क्षेत्रे आहेत.

आर्थिक राजनीती :

आर्थिक राजनीतीचे अभूतपूर्व स्थान मान्य करतांना एक गोष्ट लक्षात घ्यावयास हवी, की आर्थिक उद्दिष्टे राजकीय उद्दिष्टांपासून काटेकोररपणे अलग करता येतीलच असे नाही. उदा. दुसऱ्या महायुद्धानंतर अमेरिकेने मार्शल योजनेखाली जी प्रचंड आर्थिक मदत पश्चिम युरोपातील राष्ट्रांना केली, तिचे उद्दिष्ट अमेरिकन निर्यात व्यापार वृद्धी व मुक्त व्यापार तत्वावर आधारित युरोपचे आर्थिक संघटन हे जसे होते; त्याचप्रमाणे साम्यावादाविरोधी एक प्रबळ सत्ताकेंद्र युरोपात उभे करणे असे राजकीय स्वरूपाचे होते.

आपल्या परराष्ट्रीय आर्थिक धोरणाच्या साफल्यासाठी सर्व विद्दमान राष्ट्रे व्दिराष्ट्रापातळीवर, तसेच बहुराष्ट्र पातळीवर आर्थिक राजनीतीत कार्यरत आहेत. आर्थिक राजनीतीच्या चार प्रमुख बहुराष्ट्र पातळ्या निर्देशिता येतील त्या अशा;

१) विकसित राष्ट्रगट आणि अविकसित राष्ट्रगट यामधील राजनीती.

२) मुक्त अर्थव्यवस्थेवर आधारित विकसित राष्ट्गटांतर्गत राजनीती.

३) मुक्त अर्थव्यवस्थेवर आधारित विकसित राष्ट्रगट आणि केंद्रीय नियोजनावर आधारित विकसित राष्ट्रगट यामधील राजनीती.

४) अविकसित राष्ट्रांतर्गत राजनीती.

उदारीकरणाच्या उदात्त हेतूने जे आर्थिक जागतिकीकरण झाले आहे, या जागतिकीकरणात राष्ट्रांना स्वावलंबी राहता येणार नाही तर त्यांच्या सार्वभौमत्वाला कात्री लागणार. आयात-निर्यात व्यापारावर राष्ट्राची सरकारे आता बंधने घालू शकणार नाहीत. सर्व आंतरराष्ट्रीय व्यापार आता मुक्त बाजार पद्धतीने मागणी पुरवठा या तत्वावर चालतील भांडवल, वस्तूंचे उत्पादन, तंत्रज्ञान, सेवा सुविधा यामध्ये देशी-परदेशी असा भेदभाव केला जाणार नाही भांडवल कोणत्याही देशातून कोणत्याही देशात येईल-जाईल. कुठेही तयार झालेल्या वस्तू कुठेही विकल्या जातील. पण 'स्वदेशी' ही संकल्पनाच कालबाह्य ठरेल.

निष्कर्ष:

जागतिकीकरणामुळे आंतरराष्ट्रीय घडामोडींना वेग आलेला असून देशा-देशातील व्यापारी स्पर्धा तीव्र झालेल्या आहेत. या स्पर्धेत टिकून राहायचे असेल तर त्या प्रकारची राजकीय पार्श्वभूमी निर्माण करणे आवश्यक आहे. केवळ आंतरराष्ट्रीय संबंध मजबूत असणे जितके गरजेचे आहे तीतकेच गरजेचे व महत्वाचे आंतरराष्ट्रीय संबंधाचे व्यवस्थापन देखील झालेले आहे. या पार्श्वभूमीवर राजकारणाची क्षितिजे अधिक रुंद झालेली असून तीला आंतरराष्ट्रीय स्वरूप प्राप्त झाले आहे. आपल्या देशातील भांडवल, वस्तू व सेवा राष्ट्राच्या भिंती ओलांडून जगभर पसरल्या आहेत. पण तंत्रज्ञान मात्र विकसित देशांनी आपल्या ताब्यात ठेवले आहे. या सर्वांमध्ये मानवी कल्याण महत्वाचे वाटत नसून पैसा मिळविणे महत्वाचे वाटते. हा एक प्रकारचा नवा साम्राज्यवादच आहे.

देशाची आर्थिक प्रगती म्हणजे नेमके काय करायचे, कोणत्या गोष्टींना अग्रक्रम द्यावयाचा त्याचा आराखडा आता जागतिक बँकेतील अर्थतज्ञ ठरवितात. त्यांच्या सूचनेनुसार सरकार वागले नाही तर जागतिक बँक आर्थिक मदत, कर्जपुरवठा स्थगित किंवा बंद करण्याची धमकी देते. यकरीताच विद्दमान राजनितीपुढे जी-जी आव्हानाची क्षेत्रे उभी ठाकली आहेत त्याला सशक्तपणे सामोरे जाणे आणि त्याचप्रमाणे राजकारणाची समीकरणे मांडणे आवश्यक झाले आहे.

संदर्भ :

१) Raman N.V. Indian Diplomatic Service

Gurukul International Multidisciplinary Research Journal (GIMRJ)
with
International Impact Factor 2.254

ISSN No. 2394-8426
Dec – 2015
Issue – I, Volume – V
Online Journal

उपेक्षा के शिकार बुजुर्ग

(डॉ0 मकरन्द जायसवाल)
एसिस्टेण्ट प्रोफेसर समाजशास्त्र
के0बी0पी0जी0 कालेज, मीरजापुर

बुजुर्ग देश के वरिष्ठ नागरिक है वे समाज के भी उतने बड़े हिस्से हैं जिसने के अन्य, सभी राजनीतिक पार्टियाँ अपने–अपने मैनिफेस्टो में तरह–तरह के वायदे करती है, सबसे ज्यादा जोर युवाओं को लुभाने पर ही रहता है, हाल में ही वृद्धों की समस्याओं की ओर राजनीति दलों का ध्यान दिलाने के लिए विभिन्न विभिन्न संस्थाओं ने कहा कि सभी राजनीतिक दलों को वृद्धों की समस्याओं पर भी ध्यान देना चाहिए क्योंकि देश के बुजुर्ग भी भारी संख्या में वोट देते हैं, आज देश में बुजुर्गों की संख्या 10 करोड़ से अधिक है, संख्या के अनुसार बुजुर्गों की सबसे बड़ी आवश्यकता उनकी सुरक्षा की है। आज मीडिया भी उनकी ओर कोई ध्यान नहीं देता है, हमारे देश के बुजुर्गों पर क्या बीत रही है, हम लाख मानवाधिकार की बाते कर ले, हम लाख कसमें खायें, लेकिन हम सब जानते हैं कि इन बातों से बुजुर्गों की समस्याएँ हल होने वाली नही है।

अपने बच्चे जिनके लिए माता–पिता ने अपनी समस्त उर्जा, शक्ति, धन, तथा उम्र सब कुछ लगा दी है वे ही बूढ़े माता पिता को घर से निकाल रहे हैं आज कुछ समय पहले भारत में लोगों की जीवन अवधि बहुत कम थी। 1951 की जनगणना के समय भारत मे 60 वर्ष से अधिक के लोगों की संख्या 10 प्रतिशत से भी कम थी, इसके बाद जैसे–जैसे यहाँ स्वास्थ्य सुविधाएँ बढ़ने लगी, देश में लोगों का जीवन अवधि बढ़ जाने के कारण वृद्धजनों की संख्या मे भी वृद्धि होने लगी, एक सर्वेक्षण के अनुसार आज स्नातक स्तर के शिक्षित लोगों की औसत जीवन अवधि 69 वर्ष है, शिक्षक के रूप में कार्य कर चुके लोगों की औसत जीवन अवधि 71 वर्ष है, जबकि ग्रामीण क्षेत्रों में अपनी भूमि पर खेती करने वाले किसान औसतन रूप से 65 वर्ष तक जीवित रहते है, सबसे अधिक औसत आयु व्यावसायिक समूहों जैसे डॉक्टरों, वकीलों वित्तीय सलाहकारों तथा बुद्धिजीवी वर्ग के दूसरे व्यावसायिक समूहों में पायी जाती है। सरकारी आँकड़ों से यह भी स्पष्ट होता है कि सन् 2011 की जनगणना में लगभग 10 करोड़ व्यक्ति ऐसे पाये जाते गये जिनकी आयु 60 से 80 वर्ष के बीच में थी, विश्व के विकसित एवं विकासशील देशों में वृद्धों को बहुत सी सामाजिक सुरक्षाएँ प्राप्त हैं फिर भी वे काम करना और सक्रिय रहना चाहते है। आजकल हमारे यहाँ बुजुर्गों को बोझ समझा जाता है उनसे व्यवहार भी वैसा ही होता है। हाल ही में आई हैल्पेज फाउण्डेशन की रिपोर्ट बताती है कि हमारे बुजुर्गों को बाहर वाले नहीं घर वाले ही अधिक सताते हैं। 24 फीसदी बूढ़े अपने बेटों से ही पिटे जाते हैं, उनके घर और संसाधनों पर बच्चे काबिज हो जाते हैं, कई बार उन्हें घर से

बाहर निकाल दिया जाता है। इस अवस्था में उन्हें खुद पेट भरने के लिए काम करना पड़ता है, मामूली सी बीमारी उन्हें ले बैठती है, बूढ़े आदमी तो जैसे–तैसे सड़क पर रात काट भी लेते हैं मगर बूढ़ी औरतें की स्थिति और अधिक खराब है, वे अकेली कहाँ जाएं, बड़े शहरों में तो आश्रय स्थल भी मिल सकते हैं। मगर छोटे शहरों और गाँवों में तो वे भी नहीं है, रिपोर्ट में इसका बड़ा कारण संयुक्त परिवार के बिखराव को बताया गया है।

फाउन्डेशन के बूढ़ों को तीन आयु वर्ग में बाँटा गया है। प्रथम वर्ग में 60–70 वर्ष के लोग आते हैं, मध्यम आयु वर्ग में 70–80 और सबसे बूढ़े की श्रेणी में 80 से अधिक उम्र के लोगों को शामिल किया गया है, लगभग देश के 51 प्रतिशत बुजुर्ग गरीबी रेखा के नीचे रहते हैं, इनमें भी सबसे अधिक खराब हाल 80 से अधिक आयु वाले लोगों की है, यदि पुराने व्यवस्था पर नजर डाले तो हम पायेंगे कि प्राचीन काल में भी बुढ़ापा आते ही सारे अधिकार छीनकर राजा तक को वानप्रस्थ में भेज दिया जाता था। शायद इन्हीं बातों से सीख लेकर हमारे पुरखों ने घर के सर्वाधिक अशक्त यानी बुजुर्ग को घर की सत्ता की चाभी सौंपी थी, संयुक्त परिवार में हर एक को उनकी बात माननी पड़ती थी, असीमित शक्तियाँ होने के कारण बूढ़े किसी की सुनते भी नहीं थे, समय बदला, परिवार टूटे और बुजुर्गों की ताकत घटती चली गयी। कल तक जो हाल बूढ़ों का था वह आज युवाओ का है जो किसी की नहीं सुनते है। नौकरी की मारामारी में उनके पास समय नहीं है, ऐसे में बुजुर्ग का मतलब अतिरिक्त जिम्मेदारी, अतिरिक्त बोझ, तो उसे कोई क्यों उठाये।

अध्ययन का उद्देश्य–

मेरे अध्ययन का उद्देश्य देश में बुजुर्ग लोगों की प्रमुख कठिनाइयों को ज्ञात करना है तथा उनकी समस्याओं के मूल कारणों की खोज करके उसके सम्भावित निराकरण की दिशा में किये गये प्रयासों की विवेचना करना है। इन क्रम में मैंने मीरजापुर में लगभग 100 बुजुर्गों का चयन करके जिसमें आयु वर्ग के बुजुर्गों को सम्मिलित किया गया है। प्रथम श्रेणी में बुजुर्गों की आयु लगभग 60–70 वर्ष है, मध्यम वर्ग में उन वृद्ध व्यक्तियों को शामिल किया गया है जिनकी आयु 70–80 वर्ष के बीच है तथा अन्त में 80 के उपर के लोगों को सम्मिलित करके आंकड़ों का संकलन किया गया है, जिन्हें प्रतिशत के रूप में व्यक्त किया गया है।

वृद्धों की समस्याएँ–

सम्पूर्ण विश्व में सभी वृद्धों की समस्याएँ एक जैसी नहीं है। इसका प्रमुख कारण भिन्न पृष्ठभूमि का होना है, हैल्पेज ने जिन बुजुर्गों से प्रश्न पूछे उनमें से 71 प्रतिशत बेटों के पास और 9.8 प्रतिशत बेटियों के साथ रहते है, जवाब देने वालों में से 80 प्रतिशत ने माना कि उनके साथ बुरा व्यवहार, गाली–गलौज किया जाता है, 24 प्रतिशत बुजुर्गों के बेटो से मार खानी पड़ती है, कुछ ने बताया है कि बेटियाँ और नाती–पोते भी हिंसा करते है, महानगरों में अक्सर पुलिस बुजुर्गो के लिए सुरक्षा–सलाह जारी करती है, यह सलाह अक्सर बाहरी हमलों से बचने के लिए होती है मगर जब अपने ही सताएँ तो ये बूढ़ क्या करें, और कहाँ जाए कोई इनकी सुनता भी नहीं है भाग–दौड़ करने की ताकत नही होती, पैसों की तंगी रहती है, ऊपर

से तरह–तरह की बीमारियाँ की परेशानियाँ रहती ही है, बुजुर्ग हिंसा के साथ–साथ अकेलेपन और अवसाद की समस्या से भी पीड़ित है।

दिल्ली के पार्को में अक्सर बूढ़े लोग बड़ी संख्या में ताश खेलते दिखायी देते है, उनके पास समय काटने का कोई साधन नहीं होता, शहरों में ही अगर इनकी संख्या को देखा जाए, इन्होनें जिंदगी भी जो काम किया है उसके आंकड़े निकाले जाए, तो पता चलेगा कि कोई बड़ा पुलिस अधिकारी है कोई डाक्टर और कोई अध्यापक, सी0ए0 या अन्य कोई प्रोफेशनल, क्यों नहीं सरकार इनके अनुभव और कुशलता का लाभ उठाती, नौकरी से बड़ा प्रश्न इनकी व्यस्तता और अकेलेपन को दूर करने का है, बुजुर्गो को सामाजिक सुरक्षा देने के लिए सरकार को योजनाए बनानी चाहिए, इन्हें विभिन्न संगठनों , शिक्षा–प्रशिक्षण संस्थानों आदि से जोड़ा जा सकता है जहाँ शारिरिक श्रम के मुकाबले बुद्धि से काम की अधिक आवश्यकता हो।

एक आकलन के अनुसार देश में दस करोड़ बुजुर्ग है वर्ष 2050 तक इनकी आबादी बहुत अधिक बढ़ने वाली है, इतनी बड़ी आबादी के लिए सरकार को कुछ न कुछ करना होगा इन समस्त कठिनाईयों को देखते हुए मीरजापुर मे बुजुर्गो की समस्याओं के बारे में विभिन्न बुजुर्ग उत्तरदाताओं ने अपने जबाव निम्न रूप से दिये जिन्हे हम प्रतिशत के रूप में अभिव्यक्त कर रहे है।

क्रमांक	बुजुर्गो की प्रमुख समस्याएँ	प्रतिशत में
1	अकेलेपन की समस्याँ	80
2	स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्या	95
3	अधिक कठिनाइयाँ	57
4	अपनों द्वारा अत्याचार	45
5	सामाजिक असुरक्षा	40
6	अवसाद सम्बन्धी कठिनाइयाँ	60
7	कार्य के अभाव की समस्या	82
8	मनोवैज्ञानिक भय से चुनौती	60

उपरोक्त अध्ययन में यह पाया गया कि आज नगर में 80 प्रतिशत वृद्ध अकेलेपन की समस्या से जूझ रहे हैं, जिसका कारण उनके जीवन साथ की मृत्यु का होना है या दो अलावा स्थानों पर रहने के कारण हो जैसे पिता बड़े पुत्र के साथ, माता छोटे पुत्र के साथ रहती है, इस संदर्भ में भारत में 15 लाख बुजुर्ग अकेले रहते हैं, भारत के विभिन्न राज्यों में इसका प्रतिशत निम्न प्रकार से है–

राज्य	अकेले रहने वाले वृद्ध	2 व्यक्ति के साथ रहने वाले	घर में 60 वर्ष से नीचे कोई नहीं
तमिलनाडू	9.2	15.1	24.3
आन्ध्र प्रदेश	8.7	15.7	24.7

छत्तीसगढ़	8.5	15.2	23.7
मध्य प्रदेश	6.3	14.3	20.6
उड़ीसा	5.2	12.0	17.3
जम्मू एवं काश्मीर	1.6	4.0	5.6
हरियाणा	2.1	6.4	8.5
पंजाब	2.2	6.3	8.5
दिल्ली	2.5	6.7	9.2
असम	3.0	3.4	6.4

स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्या वृद्धों की प्रमुख समस्या है, भारत में ही नहीं पूरे विश्व में बुजुर्ग इस सामान्य से पीड़ित है। जिसमें अपच सम्बन्धी कठिनाई घुटनों से सम्बन्धी समस्या, कम सुनायी देना आदि प्रमुख रूप से सम्मिलित है। नगर में 95 प्रतिशत वृद्ध इन्हीं समस्याओं से प्रभावित है।

बुजुर्गों के पास आर्थिक कठिनाई बहुत अधिक है भारत में लगभग 51 प्रतिशत बुजुर्ग इस क्षेत्र में कठिनाई झेल रहे हैं। नगर में 57 प्रतिशत बुजुर्ग के पास धन अर्जित करने का कोई मार्ग नहीं है, वे अपने बच्चों पर ही आश्रित है, जिससे फलस्वरूप उन्हें समय–समय में तिरस्कार का सामना करना पड़ता है। आज बुजुर्गों के साथ अपने पुत्र–पुत्री, नाती, पोते भी अत्याचार कर रहे हैं। इस संदर्भ में 45 प्रतिशत बुजुर्गों का मानना है कि ऐसा आधुनिक संस्कृति एवं संयुक्त परिवार के विघटन के फलस्वरूप हुआ है। सामाजिक असुरक्षा के संदर्भ में 40 प्रतिशत बुजुर्ग यह मानते हैं कि आज में अपराधियों, ठगों एवं जाल साजों द्वारा तेजी से शिकार हो जा रहे हैं।

60 प्रतिशत बुजुर्ग अवसाद सम्बन्धी कठिनाइयों से प्रभावित है, उन्हें उपेक्षा के फलस्वरूप मांनसिक अवसाद की कठिनाईयों को झेलना पड़ रहा है। उनसे कोई हाल–चाल तो दूर बात करने वाला भी कोई नहीं है। आज वृद्ध कार्य के अभाव की समस्या से प्रभावित है उन्हें कार्य की सख्त आवश्यकता से पर न तो परिवार और न ही बाहर उन्हें कोई जिम्मेवारी का काम देता है, जिससे वे व्यस्त रह सकें तथा आर्थिक कठिनाईयों का सामना कर सकें।

अन्त में 60 प्रतिशत वृद्धों में मनोवैज्ञानिक भय की प्रधानता देखी जा रही है जिसमें वे सोचते हैं यदि वे अशक्त या गम्भीर रूप से बीमार हो गए तो उनकी देखभाल करने वाला कोई नहीं होगा तथा आर्थिक असुरक्षा का डर भी उन्हें सदा सताता रहता है।

इस प्रकार एक ओर मनुष्य की औसत आयु बढ़ रही है, एक अनुमान के अनुसार 2020 तक बुजुर्गों की संख्या 15 करोड के आस–पास हो जाएगी। अकेले दिल्ली शहर में 10 लाख के करीब वृद्ध रहते हैं। दिल्ली सरकार ने बुजुर्गों की इसी संख्या को देखते हुए कहा कि वह वृद्धों के लिए रिक्रिएशन सेन्टर्स खोलेगी मगर फिलहाल यह योजना खटाई में पड़ी दिखती है।

यदि हम पूरे भारत वर्ष पर गौर करें तो यहां बुजुर्गों की समस्या कई प्रकार से दिखाई देती है, गरीब बस्तियां जहां बहुत छोटे घर है, लोग अधिक है और बुजुर्गों के लिए घर के

अन्दर या बाहर कहीं कोई जगह नहीं है, दूसरी ओर वे अमीर बस्तियां जहां बहुत बड़े–बड़े घर है, बच्चे कम है और बच्चों को लगता है कि जल्दी माता–पिता रास्ते से हटे तो वे रातों रात करोड़पति–अरबपति बनें इन्हीं बस्तियों में बहुत से घर ऐसे हैं जहां सभी बच्चे विदेश में जा बसे हैं, बड़े घरों में सिर्फ माता–पिता अकेले ही रहते हैं और हत्यारों का शिकार हो जाते हैं। इस संदर्भ में एक टी0वी0 न्यूज चैनल के पत्रकार ने कहा कि शाम के वक्त पॉश कालोनी में सिर्फ थके हारे बुजुर्ग अपने कुत्तों के साथ घूमते नजर आते हैं, सिर्फ स्थित और थकी आंखों से अपने बच्चों के लौटने का इन्तजार करते हैं, जो कभी वापस नहीं आते हैं। उनका अकेलापन और अशक्तता हत्यारों को उन तक पहुंचने का सहज मार्ग उपलब्ध करती है, इसलिए पुलिस को विशेष निर्देश दिए गये हैं कि वे अपने–अपने इलाके में ऐसे अकेले बुजुर्गों का शिनाख्त करें और उनका विशेष ध्यान रखें। अब अकेले वृद्ध सुरक्षा कारणों से इन दिनों अपना घर छोड़कर ओल्ड एज होम्स की शरण भी लेने लगे हैं। एक तरफ वे बुजुर्ग है तो अपने बच्चों के विदेश चले जाने से अकेले हैं तो दूसरी तरफ वे बुजुर्ग है जो अपने बच्चों के रहते अकेले रहते हैं, असहाय, लाचार और बीमार है, जिन वृद्धों के पास कुछ पैसे है वे तो वृद्धाश्रमों में जा सकते हैं, जिनके पास कुछ नहीं है या जिन्होंने अपनी जमा पूंजी बच्चों पर लगा दी है वे कहां जाए। फिर वृद्धाश्रमों की दुर्दशा को देखते हुए वहां उन्हें उचित देखभाल मिलेगी, कौन कह सकता है, बुजुर्गों ने अपना सब कुछ बच्चों पर लगा दिया और बच्चों ने उन्हें घर से निकाल दिया है।

समस्या का निराकरण–

एजवैल ने सर्वेक्षण में पाया था कि 13 प्रतिशत बूढ़े अपने घर में बच्चों के सामने बंधकों की तरह रहते हैं, 12 प्रतिशत बूढ़ों को लगता है कि उनकी जरूरत किसी को नहीं है, वे तो जैसे–तैसे जिंदगी काट रहे हैं, एक अनुमान के अनुसार भारत में 2000 ओल्ड एज होम्स है, जिनमें अेके देश की राजधानी में 50 है और हालात दिखाई दे रहे हैं उनमें उनकी संख्या बहुत अधिक होने की सम्भावना है, बहुत से बुजुर्ब खुद ही इन होम्स में जाने का विकल्प चुन रहे हैं, उनका कहना है कि बच्चों के हाथों हमेशा अपमानित होते रहने से बेहतर है कि उनके साथ न रहा जाए शायद इन्हीं सब स्थितियों पर गौर करते हुए सोशल जस्टिस एण्ड एम्पावरमेन्ट मिनिस्ट्री ने बूढ़ों के कल्याण के लिए विशेष प्रत्यनशील है, सरकार ने पेंशन, वृद्धा आश्रम, आयकर एवं रेलभाड़े में विभिन्न छूट का प्रावधान किया है परन्तु ये सब ऊँट के मुंह में जीरे के समान है।

यह सच है कि आर्थिक विकास और आधुनिकीकरण के साथ वृद्धजनों की समस्याओं में काफी वृद्धि हुई है लेकिन सरकार के प्रयत्नों से वृद्धों की समस्याओं के प्रति सामाजिक जागरूकता भी बढ़ती जा रही है। लेकिन एक के बाद एक योजना बनने से समस्याएं नहीं सुलझ सकती है। जब तक उनका क्रियान्वयन न हो, आठ–दस करोड अनुभवी हाथ और दिमाग खाली क्यों है? वे लाचार और बेबस क्यों है? उन्हें क्यों ऐसे काम नहीं दिए जा सकते जहां उनका अकेलापन कम हो, उनका समय कटे, उनकी कुछ आय भी हो और वे अपने को

खत्म हुई चीज न समझे। लेकिन हमेशा से सभी समाजों में जोर युवा वर्ग पर ही रहा है उसे ही समाज की धुरी माना जाता है तभी तो पुराने जमाने में भी पचास पार करते ही वानप्रस्थी होने की बात कही जाती थी।

बुजुर्ग देश के वरिष्ठ नागरिक है वे समाज के भी उतने ही बड़े हिस्से है, उनकी देखभाल की जिम्मेदारी सिर्फ सरकार और सरकारी संस्थाओं के हवाले का बाकी पूरा समाज सो जाए, वह समाज जो दिखावे में करोड़ों खर्च करता है, सड़क पर पड़े एक बीमार बूढ़े को देख आंख फेर लेता है या बीमार माता पिता की कराहें सुनने के लिए कान बहरे हो जाते हैं ऐसा क्यों? इसका जवाब तो हमें देना ही होगा।

निष्कर्ष–

वास्तव में बुजुर्गों की समस्या अत्यन्त गम्भीर है किन्तु परिवार तथा सरकार इन समस्याओं के प्रति उदासीन है, इतनी बड़ी आबादी के लिए सरकार को कुछ न कुछ करना होगा पर्याप्त पेंशन की व्यवस्था करनी चाहिए जो फिलहाल बहुत मामूली है, भारत में बीमारी की स्थिति में बूढ़े अपने परिजनों पर ही निर्भर होते हैं चिकित्सा के लिए इन्हें किसी भी प्रकार की विशेष सुविधा प्राप्त नहीं है, यह खर्च भी इतना अधिक है कि गरीब बुजुर्ग अपना इलाज नहीं करा सकते हैं वैसे भी सभी बूढ़ों के लिए तो सब जल्दी से जल्दी स्वर्गवासी होने की कामना करते हैं तो उनके इलाज पर कोई क्यों खर्च करें सरकारी नीतियों से जब तक बुजुर्ग गायब रहेगें तब तक उनकी कौन सुनेगा। वास्तव में बुजुर्गों की समस्याओं का समाधान तभी सम्भव है, जब उन्हें मनोवैज्ञानिक संरक्षण किया जाए।

संदर्भ सूची

1. Freund A.M. and Smith J. “Self definition in old age, zeitschrift for social phychologic Vol nos. 1-2, 1977
2. Govt. of India situation Analysis of elderly in India, Central statistics office, Ministry of Statistics & Programme Implementation 2011
3. Glascock A.P. and Feinman S.L. “A Holocultural Analysis of Old Age” Comprative Social Research Vol-3, 1980
4. Gorman M. Development and Rights of Older people” in round et al.

Gurukul International Multidisciplinary Research Journal (GIMRJ)
with
International Impact Factor 2.254

ISSN No. 2394-8426
Dec – 2015
Issue – I, Volume – V
Online Journal

Dimensions Of Challenges & Opportunities In Job Oriented Commerce Education

Prof. Jugalkishor M. Somani
Vice- Principal, Commerce Faculty
Janata Mahavidyalaya, Chandrapur

With the advent of application of machinery and steam power to production, revolutionary changes took place in the industries and commerce of the world. The production is now on huge scale, which in turn necessitates large scale customer relating . The marketing approach requires not only catering to customer demand but also generate new demand or create new wants. The ultimate aim of any business establishment is to make profit and maximize its wealth. The investments in the business concerns should produce adequate returns. Profits cannot be earned unless sales are effected. The large scale selling is not possible unless the customers or consumers are convinced for the quality and utility of the products and services. For this customers must be served well in requisite style and manner with minute details and much dedication. Jhon Wesley says: "Do all the good you can, by all the means you can. ' in all the ways you can". By all the means you can, in all the ways you can." And as long as ever you can. This is the reason why the businessmen use the slogan. Customer Satisfaction is our motto". The keen and cut throat competition that prevails Q) in the markets of modern era necessitates the business community to operate efficiently and effectively in tune with the requirements of the customers. The ongoing scenario in the commercial markets modern age of malls, Multiplexes, Mobile Phones, Computers and Electronics, information technology have largely changed the attitude behavior thinking, wants and requirements of the people at large. The age old philosophy of more and spending less' is fast changing to spending more and saving less. The elder's advice: "First Deserve and then Desire." Has globally changed drastically to: "First Desire and then Deserve". Availability of products and services on installment schemes attracted huge crowd of customers. The financial institutions like banks are making available loans at door steps of the customers. All this resulted in more and more demand more and more sales and more and more profits of industrial houses and business establishments.

In the modern age of globalization and liberalization, the whole world is becoming a global village? To survive and prosper in the present century the entrepreneurs must up their

services, infuse efficiency in service to customers, cater to the changing environment and tastes of the consumers who are the kings in the markets of today.

Napoleon Hill says: " It is well worth remembering that the customer is the most important factor in any business. If you don't think so, try getting along without him for a while". We have the power to invent or destroy, encourage or degrade, inspire and uplift, motivate, captivate or humiliate ourselves and those around us. The choice is entirely yours. Dear commerce students. The father of the nation Mahatma Gandhi rightly observed: "Consciously or unconsciously, every one of us thus render some service or other. If we cultivate the habit of service will steadily grow stronger and we will make not only our own happiness, but that of the world."

The observation of Gary Tooker is note worthy in connection with issues related to challenges and opportunities in the world of trade, industry and commerce. He says:

"When the alarm bell rings, you'd better wake up and realize that the customer expects more from you today than he did the day before. You'd better find ways to be better". How rightly Harvey Mackay said:" No company has a permanent consumer franchise.

No one has the only game in town. The never-ending cycle of destruction and change inherent in a capitalist economy always provides new opportunities for those with determination, goals and concentration."

The scientific tools and techniques in commercial concerns is a blend of innumerable ingredients. Konosuke Matsushita says: " After-sales service is more important than assistance before sales. It is through such services that one gets permanent customers. "We must remember that, as observed by W. Clement Stones: " There is Little Difference in people, but that Difference makes a Big Difference. The Little Difference is Attitude. The Big Difference is whether it is Positive or Negative".

The good quality, the better quality , the best quality and the best of the best quality of products and services are always much in demand. The remarks of Peter Drucker in this connection are indeed, note worthy. He says: "Quality in service or product is not what you put into it. It's what the client or customer gets out of it".

Customers, clients and concerned people must be heard and listened with great attention, care and affection. Their complaints and queries, suggestions and expressions, desires and requirement, conveniences and legitimate needs must be given utmost attention. Frank Tyger says: " Be a good Listener, Yours ears will never get you in trouble".

Foresight and vision, logical reasoning judicious ability, scientific approach with patience and tolerance are the jewels in job oriented commerce education. Intentional and communications, facial expressions and body language, the use of words, analysis and interpretations are all the requisites from the points of production to centers of consumption. How tightly Ichiro Inumaru observed: "One hundred minus one can't be ninety-nine in the hotel business. It may be zero. If one employee out of hundreds gives a bad impression to certain customer, it will be one hundred percent damage for our hotel image for that customer". In job oriented commerce education, as said by Goethe: " Knowing is not enough: " we must apply Willing is not enough: We must do".

The experience and feeling of today are that we live in an extra ordinary challenging era. At a rate unprecedented in human history, Political, Social and Business institutions and Commercial Concerns are undergoing radical changes. The opportunity to share and apply the invaluable experiences and countless ideas learned in the commerce education starts within the hands of learners. What right things business community do for their business in the larger interest of customers and others now will make their customers more contented, their associates and employees more successful resulting in higher profits and invaluable goodwill. Indeed, a great challenging task paving way for creativity and innovation making room for wonderful opportunities.

What entrepreneurs will says to those who care about them? What they will do for those whom they serve? How will they express their dedication? The simple answer is : " UP YOUR SERVICE, REFINE YOUR SERVICE. The same logic and philosophy is applicable to courses in the faculty of commerce in general and job oriented commerce education in particular.

The business of modern era of Malls and Multifarious Methods must be aware of the fact that as they put varied ideas in action, they will earn success and service reputation.

In this process they will discover new challenges, too.

The key words for job oriented commerce learners are " Keep going, Keep Learning, Keep Moving and Forward. The challenges of modern time are vast and deep providing innumerable opportunities for students studying job oriented commerce courses. The focus is fast changing from Teaching to Training. Needless to say that this wonderful world will respond also to commerce students for their genuine efforts with grace, gratitude and good fortune. The cherished aim of students in job oriented commerce coursesshould be meet the concerned people

worth pleasure to face, to share a moment or two of mutual delight and admiration enabling them to learn varied practical lessons.

0' Commerce Students: May you be inspired motivated and delighted daily to bring the charm and beauty in the hearts and minds of people with whom you are dealing in the challenging task of business and commercial activities. People may be funny breed. They come and go, run away, stick around, complain and compliment, and talk about you to others. If you want to understand how they truly think and feel, you need to get close And stay close long enough to uncover their ideas, opinions and desires.

This will enable the students to learn multifarious interesting paradoxes of life. People have many different interests, issues and concerns. Visit them at their site and invite them to visit you.

A strong vision is fundamental. It gives people a sense of purpose, value and meaning. Yes, Dear students, your service visions for business executives should be uniquely and powerfully yours. Peoples should hear it and say : "Yes! That is what you are". The staff should read it and say : "Yes! That is what we want to be". Indeed, this sounds good we want it. This certainly requires independent thinking and understanding ticklish tricks of trade.

The world is progressing from a controlled economy to a competitive economy. The driving forces of competition are demanding incredible creativity from the world of achievers. The economic challenges of the present century are going to be formidable.

We must use our precious resources carefully to maximize profits and shape our '1' industries and business concerns first regional and then global players.

When inability interferes with ability, it is disability all over. Challenges of the new millennium are greater than ever before and the environment the best of our talents. Today, we are comforted with a highly competitive environment it is challenging the strength of our wisdom and talent ad this in turn provides more opportunities. It is better t try and tail than fail to try. The greatest inspiration should be challenge to attempt impossible. Opportunities are everywhere, but only those who are (prepared can recognize and use them effectively. George Gritter says: " A Duty which, becomes a Desire will ultimately become a Delight". Competition leads to creatively.

There is no known way to teach someone how to be a genius. It takes the entire running you can do to keep yourself in the same place. If you want to go somewhere else, you must run at least twice as fast as that.

It may be remembered: " Ability, Responsibility and Flexibility is a Liability". It has been rightly said that; successful; people don't do different things, they do this differently: indeed, creative challenges and delightful opportunities is the order in the modern world of trade, industry and commerce.

Gurukul International Multidisciplinary Research Journal (GIMRJ)
with
International Impact Factor 2.254

ISSN No. 2394-8426
Dec – 2015
Issue – I, Volume – V
Online Journal

भारतीय लोकशाही : स्थित्यंतरे व आव्हाने

अमोल सातपुते
सहायक प्राध्यापक
राज्यशास्त्र विभाग
एस. एस. गर्ल्स कॉलेज, गोंदिया

प्रस्तावना :– विसाव्या शतकाला लोकशाहीचे युग म्हटल्या जाते. लोकषाही हा आजचा युगधर्म बनला आहे. न्याय, स्वातत्र्य, समता, परस्पर सहकार्य या मुल्यामुळे लोकषाही जीवनपध्दती मानली जाते. मानवाच्या कल्याणाचा हा विचार सुमारे 2500 वर्षापूर्वी ग्रीस मध्ये प्रथम उदयास आला. ग्रीस संस्कृतीने मानवी संस्कृतीला दिलेला हा मोलाचा वाटा आहे. लोकांच्या इच्छेवर आधारीत लोकांना जबाबदार 'शासनाचे मुख्यसुत्र आहे 'उच्च कोटीच्या राष्ट्रीय चारित्र्याचा विकास' हा लोकषाहीचा सर्वात मोठा गुण आहे. 'षासन उत्कृष्ट करायचे आणि उच्च कोटीच्या चारित्र्याचा विकास करुन आदर्ष राज्य निर्माण करायचे हे अत्यंत महत्वाचे तत्वज्ञान त्या मागे आहे. लोकशाहीमुळे नागरिकांना राज्यव्यवस्थेत सहभागी होऊन सर्वांगीन विकास साधता येते हे महत्वाचे वैषिष्ट्य लोकषाहीचे आहे.

लोकशाही ही गतिमान संकल्पना आहे. वेगवेगळया कालखंडात आधिकाधिक पोक्त होण्याच दिषेने लोकषाहीची वाटचाल सुरु आहे. फ्रेंच राज्यक्रांतीने लोकषाहीच्या सामाजिक व धार्मिक आषयावर भर दिला. युरोपामधील औघोगिक क्रांतीमुळे राजकीय हक्काची व समतेची मागणी पूढे आली. भारतीय लोकषाहीने जगाला स्वातंत्र्य, समता, बंधुतेचा संदेष दिला. भारतीय लोकषाहीने सामाजिक राजकीय, आर्थिक व नैतिक जीवनाची विविध क्षितीजे विकसित केली मात्र बदलत्या परिवर्तनात भारतीय लोकषाहीमध्ये अनेक स्थित्यंतरे घडली. एका पक्षाचे 'शासन नंतर आघाडीची सरकारे अष्या अत्यंत वेगाने घडणाऱ्या राजकीय घडामोडींचा परिणाम लोकषाहीतील राजकीय प्रणालीवर झाला. बहुपक्षपध्दतीमुळे राजकीय प्रक्रिया बदलली. लोकांमध्ये जागृती आली. मूलभूत अधिकाराचे महत्व वाढले. पंचायत राज्य पध्दती आली तर दूसरीकडे गटबाजीने राजकारण दिषाहीन झाले. राजकीय घरानेषाही प्रबळ झाली. भष्ट्रचाराला पायबंद राहिला नाही. आज भारतीय लोकषाही खरोखरच लोकषाही राहिली आहे काय? कि सत्ताधाऱ्यांची मक्तेदारी बनली आहे. हा संषोधनाचा विषय आहे, या सर्वाचा आज लोकषाहीतील राजकीय प्रकियेमधील स्थित्यंतरे बघितली तर लोकषाहीचया भवितव्याचा विचार करणे क्रमप्राप्त झाले आहे.

भारतीय लोकशाहीमध्ये घडून आलेली स्थित्यंतरे

स्वतंत्र भारतात जातीच्या राजकारणाचा उदय :–

भारतीयांच्या ब्रिटीषांविरूध्द दिडषे वर्षाच्या स्वातंत्र्यलढयानंतर 1947 मध्ये भारतास स्वातंत्र्य मिळले. स्वातंत्र्यानंतर भारतीयांनी लोकषाही व्यवस्थेचा स्विकार केला. अष्याप्रकारे परस्पर खंडीत, धर्मा–धर्मात व जाती–जातीत विखुरलेल्या समाजाचे लोकषाहीची कियाकलाप घडत राहीला वत्यातून पाष्चीमात्य उदारमतवादी लोकषाहीचे देषीकरण/भारतीयकरण झाले.

परस्पर कियाकलापापासून जातीव्यवस्था अस्पृष्य राहूच शकत नाही. लोकषाहीच्या स्पर्षाने इथल्या जातीव्यवस्थेत आमूलाग्र बदल झाला. स्वातंत्र्यपूर्व काळात निम्न जातींमधून नेतृत्व उदयास आले. त्यांनी जाती–निर्मूलन, सत्तेत भागीदारी, अष्पृष्यता निवारणासाठी संघर्ष उभा केला. त्यातून निम्न जातसमूहात राजकीय जागृती निर्माण झाली.

स्वातंत्र्यानंतर नेहरूंनी विकासवादी राजकारणाची कास धरली. समान षिक्षण, औद्योगिकरणाच्या माध्यमातून आधूनिकीकरण ही ती नेहरूंची विकासवादी निती होती. या काल कालखंडाल भारतीय राजकारणात जातीच्या मुद्याला मुख्यत्व प्राप्त झाले. त्यामुळे सत्तरीच्या दषकापर्यंत राजकारणात जातींच्या उदय झालेला नव्हता. त्या अगोदय डॉ. श्यामाप्रसाद मुखर्जी यांनी हिंदूत्वाचा अजेंडा घेऊन राजकारण करण्याचा प्रयत्न केला. राममनोहर लोहीयांनी मागासवर्गीय राजकारणाच्या माध्यमातून

कॉंग्रेसला विरोध केला. कालेलकर आयोगाने मागसलेपण आणि जात यांच्या परस्परसंबंधाची चर्चा केली परंतू खुद्द कालेलकरांनी राखीव जागांच्या धोरणांबद्दल व्यक्त केलेली शंका आणि नेहरूंचा या धोरणाबद्दलचा अनुत्साह यांच्यामधून त्या काळातल्या नेतृत्वाचा जातीच्या पशनाविषयी दष्टीकोण स्पष्ट झाला. कालेलेकर आयोगाचा अहवाल बासनात गुडाळल्या गेला तरी ही त्याबद्दल निषेधाचा सूर उमटला नाही.

सत्तरीच्या दषकानंतर असे काय घडलेली ज्यामूळे भारतीय राजकारणाला जातीच्या प्रवेषाने झाकाळून टाकले. वास्तविक पाहता सत्तरीच्या दषकातील भारतीय राजकारणातील जातीचा उदय हा अचानक झालेला नव्हता. स्वातंत्र्यपूर्व काळखंडातील मागासजातीचा नेतृत्वाने निर्माण केलेली राजकीय चेतना, भांडवली विकास, औद्योगिकरण, षिक्षण यामूळे धिम्यागतीने का होईना विभिन्न मागास व निम्न जातीमध्ये राजकीय जागृती व्हायला सुरवात झाली होती. हरितक्रांतीनंतर मध्यमजातीतील एका सघन शेतकरीवर्गाचा उदय इथे झालेला होता.

मागास जातींचे राजकारण :–

1967 च्या निवडणुकीत उत्तरेतील अनेक राज्यांमध्ये कॉंग्रेसला धक्का बसला. त्यात या राज्यांमधील मागास जातींच्या नाराजीचा वाटा नक्कीच होता. अनेक ठिकाणी समांतर कॉंग्रेस गट उदयाला आले. भारतीय क्रांती दल या चरणसिंगांच्या पक्षाने उचल खाल्ली. कॉंग्रेसचे फुटीर गट, समाजवादी, भारतीय क्रांती दल आणि काही ठिकाणी जनसंघ आणि स्वतंत्र पक्ष यांच्या संयुक्त आघाडया बनल्या. परंतु त्या अल्पजीवी ठरल्या. पण कॉंग्रेसव्यवस्थेला या घडामोडींनी धक्का बसला. येथून पुढच्या काळातील राजकारणात नवनव्या जातीय आघाडया बनत राहिल्या. मात्र उच्च जाती प्रामुख्याने कॉंग्रेसबरोबर राहिल्या. बहुतेक राज्यांतील दलित आणि आदिवासी गटही कॉंग्रेसबरोबर राहिले. अषा प्रकारे मध्यम शेतकरी जाती आणि इतर कनिष्ठ जाती यांचा मोठा समूह कॉंग्रेसपासून दूरावून आपले स्वतंत्र राजकारण करण्याच्या प्रयत्नांना लागला.

1977 नंतर मात्र काही गटांनी जनता पक्षालाच या नव्या राजकारणाचे एक हत्यार बनवण्याचे प्रयत्न केले. विषेषतः उत्तरप्रदेष आणि बिहार या राज्यांमध्ये हया घडामोडी घडल्या. या राज्यांमध्ये मुख्यतः यादव जातीचे नेतृत्व पुढे आले आणि त्यांनी मागासांच्या राजकारणाचा झेंडा आपल्या खांद्यावर घेतला. सत्तेतील वाटयाबरोबरच षिक्षित तरूणांच्या दृष्टीने महत्वाचा असा नोकरीतील आरक्षणाचा मुद्या पुढे आला. केंद्रातील सरकारला आयोग नेमून (मंडल आयोग किंवा दुसरा मागासवर्ग आयोग) या मुद्याला प्रतिसाद द्यावा लागला. आरक्षणाच्या मुद्यावरून उत्तरप्रदेष, बिहार या राज्यांत 1977.78 च्या दरम्यान तीव्र संघर्ष झाले. पुढे 1980 च्या दषकाच आरंभी गुजरातमध्ये या मुद्यावरून दंगली – आंदोलने झाली. मंडल आयोगाच्या अंमलबजावणीच्या मुद्यावरून 1990 मध्ये जो संघर्ष झाला.

दलित राजकारणाचा उदय :–

डॉ. आंबेडकरांनी 1942 साली शेडयुलकास्ट फेडरेषन आणि स्वतंत्र मजूर पक्षाची स्थापना केली आणि दलितांच्या राजकारणातील प्रवेषाचा मार्ग आखून दिला. पुढे दलित राजकारण हे प्रामुख्याने जातीविरोधी राजकारणाचे केंद्र होत. स्वातंत्र्यानंतर डॉ. आंबेडकरांनी रिपब्लीकन पार्टी स्थापन करून प्रथमच दलित चळवळीला राजकीय क्षेत्रात आणले. त्यानंतर बऱ्याच काळाने उत्तरप्रदेषात कांषिराम यांनी दलित जातीतील नोकरीपेषा लोकांचे संघटन 'बामसेफ' या नावाने स्थापन करून दलित समाजाचे प्रबोधन करण्याचा प्रयत्न केला. डॉ. आंबेडकरांचा आइर्ष समोर ठेवून सरकारी नोकऱ्यातील जातीचे प्रमाण व आरक्षणाच्या संदर्भातील त्यांनी आपली धोरणे जाहीर केली. 1984 मध्ये त्यांनी बहुजन समाज पार्टी या नावाने राजकीय पक्ष स्थापन करून उत्तरप्रदेषाच्या राजकारणात पाय रोवले. या पक्षाला दलित व मागासवर्गीयांचा पक्ष म्हणून ओळख प्राप्त झाली. जमीन वाटपाच्या प्रष्नावर भर देऊन दलित राजकारण जातीच्या पलीकडे नेण्याचा प्रयत्न केला. 60 च्या दषकानंतर दलित चळवळीने चांगलाच जोर धरला होता; परंतु निवडणुकीचे राजकारण, त्यात आलेले अपयष आणि समाज परिवर्तनाला गती देण्याऐवजी राजकीय स्वार्थासाठी केलेला दलित चळवळीचा वापर यामुळे दलित चळवळीचे राजकारण अपयषी ठरले.

हिन्दुत्वाचे राजकारण :–

कॉग्रेसव्यवस्थेच पडझडीच्या काळात उदयाला आलेली हिंदूत्वाच्या राजकारणाच्या उदय झाला. गेल्या दोन दषकात भाजपची वाढलेली ताकद आणि 2014 च्या लोकसभा निवडणूकीत भाजपाच्या हाती आलेली केन्द्रसत्ता यामुळे हिन्दुत्ववादी राजकारणाचे स्थान आज महत्वपूर्ण बनले आहे. कॉगेसला पर्याय म्हणून उभे राहण्याचे भाजपने सातत्याने प्रयत्न केलेला आहे. सत्तरीच्या दषकात संघाने कर्मठ, सनातनी भूमिका बाजूला ठेवून आधुनिक हिन्दुत्वाचा पुरस्कार केला हिन्दूसारख्या विस्खळीत, विविधतापूर्ण आणि खंडप्रायः भूप्रदेषात परसरलेल्या जातिबध्द समाजाला राजकीय दृष्टया संघटीत करण्यासाठी हिन्दुत्व भावनिक आवाहन करणे. एक अखिल भारतीय समाज कल्पिण्याचा प्रकल्प हिन्दूत्वाच्या राजकारणातून पूढे येतो. त्यामाध्यमातून हिंदूचे एकीकरण करण्याचे प्रयत्न भाजप व संघपरिवार करणे भांडवली विकासातून एक फार मोठा पांढरपेषांचा समूह भारतात तयार झाला. भौतिक साधन सामग्रीवर नियंत्रण, त्या साधन सामग्रीचा अगदी अंषमात्र मालकी बौध्दिक यंत्रणावर हुकुमत कनिष्ठ वर्गियांबद्दल आपुलकिया अभाव ही या पांढरपेषया वर्गाची वैषिष्टये. या पांढरपेष्या मध्यमवर्गीय जातींमध्ये भाजपाचा प्रभाव फार मोठया प्रमाणात दिसून येतो. हिन्दूत्ववादी भूमिकाद्वारे मध्यमवर्गानी भावनिक गरज भाजपा पूर्ण करते. म्हणून भाजपचा उदय हा आक्रमक भांडवली विकास आणि मध्यम वर्गाचा विस्तार या घटनांच्या बरोबरीनेच होतो. या अर्थाने हिन्दूत्वाचे राजकारण मध्यमवर्गाचे राजकारण होय.

जागतिकीकरण, मध्यमवर्गाचा विस्तार व जातवास्तवः–

1991 नंतर भारतात खाऊजा धोरणाचा प्रारंभ झाला. या घटनेचे सामाजिक, आर्थिक व राजकीय क्षेत्रांवर फार मोठा प्रभाव पडला. ज्या जातिंचा आधीच मध्यमवर्गात प्रवेष झालेला होता, स्थलांतर करून जी जात–कुटंबे शहरात वसली होती. व ज्यांनी इंग्रजी व तांत्रिक षिक्षण पूर्ण केले होते. अष्या जातवर्गासाठी जागतीकीकरणाचे धोरण लाभदायक ठरले त्यामुळे प्रत्येक जातीतील अल्पसावर्ग मध्यमवर्गात आला. हया प्रक्रियेत मध्यमवर्गाचा विस्तार होण्यास हातभार लागला. याकाळखंडात जातींचा सामाजिक व्यवहारामधील हस्तक्षेप वाढत गेला. जातींच्या आधारावर मतबॅक, बॅका, शळा–कालेज, वसाहती, विवाह व मित्रवर्गाचे जाळे आधारलेले आहे. आपआपल्या जातीच्या आधारावर जातींच्या संघटना व पक्षसुध्दा बांधण्यात येत आहे. विषिष्ट जातींचे हितसंबंध तयार होतांना दिसत आहे. नागरी, प्रादषिक व स्थानिक पातळीवर लोक जातीच्या आधारावरच एकत्र होतांना दिसतात. (उदा. ब्राम्हण जातींचे सम्मलने) जाट, गुज्जर, मराठा व धनगर या जाती आरक्षणाची मागणी का करित आहे? याचे उत्तर प्रत्येक जातीच्या जातीय हितसंबंधामध्ये मिळते.

या सर्व काळात जात नावाच्या घटकाभोवती एक दुहेरी प्रक्रिया घडत जाते. जात हि जणू काहि अपरिवर्तनीय, स्थिर स्वरूपाची सामाजिक रचना आहे, असे आपल्याला वाटत असते. कारण जातव्यवस्थेच्या जाचक व स्थितीवादी स्वरूपामुळे असे मत तयार होते. व त्यात काही अषे तत्थ्य हि आहे. परंतु स्वातंत्र्योत्तर भारतात जातीच्या अंतर्गत रचनेत अनेक बदल घडुन आलेले आढळतात. याला जषी नवीन आधुनिक व्यवस्था व त्यातील मुल्ये कारणीभूत होतील तसाच भागवली अर्थव्यवस्थेचा रेटा देखील कारणीभूत होता. ''एक व्यक्ति एक मत'' या तत्वाचा पुरस्कार करणारे भारतातील लोकषाही समान षिक्षणपध्दती, शहरीकरणाची प्रक्रीया इ. बाबीमुळे प्रत्येक जातीच्या अंतर्गत रचनेत अनेक बदल घडून आले.

भारतीय लोकशाही समोरील आव्हाने :–

संसदेचे अवमूल्यन :– भारतीय संविधानाने सांसदीय 'षासन पध्दतीचा स्विकार केला आहे. सांसदिय लोकषाहीच्या यषस्वीतेसाठी उच्च अषा संवैधानिक नितिमत्ता व जबाबदारीची जाणीव असणे आवष्यक आहे. सद्या स्थितीत संसदेत तज्ञ व बुध्दिजीवी वर्गाचा अभाव आढळून येतो संसद सदस्यांची अल्प उपस्थिती जनतेच्या भावनांषी प्रतारणा करण्यासारखी आहे. सभागृहातील वाढता गोंधळ चिंतेचा विषय झाला असून सार्वजनिक व राष्ट्रीय प्रष्नांची सोडवणूक करणे कठीण झाले आहे. अनेक राष्ट्रीहिताच्या

योजना आणि निर्णये प्रलंबित राहतात परिणामी संसदेची प्रतिष्ठा आणि नितिनियमांचे अवमूल्यन होत आहे. उज्वल लोकषाहीच्या प्रस्थापनेसाठी ही बाब अतिषय क्लेषदायक आहे. अधिवेषन काळातील गोंधळामुळे सभागृह बरेचदा तहकुब करावे लागते त्यामुळे पेषाच्या अपव्यय होते. राजकारणातील वाढती गुन्हेगारी लोकषाही समोरील मुख्य प्रष्न बनला अहे. राजकीय पक्षांनी उमेद्वार निष्चित करतांना उमेद्वाराचे चारित्र्याची व पार्ष्वभूमिची तपासणी करावी. राष्ट्रहितापेक्षा पक्षहित जोपासणारे खासदार मोठया प्रमाणात असल्याने संसदेच्या कामकाजात अडथळा निर्माण होतो. संसदेचे पावित्र्य, प्रतिष्ठा आणि महत्व टिकविण्यासाठी व लोकषाहीची खरी मुल्ये रूजविण्यासाठी संसद सदस्याने जबाबदारीचे दायित्व पत्करले पाहीजे.

आघाडयांचे राजकारण :– नव्वदी नंतरच्या भारताच्या राजकारणाचे वैषिष्टय म्हणजे एकपक्षीय सरकारे इतिहास जमा झाली आणि आघाडीच्या 'शासनाची सुरवात झाली. एका पक्षाच्या भष्ट्र आणि अकार्यक्षम 'षासनाला संधी देण्यापेक्षा अनेक पक्षाच्या आघाडी सरकारचा पर्याय उचित आहे हा पर्याय समोर आला मात्र आघाडयांच राजकारणामूळे राजकीय तडजोडी निर्माण होते. पक्षाची धारणे आणि विचारप्रणाली यांचे महत्व कमी होते आणि स्थैर्यषील 'षासन निर्माण होण्यास अडचणी निर्माण होतांना दिसत आहे. निव्वळ सत्ताप्राप्तीचा उद्देष निर्माण होऊन लोकषाही मूल्यांची गळचेपी होतांना आढळत आहे. आघाडीच्या 'षासनामूळे संसदिय लोकषाही मूल्यांमधील संयुक्त जबाबतदारीच्या तत्वात बदल होऊल 'सामूहिक' पेक्षा अधिकाधिक 'वैयक्तिक' स्वरूप येत आहे. लोकषाहीच्या मजबूतीच्या दृष्टीने आघाडीचे 'षासन भविष्यात उपयुक्त ठरेल असे वाटत नाही.

लोकषाहीतील राजकीय घराणेषाही :– भारतातील सर्व पक्षामध्ये राजकीय घराणेषहीची किड लागली आहे. निवडणूकीत पैसा आणि घराणेषाहीच्या बळावर विजय प्राप्त होत असला. तरी वर्षानुवर्षे पक्षासाठी कार्य करणाऱ्या सामान्य कार्यकर्त्याची उपेक्षा होते त्यामूळे त्यांच्या राजकीय व्यवस्थेवरील विष्वास उडत चालला आहे. प्रत्येक पक्षात विद्वान, अनुभवी आणि पक्षनिष्ठ नेते आहेत मात्र राजकीय वारसा अभावी सत्तापक्षा पासून कोसो दूर आहेत. राजकारण हा वंषपरंपरागत व्यवसाय बनला आहे. निकोप लोकषाहीच्या भविष्यासाठी राजकीय घराणेषाही अडसर ठरत आहे.

गटबाजी आणि दिषाहीन राजकारण :– भारतातील विषिष्ट परिस्थिती आणि निरनिराळया क्षेत्रात तसेच प्रदेषात आढळून येणाऱ्या विविधतेमूळे अनेक पक्षाचा उदय झाला. अनेक पक्षाच्या अस्तितवामूळे भारताच्या संसदिय 'षासन पध्दतीसाठी काही अडचणी निर्माण झाल्यामूळे विचारसारणी सोडून दिषाहीन वागल्याने पक्षाअंतर्गत आता अस्थिरता सर्वच पक्षात आढळून येत आहे. सत्ताप्राप्तीच्या तडजोडीसाठी विचारसारणीला तिलांजली देण्यास पक्ष मागेपूढे पाहात नाही, 52 व्या घटनादुरूस्तीद्वारा पक्षांतर बंदी विधेयक कायदा पास करण्यात आला मात्र त्याचा फारसा फायदा झाला नाही. पक्षांतरामुळे राजकीय अस्थिरता निर्माण होतांना दिसत आहे.

अत्यल्प मतदानाची टक्केवारी आणि निवडणूकीतील भष्ट्राचार :– आतापर्यंत निवडणूकीतील एकूण मतदानाचा आढावा घेतला तर जनतेचा राजकीय सहभाग दिवसेंदिवस कमी होत आहे. एकुण मताची टक्केवारी कमी होतांना दिसते. सार्वजनिक निवडणूकीत 50 ते 60 टक्के मतदान होते. बहुपक्ष पध्दतीमुळे रिंगणात अनेक पक्षाचे उमेद्वार असतात. साध्या बहुमताच्या निर्वाचन पध्दतीमुळे 15 ते 20 टक्के मतदान प्राप्त करणारा उमेद्वार निवडून येतो. मात्र या विजयी उमेद्वारा विरूध्द 80 ते 85 टक्के मतदार आहे तरी तो त्या मतदार संघाचे प्रतिनिधीत्व करतो. हे लोकषाहीच्या तत्वाला व प्रौढमताधिकाराच्या तत्वाला अपेक्षित आहे काय? हा लोकषाहीच्या वाढीला मारक ठरत आहे. राज्यस्तरीय भष्ट्राचार स्थानिक स्तरापर्यंत पोहचला आहे. सामान्य नागरीकांचा या भष्ट्राचारामुळे विष्वास उडाला आहे. मतदानाकरिता होत असलेल्या पैषाचा गैरवापर आणि मते विकणारा मतदार जर उमेद्वाराचा विजय निष्चित करत असेल तर ती लोकषाही परिपक्व म्हणावी काय? असंगत झालेली निवडणूक प्रक्रिय विधेयकाबाबत अनास्था लोकप्रतिनिधीसाठी नसलेली 'शैक्षणिक अट, दिषाहीन राजकारण, दबावगटे, ध्येयापासून दूर गेलेले राजकीय पक्ष, खऱ्या लाभार्थ्यांपर्यंत न पोहचलेल्या 'षासनाच्या योजना, असुरक्षिततेची भावना नौकरषाहीचा वाढता दबाब,

दिषाहीन लोकप्रतिनिधी आणि नेतृत्व इत्यादी विविध घटकामुळे लोकषाहीचे भवितव्य धोक्यात येत आहे. नानाविधप्रकारे भारतिय लोकषाहीतील स्थित्यंतरे निकोप लोकषाहीच्या निर्मितीसाठी अडसर ठरत आहे. याचा विचार होणे महत्वाचे ठरते

समारोप :– स्वातंत्र्यानंतर पारंपारिक जातीव्यवस्थेचे जे ढोबळ प्रारूप होते. त्यात आमूलाग्र बदल झालेला दिसून येतो. प्रामुख्याने जात व व्यवसायचे अभिन्न संबंधी बदललेले दिसते आधुनिक काळखंडात जातीमध्ये व्यवसायीक लवचीकता दिसून येते. आधुनिक औद्योगिक समाजात जातीबध्द व्यवसाय व व्यवसाय बंदी या दोन्ही बाबींचे अस्तित्व क्षीण होत जाते. पण कनिष्ठ समाजाच्या जातींचे प्रतिनिधीत्व अजूनही उच्च व्यावसायीक क्षेत्रात कमीच असल्याचे दिसते.

षिक्षणाच्या सुविधांचा विस्तार झाला असला तरी सर्व जातीमध्ये षिक्षण प्रसाराचे प्रमाण सारखे नाही आधुनिक सामाजाची गरज म्हणून पदवीचे षिक्षण जरी बरेच जण घेत असले तरी वैद्यकिय, अभियांत्रिकी, वकिल, इतर पांढरपेषे, कुषल व्यवसाय यामध्ये कनिष्ठ जाती आणि दलित जाती यांचे प्रमाण फारसे नसते. ज्या जातींनी षिक्षण महत्वाचे मानले त्यांच्या बाबतीत जात–व्यवसाय यांचे परंपरागत सबंध सैल झाल्याचे दिसते. शहरीकरण, उद्योगक्षेत्राचा विस्तार, नवे व्यवसाय यांच्या जोडीने षिक्षण प्रसार व राजकीय जागृति झाल्यामुळे प्रत्येक जातीत अंतर्गत स्तरीकरण निर्माण झाले. जात्यांतर्गत स्तरीकरणाचे प्रमाण जेवढे अधिक असेल तेवढी ती जात व तिचे आर्थिक हितसंबंध विस्कळीत होत जातात. भांडवलषाहीच्या विस्तारामुळे जातीव्यवस्था दुबळी होईल आणि जागतीकीकरणाच्या रेटयामुळे तिला धक्का पोचेल असे अनेकांना वाटते परंतु भांडवलषाहीत उच्च जातींना व्यवसायांतर करणे सुलभ होते यात कनिष्ठ समजल्या जाणाऱ्या जातींवर काही संकटे कोसळतात ज्या जातींकडे तुटपूंजी साधनसामग्री असते त्यामुळे उत्पादन व्यवस्थेत आणि बाजाराच्या रचनेत बदल झाले कि या जाती देषोधडीला लागण्याची शक्यता बळावते, म्हणून त्यांच्या भांडवलषाहीत होणारा समावेष हा मजूर, अर्धरोजगार किंवा भणंग–उपरे म्हणूनच होणार असे दिसते.

संदर्भग्रंथ सूची

1) रजनी कोठारी, 'भारत मे राजनिती' अनुवादक व संपादक अभयकुमार दुबे, वाणी प्रकाषन सी.एस.डी.एस. नई दिल्ली.

2) योगेन्द्र यादव, सुहास पळषीकर, पीटर डिसूझा, 'लोकषाही जिन्दाबाद', अनुवादक – मनोहर सोनवने, समकालिन प्रकाषन, पुणे.

3) यषवंत सुमंत, 'भारतीय लोकषाहीचे चर्चाविष्व : काही निरिक्षणे', विचारमंथन संषोधन पत्रीका, जानेवारी 2013 अंक 18, अथर्व पब्लिकेषन, जळगाव

4) सुहास पळषीकर, राजेन्द्र व्होरा, 'Indian Democracy : Meaning & Practices' अनुवाद, चित्रा लेले.

5) रामचंद्र गुहा, 'भारत नेहरू के बाद

6) राजीव भार्गव, अषोक आचार्य 'राजकीय सिध्दांत परिचय' अनुवादक – हेमंत खानझोडे, Published by 'Dorling Kindersley' (India) Pvt. Ltd, New Delhi

7) धीरूभाई 'शेठ 'नये मध्यमवर्ग का उदय', संकलीत, अभयकुमार दुबे (सं), वाणी प्रकाषन, नई दिल्ली,

8) जावीद आलम 'हू वान्ट्स डेमोक्रेसी' चे अनुवाद 'लोकतंत्र के तलबगार' अनुवादक – अभयकुमार दुबे, वाणी प्रकाषन, नई दिल्ली,

9) सुहास पळषीकर, समकालीन भारतीया राजकारण कॉग्रेस वर्चस्व ते हिंदू वर्चस्वाद, प्रति प्रकाषन.

10) सुधा पाई, 'वंचित वर्ग का बहिष्कार और हाषिये कि स्थिती', योजना मासिक, ऑगस्ट 2013,

Gurukul International Multidisciplinary Research Journal (GIMRJ)
with
International Impact Factor 2.254

ISSN No. 2394-8426
Dec – 2015
Issue – I, Volume – V
Online Journal

यवतमाळ जिल्ह्यातील आदिवासी स्त्रियांचे निर्णय प्रक्रियेतील स्थान

शुभांगी अ. भोयर,
एम.ए. बी.एड., एम.फील., गृहअर्थशास्त्र,
रां. तु.म.नागपूर विद्यापीठ
डॉ.सौ. अपर्णा ढोबळे,
सहाय्यक प्राध्यापक,
विभाग प्रमुख, गृह विज्ञान,
सेवादल महिला महाविद्यालय व संशोधन अकादमी, नागपूर

प्रस्ताव- आदिवासी समाजाच्या सामाजिक संघटनेचा विचार करीत असताना स्त्रियांचा दर्जा व स्थानांचा अभ्यास लक्षणीय ठरतो. आदिवासी समाजात स्त्रियांना प्रदान केलेले अधिकार व स्थान निश्चित करता येतात.

आदिवासी समाजातील स्त्रियांचा दर्जा निश्चित करण्याकरिता त्या समाजातील स्त्री व पुरुषांचे अधिकार कोणते या बाबींचा अभ्यास करूनच निष्कर्ष काढता येतात .

1. स्त्रियांना मिळणारी प्रत्यक्ष वागणूक .
2. स्त्रियांना मिळणारी सामाजिक संधी .
3. स्त्रियांचा कायदेशीर दर्जा

यां निकषावर स्त्रियांचे स्थान निश्चित केले जाते

आदिवासी समाजात आर्थिक कार्यावरच लोकांचा उदरनिर्वाह चालत असतो. आर्थिक क्रियांमध्ये स्त्रियांचा सहयोग मोठ्या प्रमाणावर असेल तर स्त्रीयांच्या कामाचे महत्त्व वाटते.

आदिवासी समाजात स्त्रियांचे निर्णय प्रक्रियेत सहभाग हा सुद्धा खूप महत्त्वाचा भाग आहे. याकरिता त्या समाजातील स्त्रियांच्या गृहव्यवस्थापन व कामाच्या पद्धतीवर त्या स्त्रियांचे स्थान निश्चित होते.

निर्णय प्रक्रिया - निर्णय ही एक प्रक्रिया आहे. मनुष्य आपल्या जीवनात अनेक निर्णय घेतात निर्णयाचे काही प्रकार आहे जसे वैयक्तिक निर्णय, सामूहिक निर्णय, बौद्धिक निर्णय या निर्णय पद्धतीवरच निर्णय प्रक्रिया अवलंबून असते.

उद्देश -

1. स्त्रियांच्या निर्णय प्रकाराचा उद्देशानुसार

2. स्त्रियांच्या जबाबदारी विषयक उद्देशानुसार

गृहीत कृत्य – निर्णय प्रक्रियेचा व जबाबदारीचा स्त्रियांवर परिणाम होतो.

नमुना निवड - सर्वेक्षणा करिता यवतमाळ जिल्ह्यातील, मालेगाव तालुक्यातील विविध वयोगटातील स्त्रियांची निवड केली व निर्णय प्रक्रियेतील सहभाग किती असतो हे जाणून घेतले.

चर्चा विश्लेषण - प्रस्तुत संशोधनात मारेगाव तालुक्यातील आदिवासी स्त्रियांच्या निर्णय प्रक्रिया व जबाबदारी मध्ये स्थान कशा पद्धतीने आहे याकरिता 50 स्त्रियांची निवड केली व टक्केवारी पद्धतीने विश्लेषण केले.

1. आदिवासी स्त्रियांचा वयोगट दर्शक तक्ता

वय	21 ते 30	31 ते 40	41 ते 50	50 चे वर	एकूण
संख्या	9	13	21	7	50
प्र. श. क्रमांक	18%`	26%	42%	14%	100%

सर्वेक्षण करिता नमुना म्हणून 50 स्त्रियांचा विचार करण्यात आला .

2. आदिवासी कुटूंबाचा प्रकार दर्शक तक्ता

प्रकार	संयुक्त	विभक्त	एकूण
संख्या	18	32	50
प्र. श. क्रमांक	36%	64%	100%

वरील तक्त्यावरून स्पष्ट होते की संयुक्त कुटुंब पद्धतीपेक्षा विभक्त कुटुंब पद्धती जास्त आहे .

3. आदिवासी स्त्रियांच्या महत्त्वाचे निर्णय घेण्याविषयी तक्ता

विवरण	समूहाने	वैयक्तिक	अनुभवाने	एकूण
संख्या	21	18	11	50
प्र. श. क्रमांक	42%	36%	22%	100%

वरील सारणी वरून 50 पैकी समूहाने निर्णय घेणाऱ्या 42% स्त्रिया आहेत तर वैयक्तिक निर्णय घेणाऱ्या 36% आहे तर 22% स्त्रिया अनुभवाने निर्णय घेतात. जास्तीत जास्त स्त्रिया समूहाने निर्णय घेतात असे दिसून येते .

4. कामाची आखणी/नियोजन यशस्वी घेण्यासाठी घरातील मदतनिस

विवरण	स्वतः	पती	सासू	सासरे	एकूण
संख्या	30	15	3	2	50
प्र. श. क्रमांक	60%	30%	6%	4%	100%

वरील सारणीत स्वतः नियोजन यशस्वी करण्यात सहभागी असलेल्या असे सांगताना स्वतः 60% स्त्रिया आढळल्या .

5. आदिवासी स्त्रीयांच्या घरातील सर्व कार्यावर नियंत्रण तक्ता

विवरण	कामाची विभागणी करून	सर्वांना कामासाठी प्रोत्साहित करते	स्वतः कार्य करून	कोणाचीही देखरेख नसते	एकूण
संख्या	8	10	30	2	50
प्र. श. क्रमांक	4%	20%	60%	4%	100

					%

वरील सारणी वरून स्वतःहा कार्य करून कार्यावर नियंत्रण ठेवतात अशा सांगणाऱ्या 60% आदिवासी स्त्रिया आढळून आल्या .

निष्कर्ष - प्रस्तुत लघुशोध निबंधात 50 आदिवासी स्त्रियांचा विचार करण्यात आला व निर्णय प्रक्रियेमध्ये नियोजन, नियंत्रण व जबाबदारी या प्रक्रियेद्वारे यांची माहिती संकलित करण्यात आली. निर्णय घेताना समूहाने निर्णय घेणाऱ्या 21 (42%) स्त्रिया जास्त आढळून आल्या व घरातील जबाबदारी व नियोजन यशस्वी होण्याकरिता स्वतःहा जबाबदार आहे असे सांगणाऱ्या 30 (60%) स्त्रिया जास्त आढळून आला तर कार्यावर नियंत्रण ठेवण्याकरिता स्वतः कार्य करून नियंत्रण ठेवतो अशा सांगणाऱ्या 30 (60%) स्त्रिया आढळून आल्या.

वरील लघुशोध निबंधात असे आढळून आले की सर्व स्त्रिया घरातील निर्णय प्रक्रियेत नियोजन नियंत्रण करण्यात स्वतःहा पुढाकार घेतात पण निर्णय हा समूहाने घेऊनच कार्य केले जाते म्हणजे सामूहिक निर्णय प्रक्रिया ही यशस्वी प्रक्रिया असू शकते.

संदर्भसूची:

1. सामाजिक मानसशास्त्र, मंगेश प्रकाशन, रामदास पेठ नागपूर, खडसे डॉ. भा. की.1999
2. शिरोळे डॉ. धैर्यशील 2002 आदिवासी कथा व व्यथा
3. गृहअर्थशास्त्र - पिंपळापुरे अँड कंपनी पब्लिकेशन्स, नागपूर, फेब्रुवारी 1990 प्रा. डॉ. श्री. भाग्यलक्ष्मी, प्रा. डॉ. नंदनी
4. Home management and family housing, sheth publishers Private Limited Mumbai July 2007
5. आधुनिक गृह व्यवस्थापन आणि गृहसजावट, पब्लिशर्स अंड डिस्ट्रीब्यूटर, नागपुर 2004 डॉ. सौ.कोल्हेटकर विद्या

Gurukul International Multidisciplinary Research Journal (GIMRJ)
with
International Impact Factor 2.254

ISSN No. 2394-8426
Dec – 2015
Issue – I, Volume – V
Online Journal

Analytical Study of Impact of Cultural Factors on the Consumer Behaviors

Raju Dhabale
Assistant Professor
Ashok Moharkar Arts and Commerce College
Adyal, Dist., Bhandara

Abstract :
Consumer behaviour is the study of individuals, group of individuals and organizations. It includes all the aspects that are associated with the consumer, such as buying behaviour, use and disposal of goods and services, including the consumer's emotional, mental and social angles that precede or follow these activities. In order to succeed in today's dynamic and rapidly evolving marketplace, marketers need to know everything about consumers - what they need, what they think, how they work, how they spend their money and time. The culture of any region is impacting on the consumer buying behaviour. Thus researcher had studied the impact of cultural factors on the consumer behaviour.

Keywords: culture, consumer behavior, cultural factors.

Introduction :

Consumer behavior is largely dependent on cultural factors consisting of mutually shared operating procedures, unstated assumptions, tools, norms values, standards for perceiving, believing, evaluating and communicating. Cultural factors vary by country or region but become increasingly complex when people immigrate to foreign countries or other region that have different cultural dimensions.

In the process of globalization of a business, one thing is important that is the need to connect with the customer. A consumer is more than just an asset for a company; he is a parameter through which that company can instrument its success in a market. This is the reason understanding consumer behaviour is so important—and the factors which shape this behaviour are even more so.

The thing which highly affects the way a consumer behaves is culture.

A society's culture is a echo of its traditions, norms, values, and customs. The shopping habits of individuals are particularly shaped by these factors. To define a consumer behaviour would be analogous to defining an umbrella concept of many factors. Consumer behaviour depends on attitudes, motives, experiences, perceptions, values, self-concept, culture, family, profession, and reference groups of society. Not surprisingly, a change in any of these would cause a change in consumer behaviour too.

While it is a well-known fact that a marketer is able to control the consumer buying behaviour, the reality is far away from that. A marketer can indeed attract the buyers, but he cannot control them as other factors affect the choices they make. These choices, on the other hand, are dependent upon extrinsic factors such as culture.

Consumer Behaviour

The buying behaviour process used by consumer in the market before, during and after the purchase of goods and services. It starts with need recognition and end with the post purchase Behaviour of consumers. In this process the consumer also looks at the cost-benefit analysis.

1. Need Recognition The decision of buying goods and services starts with the recognizing the need or desire which a consumer wants to satisfy. The intensity of need decides the priority list of the consumer. The consumer will make an immediate purchase of those goods which are most urgent for consumer and postpone the other need or desire.
2. Information Search The need recognized in the first stage can be satisfied when the consumer knows what product can satisfy that need and availability of that product. For this purpose the consumer look for the information from various sources such as family, friends, advertisement, media etc.
3. Evaluation of Alternatives The consumer assesses various alternatives products and services to satisfy their needs. In evaluating process the consumer look at various aspects of products and services in the form of features, utility, brand image and post purchase services. The criteria to evaluate the product differ on the situation and the involvement of the consumer. Sometimes, the sales representatives also help the consumers to evaluate the product and services.
4. Purchase Decision After evaluating all the alternatives the purchase of particular brand depends on the evaluation criteria and ranking. It also depends on the availability of the brand and affordability of consumer. Consumers are not certain about the purchase outcome as they hesitate to take risks. The marketers should help the consumer by reducing risk factor and providing them sufficient information about products and services in decision making process.
5. Post-Purchase Behaviour The consumer always evaluates the performance of the product. The consumer will be either satisfied or dissatisfied after the evaluation. If the product performance will meet the consumer expectation, consumers will repeat the purchase. The buyer will talk positively about the product. On the other hand, if performance didn't meet expectation the consumer will stop buying the product. This will result into negative publicity of the product.

Effect of Culture on Consumers

To define the culture of a nation, it is imperative to first examine the belief system and values of the people residing there. A culture can be defined as the total average of beliefs, values, and traditions that are directly linked to the consumer behaviour of members of a specific society. Generally, both beliefs and values are mental images that affect particular attitudes which, consequently, variates the methods a person uses to make choices in brands and services. For example, a product category like "Audi vs Volvo" would entail customers choosing from among these alternatives, and his preference of a brand over the other will be affected by his common values and beliefs. In contrast to values and beliefs, traditions are habits and suitable ways of behaving, whereas the former is just rules of behaviour. An example is the addition of ketchup on an omelette and the preference of green tea over milk tea.

Culture determines the consumer's experiences, beliefs, and values, which in turn is directly linked to attitudes, emotions, social norms, intentions, and behaviours. Personal culture represents the local area. For instance, the people residing in several states in a specific area of South America have similar cultural habits. Religious differences or similarities, on the other hand, are backed by aspects like common core values, personalities, and customs, etc. Groups that influence the choice of consumers are typically sorted into workgroups, shopping groups, friendship groups, and families.

Cultural Factors :

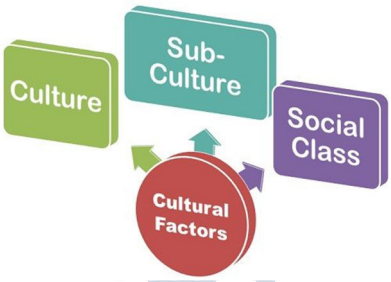

1. **Culture:** The culture refers to the beliefs, customs, rituals and practice that a particular group of people follows. As a child grows, he inculcates the buying and decision-making patterns through his family and the key institutions. The culture varies from region to region and even from country to country. Such as the sale of "sarees" and "Lungis" is more in South than the North India. Therefore, the marketer should carefully study all the different cultures and frame the marketing strategies accordingly.
2. **Subculture**: The culture can be further divided into subculture wherein the people are classified more specifically on the basis of their shared customs and beliefs, including religions, geographic regions, nationalities, etc. The different sub-cultures forms several market segments whose needs can be carefully studied by the marketer, and the strategic marketing decisions can be taken accordingly. Such as the needs of the people living in metro cities and the ones living in B-grade cities must be identified before the launch of the marketing campaign.
3. **Social Class**: The social class to which an individual belongs influences the buying decision. Generally, the people belonging to the same class are said to be sharing the similar interest, value and the behaviour. Our society is classified into three social classes upper class, middle class, and the lower class. The consumers belonging to these classes possess different buying behaviours. Such as an individual belonging to the upper class buy those products or services that advocate his status while the lower class people buy those products which satisfy their basic needs.

These are some of the cultural factors that influence the individual buying behavior due to his membership in the group where different customs, practices, beliefs, and rituals are followed.

Cultural Factors Affecting Consumer Behaviour

Consumers have largely contributed to the growth of various businesses. This is because every successful business venture requires potential buyers. As a result, the role of the consumer on business prosperity can never be neglected. It is sad to mention that many businesses have closed due to lack of consumption of their products. However, other businesses have prospered due to the availability of more consumer of their products than they can even contain. Therefore, this paper attempts to define consumer behaviour. Although there are other factors such as personal, psychological and social factors that affect consumer behaviour, this paper will concentrate on cultural factors only.

Consumer behaviour can be defined as, "the behaviour that consumers display in searching for, purchasing, using, evaluating and disposing of products and services that they expect will satisfy their needs" (Schiffman & Kanuk, 2007: 13). However, there is another description of consumer behaviour as the mental and physical activities undertaken by households and organizational consumers that

results in decisions and actions to pay for, purchase and the use of the product and service (Sheth, Mittal & Newman1999).

There are two levels of consumer behaviour; the personal consumer and organizational consumer. The personal consumer is usually the one that buys products for personal use (Schiffman & Kanuk 2004). On the contrary, organizational consumers are described as the consumers who buy good and service to run their organization, for instance, the government organizations (Hawkins et al. 2001).

Culture is defined as a way of life. Therefore culture contributes much to the behaviour of the individual (in this case, consumer) even though people rarely understand their own culture. The characteristics of culture are adaptive, dynamic and patterned blueprints which can be interpreted to help the individual behave in a manner that is acceptable to the rest of the members of that culture. The myths, values, symbols and ritual have helped in defining the culture and using them may help in determining the consumer behaviour (Arnould et al. 2004).

Consumer behaviours are studied mainly because the behaviour of the consumer can never be predicted by the marketing theory. Therefore many consumers have unique requirements on the product and service and it is of important value that consumer behaviours are clearly understood.

Some of the cultural factors that affect consumer behaviour are outlined as follows; culture, subculture and social class.

Culture, as it has been indicated earlier has a significant effect on the behaviour of the consumer. There are different cultures among countries of the world therefore the marketers have to study the culture of the potential consumer before they offer the goods and services for sell. For instance, various studies have indicated that culture affects the behaviour of the consumer in buying of the good and service i.e. it has affected the decision of the consumer on buying, culture has greatly influenced diverse age group of the consumer in buying of the cosmetic and skincare product and finally the decision of the consumer in buying of the cosmetic and product is affected by the lifestyle factors (Chouten & Alexander 1995).

Subculture arises from the culture since all the cultures found in the world have got different subcultures such as nationality, religion, racial, gender or geographical region. For example, recent studies have established that men are increasingly using skincare products. Due to this fact, it was reported that sales of male grooming products went up by 18% in the whole world during the period 2006 to 2011 while the market was estimated to be of value $25 billion (Mermelstein & Fielding, 2007).

Religion can never be underestimated in understanding consumer behaviour since it is considered a long time phenomenon (Kim et al., 2004). It is an important cultural factor that influences values, attitude and behaviour of the consumer. For example, religion can provide restrictions about the use of cosmetic and skin care product.

Another example is that countries found in Asia have a large market of the cosmetic and skincare product therefore the manufacturer should study the culture of these countries to meet the needs of the consumer.

The last example on subculture is based on the gender. According to various studies that have been carried out, it has been established that more women are a potential consumer of cosmetics and skincare product as compared to the number of men who use the same products.

Social class is defined as, "the status hierarchy by which groups and individuals are classified based on esteem and prestige" (Webster 1992: 23). According to Warner, he defined the social class as "a group of individuals who other members of the community see as equal in social prestige and whom others believe to be superior or inferior to other groups that constitute the social classes below them or above them".

Generally, there are three different types of social class. First, there is an upper class which is subdivided into upper-upper and lower-upper. Second, there is the middle class which is subdivided into upper-middle and lower-middle. Finally, there is a lower class which is subdivided into upper-lower and lower-lower.

Conclusion :

The world of today is becoming more globalized everyday, but it cannot be denied that people all over the globe have the same needs and wishes, which is why it becomes easier for companies to produce the same items for diverse regions. However, strong differences still remain among the sets that consumers make according to cultural backgrounds. Companies must understand these differences, especially if they are aiming to sell products for the first time in a region or country. Understanding these differences is the key to making sure a firm is able to gain sound returns from its investments in markets, in addition to making profits for their company.

Consumer behaviour is important for the prosperity of the business. So it is of significant value to study the trends in the behaviour of the consumer towards the buying of the product and service. Also, it is worth to analyze the factors which affect the behaviour of the consumer since the consumer has a great contribution to the business. Without understanding the cultural factors that impact on their buying behaviour, the marketers may not understand the needs of the customers and hence fail to provide quality. Therefore, understanding of cultural factors affecting consumer behaviour will help the business in fulfilling the desires of the consumer and consequently turn the business into a successful venture.

References

- Arnould, E. and Price, L., 2004. River Magic: Extraordinary Experience and the Extended Service Encounter, Journal of Consumer Research, 20(1), pp. 24-45.
- Ali Syed Azher, FACTORS INFLUENCING CONSUMER BUYING BEHAVIOUR: A REVIEW, Pune Research World, An International Journal of Interdisciplinary Studies, Vol. 1, Issue 1, ISSN 2455-359X, www.puneresearch.com/word.
- Schouten, J.W. & Alexander, J.H., 1995. Subcultures of Consumption: Ethnography of the New Bikers. Journal of Consumer Research 22 (June), pp. 43-61.
- Durmaz, Yakup & Mücahit, Dr & Reyhan, Oruc. (2011). The Impact of Cultural Factors on the Consumer Buying Behaviors Examined through An Impirical Study. International Journal of Business and Social Science. 2.
- Hawkins, D. I., Best, R. J., and Coney, K. A., 2001. Consumer Behavior: Building Marketing Strategy. 6th edition. Published by Irwin McGraw-Hill.

- Kim, S. F., David, S. W., and Zafer, B. E., 2004. The influence of religion on attitudes towards the advertising of controversial products. European Journal of Marketing 38(5/6), pp. 537-555.
- Rani Pinki, Factors influencing consumer behavior, Excellent Publishers, http://www.ijcrar.com/vol-2-9/Pinki%20Rani.pdf 2014

Gurukul International Multidisciplinary Research Journal (GIMRJ)
with
International Impact Factor 2.254

ISSN No. 2394-8426
Dec – 2015
Issue – I, Volume – V
Online Journal

मराठी भाषा संवर्धन : काही उपाय

प्रा. मिलिंद साठे
सा. व्याख्याता मराठी
डॉ. ह. आ. कला–वाणिज्य महाविद्यालय, सावनेर
चलभाष : 9422823365

मराठी भाषा संवर्धनाच्या प्रश्नाबाबत पुरेशी चर्चा झाली आहे. काळाच्या ओघात तिचे सत्त्व, शुद्धरूप, प्रतिष्ठा टिकून राहावी याबाबत कुठलेही दुमत असण्याचे कारण नाही. हा प्रश्न अनेक व्यक्तींना त्रस्त करीत असला तरी ठोस असा उपाया करता आला नाही हे मराठी माणसाचे राजकीय आणि सांस्कृतिक पातळीवरील अपयश आहे.

मराठी भाषा उपजत समृद्ध आहे. तिच्यात ज्ञान, व्यवहार, विज्ञान, संस्कृती सामावून घेण्याचे सामर्थ्य आहे. याचे दाखले मुकुंदराज ज्ञानेश्वर, चक्रधर, नागदेवाचार्यापासून तर कुसुमाग्रज, सुरेश भटापर्यंत मोठ्या आत्मीयतेने दिले आहे.पुढेही ही परंपरा चालत राहील. मग मराठी भाषेच्या अस्तित्वाचा प्रश्न का निर्माण व्हावा? की काळजीपोटी भविष्याचा वेध घेवून केलेली ही तडजोड आहे? की खरेच आधुनिक युगात भाषांबाबत जटील प्रश्न निर्माण झाले आहेत? की त्या बाबतीतील सजगता म्हणून आपली भाषा टिकवून ठेवण्यासाठी प्रामाणिकपणे वाटणारी ही काळजी आहे? कारण कोणतेही असो, आधुनिक युगात आपली भाषा टिकवून ठेवण्याचा गंभीर प्रश्न निर्माण झाला आहे, हे सत्य कुणालाही नाकारता येणार नाही. भविष्याचा वेध घेणाऱ्या द्रष्ट्या विचारवंतांना याचा अदमास घेता आला असावा म्हणून तर स्वतंत्र मराठी राज्य निर्माण झाले तेव्हापासून या प्रश्नाची कमी–अधिक चर्चा झाली आहे.

विष्णुशास्त्री चिपळूणकर यांनी इंग्रजीची संभावना 'वाघिणीचे दूध'[1] अशी केली आहे. त्या मागचे कारण इंग्रजी भाषेचा जागतिक पातळीवरील वाढता प्रभाव व ज्ञानभांडाराचे प्रचंड स्त्रोत हे होय. इंग्रजी भाषा ही आधुनिक विज्ञान, व्यवहार आणि व्यक्तिप्रतिष्ठेचा गौरव करणाऱ्या संस्कृतीचे माध्यम होय. या भाषेतून आधुनिक जगाचा मागोवा घेता येतो. म्हणूनच म.द. हातकणंगलेकर यांनी, ''इंग्रजी ही जगाकडे दृष्टिक्षेप टाकण्याची खिडकी होती. आजही आहे.''[2] असे स्पष्टपणे नमूद केले आहे. जागतिकीकरणातील ही भाषा संघर्षाची नांदी होती याकडे काहीसे दुर्लक्ष करून मराठी भाषा टिकण्याची व तिच्या समृद्धीची चर्चा करण्यात आली.

भाषिक प्रांत रचनेनुसार 1 मे 1960 रोजी मराठी भाषिक राज्याची म्हणजे महाराष्ट्र राज्याची स्थापना झाली. त्यावेळचे महाराष्ट्राचे पहिले मुख्यमंत्री यशवंतराव चव्हाण यांनी 'हे राज्य मराठी असेल' अशी गर्जना केली होती. याचा अर्थ फक्त महाराष्ट्राच्या भौगोलिक निर्मितीसाठी आवश्यक असलेल्या सर्व घटकांवर लक्ष केंद्रित करणे असा होता. याकडे राजकारण्यांचे, समाजकारण्यांचे, साहित्यिकांचे व सर्वसामान्य मराठी माणसांचे पूर्णतः दुर्लक्ष झाले. मराठी भाषेला राजकीय आणि सामाजिक प्रतिष्ठा मिळवून देण्यासाठी 1964 च्या राज्यभाषा अधिनियमाचे काटेकोर पालन व्हायला पाहिजे तेही झाले नाही. याबाबत 'मराठी बाणा' निष्फळ ठरला. मराठी राज्यात मराठी भाषेच्या संवर्धनाचा विचार झाला पण तो कागदोपत्रापर्यंतच राहिला. आपली प्रादेशिक अस्मिता अशी तकलादू होती. मराठी भाषा ही मराठी माणसांच्या नसानसातून सळसळण्यापेक्षा सगळ्या पाट्या मराठीत पाहिजेत. नाहीतर

बघून घेऊ इतपर्यंतच राहिली. मराठी माणसाला ज्या ज्या मानवसमूहांनी आपली भाषा गमावली त्या त्या मानवसमूहांची संस्कृती मृतप्राय व्हायला वेळ लागला नाही हे कळले नाही. प्रादेशिकता महत्त्वाचीच पण त्यासोबत भाषाही महत्त्वाची आहे. आपली भाषा, संस्कृतीसोबत जगत–वाढत असते व मृतप्रायही होत असते. भाषा ही आपल्या संवेदना, भावना, विचार यांनी युक्त असते. ती आपल्या नेणिवेतल्या संवेदकांना आकार देत असते. तसेच आपल्या नेणिवेतील संस्कृतीचे वहनही करीत असते. त्याच कारणासाठी मराठी माणसाने आपले मराठीपण जपले पाहिजे. त्यासाठी काही उपाय अंगिकारता येतील काय? हा विचार महत्त्वाचा वाटतो.

अलीकडे इंग्रजी शाळांचे आक्रमण वाढते आहे. आपल्याच माणसांनी त्याला मोठा प्रतिसाद दिला. इंगजी शाळांचा आग्रह धरला. पण मराठी शाळांचे काय? इंग्रजी शाळांचा आग्रह धरला तर इंग्रजी शाळेमधील मराठी भाषेच्या विषयाचे काय? हा प्रश्न उपस्थित करणे म्हणजे इंग्रजी भाषेचा द्वेष करणे नव्हे, तर रवींद्र बेडकिहाळ म्हणतात त्याप्रमाणे, ''इंग्रजी भाषा आत्मसात करूनही मराठीचा त्याग करावा लागणार नाही असे आपले धोरण पाहिजे.''[2] महाराष्ट्रातही पाचवी ते दहावीपर्यंतचे सर्व शिक्षण राज्य भाषेत करायला पाहिजे. त्यानंतर उच्च शिक्षणात मराठीचा वापर वाढवत नेला पाहिजे. बहुसंख्यांपर्यंत ज्ञान पोचवायचे असेल तर त्यांच्या स्थानिक भाषेत शिक्षण दिले पाहिजे, ही नीती असायला हवी. यासाठी इंग्रजी शिकविणे बंद करण्याची गरज नाही. उलट आपल्या मातृभाषेचा पाया भक्कम करून इंग्रजीवर प्रभुत्व मिळविण्याचे प्रयत्न हवे. परंतु महाराष्ट्रात राज्य शिक्षणासंबंधीच्या नियमाने मराठी शाळा बंद पडण्याच्या मार्गावर असून इंग्रजीतील कॉन्व्हेंट संस्कृती वाढीस लागली आहे. यातील शिक्षण हे इंग्रजी भाषेतील असून 'मराठी' ही दुय्यम भाषा आहे. ही नीती मराठीच्या ऱ्हासास अत्यंत घातक आहे. असे झाल्यास मराठी शाळांना तिलांजली देण्याची वेळ येईल. मराठी भाषा भावी पिढीला येणार नसेल तर मराठी भाषेचे संवर्धन होईल कसे? मराठी भाषेबद्दल टणभर बोलणारे आपल्या मुलांना इंग्रजी शाळेमधून शिक्षण देतात. उच्च शिक्षणासाठी मुलं परदेशात पाठवतात. त्यामुळे शासनाचे तर सोडाच सामान्य मध्यमवर्गीयांना सुद्धा मराठीचे सोयरसुतक राहिले नाही. इंग्रजी माध्यमांच्या शाळांना आवर घातला नाही तर परिस्थिती अत्यंत बिकट आहे.

मराठी भाषा येणे म्हणजे मराठीतून बोलता येणे व्यवहार करता येणे इतकेच नव्हे. मराठी शाळेतील मराठी भाषेच्या अभ्यासाचाही मुद्दा महत्त्वाचा आहे. मराठी भाषेचे व्याकरण, शुद्धलेखन, अलंकार, वृत्त, छंद, साहित्यातील विविध प्रकार, बोली या सह व्यवहारिक भाषेचे ज्ञान विद्यार्थ्यांना येईल. या सर्व बाबींचा अंतर्भाव अभ्यासात करणे होय. शाळा व महाविद्यालये यातील कोणतीही ज्ञानशाखा असोत त्यात मराठी हा भाषेमधील प्रमुख विषय असायला पाहिजे. मराठी शाळा संपल्या तर मराठी साहित्य तरी कोण निर्माण करील? कोण वाचेल? हे सारे प्रश्न गंभीर होत आहेत. पुन्हा एकदा ही निसटती संधी हातून जावू नये यासाठी मराठी शाळा टिकविणे त्या दर्जेदार करणे ही जबाबदारी शासनासह सर्व मराठी माणसांची आहे.

आधुनिक युगातील अत्यंत वेगवान माध्यमे म्हणजे संगणक आणि मायाजाल ही होत. माहिती, ज्ञान, शिक्षण, अभ्यास, संज्ञापन याचा मराठी भाषेतून वापर करणे सोपे व्हावे यासाठी सर्वतोपरी प्रयत्न करणे गरजेचे आहे. इंटरनेट, यु–ट्यूब, ट्विटर, फेसबुक, ई–बुक्स, स्काईप या माध्यमांना सेवा देणाऱ्या कंपन्यावर जगभरातल्या मराठी संगणक उपयोजकांनी आणि मराठी उद्योजकांनी दबाव टाकल्यास त्या सुद्धा आपला मान राखून मराठीतून सेवा देतील. त्यामुळे मराठीच्या जोपासणेस व प्रसारास साह्य होईल.

मराठी भाषा हा भावनिक मुद्दा बनता कामा नये तर मराठी भाषा अर्थाजनास सहाय्यक ठरणारी भाषासुद्धा व्हायला हवी. त्यासाठी मराठी भाषा नोकरी, धंदे, व्यवहार, उद्योजकाशी, रोजगारांशी जोडली गेली पाहिजे. मराठीच्या वापरावे केवळ मानसिक समाधान नव्हे तर आर्थिक संपन्नता व सामाजिक प्रतिष्ठा लाभली पाहिजे. मराठीचे ज्ञान महाराष्ट्रात राहणाऱ्यांना फायद्याचे होईल याचा विचार झाला पाहिजे. त्यासाठी शासनाचे सर्व संकेतस्थळे मराठीमध्ये व्हायला हवेत. सर्व विभागाचे अधिकृत दस्तएवजीकरण, नोंदी करावयाचे करार, दस्त, प्रतिज्ञापत्रे इत्यादी बाबी राज्यभाषेत असायला हव्या. याबाबत सक्त कायदे हवेत. सरकारी व खाजगी नोकऱ्या ह्या स्थानिक लोकांना व भूमिपुत्रांना मिळतील याची अंमलबजावणी व्हायला हवी. उच्च न्यायालयाखालील सर्व कोर्ट व प्राधिकरणाने मराठी भाषेतून शतःप्रतिशत काम करण्याचे नियोजन हवे. शासनाच्या सर्व जाहिराती या मराठीतून प्रसारित व्हाव्यात. सर्व प्रकारचे अनुज्ञप्ती मागतांना मराठी भाषेतून मागितली पाहिजे. उद्योगधंदे व प्रकल्पांच्या दृष्टीने स्थानिक हिताचे कायदे हवेत. या सर्वांबाबत शासकाने कठोर अंमलबजावणीची सक्त करायला हवी. आपल्या भौगोलिक सीमारेषेतील संपूर्ण व्यवहार मराठी भाषेला केंद्रस्थानी ठेवून झाले तरच मराठी भाषेची व मराठी माणसांची उन्नती होईल. कोणतीही भाषा टिकण्यासाठी ती प्रवाहित हवी. जगात उदयास येणारे उत्तमोत्तम, नवनवीन ज्ञान त्या भाषेत सामावून घेण्याचे भाषासामर्थ्य हवे. जगातील इतर भाषामधील उत्तमोत्तम साहित्य, पुस्तके, कोश, ज्ञान–विज्ञान, संशोधने हे मराठी भाषेत आले पाहिजेत. यासाठी शासनाच्या सर्व भाषा विषयक संस्थांनी व साहित्यिकांनी प्रयत्न करायला हवे. जगभरात वेळोवेळी विविध भाषांमधून प्रसारित होणारे उत्तमोत्तम साहित्य हे तत्वतः मराठीतून भाषांतरित व्हायला हवेत. जगभरातील अद्यावत माहिती ताबडतोब मराठीतून उपलब्ध झाल्यास व तशी व्यवस्था केल्यास मराठी भाषेचा व मराठी समाजाचा फायदा होईल.

हिंदी भाषेच्या प्रचार–प्रसाराविषयी किंवा तिच्या टिकण्याविषयी जेव्हा प्रश्न उपस्थित केला जातो तेव्हा मोठ्या अदबीने, 'हिंदी की बात मत करो, हिंदी मे बात करो' असे उत्तर दिले जाते. हा अभिमान स्वभाषेच्या रक्षणासाठी मराठी माणसात जागेल काय? साधा रोजचा दैनंदिन व्यवहार करताना मराठी माणूस मराठीतून बोलत नाही. वाणी सामान, भाजी विकत मागताना मराठीतून मागता येत नाही. रेल्वे, बँक, टपाल, कार्यालये, दुकाने, मॉल, बस, शिक्षा, हॉटेल, सरकारी कार्यालये, जनसंपर्काची खाजगी आस्थापने यात व्यवहारासाठी मराठी माणूस इतर भाषेचा वापर करतो. त्याऐवजी मराठीचा वापर ठरवून केला पाहिजे. इतर परप्रांतीय राज्यातील लोकांसोबत जर मराठी माणूस त्याच्याच भाषेत बोलला तर त्याला मराठी भाषा शिकण्याची गरजच भासणार नाही. उलट आपण मराठीतून व्यवहार केला तर परप्रांतीय लोकांना त्यांच्या दैनंदिन जीवनातील व्यवहारासाठी स्थानिक भाषा शिकावी लागेल. आमच्या राज्यात आमची भाषा शिकणे आवश्यक आहे, हे आपण कृतीने बिंबवले पाहिजे.

देशातील भाषावार राज्य रचनेचा उद्देश असा की, त्या राज्यातील प्रत्येक लोकांना त्याच्या राज्यातील भाषेच्या माध्यमातून सामाजिक, सांस्कृतिक, शैक्षणिक प्रगती साधण्यासाठी सोयीसुविधा उपलब्ध करून देणे, सरकारी व खाजगी आस्थापनाचे सर्व व्यवहार व संस्थळे माहिती व सेवा देण्यासाठी स्थानिक भाषेला प्राधान्य देणे. मराठी भाषेच्या विकासासाठी शासनाने दरवर्षी काय केले याची माहिती पुस्तिका प्रसारित करणे याकडे प्रामाणिकपणे लक्ष दिल्यास मराठी भाषा व संस्कृतीचा विकास होईल.

मराठी भाषा तिच्या 52 बोलीसह समृद्ध अशी भाषा आहे. या बोलींचे जतन करणे आवश्यक आहे. कारण या बोलीमुळेच मराठी भाषा टिकून आहे. भालचंद्र नेमाडे यांनी 'साहित्य, संस्कृती आणि जागतिकीकरण' यावर आपले मौलिक चिंतन मांडताना ते लिहितात, ''मराठी वाचवायची मला फिकीर नाही. कारण मराठी अशी वेगळी कोटी नाही. ती खानदेशी, वऱ्हाडी, नागपुरी, झाडी, कोकणी अशा लहान लहान बोलींनी टिकवून ठेवली आहे.[13] हे खरे असले तरी बोलीभाषांना त्यांच्या समृद्ध परंपरेसह टिकवून ठेवणे हा विषय ऐरणीवर आला आहे. यासाठी मराठी बाणा पुन्हा सरसावला तर मराठी भाषेला, संस्कृतीला चांगले दिवस येतील हा आशावाद बाळगायला काही हरकत नाही.

संदर्भ ग्रंथ

1) म. द. हातकणंगलेकर : साहित्य विवेक, प्रतिमा प्रकाशन, पुणे, 1997, पृ. 38
2) रवींद्र बेडकिहाळ : 'मराठीची घालमेल' (संपा. उत्तम कांबळे, 'जागतिकीकरणातील सांस्कृतिक संघर्ष'), सुगावा प्रकाशन, पुणे, 2013, पृ. 105
3) भालचंद्र नेमाडे : 'साहित्य संस्कृती आणि जागतिकीकरण', लोकवाङ्मयगृह, मुंबई, 2003, पृ. 20